Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

RAM SANDESH 1980 G.K.V.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

112392

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम-सन्देश

फरवरी
१९८०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकेतिका

विषय	लेखक	पृष्ठ
जो तुम आ जाते एक बार	महादेवी वर्मा	१
निश्चल चित्त	स्वामी राम	२
रामायण चरित्र चित्रण	स्वामी तीर्थानन्द 'अज्ञ'	५
साधु वेष में एक पथिक	— — —	८
जीवन में साहित्य का महत्व	दिवेश त्यागी	९
सत्संगः सेव्यताम्	स्वामी ब्रह्मानन्द, एडवोकेट	११
स्वामी राम के धर्म की पृष्ठभूमि	प्रे० भारतबन्धु शर्मा	१३
सम्पादकीय	— — —	१६
सच्ची स्वीकृति	निर्द्वन्द्व —	२०
प्रवचन	ब्र०स्वामी हरिओ३म् जी —	२२
शोक समाचार		२५
आश्रम - समाचार		२६

संस्थापक—
ब्रह्मलीन स्वामी हरिओउम् जी महाराज

संवर्धक—
ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज

व्यवस्थापक—
स्वामी अमर मुनि जी महाराज

सम्पादक—
काका हरिओउम् "निर्द्वन्द्व"

आजीवन सदस्यता शुल्क—

भारत में — १०० रु०
विदेश में — ५०० रु०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्र के हित के लिए यत्न करना ही विश्व की शक्तियों अर्थात् देवताओं की आराधना है'-स्वामी राम

वेदान्त, अध्यात्म, संस्कृति, धर्म एवं भक्ति का सजग सन्देशवाहक
तथा स्वामी राम के आदर्शों का एकमात्र लोकप्रिय मासिक—

राम सन्देश

112392

वेदोपनिषदां तत्त्वम् सत्यं नित्यं सनातनम् ।।
तत्सर्वं "रामसन्देशे" पत्रेऽस्मिन्नवलोक्यताम् ।।

वर्ष २९ अंक २	राजपुर, देहरादून, फरवरी १९८०	वार्षिक भेंट १०) एक प्रति ८५ पैसे

जो तुम आ जाते एक बार

कितनी करुणा कितने संदेश
पथ में बिछ जाते बन पराग,
गाता प्राणों का तार - तार
अनुराग भरा उन्माद राग
आँसू लेते वे पद पखार।
हंस उठते पल में आर्द्र नैन
धुल जाता ओठों से विषाद,
छा जाता जीवन में वसंत
लुट जाता घिर संचित विराग,
आँखे देती सर्वस्व वार।
जो तुम आ जाते एक बार

'(नीहार से)'
महादेवी वर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—गतांक से आगे

निश्चल चित्त

—स्वामी राम

एक बार भारतवर्ष में एक आदमी घोड़े पर सवार कहीं दूर जा रहा था। मार्ग में उसे एक रहट (Persian wheel) मिला। आप जानते हैं कि भारतवर्ष में पृथ्वी से पानी निकालने के लिए एक प्रकार की रहट होती है, जिसे आप परशियन व्हील (Persian wheel) कहते हैं। जब रहट द्वारा पानी कुएं से निकाला जाता है, तब एक प्रकार का शब्द होता है। जब रहट द्वारा पानी कुएं से निकल रहा था, तब यह मनुष्य अपना घोड़ा वहां पानी पिलाने ले गया। घोड़े को उस प्रकार के शब्द सुनने का अभ्यास न था, इसलिए वह उसे सुनकर भड़का और उसने पानी न पिया। जो किसान उस रहट को चला रहे थे, उनसे उस घुड़सवार ने वह शब्द बन्द करने को कहा। किसानों ने रहट को बन्द कर शब्द बन्द कर दिया। शब्द तो बन्द हो गया, पर शब्द बन्द होने के साथ-साथ जल का आना भी बन्द हो गया, अब पीने को घोड़े के लिए जल ही न रहा। घोड़ा पानी के कुंड की ओर बढ़ा, पर वहां पानी बिलकुल न था। इस पर यह घुड़सवार उन किसानों से यों मुखातिब होकर बोला—"ऐ विचित्र किसानो! तुम अजीब आदमी हो! मैंने तो तुम्हें शब्द बन्द करने को कहा था, पानी बन्द करने को नहीं, तुम लोग परदेशी पर इतनी कृपा भी नहीं करते, जिससे वह अपने घोड़े को पानी पिला सके?" किसान बोले:—"महाराज! हम लोग हृदय से आपकी सेवा-शुश्रूषा करना चाहते हैं, और आपके घोड़े को पानी देना चाहते हैं, किन्तु आपका कहना मानना हमारे सामर्थ्य से बाहर है। हम आपका कहना कर नहीं सकते। यदि आप पानी चाहते हैं, यदि आप अपने घोड़े को पानी पिलाना चाहते हैं, तो शब्द के होते हुए ही आप अपने घोड़े का पानी पीने को पुचकारिये, क्योंकि जब हम शब्द बन्द करते हैं, तो पानी भी वहीं रुक जाता है, अर्थात पानी भी प्राप्त होने से रह जाता है, पानी तो नित्य इस शब्द के साथ साथ ही आता है।" इसी प्रकार राम कहता है कि अगर आप वेदान्त का अनुभव करना चाहते हैं; तो सर्व प्रकार के शब्दों, कोलाहल के बीच में, भांति भाँति के कष्टों, झंझटों के बीच में ही उसे कीजिये। इस जगत् में आप कभी ऐसी स्थिति में अपने को नहीं पा सकते, जहां बाहर से कोई शब्द, खटखट या दुःख-झंझट न हो। चाहे आप हिमालय के शिखरों पर जाकर रहें, वहाँ भी आप अपने गिर्द झंझट पायेंगे। चाहे आप अशिष्ट, जंगली पुरुषों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के समान रहें, वहां भी अपने गिर्द झंझट पायेंगे। जहाँ जी चाहें आप जायं, दुःख-झंझट आपको नही छोड़ेंगे, ये आपका पीछा कभी नहीं छोड़ेंगे, ये सदा आपके साथ होंगे। यदि आप वेदान्त का अनुभव करना चाहते हैं, तो जब आपके इर्द-गिर्द झंझट रूपी रहट का शब्द खूब जारी हो रहा हो, तभी उसे करिये। जितने महापुरुष हुए हैं, वे सबके सब अपमानजनक, तुच्छ, निराशा-जनक परिस्थितियों और दशाओं के होते हुए हीं हुए हैं। वास्तव में जितनी अधिक कष्ट भरी दशा होती है और जितनी अधिक कठिन वा कष्ट-साध्य परिस्थिति होतीहै. उतने ही प्रबल मनुष्य और उतने ही अधिक बलवान् लोग हो जाते हैं, जो उन अवस्थाओं में से निकलते हैं। अतः इन बाह्य दुःखों और चिन्ताओं को आनन्द से आने दो। ऐसे अड़ोस पड़ोस में ही वेदान्त को व्यवहार में लाओ। और जब वेदान्त-तत्त्व में रहने लगोगे, अर्थात् जब वेदान्त आपके आचरण में आ जायगा, तो आप देखोगे कि ये अड़ोस-पड़ोस और अवस्थायें आपसे हार मानेंगी, आपके आगे सिर झुकायेंगी, आपके आधीन हो जायेगी, और आप उनके स्वामी बन जाओगे। क्या यह समाज है, जो हमें नीचे गिराता है? क्या यह दुनिया है, जो हमें नीचे दबाये रखती है? नहीं, आप तो इस दुनिया में रहते ही नहीं। प्रत्येक व्यक्ति तो अपनी ही रचित छुद्र दुनिया में रहता है। कितने थोड़े ऐसे पुरुष हैं, जो इस संसार में रहते हैं? इस विशाल संसार में बहुत ही थोड़े मनुष्य रहते हैं; आप तो अपनी रचित छोटी सी दुनिया में रहते हैं। आप लोगों ने अपने-अपने छुद्र व्यक्तित्व के चारों ओर अपनी अपनी दुनिया बना ली है। कितने ऐसे लोग हैं, जो, छोटे से घरेलू वृत्त से परे कुछ नहीं जानते। कितने ऐसे लोग हैं, जो अपनी जाति की सृष्टि के बाहर कुछ नहीं जानते। कितने ऐसे लोग हैं, जिनको अपने पति-पत्नी या बाल-बच्चों की रचित छोटी सृष्टि के बाहर कुछ मालूम नहीं। कम से कम आप इस विशाल संसार में तो रहिए। इन छोटी सी तुच्छ दुनियाओं से तो ऊपर उठिये। यह विशाल, विस्तृत सृष्टि तो आपको नीचे नहीं दबाये रखती; ये आपकी अपनी ही रचित छोटी-छोटी सृष्टियां हैं, जो आपको नीचे दबाये रखती हैं; यदि आप इस छोटी सृष्टि से ऊपर उठ सकें, तो सारी दुनिया आपके आधीन हो जायगी, आपके आगे हार मान लेगी।

वस्तुतः कर्म क्या है, इस पर विचार करने से हमारे निजनिर्मित छुद्र संसार का उदाहरण मिल जायगा। आप कहते हैं कि हम अति प्रवृत्त रहते हैं, और राम ने इस देश में लोगों को समयाभाव की शिकायत करते देखा है। यद्यपि राम को यह देखकर हँसी मालूम हो रही है कि लोग अपनी सारी जिन्दगी तो समय का खून करते, वक्त बरबाद करते हैं, और तिस पर समयाभाव की शिकायत करते हैं। उन्हें वक्त तो इतना काफी मिलता है कि उनके सिर पर वह भार हो जाता है, और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर भी वे कहते हैं–"हमारे पास समय नहीं है।" आप अपने संकल्पों में समय खो रहे हैं, आप समय नष्ट कर रहे हैं, और फिर भी कहते हैं कि समय नहीं है।" यह कैसी बात है? कर्म के रूप के विषय में जो भ्रम आपको हो रहा है, वही आपकी शिकायत का कारण है। आप 'कर्म' उसको कहते हो, जो वास्तव में 'कर्म' नहीं है। भिन्न-भिन्न लोग कर्म की भिन्न-भिन्न परिभाषा करते हैं। विज्ञान या यन्त्र-विज्ञ (Mechanics) लेखक कर्म की एक प्रकार से परिभाषा करते हैं, और हम लोग दूसरी प्रकार से। उन के मतानुसार आप यदि सम धरातल (मैदान) पर चल रहे हों, तो कोई कर्म वास्तव मे नहीं कर रहे हैं; जैसे गेंद यदि चिकनी साफ समतल भूमि पर लुढ़क रही हो, तो वह वास्तव में कोई कर्म नहीं कर रही है। आप तभी कर्म करते हो, जब चढ़ाई पर ऊपर चढ़ते हो; जब आप सम धरातल पर चलते हो, तब कोई कर्म वास्तव में नहीं करते हो, वह कर्म की परिभाषा करने का विचित्र ढग है। अध्यात्म–शास्त्र कर्म की परिभाषा दूसरी रीति से करता है। अध्यात्म शास्त्र के अनुसार आप तभी कर्म करते होते हो, जब आपका मन उस कर्म में प्रवृत्त है; पर यदि आप कोई कर्म हाथ से तो कर रहे हो और आपका मन उनमें लगा नहीं है, तो वह वास्तव में कर्म नहीं कर रहे हैं। आप श्वाँस लेते हो, किन्तु अध्यात्म-शास्त्रानुसार श्वाँस लेना कोई कर्म नहीं है; खून आपकी नाड़ियों में बह रहा है, यह एक हिसाब से तो कर्म है, किन्तु अध्यात्म–शास्त्रज्ञों के मतानुसार यह कर्म नहीं। अध्यात्म-शास्त्रवेत्ता "कर्म वास्तव में क्या है" इसे दिखलाने के लिए एक बड़े मार्के का उदाहरण देते हैं:—

एक पुराना अभ्यासवृद्ध योद्धा था, जो सैनिक शिक्षा और कवायद मे इतना अभ्यस्त था कि ड्रिल (कवायद) की क्रियायें उसके लिए स्वाभाविक हो गयी, अर्थात वह कवायद की क्रियायें यन्त्रवत् किया करता था। दूध का एक भारी मटका व कुछ और खाद्य वस्तुयें हाथ में लिये यह योद्धा बाजार में जा रहा था। वह अपने हाथों में या कन्धों पर दूध का भारी घड़ा ले जा रहा था। वही बाजार में एक बढ़ा मस्खरा आ पहुंचा। उसने चाहा कि यह सब दूध और अन्य स्वादिष्ट खाद्य पदार्थ उसके हाथ या कंधे पर से नाली (मोरी) में गिर जायं। अतः वह मनुष्य एक किनारे खड़ा हो गया, और वहीं से बोल उठा "अटेन्शन! अटेन्शन!! (attention, attention सावधान हो! सावधान हो!!)।" आप को मालूम है, कि जब हम अटेन्शन (attention) कहते हैं, तो हाथों को नीचे गिर जाना चाहिए। इस अभ्यासवृद्ध योद्धा ने ज्यों ही यह 'अटेन्शन, शब्द सुना, त्यों ही उसके हाथ स्वतः नीचे गिर गये और सब दूध या अन्य वस्तुयें, जो उसके पास थी,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाली में गिर गयी। बाजार के सभी राहगीर और दुकानदार इस पर पेट भर हंसे। आप देखते हैं कि जब उसने अटेन्शन (सावधान) का शब्द सुना, तत्काल उसके हाथ नीचे गिर गये। परन्तु अध्यात्मशास्त्र के कथनानुसार उसने कुछ कार्य नहीं किया, ऐसा कर्म तो स्वाभाविक - कार्य (reflex action) कहलाता है। स्वाभाविक कर्म कोई कर्म नही है, क्योंकि उसमें मन नहीं लगा होता है।

क्रमश:

रामायण चरित्र चित्रण ★★★ सीता

स्वामी तीर्थानन्द 'अज्ञ'

रामायण के नायक 'श्रीराम' का चरित्र भव्य और दिव्य है। ऐसे उच्चतम चरित्र नायक की पत्नी भी वैसी ही भव्य है जैसी होनी चाहिए भारतीय नारी जीवन का चरित्र आदर्श अर्थात् सीता। सीता का स्त्री जीवन देखकर सारा जगत आश्चर्य चकित होता हैं। किसी ने लिखा है; ... "No woman that I have read of, certainly no woman that I have see, comes near Valmike's Conception of Sita. she is unapproachable." ऐसे उद्‌गार जिस स्त्री के बारे में निकले हैं। ऐसी मां का जीवन चरित्र अवलोकन करना एक सौभाग्य लगता हैं।

वाल्मीकि को विश्वास था कि मेरी लिखी हुई रामायण दीर्घ काल तक चलेगी। मनुष्य का पथ प्रदर्शन करेगी। जहां तक सत्य के विचार कायम हैं, लोगों में मांगल्य हैं, वहां तक लोग रामायण पढ़ते रहेंगे। समालोचक भले उपेक्षा करते रहें। किन्तु यह सब सहने के लिये तैयार होकर वाल्मीकि ने सीता को अयोनिज रखा हैं। वाल्मीकि का सीता के चरित्र के बारे में कहना था कि "ऐसा अलौकिक दिव्य स्त्री रत्न गर्भ से जन्म नहीं ले सकता।" और फिर ऐसे लावण्यरत्न की देखभाल करने वाला पिता भी कोई दिव्य होना चाहिए। इसलिए "मिथिलायां प्रदग्धायां नमे दह यति किंचन।" बोलने वाला महापुरुष विदेही जनक को नियति ने सीता का पिता बनाया है। स्वयं भगवान श्री कृष्ण जिनका गीता में वर्णन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करते हैं 'आस्थिता जनकादयः' ऐसे विदेही के चरणों के पास बैठकर इस अलौकिक शक्ति ने लोकोत्तरता, सौजन्यता, प्रेम एवं चरित्रता का पाठ सीखा था। ऐसी अद्भुत लावण्यमयी सुन्दरी का पति निश्चित करने के लिये नियति ने धनुष यज्ञ का नाटक रचाया और महान बलशाली, स्वर्ग के समान तेजस्वी, वीरवर राम के हाथों में इस अति लावण्यमय, सुन्दर मृदुल फूल को सौंप दिया गया।

"यः सुंदरस्तद्वनिता कुरूपा या सुंदरी सा पतिरूप होना। यत्रोभयं तत्र दरिद्रता च विधेर्विचित्राणि विचेष्टितानि॥" जहां सौन्दर्य होता है वहां दरिद्रता निवास करती हैं। नियति ने अपने इस नियम को भी यहाँ पर भंग कर डाला है। इस बारे में सीता स्वयं अनुसूया से कहती हैं कि 'उनका अलौकिक शौर्य तथा लोकोत्तर विवेक देखकर मेरा मस्तक आदर भाव में झुक गया। स्त्रियों की Psychology का अभ्यास जिन्हों ने किया होगा वे अच्छी तरह जानते होंगे कि स्त्रियाँ हमेशा ऐसा पति चाहती हैं कि जहाँ आदर से उनका मस्तक झुक जाय। स्वयंवर के बाद एक प्रसंग आता है कि जहाँ पर राम के विवेक पूर्ण उद्गार सुनकर सीता उनके आर्यत्व की प्रशंसा अपने मुख से सती अनुसूया के सामने बखान करती है। पिता को पूछे बगैर सीता जैसे रत्न को स्वीकार करने में राम अपनी असमर्थता प्रगट करते हैं। सीता के पास अलौकिक सौन्दर्य था। तथा दाम्पत्य जीवन के सभी गुण उनमें विद्यमान थे। राम के हृदय में क्या है यह केवल राम के मुख पर देखकर ही सीता बता सकती थी। दोनों अपने दाम्पत्य जीवन में एकरूप हो गये थे। उनका जीवन संसार इतना सुखी था कि वैसा सुखी–संसार दूसरे किसी का देखने में नहीं मिलता। सीता को राम के ऊपर पूर्ण विश्वास था। किसी प्रकार के मोह के वशीभूत न होकर, पूर्ण विचार करते हुए ही सीता ने राम से प्रेम किया था। तभी तो कहती हैं, 'दीनो वा राज्य हीनो वा यो मे भर्ता स मे गुरु। मेरा राम के साथ विवाह हुआ है, सांसारिक सुखों के लिये हीं शादी नहीं की है। सीता ने अपने जीवन द्वारा दाम्पत्य जीवन का दिव्य आदर्श समझाया है। सीता का राम पर कितना अटूट विश्वास था यह जानने के लिये सीता-हरण के प्रसंग पर दृष्टि डालनी पड़ेगी। रावण द्वारा राम की भर्त्सना करने पर सीता उससे कहती है "तू शृगाल है और सिंहनी की अभिलाषा मन में रखता है। तुझे देवता नहीं मार सकते तो क्या हुआ। मेरे राम तुझे अवश्य मार डालेगें?" कितनी निर्भयता, पति के सामर्थ्य पर कितना अटूट विश्वास। सीता ने राम को आत्म–समर्पण कर दिया था। फलस्वरूप जो राम के विचार थे वही सीता के भी थे। सच्चा संसार आत्मसमर्पण में है। व्यक्ति स्वातंत्र्य में नहीं। सीता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने कर्तव्य निष्ठा एवं धर्मनिष्ठा से वनगमन की बात राम के मुख से सुनी उस समय कैकेयी ने क्या कहा यह पूछने पर नहीं बैठी। एक अक्षर भी पूछे बगैर वन में जाने की तैयारी करने लगी। सीता कहती थी; 'राम का धर्म नहीं, मेरा धर्म'।

सीता व्यवहार में अति कुशल थी। तभी तो रावण द्वारा हरण करके ले जाने पर एक एक आभूषण उतारकर मार्ग में फेंकती चली जा रही हैं। ताकि राम को पता लगाने में मुश्किल न हो। कुल वधू की कर्तव्यनिष्ठा निभाना सीता अच्छी तरह जानती थी। यही कारण था कि राम – लक्ष्मण की अनुपस्थिति में पति वेश धारण करके आए हुए रावण को भिक्षा देने के लिए सीता लक्ष्मण रेखा को लांघकर आगे बढ़ी और स्वयं अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मार ली। कारण, इक्ष्वाकु कुल में द्वार पर आया हुआ याचक कभी खाली हाथ वापस नहीं लौटा। गुरुदक्षिणा के लिये १४ करोड़ स्वर्ण मुद्राएं मांगने आया कौत्स क्या खाली हाथ वापस जायेगा? यह कभी हो नहीं सकता। यही प्रश्न आज सीता के सम्मुख उपस्थित हुआ था और कुल की मर्यादा रखने के लिये सब कुछ जानते हुए भी सीता को लक्ष्मण-रेखा लांघनी पड़ी। सीता जितनी सौजन्य मूर्ति थी उतनी ही उदार हृदया थी अशोक वन में तकलीफ देने वाली राक्षसियों के प्रति हनुमान जी को कहती है "वे तो अपना पेट भरने के लिये अपनी नौकरी बजातीं थी इसमें उनका कोई अपराध नहीं है। अतएव उनको दण्ड देने की कोई जरूरत नहीं हैं। अपने दुश्मनों के प्रति इतना उदारभाव रखने वाली सीता पर किस को पूज्यभाव नहीं होगा। उनके संसार में प्रेम की अभंगता थी। सीता का त्याग करने से लोगों के मन में राम के प्रति शंकित वातावरण पैदा हो जाता है। परन्तु जिसका त्याग किया है उस सीता के मन में राम के प्रति अंशमात्र भी आदर भाव कम नहीं होता। बल्कि बढ़ जाता है। सीता कहती हैं "राम ने सीता का नहीं किन्तु राजा राम ने रानी सीता का त्याग किया है। मेरे सम्बन्ध में उन्हें जरा सा भी अविश्वास नहीं हैं। परन्तु अयोध्या की रानी अयोध्यावासियों की निन्दा का पात्र न बन जाये इस लिये मेरा त्याग किया है।" वह लक्ष्मण से कहती है; "राम को यह मेरा सन्देश कहना अपनी तबीयत संभालना। मेरी बिल्कुल फिक्र न करना। मैं वाल्मीकि जी के आश्रम में सुख से हूँ। प्रजा का अच्छी तरह से पालन करना तथा सभी भाईयों के साथ अच्छा वर्ताव करना'। शांतमूर्ति सीता का यह संदेश लक्ष्मण नीचे गर्दन झुकाकर सुन लेते हैं।

लव कुश के समक्ष सीता वापस आती हैं। उस समय राम द्वारा उसके निरपराधत्व को स्वीकार कर लेने पर सीता बहुत बड़ी भयंकर प्रतिज्ञा करती हैं।

"मनसा कर्मणा वाचा यदि रामं समर्चये।
तदा मां माधवी देवी विवरं दातुमर्हति।।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यहां पर सीता के जाज्वल्य चरित्र का परिचय मिलता है। और भूमि प्रवेश करने के बाद इस लौकिक, अद्वितीय, अत्युत्कृष्ट, अयोनिज, सीता का अन्त हो जाता है। स्वर्ग का कोमल पुष्प जगत को सुगन्धित करके चला गया। उसकी सुगंध दशों दिशाओं में फैल गई। जिस कारण 'रामायण' देश में ही नहीं अपितु विदेशों में भी प्रसारित हो गई। वह कोमल पुष्प अपना कार्य पूर्ण करके चला गया। उसकी सुगन्ध अभी लोगों को मिलती है और हजारों वर्षों तक मिलती रहेगी। निष्कलंकता सिद्ध होने के बाद वह दिव्य सीता मर्यादा पुरुषोत्तम राम को फिर न मिली और उनका बलिदान एक अमर प्रसंग बनकर रह गया।

❀ ॐ ❀

श्री माँ श्री माँ श्री मां

साधु वेष में एक पथिक

प्र०—साधना की शक्ति नहीं हो तब क्या करें ?

उ०—साधना की शक्ति सभी साधक में है, किन्तु सिद्धि की प्यास प्रबल नहीं है, इसी लिए जिस शक्ति से साधना में सिद्धि मिल सकती है वही शक्ति धन या भोग या मान की चाह में व्यय हो रही है।

प्र०—हम चाहते हैं कि भोगों से विरक्त बनें, फिर क्यों नहीं बन पाते ?

उ०—आप प्रतिकूलता का दुःख आने पर ऊपरी मन से विरक्त बनना चाहते हैं परन्तु भीतर ही भीतर भोग से मिलने वाले सुखों की आसक्ति बनी रहती है।

प्र०—विरक्त होने के लिए गृह-परिवार, सम्पत्ति का त्याग करना चाहिए या नहीं ?

उ०—बाह्य त्याग से विरक्ति नहीं होती। जब मन में किसी प्रकार के सांसारिक सुखों के प्रति आकर्षण नहीं रहता तब विरक्ति होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन में साहित्य का महत्व

विवेश त्यागी

साहित्य समाज का दर्पण है। हमारे जीवन में साहित्य का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। साहित्य हमारी कौतुहल और जिज्ञासा वृत्ति को शांत करता है, ज्ञान की पिपासा को तृप्त करता है और मस्तिष्क की क्षुधापूर्ति करता है। साहित्य के ही द्वारा हम अपने राष्ट्रीय इतिहास से, अपने देश की गौरवगरिमा से, अपनी संस्कृति और सभ्यता से, अपने प्राचीन रीति रिवाजों, रहन सहन और परम्पराओं से परिचय प्राप्त करते हैं। आज से एक या दो शताब्दी पहले देश के किस भाग में कौन सी भाषा बोली जाती थी ? उनके सामाजिक और धार्मिक विचार कैसे थे ? उस समय की वेश-भूषा क्या थी ? यह सब कुछ तत्कालीन साहित्य के अध्ययन से ज्ञात होता है। जिस देश या जाति के पास जितना उन्नत और समृद्धिशाली साहित्य होता है वह देश और वह जाति उतनी ही अधिक उन्नत और समृद्धिशाली समझी जाती है। कितनी ही जातियां और नवीन धर्म उत्पन्न हुए परन्तु ठोस तथा स्थायी साहित्य के अभाव में ही उन्हें काल कवलित होना पड़ा परन्तु आज भारतवर्ष युगों युगों से अचल हिमालय की भांति अडिग खड़ा है। यदि आज हमारे पास चिर समृद्ध साहित्य न होता तो न जाने हम कहां होते और होते भी या नही कुछ कहा नहीं जा सकता।

जीवन को सुचारु रूप से चलाने तथा नित नये विचारों से अवगत होने के क्रम में साहित्य का महत्व बहुत अधिक है। साहित्य मानव मस्तिष्क की देन है। मानव एक सामाजिक प्राणी है वह परावलम्बी और स्वावलम्बी ज्ञान के आधार पर अपना ज्ञानार्जन करता है फिर उसके हृदय में एक नैसर्गिक लालसा उत्पन होती है कि वह भी अपनी भावना और विचारों को संसार के आगे अभिव्यक्त करे। और उसकी यह इच्छा साहित्य के माध्यम से ही पूरी होती है। अपनी भावनाओं और विभिन्न विचारों की रूप-रेखा साहित्य में खींच कर ही वह काफी संतुष्ट हो जाता है। किसी देश के किसी समय का ठीक ठीक चित्र यदि हम कहीं देख सकते हैं तो वह देश के तत्कालीन साहित्य में सम्भव है। हिन्दी साहित्य के इतिहास को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि समय और समाज के परिवर्तन के साथ साथ साहित्य में भी परिवर्तन आवश्यक हो जाता है। इस तरह समय के साथ साथ साहित्य में भी परिवर्तन होता है।

साहित्य जीवन की व्याख्या है, आलोचना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, उसमें जीवन के विभिन्न पहलुओं पर विचार किया जाता है जीवन निर्वाह के सिद्धांत निश्चित किये जाते हैं। साहित्य समाज का मार्ग प्रदर्शन करता है, उसे अनुचित से हटाकर उचित की ओर लगाता है। इसीलिए हमारे प्राचीन साहित्य में अन्त में पाप और दुराचार की पराजय और उसपर सत्य, न्याय, धर्म आदि सदगुणों की विजय दिखाई गई है। अमंगल की क्षति करना साहित्यकार का प्रधान लक्ष्य होना चाहिए। कहने का अर्थ यह है कि जन-कल्याण करने वाला ही साहित्य कहा जा सकता है।

कुछ लोगों का विचार है कि साहित्य समाज का दर्पण है। उनके अनुसार साहित्य समाज का वास्तविक और यथार्थ रूप ही हमारे सामने प्रस्तुत करेगा। परन्तु प्रश्न यह है कि इस प्रकार के साहित्य से क्या लाभ? जो वैद्य केवल मरीज की मर्ज को सामने रख दे क्या उस वैद्य से रोगी का कल्याण हो सकता है? कल्याण तो ऐसे वैद्य से हो सकता हैं जो उस मर्ज की अच्छी से अच्छी औषधि दे और रोगी को यह अनुभव न होने दे कि वह इतने भयानक रोग से आक्रान्त है। ठीक यही बात साहित्य के विषय में भी है। जीवन और समाज के केवल पापमय चित्र को प्रस्तुत करने वाला साहित्य साहित्य नहीं हो सकता। साहित्य से तो सत्यम् शिवम् सुन्दरम् की रक्षा होनी चाहिए।

यह निश्चय है कि संसार में उत्तम और अधम सभी प्रकार के प्राणी रहते हैं पाप और पुण्य भी रहते है। साहित्य में सभी का थोड़ा थोड़ा प्रतिनिधित्व रहना चाहिए परन्तु लोक कल्याण के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि पाप पर पुण्य की विजय दिखाई जाए। साहित्य में पूर्ण सत्य की रक्षा होनी चाहिए। और इसी उद्देश्य को लेकर व्यक्ति को अपने जीवन के विभिन्न उद्गारों को रेखांकित करना चाहिए।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जीवन में साहित्य के महत्व के विषय में जो भी कहा जाए वह कम ही है। लेकिन तब भी थोड़े से शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि साहित्य मनुष्य के जीवन के विभिन्न पहलुओं को प्रेरित कर उन्हें एक निश्चित दिशा प्रदान करता है।

★ ★ ★ ★ ★ ★ ★

- प्रश्नोत्तर -

प्र०—मूर्ख के लक्षण क्या हैं?

उ०—जो स्वयं को खोकर इन्द्रियों का सुख, शरीर का मान और धन पाने की धुन में हैं, वे ही मूर्ख हैं।

जो परिणाम को देखे बिना ही खाते-पीते, हंसते बोलते हुए अहंकार को सन्तुष्ट करते हैं वे ही मूर्ख हैं।

जो बुद्धि की सम्मति न मान कर मन की ही सब कुछ करते हैं वे ही मूर्ख हैं।

जो समझने पर भी नहीं समझते, समझाने वाले विद्वान् को समझाना चाहते हैं वे ही मूर्ख हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्संगः सेव्यताम्

स्वामी ब्रह्मानन्दः, एडवोकेट
ऋषिकेश

स्वयम् को मानव सर्वोपरि समझता और मानता भी है; अपने बोधके कारण वह वास्तव में है भी, बोध ही मानव को इतर प्राणियों से अलगाता है परिणामतः उसका सर्वेश्वरत्व बना रहता है किन्तु बोधाभाव में इतर प्राणियों के सम-कक्ष ही नहीं निम्न भी हो जाता है विशेषकर आहार निद्रादि सहज कर्मों के लिये । बुद्धिबल से मानव सर्वेश्वर बन जाता है फलतः वह अन्य सभी सजातीय, विजातीय सक्षम से सक्षम प्राणियों को भी अपने आवर्त में ले लेता और सबको यथा सम्भव है अपने शासन में रखता है । अपने बोध एवं कौशल से अन्य प्राणियों को शनैः शनैः प्रशिक्षित करता है आत्मानुकूल बनाता है, आधिपत्य में रखता है, फलतः सभी उसका आदेश मानते हैं - भयेन प्रेम्णा वा । एवमेव कुशल व्यक्ति साधनों में निर्बाध सफल होता है । कुशलता प्राप्ति ही साध्यतम है । जिससे मानव दूसरे प्राणियों का प्रभु बन जाता है बिना किसी ननु न च के किन्तु, उसका प्रभुत्व एकान्ततः स्वार्थपरक नही है प्रत्युत जिन पर आधित्य रहता है, जो आदेश वे भी वहन करते हैं किसी न किसी रूप में लाभान्वित होते हैं । प्राप्त कौशल का मानव साधिकार उपयोग करता है किन्तु सर्वथा स्वार्थपरता से नहीं प्रत्युत उससे दूसरों को भी लाभ होता है । इस प्रकार अधिकारी तथा अधिकृत दोनों की यथोचित इष्टापूर्ति होती है, चैतन्यात्, अन्यथा जाड्य में उभयलाभ का प्रश्न नहीं । चेतन होने पर भी कौशल के अभाव में किसी को आत्मानुकूल करना सम्भव नहीं ।

परम्परागत कृषिकार्य को हल बैल हलिया सम्पन्न करते हैं, ये तीनों निमित्त कारण हैं जिन्हें उपकरण भी कहते हैं, भूमि एक प्रकार से अधिष्ठान है परन्तु वास्तविक अधिष्ठान कारण है बीज ही कारण है । जिससे कार्योत्पन्न हो उपादान कारण है, जिसके सहयोग से कार्योत्पन्न हो निमित्त कारण है । सक्षमता उपादान कारण की है एवं कुशलता निमित्त कारण की । बीज की सक्षमता के अभाव में क्षेत्र की उर्वरता तथा सहकारी कारणों की कुशलता से कदापि कार्योत्पत्ति सम्भव नहीं । कारण में सक्षमता सहज है सहकारी कार्य में सौन्दर्य तथा पुष्टता भरते हैं, अन्यथा बीज अपनी स्वाभाविक क्षमता से कहीं भी उग सकता है किन्तु साहाय्य के अभाव में सौन्दर्य और पुष्टता प्रभृति नहीं आ पाते हैं ।

सहज कौशल यथासम्भव प्राणिमात्र में सुलभ है किन्तु उसका अर्जन मानव ही कर सकता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है यदि ईष्यालु नहीं, आलसी नहीं और सदा जागरूक है अन्यथा वह भी इतर कोटि में रह जाता है। इस कौशल का अर्जन करना ही सर्वोपरि कौशल है, संस्कार एवं परिश्रम के सहयोग से वह सुलभ है। मानव की श्रेष्ठता इस कौशल से प्रकट होती है, वह मिलता है संगति से। संग अथवा संगति एक ही बात है किन्तु वे निर्विशेष हैं, सविशेषता के लिये विशेषण लगते हैं। जिससे उनमें एक प्रकार से अर्थान्तर आ जाता है, उचितानुचित हेयोपादेय, स्तुत्य, निन्द्य कुछ भी हो सकते हैं, इस द्वन्द्व का विवेक ही कौशल है। शब्द की प्रकृति प्रत्ययांतर से अर्थान्तर हो जाता है, एवमेव सोपसर्गक शब्द भी भिन्नार्थक सिद्ध होता है किसी का संग करना किसी को सगी बनाता है अन्यथा वह असंगी अथवा निःसंगी है। सत्संग ग्राह्यत्व स्तुत्य पक्ष है, दुःसंग हेय तत्व निन्द्य पक्ष है।

किस की प्रेरणा से कौन किस दिशा में आकृष्ट एव प्रवृत्त होता है यह सस्कार के साथ ही विवेक पर भी निर्भर करता है। शुभ संस्कारों से सबलित, प्ररित अथवा स्वयमेव प्रवृत्त मानव सत्संग करता है अनुक्षण उदीयमान रहता है तथा अविलम्ब कुशल एवं सक्षम हो जाता है, परिणामतः वह सर्वेश्वर बन जाता है, जिस किसी पर उसका प्रशासन चलता है। अपने अशुभ संस्कार वशात् मानव हीयमान रहता है, वह विकास वृत्ति से अज्ञ रहता है परिणामतः परशासन में निर्वाह करता है। कभी कभी वह आत्मापकारी ही नहीं परापकारी भी सिद्ध हो जाता है, वह अपना अपकार करता है तथा दूसरों का भी अपकारक होता है। जीवन का लक्ष्य समझना ही सर्वोपरि कौशल है।

जीवन सावधिक है, देश काल की परिधि में आवृत्त है. वह किसी समय एवं किसी स्थान पर है। जीवन किधर से आता और किधर जाता है एक व्यापक प्रश्न है जिसके उत्तर अपनी मति के अनुसार सर्वत्र सुलभ हैं किन्तु वह भी सापेक्ष हैं निरपेक्ष नहीं। जिसके अन्तः करण में जीवन सम्बन्धिनी जिज्ञासा प्रस्फुटित हो जाती है उसकी प्रवृत्ति सत्संग की ओर दौड़ती है। सत्संग एक ऐसा केन्द्र है जहां से विभिन्न निर्माणात्मक शिक्षण प्रसृत होते हैं, सत्संग विश्वविद्यालय है, यदि वह बहुवक्तृक है, एक वक्तृक सभा सम्भवतः चट्टशाला भी नहीं। चट्टशाला (प्राईमरी पाठशाला) में एक ही उपाध्याय सब प्रकार का उपाध्याय है, वही अक्षरबोध, भाषाबोध, इतिहास, भूगोल, गणित प्रशासन प्रभृति अध्यापन करता है, शासन तथा प्रबन्ध व्यवस्था पढ़ाता है। यद्यपि छात्र को विविध बोध होता है किन्तु वह अस्पष्ट रहता है उसके स्पष्टीकरण के लिये–साहाय्यमितराम्–अपेक्षित है। सत्संग की उपयोगिता बहुवक्तृता में है जहां विभिन्न वक्ता विभिन्न प्रकार से प्रवचन करते हैं, अपने कौशल से जिज्ञासु सत्संगी को सन्तुष्ट करते हैं, प्रयोजनार्थी अपनी प्रयोजन सिद्धि में सफल होता है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपस्थितिमात्र अपना लक्ष्य न बनाकर ज्ञानार्जन उद्देश्य समझता है । उपस्थिति भी छिद्रान्वेषण हेतु होना तो अपराध है। निष्प्रयोजन किसी की प्रवृत्ति नहीं होती है प्रयोजन सार्थक ही उचित है। सत्संग का लाभ जीवन के लिए परम साधक है। जिस ज्ञान के लिये हम इधर उधर भटकते हैं वह सत्संग से सुलभ है, एवमेव सत्संग का महत्व प्रसिद्ध है, क्योंकि सत्संग से अज्ञ भी भिज्ञ हो जाता है, जड़ भी विद्वान् बन जाता हैं, अविनीत भी सरल और कुटिल भी ऋज हो जाता है। जाड्यं धियो हरति सिञ्चति वाचि सत्यम्। सत्संग सेवी का अपना महत्व है किन्तु द्वितीय की अपेक्षा प्रथम अधिक महत्व पूर्ण है, सत्संगी कदाचित अपकारक नहीं, अपनी सज्जनता से दुर्वृत्त को भी सदवृत्त बना देता है। अपने व्यवहार से अपनी उपलब्धि का परिचय देना सामान्य हैं।

सर्व आत्मानुरूपं वृणुते, विवेकस्तत्र साहाय्यः, सत्संगात्तल्लभ्यते, तस्मात् सत्संगः सेव्यतामिति शम्।

स्वामी रामतीर्थ मिशन, दिल्ली के २६ वें वार्षिक वेदान्त सम्मेलन में आयोजित छात्र वाक् प्रतियोगिता में द्वितीय घोषित वक्ता-देवेन्द्र कुमार गुप्त XII B जैन समनोपासक उ० मा० विद्यालय, सदर बाजार दिल्ली का भाषण–

स्वामी राम के धर्म की पृष्ठभूमि

आदरणीय अध्यक्ष महोदय ! उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध और बीसवीं सदी के पूर्वार्ध में दो महान घटनाएं घटी। एक १८५७ की प्रथम क्रान्ति और दूसरी भारत के संतों की आध्यात्मिक क्रान्ति। ध्यान से देखें तो भारत का मस्तक यदि आज गौरव से उन्नत हुआ है तो वह इतना राजनीतिक क्रान्ति के कारण नहीं जितना आध्यात्मिक क्रान्ति से हुआ है। स्वामी राम, श्रीराम कृष्ण परमहंस, रमण महर्षि, तपोनिधि अरविन्द, स्वामी विवेकानन्द आदि इस अध्यात्म जागरण के ज्योतिस्तम्भ थे जिनके आलोक में देश ने अपना मार्ग जाना, और मार्ग जानने का संबल प्राप्त किया। इन्हीं तीर्थभूत आत्माओं के कारण भारत पुनरपि भा-रत हो सका।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस पृष्ठभूमि में हम स्वामी राम के अवतरण, रूपान्तरण (गोस्वामी तीर्थ राम से स्वामी राम) और स्वामी राम से आत्मदेव, परब्रह्म, कैवल्य, अद्वैत' सच्चिदानंद राम के होने की यात्राओं के पूर्व-चिह्न खोजेंगे, अर्थात पुरो-भूमि जानने की चेष्टा करेगें ।

सरदार पूरण सिंह, जिन्हें इस ब्रह्म ज्योति का टोकियो में सर्व प्रथम स्वागत करने का अवसर मिला, लिखते हैं कि स्वामी राम के विकास की यात्राओं के विवरण हमारी आँखों से ओझल हैं । उनकी बात को मैं यों रखता हूं कि जब हम राम के दर्शन करते हैं तब वे पूर्ण जाज्वल्यमान अद्वैत के सूर्य दिखाई देते है, तब उसकी पूर्व-किरणे सम्भवत: उनके पिछले और हमसे अज्ञात जन्मों की यात्राओं में छिपी हैं । यह तो एक ऐसा बृहत् हिम-शिलाखण्ड है जो चेतनाओं की यात्राओं के समुद्र में डूबा है । यह जन्म तो उसका एक सहस्त्रांश मात्र है जो हमारे समक्ष है और जिसमें हम पृष्ठभूमि खोजने का दुस्साहस और वह भी पंगु-चेष्टा करेंगे ।

अध्यक्ष महोदय ! स्वामी रामतीर्थ के धर्म की पृष्ठ भूमि के बाह्य साक्ष्य के रूप में भी बहुत कम सामग्री उपलब्ध है । अपने प्रारम्भिक जीवन में वे श्री धन्ना भक्त से अत्यन्त प्रभावित रहे; उनके प्रभाव से इनके वेदान्त का अनुभूति पक्ष अत्यन्त सबल रहा । वे धन्ना भक्त को अपना गुरु मानते रहे ।

उनकी 'अलिफ' पत्रिका के उपलब्ध अंक इनके व्यापक अध्ययन और सत्य की खोज की ललक को द्योतित करते हैं ।, जहां उन्होंने फारसी के जेबुन्निसा और अन्यान्य संतों के उद्धरण दिये हैं वहां पश्चिमी जगत की विचार-सम्पदा से भी अलिफ को संबलित किया है । जैसे उन्होंने नई इंजोल, टेनिसन, इमर्सन और शौपनहोर के विचारों को रखा है वैसे ही वेदों और उपनिषदों के उद्धरण भी वहां यत्र तत्र मिलते हैं ।

अध्यक्ष महोदय ! कितने अस्पष्ट हैं मार्ग के ये मील पत्थर ! सरदार पूरन सिंह लिखते हैं, "उनके प्रेम की अवस्थाएं सदा ही अज्ञात रहेंगी क्योंकि उन्होंने अपने व्यक्तिगत जीवन को हमसे छिपाए रखना ही पसंद किया । प्रभु विरह की पीर रात भर इन्हें रुलाती रहती, किन्तु पत्नी को केवल आंसुओं से गीली तकिए की चादर ही मिलती । पीर की आह उनके मुख से नहीं निकली ।"

स्वामी राम के धर्म की पृष्ठभूमि में अनेक साधु संतों, महात्माओं और कवियों के विचारों, अनुभूतियों और दर्शनों की खाद मौजूद है । ईरान के सूफियों, विशेषत: हाफिज अन्सार, मौलाना रुम और शम्स तब्रेज निरन्तर सान्निध्य में रहे, भक्ति की भूमि भारत में सूर और तुलसी उन्हें प्रेरित करते रहते थे । चैतन्य उन्मत्त प्रेम, तुकाराम व नानक की मधुरता, कबीर ब फरीद तथा हसन व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अबुअली कलन्दर की धारणाएं, प्रह्लाद व ध्रुव की निष्ठा, मीराबाई, बुल्लेशाह और गोपालसिंह की अतिशय आध्यात्मिकता, कृष्ण की गूढ़ता, शिव और शंकर का ज्ञान, इमर्सन, कान्ट, गेटे, कारलाइल वाल्टविट मैन, हक्सले, थीरो, क्रिफर्ड, टिण्डल, मिल डार्विन, स्पैन्सर — ये सभी उनकी पृष्ठभूमि में हैं। उन्होंने अपने समय के किसी भी विचारक की उपेक्षा नहीं की। उनके चित्त के वातायान ब्रह्माण्ड पवनों के लिए सदा भी खुले रहते थे। मैं तो यही कहूंगा, और ऐसा कहने का आधार भी है, कि स्वामी राम के धर्म की पृष्ठभूमि, विशुद्ध शांकर-वेदान्त हैं। शांकर मायावाद उनके धर्म और दर्शन की मूल भित्ति है। वेद, उपनिषद् और ब्रह्म का प्रणव ओ३म्, उनके अस्तित्व, चेतना और दर्शन के आधार हैं।

अध्यक्ष महोदय! मुझे यह स्थापित करने की अनुमति दें कि स्वामी राम का वेदान्त, शास्त्रीय वेदान्त न होकर ब्रह्म की अद्वैत की अनुभूति की अग्नि में सतप्त कंचन है। उन्होंने वेदान्त शब्द का प्रयोग बहुत ही विशाल अर्थों में किया है। कर्म, भक्ति और ज्ञान की त्रिवेणी जिसमें समाहित होती है। उनकी पश्चिमी देशों की यात्रा इस बात का प्रमाण है कि गोस्वामी तीर्थ राम के मूल में भी विशुद्ध भारतीय वेदान्त के प्रति धारणाएं थी और स्वामी राम के भारत लौट आने पर भी जो 'राम' वे बने वह भी भारतीय वेदान्त दर्शन का चूडान्त दिग्दर्शक था।

अध्यक्ष महोदय! क्षमा करें। विषय-विवेचनार्थ उपर्युक्त वक्तव्य रखा है; अन्यथा धर्म की क्या पृष्ठभूमि हो सकती है? ब्रह्म का आदि कहां? अन्त कहां? शंकराचार्य आठ वर्ष की आयु में संन्यस्त हो गए; कहाँ ढूंढ़ोगे उत्तरी पृष्ठभूमि? निपट निरक्षर रामकृष्ण परमहंस हो गये; कहां खोजोगे मूल? शुकदेव जन्म लेते ही आत्माराम हो गए; कहां ढूंढोगे आधार? एक साधारण गोस्वामी परम को उपलब्ध हो गया; कहाँ भटकोगे पृष्ठभूमि के लिए? जो ब्रह्म को जानता है वह ब्रह्म ही हो जाता है। ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति। स्वामी राम भी ब्रह्ममय हो गए, आत्मदेव हो गए; अब कहाँ पृष्ठ? कहां अग्र? और कहां मध्य? अब तो वे विशुद्ध सच्चिदानन्द, अद्वैत, केवल ब्रह्म हैं। उनकी पृष्ठभूमि खोजोगे और वह भी इस सीमित भौतिक बुद्धि की आँख से? इस Historical Method ऐतिहासिक विधि की अपूर्ण और पंगु पद्धति में श्रेय नहीं, श्रेय तो भारत की प्रज्ञा में है, ब्रह्म की अनुभूति में है। वहां कोई आदि नहीं, कोई अन्त नहीं, बस पूर्ण ब्रह्म है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

शिव पुराण के शिव-विवाह प्रसंग में विवाह के समय वर बने शिव से ब्रह्मा पूछते हैं तुम्हारा गोत्र क्या है? शिव सुनते हैं पर अनसुनी कर देते हैं, केवल मुस्कुराकर रह जाते हैं इस प्रश्न पर। ब्रह्मा स्पष्ट करते हैं जब तक गोत्र नहीं बताओगे विवाह संम्पन्न नहीं होगा। विवाह में संकल्प के लिए आवश्यकता है गोत्र की " लेकिन शिव सस्मित और मौन हैं, केवल एक दृष्टि नारद पर डाली और नारद ने मानो शिव की कोई बात समझी तथा छेड़ दी वीणा की तान सब हैरान हैं शिव के मौन पर और नारद के अकारण वीणा-वादन पर आखिर ब्रह्मा ने पूछ ही लिया नारद ! क्या कर रहे हो क्यों निरर्थक वीणा बजाते जा रहे हैं? नारद ने कहा पिता जी वीणा वादन निरर्थक नहीं सार्थक है, यही उत्तर है आपके प्रश्न का आपने ही तो शिव से पूछा है उनका गोत्र क्या है, यही नाद है उनका गोत्र, अव्यक्त शिव शब्द रूप से व्यक्त हुए हैं वैसे तो न जनको जननी न च सोदरो, पिता ही नही है इनका कोई। अनादि हैं ये, तो गोत्र किसका। कारण है सारे विश्व के शिव। यह है शिव का नाद स्वरूप, शब्द स्वरुप ।

रुद्ररूप, शंकर, जिन्हें प्रलयंकारी के रूप में माना जाता है, प्रसन्न हुए और दे दिया वर-तथास्तु। चाहे भस्मासुर के रुप में उलटा ही पड़ हो वह। भाले हैं लेकिन भोले भी। क्या चाहिए पूजन के लिए। केवल बिल्व-पत्र और एक लोटा पानी। उस भील पर भी तो शिव प्रसन्न हुए, जो न पूजा जानता था न अर्चन हां श्रद्धा थी उसमें बस। परोपकार के लिए ही भगवान शिव ने समुद्र-मन्थन से निकले विष का गरल का बिना किसी देवता से यह पूछे कि और रत्न निकले तब मैं याद नहीं आया अब मैं याद आया तुम को, पान किया, गंगावतरण के समय अपनी जटाओं में उलझा उस भगीरथ की तपस्या का फल दिया और परमपुरुषत्व की शक्ति का परिचय भी ।

ज्ञान का कौन सा क्षेत्र है, जिसमें वह भोलेभण्डारी पूज्य, गुरु रूप न हों, नृत्य के क्षेत्र में नटराज हैं, व्याकरण के चौदहों सूत्रों की उत्पत्ति इनके द्वारा बजाये गये नवपञ्चबारम्-चौदह बार डमरु के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शब्द से हुई, तान्त्रिकाचार्यों ने उन्हें अपने प्रमुख आचार्य के रूप में स्वीकार किया, तुलसी ने 'गुरु शंकर रूपिणं, द्वारा गुरु रूप मान संसर्ग से वक्र चन्द्रमा को महत्वयुक्त जग-प्रसिद्ध स्वीकार। और भी ऐसे विश्वास के रूप में माना जिसके बिना योगीजन अपने हृदयस्थ ईश्वर को नहीं जान पाते। संस्कृत महाकाव्यों के प्रसिद्ध कविकुलगुरु कालिदास ने तो अपने प्रत्येक महाकाव्य व नाटक के प्रारम्भ में शिव के अद्वितीय रूप का उल्लेख कर मंगलाचरण किया, क्योंकि भारतीय संस्कृति के सूक्ष्मदृष्टा को सम्भवतया शिव का ही आदर्शमय जीवन समस्त समुदाय के लिए चाहे कलाविद् हो, योद्धा हो, गृहस्थी हो, संन्यासी हो अर्थात प्रत्येक आश्रम के व्यक्ति के लिए अनुकरणीय लगा। क्योंकि उसमें वह सब कुछ था जो किसी आदर्श में होना चाहिए। धैर्य्य का वह स्वरूप जहां पार्वती के सानिध्य में अकाम रहते हैं शिव, कितने सुन्दर शब्दों में कारण सहित दिया गया - **विकार हे तौ सति विक्रियन्ते येषाँ न चेतांसि ते एव धीरा** विकारों के कारण उपस्थित रहने पर भी जिनके चित्त में विकार उत्पन्न नहीं होते वे ही धीर हैं। यह शिव के आन्तरिक बल का प्रतीक, है और भी रामचरित मानस में यह बात स्पष्टतया पार्वती के शब्दों द्वारा सिद्ध होती है - **'तुम्हरे जान काम अब जारा, अब लगि सम्भु रहे सविकास हमरे जान सदा शिव जोगी अज अनवद्य अकाम अभोग** (हे ऋषियो। तुम्हारी दृष्टि में काम अब जलाया गया और अब तक तो महादेव विकार युक्त थे, पर हमारी समझ में तो शिव सदा ही योगी, अजन्मा, काम हीन और भोग रहित है, और भी - **जो तुम कहा हर जारेउ मारा सो अति बड़ अविवेक तुम्हारा, तात अनल कर सहज सुभाऊ, हिम तेहि निकट जाय नाहिं काऊ,** "तुमने जो कहा कि शिव ने कामदेव की जला दिया, यह तुम्हारा बड़ा ही अज्ञान है क्योंकि अग्नि का सहज स्वभाव है कि जाड़ा उसके पास नहीं जाता है और यदि पास जायेगा तो अवश्य नष्ट हो जायेगा"।

इसमें शिव को अहं नहीं है क्योंकि वह तो भक्त हैं निरन्तर नाम जप में लगे तभी तो ऐसी स्थिति में जब कि **धरा न काहूँ धीर सबके मन मनसिज हरे,** शिव की अखण्ड समाधि टूटती नहीं **चली न अचल समाधि शिव** क्यों ? क्योंकि **जेहि राखे रघुबीर ते उबरे तेहि काल महँ**।

यह तो है शिव की मानसिक शक्ति का सौन्दर्य और शारीरिक शक्ति का सौन्दर्य उनके किरात रूप से स्पष्ट हो जाता है जब अर्जुन के समस्त शस्त्रास्त्रों का प्रतिकार बड़ी ही सरलता से शिव कर देते हैं, रावण के साथ रुद्र के युद्ध में भी इसका सुस्पष्ट वर्णन मिलता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिव के स्वरूप को न समझने वाले ही उससे डर कर भागते हैं। लौकिक दृष्टि से अभद्र सा ही स्वरूप है, शरीर पर चिता की भस्म, श्मशान में वास, गले पर कराल सर्प, पीने को विष। लेकिन यह सब अज्ञानियों के लिए है, क्योंकि **अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः** हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहतं मुखम्, तभी तो शिव के स्वरूप को देखकर बालकों के भागने की बात श्रीतुलसी ने की **धरि धीरज तहं रहे सयाने बालक सब लै जीव पराने,।**

सांसारिक वासनाओं, इच्छाओं से युक्त व्यक्ति श्मशानवासी शिव को स्वीकार न करेगा, भय करेगा, भागेगा जीवन वास्तविकता से, यह जानते हुए भी कि जीवन का एक बहुत बड़ा सत्य है श्मशान वहीं शान्त होगा वह, आंखें मूंदे, बिलकुल मौन, समस्त सम्बन्धों से उठा हुआ, केवल स्वयं, अकेला, मात्र अहम्। लेकिन सांसारिक श्मशान में नहीं क्योंकि वहां तो केवल पार्थिव शरीर को ही भस्मीभूत किया जाता है, कहां समाप्त होती है **पुनरपि जननं पुनरपिमरणम्** की अनवरत यात्रा, कहां समाप्त होते हैं सम्बन्ध। अव्यक्त से व्यक्त फिर अव्यक्त का चक्र चलता रहता है। इनकी समाप्ति तो तभी होती है जब ज्ञानाग्नि भस्मीभूत कर देती है समस्त कर्मों को, सचित क्रियमाण और प्रारब्ध भी जहाँ समाप्त होजाते हैं, तीनों शरीर, स्थूल, सूक्ष्म और कारण जहाँ समाप्त हो जाते हैं, त्रिपुटी जहाँ समाप्त हो जाती है, जहाँ - समाप्ति हो जाती है समस्त विधि निषेधाज्ञाओं की वह हैं वास्तविक श्मशान, वहाँ रहते हैं शिव, शिवत्व का वास्तविक विकास वही हैं वहीं है आनन्द, पूर्णता और वहीं है वास्तविक, सच्चा कल्याण भी।

शिव हैं अनिर्वचनीय, इसीलिए उनका परिवार भी साधारण कैसे हो सकता है। विशेष है उनका परिवार, विभिन्न विरोधियों का परिवार। शिव, पार्वती, कार्तिकेय और गणेश छोटा सा परिवार है। पर शिव वाहन बैलनन्दी और मातृवाहन सिंह, गणेश वाहन मूषक और शिव के आभूषण नाग, नाग और कार्तिकय - वाहन मयूर, सभी में वैर है, नैसर्गिक, प्राकृतिक, लेकिन फिर भी सब एक हैं, एक परिवार की व्यवस्था और अहिंसा की प्रतिष्ठा जिसमें हो, ऐसे के पास वैर का परित्याग हो जाता है - **अहिंसा प्रतिष्ठायां तत्सन्निधौ वैर त्यागः** विरोध में अविरोध की स्थिति है शिव की।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह स्थिति प्राप्त होगी धैर्य्य से और उसके लिए आवश्यकता है इष्ट के साथ तादात्म्य की। शिवत्व की प्राप्ति के लिए मर्यादा की आवश्यकता है। राम-शिव का समन्वय इसी बात में है। राम प्रतीक हैं मर्यादा के यही कारण है कि मर्यादा पुरुषोत्तम के विशेषण से राम को अलकृत किया गया। मर्यादा रहित हो शिवत्व की इच्छा और कल्याण विहीन मर्यादा का पालन दोनों गलत हैं। दोनों मार्ग उपयुक्त नहीं, क्योंकि दोनों का सम्बन्ध है और वास्तविक रूप से तो दोनों एक ही हैं- **शिव द्रोही मम दास कहावा सो नर मोहि सपनेहु नहि भावा**– यह राम के रूप में मर्यादा का कथन है।

आज के सन्दर्भ में, जब अमर्यादित, अनुशासनविहीन सम्प्रदायों का विकास हो रहा है, इसका उपयोगित्व और भी अधिक है। एक तरफ तो केवल नियम की श्रृंखलाएं हैं, जिनमें कल्याण के स्थान पर अकल्याण है लेकिन तब भी मोहवश हम उनका परित्याग नहीं कर पा रहे और दूसरी मर्यादा को ताक में रखकर, जो (मर्यादा) कल्याण का आवश्यकीय अंग है, हम अपने, समाज के और विश्व के कल्याण की बात सोचते हैं।

अतः शिव–रात्रि पर जिसमें शिवार्चन होगा, रात्रि जागरण होगा, समस्त वातावरण, हर - हर महादेव के और नमः शिवाय के घोष से युक्त होगा, हमें यह भी सोचना है, विचार करना है कि क्या कारण है कि शिव को पूज्य, श्रद्धेय, आचार्य मानते हुए भी हम उसके जीवन - दर्शन और आदर्श को अपने जीवन में नहीं ला पा रहे? क्या कारण है कि हम शिव - संकल्प युक्त नहीं है? तथा यही शिव – चरणों में प्रार्थना भी करनी है कि हमें धैर्य, ज्ञान, और बुद्धि देते हुए वह जगत्पिता सदैव हम सबकी रक्षा करे और हम **सर्वे भवन्तु सुखिनः, मा विद्विषा वहै,** को व्यावहारिक रूप दे सकें।

यो ददाति सतां शम्भुः कैवल्यमपि दुर्लभम्।
खलानां दण्डकृद्योऽसौ शंकरः शं तनोतु मे।

'जो महात्माओं, सज्जनों, को दुर्लभ मोक्ष देते हैं और दुष्टों को दण्ड, वे शिव, हम सबके लिए कल्याण-कारी हों।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सच्ची स्वीकृति

निर्द्वन्द्व

आज का मनोवैज्ञानिक वातावरण के साथ समायोजन के रूप में व्यक्ति और प्राणीमात्र के व्यवहार की व्याख्या करता है अर्थात् व्यवहार के पीछे उद्देश्य होता है वातावरण में समायोजन। यहाँ यदि हम यह कहें कि समायोजनरूपी उद्देश्य की ओर जो व्यवहार जितना ले जायेगा, जिस व्यवहार से जीवन में जितनी मात्रा में समायोजन की स्थिति प्राप्त होगी वह व्यवहार उतना ही विशुद्ध होगा, सही होगा। दूसरे अर्थों में सही व्यवहार द्वारा ही अपने सही उद्देश्य और लक्ष्य की प्राप्ति प्राणिमात्र द्वारा की जा सकती है, कहना गलत न होगा।

जीवन के विश्लेषण से तात्पर्य है व्यवहार का विश्लेषण, अर्थात जीवन व्यवहार का, व्यवहारों का एक संगठन है। इस प्रकार हमें और भी अधिक सूक्ष्मता से और गहराई में इस बात का संकेत मिलता है कि धार्मिक जीवन का अर्थ है धर्म का व्यवहार में होना। तात्पर्य हुआ कि जब तक धर्म हमारे में व्यावहारिक जीवन को नहीं प्रभावित करता तब तक जीवन को धर्म से जिसकी प्राप्ति होनी चाहिए थी वह सम्भव नहीं। क्योंकि उन्नति, अपने लक्ष्य की ओर, विशुद्ध धर्ममय व्यवहार से ही होगी इसलिए व्यावहारिक वेदान्त के उद्घोषक स्वामी विवेकानन्द और स्वामी राम ने जीवन में वेदान्त सिद्धान्तों की व्यावहारिकता पर अधिक जोर दिया, बार-बार भगवान कृष्ण ने- उद्धरेदात्मनात्मानम् - के शाश्वत सत्य का नाद किया। इसके पीछे यही भावना थी कि हमारा व्यवहार सत्य पर आधारित हो, उसमें ज्ञान का तादात्म्य हो।

व्यवहार के साथ हमारी बातों का, हमारी मान्यताओं का सम्बन्ध आज न के बराबर है। जो हम मानते हैं, जो हमारी मान्यताएं हैं वे केवल मान्यताएं हैं, कल्पनाएं हैं और या इससे भी अधिक विद्याविवादाय - तक सीमित हैं। और इन बातों के लिए यदि जिम्मेदार हैं तो वे हैं हम, जो कहलाना चाहते हैं और कहते हैं खुद को धार्मिक के रूप में और धार्मिक, जो केवल एक आरोपमात्र है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वेदान्त की दृष्टि के अनुसार इसकी (आरोप की) आवश्यकता भी है क्योंकि अध्यारोप और अपवाद के माध्यम से ही जगत् की सत्यता का ज्ञान और उसका विश्लेषण सम्भव है। पर, हम सत्य रूप लक्ष्य की उपेक्षा कर, साधनोंको ही साध्य मान कर अपने जीवन को बनावटी रूप में यापन करते हैं। फलस्वरूप यही साधन लक्ष्य प्राप्ति में बाधक बन जाते हैं, मुक्ति के उपाय बन्धन बन जाते है, जीवन के सत्यों का रूप अन्धविश्वास और अज्ञान की भूमिका पर पतनोन्मुखता का कारण बन जाता है। तब हमें सत्य की आवाज भी, ईश्वर द्वारा किया गया आह्वान भी, सत्यदृष्टा ऋषिओं की बातों मेंभी भ्रम होने लगता है। जिस अंजन का आविष्कार ऋषि आँखें खोलने के लिए करता है वही आँखों को पीड़ा देने लगता है।

संक्षेप में, इतना ही कहना उपयुक्त होगा कि हमें, जो त्रुटियां हमसे हो चुकी हैं उनकी स्वीकृति करनी होगी, स्वीकार करना होगा उन्हें और साथ ही उन्हें हटाने के लिए प्रतिक्रिया के मार्ग की उपेक्षा कर सत्यता को जान सही मार्ग का जीवन में, व्यवहार में अवलम्बन करना होगा अन्यथा कुछ दिन के बाद मानव ईश्वरदूत न रह, सृष्टि की उच्चतम कृति न रहे, संहार की वस्तु रह जायेगी। तब उर्दू के शायर की यह बात कहां तक सही उतरेगी इसका अनुमानहम आजसे ही कर सकते हैं– ऐ आसमान तेरे खुदा का नहीं है खौफ, डरते है ए जमीन। तेरे आदमी से हम।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिनांक १५ अगस्त १९५३ को प्रातः ब्रह्मलीन स्वामी हरिओ३म जी महाराज द्वारा दिया गया भाषण

प्रवचन

राम सिमर पछतावेगा रे मन राम सिमर - - -
पापी जोवड़ा लोभ करत है,
आजकल उठ जावेगा, रे मन राम सिमर - - - -
लालच लागे जन्म गंवाया,
माया भरम भुलावेगा
धन यौवन का गर्व न कीजै
कागज ज्यों गल जावेगा, रे मन - - - - -
ज्यों जम आए ते केस गए पटके,
ताते कछु न बसावेगा,
सिमरन भजन दया नहीं कीन्हीं
तौ मुख चोटां खायेगा, रे मन - - - - -
धर्मराज जब लेखा मांगे,
क्या मुख ले के जाऐगा
कहत कबीर सुनो रे सन्तो
साध संगत तर जाऐगा, रे मन - - - - -

सत्य असत्य का निर्णय क्या करना उचित है और क्या अनुचित इसी का विधि निषेध के रूप में शास्त्रों ने वर्णन किया। यद्यपि पहली या दूसरी क्लास ठीक है। फिलोसाफिकल स्कालर को गुजर कर ही आना ठीक है परन्तु पहली ही क्लास में बैठ नहीं जाना। मैं ईश्वर भक्ति या मन्त्र जाप का खण्डन नहीं कर रहा बल्कि बता रहा हूं प्रयोग में कैसे लाई जा सकती है। अंगीठी स्वयं ही गर्म होने को नहीं बल्कि तवे को रोटी बनाने के लिये गर्म करें, कमरे को गर्म करें इत्यादि-२। कारण, सूक्ष्म शरीर में अटकेलियां लेने वाला भजन जब स्थूल शरीर में आता है तभी फलीभूत होता है। मेरी इस बात का इन words (शब्दों) को रिकार्ड कीजिये कि ईश्वर के घर में इस बात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का हिसाब नहीं कि आपने नित्य कितनी रोटियां खाई, खद्दर पहना या रेशम वहां तो इस बात का हिसाब है कि इस द्वारा समर्पण व त्याग work (कार्य) कितना हुआ, नेकी भलाई कितनी हुई। विद्वानों और सज्जनों की कदर कौन जाने। मैं तो तुम्हें वास्तविक नास्तिक बना रहा हूं। जहां नामदेव, धन्ना इत्यादि को कुछ दिनों में साक्षात्कार हो जाता है वहां तुम जन्म से मरण तक पठन-पाठन करते हो। भई! वहां स्वाध्याय का account (हिसाब) नहीं। बल्कि वहां देखा जाता है कौन जल्दी से जल्दी बुद्धि refine (शुद्ध) करके प्रभु समर्पण हो गया, जीवन आपका वहीं का वहीं है। हर जीव अपनी बुद्धि को Prefer करता है (अच्छा मानता है)। बाहिर के प्रकाश को अन्दर आने ही नहीं देता। अपने अन्धकार में ठोकरें खाते रहते हो। हमारे पास एक Lady (औरत) आई है। कहती है हमारे देश में गौएं २५-३० सेर दूध देती हैं। भारत को तो दूध की नदियाँ बहने वाला कहा है पर यहाँ तो दूध की बहुत ही कमी है। हमारा प्रयोग गलत है। हम गौ रक्षक नहीं, गौ भक्षक हैं। वह कहती है हमारे देश में एक पंखा एक गौ पर चल रहा है। कोई जूठी या गन्दी वस्तु उन्हें नहीं खिलाई जाती और यहां तो मैंने गोओं को विष्ठा तक खाते देखा। हमारे यहां पूजा नहीं, सेवा है। भारत में उल्टा हिसाब है सेवा करते नहीं, पूजा करते हैं।

यही नहीं कि पहली ही क्लास में खत्म हो जाएं। किसी ने हजरत ईसा से पूछा कि क्या खाना चाहिये। तो कहते हैं किसी के कोई चीज अनुकूल है और किसी के कोई प्रतिकूल मैं तो यह देखता हूं अन्दर से बाहिर क्या आता है। यह समाज तथा देश के लिये कितना Useful (लाभ प्रद) है। सच्चाई की Spirit (रूह), बुराई की जड़ता कितनी है।

हमें कर्त्तव्य करना होगा। हमें विचार करना होगा। जैसे दीवार ज्यों-ज्यों हमारे सामने से हटती जाती है ज्यादा-ज्यादा दीखता है। संकुचित मन खुदगर्जी के कारागार में फंसा है। स्वामी राम कहते हैं पांच प्रकार की Stages (स्टेजिज) है:-

१- लट्टू के तार पै घूमता है।
२- कोल्हू का बैल
३- चन्द्रमा की तरह जो कुछ देशों में चाँदनी देता है।
४- सूर्य की तरह अधिक देशों में रोशनी देता है।
५- वायु की तरह जो भागता फिरता है।

पहली प्रकार के जीव हैं पेटपाल – लट्टू पै घूमने वाले। दूसरे हैं कोल्हू के बैल - ५,७ मैम्बरज हैं घर के, उनके लिये झूट पाप करता है। रात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिन भाग दौड़ लगाए हुए है।

दुःख के बाद सुख की बारी होती है, रात के बाद दिन की। दिन सन्देशा लाया है मैं जा रहा हूं रात आ रही है, जवानी सन्देशा लाई है मैं जा रही हूं बुढ़ापा आ रहा है, दुःख सन्देशा लाया है मैं जा रहा हूं, सुख की बारी हैं।

कमजोर दिल इन्सान कामयाबी हासिल नहीं कर सकता परमात्मा की प्राप्ति तो बहुत दूर है। शिवाजी को पहाड़ी चूहा कहते थे। अपने को निर्बल समझकर पहाड़ में छिप जाता निशाना लगाकर। औरंगजेब देखता है उसकी स्त्री और बच्चे भूख से बिलख रहे हैं। कहता है ओ घातक अपने परिवार के घातक, यह दाने के लिये तरस रहे हैं। जब मैं कहता हूं तू मेरे झंडे के नीचे आ जा तो जो कहेगा दे दूंगा। शिवाजी हंस पड़ता है और कहता है यही दुःखी बच्चे तुम्हें उत्तर देंगे। स्त्री पुकार कर कहती है "ऐसे कई शरीर,, धारण किए हे माधो! यह जन्म तिहारे देखे! यह जीवन देश के समर्पण है, बीज गुलजार हो जाता है समरथ गुरु रामदास आ कहते हैं तेरे धर्म को परिपक्व करने के लिये वेदान्त का उपदेश है। इस लिये वेदान्त की मोहर लगा दी है। भय, निराशा तेरे निकट नहीं आवेंगे भले ही शत्रु टुकड़े २ क्यों न कर दें। शिवाजी के पास अब शक्ति है। गुरुराम दास जी हरि गोविन्द कृष्ण की ध्वनि दे अलख जगाते हैं — दो रोटी का सवाल है।" उत्तर लिख भेजता है – मेरा सर्वस्व आपके समपण है। उसे बुलवा सब कुछ कहते हैं मुझे दे दे और मेरा तू ले ले – (कल का प्रसंग याद होगा आपको)। लगाना आसान होता है, निभाना मुश्किल। कहते हैं गुरु धन्यतू है जो कहता था वही दिया। कैसा सुन्दर फकीरी बाना दे दिया। पाँच दिनों में पांच सेर वजन बढ़ गया। रात दिन गुरु का भजन करते है। जब वापिस मांगते हैं तो शिवाजी कहते हैं – देकर भी कोई लेता है? कहते हैं राज्य करता भी तू फकीर है, तू सिद्ध है। शब्दों का क्या है, समर्पण, बलिदान कर्त्तव्य में जब तक नहीं आते, एक तिनका भर भी नहीं उठ सकता।

पालसी ने चीनी के बर्तनों को रोगन करने की तजवीज निकाली। लाखों को सम्पत्ति फूंक दी। जापान क्या Artist (कलाकार) था, उसके पास करोड़ों रुपये थे। किसी ने पूछा तू शादी क्यों नहीं करता? उत्तर देता है – मुसब्बरी से मेरी शादी हुई है। Art (कला) के साथ उतना ही प्रेम है जितना तेरा स्त्री बच्चों के साथ। भई! हर चीज का टैस्ट है। परमात्मा भी तो दिल रखता है, उसे भी झूठे सच्चे का पता है। पालसी टैस्ट के लिये experiment (तजरबा) करते २ कपड़े जला देता है, पलंग की निवार जला देता है, बर्तन तक बेच देता है। उसने अपनी वस्तु को हासिल किया, सफलता हुई। यदि बर्तन पालिश करने वाले से भी परमात्मा ज्ञान माँगता है तो तुम क्या हो और मांगते क्या हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर्म के कर्त्तव्य के साथ बुद्धि नहीं होती। बुद्धि कर्त्तव्य के साथ भावना नहीं उठक बैठक ही है। राम कहते हैं सिपाही की तरह बनना सीखो। मिलिटरी से रिटायर होने पर भी वह अपने को Civilian (शहरी) न समझता था। एक बच्चे ने एक दिन उसके सिर पर दूध का मटका देखा तो बोला Attention सावधान। वह आदमी Attention सावधान की Position पोजीशन में खड़ा हो गया यद्यपि अब Civilian शहरी था पर असल में वह Military Man मिलिटरी का आदमी ही था। दुनिया के कर्त्तव्य कर रहे हो तुम, जब प्रभु कार्य आ जावे तो सोच में पड़ जाते हो — मुझ से बन पाएगा या नहीं। ओहो! तुम तो दुनियांदार भी कहलाने योग्य नहीं हो - हम तो दुनियाँ में रहने योग्य भी नहीं। भगवान ने तो यही देखना है कि हमारे द्वारा ईश्वर के प्रति कितना कर्त्तव्य, कितना परित्याग, कितना समर्पण हुआ। ★

★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★

शोक समाचार

अत्यन्त दुःख के साथ सूचित किया जाता है अमृतसर निवासी श्री मदन मोहन जी बकाया का. २५ अक्टूबर को देहान्त हो गया है।

रामचरणों में प्रार्थना है कि गतात्मा को शान्ति दे तथा परिवार को इस दुःख के सहन करने की क्षमता प्रदान करे।

★★★★

स्वर्गीय श्री विशनदास जी सलूजा की धर्म-पत्नी श्रीमती कौशल्या सलूजा का दिनांक २०-१-८० को दोपहर १२.१५ बज हृदयगति रुक जाने के कारण देहान्त हो गया।

रामचरणों में प्रार्थना है कि गतात्मा को शान्ति व शोक सन्तप्त परिवार को इस दुःख को सहन करने की शक्ति प्रदान करे।

★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★

—शुभ सूचना—

समस्त राम प्रेमियों को सूचित करते हुए अत्यन्त हर्ष होता है कि आचार्य स्वामी अमर मुनि जी महाराज की अध्यक्षता में स्वामी रामतीर्थ मिशन, रानी बाग शाखा, दिल्ली अपना तृतीय वार्षिकोत्सव दिनांक २१-२-८० से २४-२-८० तक 'मिशन' के भवन मेन बाजार, रानीबाग में विभिन्न आध्यात्मिक जगत् के विद्वान सन्त प्रवक्ताओं की उपस्थिति में आयोजित कर रही है।

इस उत्सव में २१ तथा २४ की केवल प्रातः-कालीन बैठकें प्रात ९ से १२.३० तक होंगी तथा २२ एवं २३ फरवरी की प्रातः कालीन व सायकालीन सायं ६ बजे से ९.३० तक दोनों बैठकें सम्पन्न होगी।

अतः आप सब रामप्रेमी भी इस आयोजन में सादर व सप्रेम आमन्त्रित हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आश्रम - समाचार

आज के युग में पारस्परिक सौहार्द, स्नेह व सहयोग से ही हम विश्व को रचनात्मक क्रियाओं द्वारा सहयोग दे सकते हैं और यही निष्काम कर्म युक्त एक दूसरे के प्रति प्रेम की भावना हमें आत्मविकासोन्मुख भी कर सकती है" यह विचार थे स्वामी जी महाराज के, इन्जीयनरिंग कॉलेज, कश्मीरी गेट के छात्रों द्वारा अपने सर्वेक्षण-समापन पर आयोजित एक सगोष्ठी में जो कि २३/२/७९ को आश्रम के प्रांगण में सम्पन्न हुई।

जैसा कि पूर्वमेव सूचित किया जा चुका है महाराज श्री ने २९ को दिल्ली से बम्बई के लिए प्रस्थान करना था परन्तु किसी कारणवश आप वहां ४/१/८० को पहुंचे तथा साधु बेला में अपने समधुर प्रवचनों से अध्यात्म जिज्ञासुओं की जिज्ञासा की पूर्तिकर जनमानस को भक्तिरस की मन्दाकिनी में आप ने स्नान करा कृतकृत्य किया।

साप्ताहिक रविवासरीय सत्संग में आश्रम में, स्वास्थ्यसेवन हेतु आये हुए परम पूज्य स्वामी स्वभावानन्द जी महाराज ने प्रवचन करते हुए बताया कि औषधि का सेवन करते हुए रोगी को चाहिए कि साथ ही पथ्य का भी ध्यान रखे। कुपथ्य होने के कारण रोग का निवारण असम्भव हो जाता है। अतः प्रभुस्मरण करते हुए यह भी आवश्यक है कि परनिन्दा, गुरूश्रुति-स्मृति पर श्रद्धा का न होना आदि विभिन्न दोषों से बचें तभी सम्भव है कि हम भक्ति प्राप्त करें और तदनन्तर ही ज्ञान द्वारा, अभेद ज्ञान द्वारा हम आत्म-लाभ कर सकेंगे।

वर्षा के कारण यद्यपि शीत की प्रधानता मौसम में हो गई थी परन्तु साथ ही भगवान भास्कर का बादलों के पीछे छिपकर आँख मिचौली सा हरित परिधाना माँ प्रकृति के साथ खेलना बहुत ही रमणीय व मनोरम दृश्य उपस्थित कर रहा था। रात्रि का शान्त वातावरण प्रकृति के मौन स्वरुप को भी मानों बता रहा है।

स्वामी रामतीर्थ मिशन के संवर्धक ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज की समाधि का निर्माण-कार्य चल रहा है। इसमें २५,००० रु० के लगभग की धन-राशि लग जाने की सम्भावना है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

112392

श्रीमती बृजरानी सेठ बम्बई ६०० रु०, श्रीमती केसराबाई देहरादून १००० रु०, श्रीमती राम प्यारी कोचर पटना २०० रु०, श्रीमती कृष्णा देवी 'श्रीमती यादोरामजी' देहरादून ५१ रु०, श्री मुकुन्द लाल सडाना दिल्ली ३१ रु०, श्री टी.आर. गांधी नई दिल्ली ६०रु०, श्री शर्मा जी रानीबाग दिल्ली २५०रु०, श्रीमती कैलाश चोपड़ा दिल्ली १०१ रु०, श्रीमती राम दित्तामल दिल्ली १०१ रु०, श्रीमती उमा नागपाल रामपुर २१ रु०, श्रीमती वेद कुमारी धीर कलकत्ता ७०१ रु०, श्रीमती रमेश मनूजा अलीगढ़ २१ रु०, राम प्रेमी माता कलकत्ता २१ रु०, माता शान्ति बक्शी कलकत्ता ५१ रु०, श्रीमती शकुन्तला तनेजा कलकत्ता ५१ रु०, श्री जगदीश चन्द्र जी देहरादून ५० रु०, श्री सरदारी लाल ओबराय, देहरादून ५०१ रु०, श्री शिवचरणदास सभ्रवाल देहरादून ५०० रु०, श्री मंगल सेन जी कपूर देहरादून ५१ रु०, श्री विश्वनाथ सभ्रवाल देहरादून १०१ रु०, श्री त्रिलोक नाथ जी डाबर साहब देहरादून १०१ रु०, श्रीमती सन्तोष साहनी देहरादून १०१ रु०, श्रीमती माता जगरानी जी मेहता देहरादून १०१ रु०, माता चमन देवी चौधरी देहरादून १०१ रु०, मामी कृष्णा जी देहरादून १०१ रु०, श्रीमती दुर्गादेवी जी देहरादून १०१ रु०, श्री बजीर चन्द जी देहरादून २५ रु०, श्री दौलत राम जी देहरादून १०१ रु०, श्री मनोहर लाल जी अहूजा, देहरादून २१ रु०, श्रीमती त्रिलोकराज ओबराय, देहरादून २१ रु०, वृन्दावन एण्ड सन्स देहरादून १०१ रु०, श्रीमती प्रमिला साहनी देहरादून ५१ रु०, श्री भगत नारायणदास जी देहरादून २५ रु०, श्री बृजलाल अरोड़ा देहरादून १०१ रु०, श्री अमर नाथ जी देहरादून ३१ रु०, श्री ओम प्रकाश जी अहलूवालिया देहरादून २१ रु०, श्री के. के. खेड़ा देहरादून ५१ रु०, श्री एस.एस. चड्ढा देहरादून २१ रु०, श्री चाननदास मनचन्दा जी देहरादून २१ रु०, श्री जुगुल किशोर जी देहरादून ५१ रु०, श्रीमती मिस्त्री तुंगल सिंह जी देहरादून २१ रु०, श्री तिलक राज जी देहरादून २१ रू०, श्रीमती मोरनी देवी देहरादून ५१ रु०, डा० कौशल जी देहरादून ५१ रु०, श्रीमती सविता पुरी देहरादून ४१ रु०, श्रीमती सत्यावती देवी देहरादून ५१ रु०, श्री अशोक कुमार की माता जी देहरादून ५० रू०, श्रीमती प्रकाशवन्ती देहरादून ५१ रु०, श्री सूरजभान जी देहरादून २५ रु०, श्री तिलक राज ओबराय देहरादून २१ रु०, स्वान प्रेस दिल्ली २५० रु०, श्रीमती प्रमिला बजाज दिल्ली १०१ रु०, श्रीमती तारा चड्ढा शिमला ५१ रु०, डा० एस. पी. धीर इलाहाबाद ५१ रु०,

आदि रामप्रेमियों इस समाधि-निर्माण में का सहयोग व स्नेह प्राप्त हुआ है रामदरबार इस सहयोग के लिए इन सबका कोटिशः धन्यवाद करता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूचना

१—मासिक पत्रिका 'राम सन्देश' न मिलने पर अपने समीपस्थ डाकखाने (पत्रालय) से पता करने के पश्चात हमें सूचित करें। क्योंकि कभी-किसी कारणवश "राम सन्देश" १५ ता० तक निकलता है। इसलिए शिकायत पत्र अपनी २ ग्राहक संख्या सहित दिनांक २० के बाद प्रेषित करने का कष्ट करें।

१—आप आश्रम में किसी भी प्रकार का धन भेजते समय यह लिखना न भूलें कि वह धन किस निमित्त भेजा जा रहा है तथा चैक स्वामी रामतीर्थ मिशन के नाम पर ही भेजें।

३—जो पाठक इस पत्रिका केआजीवन सदस्य बनना चाहते हैं वे अपना सदस्यता शुल्क सम्पादक के नाम प्रेषित करें। सदस्यों को आजीवन पुनः बिना किसी शुल्क के यह पत्रिका प्रेषित की जायेगी।

४—'राम सन्देश' के विदेशी ग्राहक अपना वार्षिक शुल्क १५ रु० भेजें। क्योंकि परमाध्यक्ष जी की आज्ञानुसार १२ रु० के स्थान पर ३ रु० वृद्धि का निर्णय लिया गया है।

५—पाठक अपनी प्रतिक्रियाएं, अंक सम्बन्धी, अवश्य भेजें, जिससे पत्रिका की उन्नति सम्भव हो सके।

६—अपनी रचनाएं – लेख, कविताएं, भेजते समय स्पष्ट शब्दों में पृष्ठ की एक तरफ ही लिखें।

७—हर प्रकार की सामाजिक, शिक्षा सम्बन्धी, आध्यात्मिक या पारस्परिक तुलनात्मक आपकी लिखित वैचारिक भावनाएं सादर आमन्त्रित हैं।

—सम्पादक

लिफ़ाफ़ा पोस्ट

ग्राहक संख्या 5341

श्री / श्रीमती एक दिल एक दिशा पुस्तकालय

स्थान

डाकखाना

जिला देहरादून (उ.प्र.)

मासिक पत्र—

"राम-सन्देश"

स्वामी रामतीर्थ मिशन

राजपुर, देहरादून (उ०प्र०)

Pin—248009 भारत

स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून (उ० प्र०) के लिए प्रकाशक स्वामी अमर मुनि द्वारा न्यू आईडियल प्रिन्टिंग हाऊस (कांग्रेस भवन के पास) ४-बी नेशविला रोड, (देहरादून) में, मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम-सन्देश

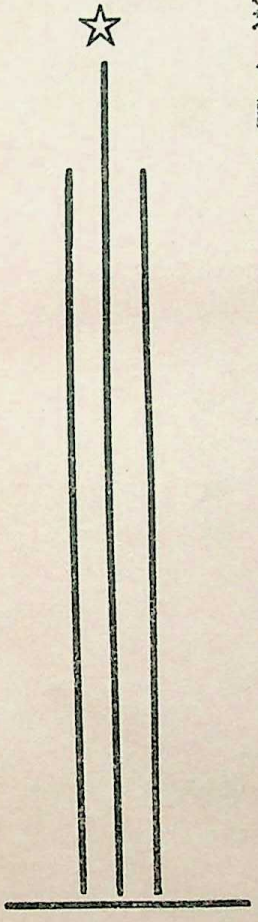

ओ३म्

अप्रेल
१९८०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकेतिका

विषय	लेखक	पृष्ठ
भजन		१
निश्चल चित्त	स्वामी राम	२
प्रवचन	स्वामी हरिओ३म् जी महाराज	६
सम्पादकीय		१०
भजन	स्व० श्री मदन मोहन 'कंवर' बकाया	१२
सच और झूठ	रजनीश	१३
बड़ी पहेली-एक शिक्षा-प्रद कथा	भारत बन्धु शर्मा	१६
व्यवहारदर्शन ही सत्संग है	स्वामी ब्रह्मानन्द	१९
गीत	बलदेव राज 'शान्त'	२१
Self Confidence In Life	(by Swami Hari Omji)	22
शुभ सूचना		२४
स्वागत		२५
आश्रम समाचार		२६

संस्थापक—
ब्रह्मलीन स्वामी हरिओउम् जी महाराज

सम्पादक—
काका हरिओउम् "निर्द्वन्द्व"

संवर्धक—
ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज

आजीवन सदस्यता शुल्क—

व्यवस्थापक—
स्वामी अमर मुनि जी महाराज

भारत में — १०० रु०
विदेश में — ५०० रु०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्र के हित के लिए यत्न करना ही विश्व की शक्तियों अर्थात् देवताओं की आराधना है'-स्वामी राम

वेदान्त, अध्यात्म, संस्कृति, धर्म एवं भक्ति का सजग सन्देशवाहक
तथा स्वामी राम के आदर्शों का एकमात्र लोकप्रिय मासिक—

राम सन्देश

वेदोपनिषदां तत्त्वम् सत्यं नित्यं सनातनम् ।।
तत्सर्वं "रामसन्देशे" पत्रेऽस्मिन्नवलोक्यताम् ।।

वर्ष २९ | वार्षिक भेंट १०)

कृपया, पाठक ध्यान दें

(१) आप अपना पता पिन कोड सहित अपनी ग्राहक संख्या का उल्लेख करते हुए सम्पादक 'राम - संदेश' के नाम पर अवश्य व शीघ्रातिशीघ्र प्रेषित करें, जिससे आपके पतों की कमियों का निरीक्षण कर समाप्त किया जाये ।

(२) जो पाठक 'मिशन' के आजीवन सदस्य हैं वे भी सूचित करें जिससे उनके शुल्क को व्यवस्थित किया जा सके ।

(३) यदि आपने अपना शुल्क नहीं प्रेषित किया तो ग्राहक संख्या का स्पष्ट उल्लेख करते हुए भेजें।

(४) और भी आपकी 'पत्रिका' सम्बन्धिनी राय हो तो वह भी सादर आमंत्रित है ।

— सम्पादक

कहत कबीर सुनो भाई साधो, तजो जीनें की आसा रे ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकेतिका

विषय	लेखक	पृष्ठ
भजन		१
निश्चल चित्त	स्वामी राम	२
प्रवचन	स्वामी हरिओ३म् जी महाराज	६
सम्पादकीय		१०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्र के हित के लिए यत्न करना ही विश्व की शक्तियों अर्थात् देवताओं की आराधना है'-स्वामी राम

वेदान्त, अध्यात्म, संस्कृति, धर्म एवं भक्ति का सजग सन्देशवाहक
तथा स्वामी राम के आदर्शों का एकमात्र लोकप्रिय मासिक—

राम सन्देश

वेदोपनिषदां तत्त्वम् सत्यं नित्यं सनातनम् ॥
तत्सर्वं "रामसन्देशे" पत्रेऽस्मिन्नवलोक्यताम् ॥

वर्ष २९ अंक ४	राजपुर, देहरादून, अप्रेल १९८०	वार्षिक भेंट १०) एक प्रति ८५ पैसे

★★★★★ ★★★★

भजन

मत फिर मनुआ भूला २ जगत में कैसा नाता रे ।
माता कहे यह पुत्र हमारा, बहन कहे बिर मेरा रे,
भाई कहे यह भुजा हमारी, नारी कहे नर मेरा रे ॥
मत फिर मनुआ — — —
पेट पकड़ कर माता रोवे, बांह पकड़ कर भाई,
लिपट २ कर तिरिया रोवे, हंसा जाए उड़ाई रे ॥
मत फिर मनुआ — — —
जब लग जीवे माता रोवे, बहन रोवे दस मासा रे,
तेरह दिन तक तिरिया रोवे, फेर करे घर वासा रे ॥
मत फिर मनुआ — — —
चार गजी चादर मंगवाई, चढ़ा काठ की घोड़ी रे ।
चारों कोने आग लगा दी, फूंक दिया जैसे होरी रे,
हाड़ जरे जस लाह कड़ी की, केस जरे जैसे घासा रे
सोना ऐसी काया जर गई, कोई न आयो पासा रे ॥
मत फिर मनुआ ··· ··· ···
नेह स्नेह ढूंढ नहीं पाई, ढूंढ फिरी चहुं पासा रे
कहत कबीर सुनो भाई साधो, तजो जीनें की आसा रे ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

—गतांक से आगे
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निश्चल चित्त

-स्वामी राम

वर्तमान परिस्थिति में मनुष्य अपनी आत्मा का अनुभव कैसे कर सकता है? इसका उत्तर स्वयं मनुष्य की प्रकृति पर निर्भर है। मनुष्यों का, इस संसार में साधारण रूप से तीन प्रकार के स्वभाव, चित्त-वृत्ति की दृष्टि से, विभाग किया जा सकता है। कुछ ऐसे हैं, जिनके चित्तों की दशा अस्थिर चंचल-स्वभाव (unstable equilibrium) रहती है। कुछ ऐसे हैं, जिनके चित्त की शान्ति स्थिर-स्वभाव (stable equilibruim) वाली है। कुछ ऐसे हैं, जो नित्य उभय सामान्य अर्थात् सम स्वभाव (neutral equilibrium) हैं। अस्थिर-स्वभाव या अस्थिर-स्थिति क्या है? अपनी हथेली पर पेंसिल को इस प्रकार रक्खो, (यहाँ स्वामी जी ने अपनी हथेली पर पेंसिल सीधी खड़ी की), यह कभी नहीं ठहरेगी (खड़ी रहेगी), एक आध पल यह शायद ठहरी रहे (खड़ी रह जाय), नहीं तो पवन का हर एक झकोरा इसको नीचे गिरा देगा। इसे अस्थिर-स्थिति कहते हैं। पेंसिल को ऐसे लटकाओ (यहाँ पर स्वामी जी ने पेंसिल को अपनी उँगलियो के बीच पकड़ा और पैंडुलम (pendulum) के समान लटकाये रक्खा), यह ठहरी हुई, स्थिर है; किन्तु पैंडुलम (लटकती हुई) होने के कारण यह कुछ काल तक हिलती रहेगी, फिर कुछ काल के बाद ठहर जायगी। स्थिरता भले भंग हो जाय, किन्तु पुनः स्थिरता प्राप्त हो सकती है। पर उस पूर्व दशा में स्थिरता पुनः प्राप्त हो नहीं सकती। किन्तु इसके सिवा एक और तीसरी स्थिति होती है। पेंसिल को इस प्रकार रक्खो (यहाँ स्वामी जी ने पेंसिल को मेज पर रख दिया) यह स्थिर है। इसे उस प्रकार से टेबल पर रक्खो, यह स्थिर है। यहाँ टेबल पर जहाँ कहीं तुम पेंसिल को रखो यह स्थिर है। यह सदा स्थिरता की दशा में है। ठीक ऐसे ही कुछ लोग हैं, जिनके चित्त लगातार क्षुभित और हर वक्त विक्षिप्त हैं, वे कभी स्थिर नहीं हो सकते, कभी स्थिर दशा में नहीं रह सकते। बाह्य स्थिति उनको स्थिर कर देती है, वे पुनः विक्षिप्त, अस्थिर हो जाते हैं। कुछ और लोग हैं, जिनके चित्त प्रायः शान्त, स्थिर एकाग्र एवं ध्यानावस्थित और निश्चल रहते हैं, पर वे भी एक बार विक्षिप्त होने पर घंटों बहुत देर तक क्षुभित या भ्रमित रहते हैं। और इस जगत में बहुत से लोग इसी स्वभाव के हैं। आप बाजार में टहल रहे हैं, कोई आदमी आता है, आपसे हाथ मिलाता है, अर्थात् राम राम करता है, और कुछ ऐसे वचन कह जाता है, जो स्तुतिमय या प्रिय नहीं हैं, अपितु कटाक्ष और निन्दा भरे हैं। वह तो चला जाता है, किन्तु अपना काम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर जाता है, ऐसे रिमार्क पास करके चल बनता है। उस विक्षेप का प्रभाव घंटों रहता है, बल्कि कभी कभी तो कई दिनों, हफ्तों, महीनों और वर्षों तक बना रहता है। उस रिमार्क (वचन) का असर बना रहता है, और मन डाँवाडोल भ्रमित रहता है, एक बार विक्षिप्त होने पर बराबर हिलता जाता और इधर उधर भटकता फिरता है। देखो मन की यह अवस्था, मन की यह डाँवाडोल स्थिति आपका जीवन नष्ट कर देती है, और आपका सारा समय हर लेती है। अब जरा ध्यान दीजिये, कामों या बातों ने तो बहुत समय नहीं लिया, कर्म तो प्रथम क्रिया मात्र थी जो मन को दी गयी थी, किन्तु उसके उत्तर-फल, या यों कहो कि आपके अपने मन की डाँवाडोल स्थिति हीं आपके जीवन को हर लेती है। यदि आप मन की इस विचित्र चंचलता को रोक सको, यदि आप भीतर के विक्षेप पर विजय पा सको, यदि आप मन की लगातार भ्रांति, स्फुरण, धड़कन और संशय - विपर्य्यय को वश में कर सको, उसका निग्रह कर सको, यदि आप इस मन को अधीन कर सको, तो आपका जीवन लाखों मनुष्यों के जीवन के बराबर हो जाय। आपके जीवन के तीस वर्ष भी सहस्रों वर्ष के तुल्य हो सकते हैं। आप अपने मन और चित्त के रोग की ओर, उस आध्यात्मिक रोग की ओर जिससे आप हानि उठा रहे हैं, ध्यान दीजिये। उस रोग को जानिये और उसका इलाज कीजिये। आपके मन का रोग चंचल स्वभाव है, जब कोई ऐसी -वैसी बात हो जाती है, मन भय ओर प्रसन्नता के बीच - बीच डाँवाडोल फिरता रहता है, अर्थात मन भ्रम और भय के चंगुल में व्यर्थ फँसा रहता है, न प्रसन्न होने पाता है और न निर्भय। ऐसे लोग पैंडूलम-स्वभाव-मनुष्य होते हैं। अब तीसरे प्रकार के मनुष्यों को लीजिये, वे मनुष्य वीर ओर मुक्त - पुरुष होते हैं। ये वे लोग हैं, जिनका चित्त किसी प्रकार की परिस्थिति से विक्षिप्त नहीं होता, चाहे कोई ही बात उनके सामने हो, वे शान्त और निश्चल रहते हैं; चाहे अथाह, अनन्त सागर की उछलती हुई लहरों के बीच उन्हें रख दो, वे वैसे के वैसे रहेंगे। चाहे उन्हें युद्ध में रख दो, तब भी वैसे के वैसे ही रहेंगे। आप उनके मित्र हैं, आज उनसे आप बातचीत करें, आप उन्हें सर्व प्रकार की बातें कह डालें (अर्थात् कटाक्ष वा उपालंभ भी लगा ले), वे उनका प्रत्युत्तर नहीं देंगे। जिस क्षण आप उनसे अलग होते हैं, उनका चित्त पूर्ववत् वैसा का वैसा ही शुद्ध, पवित्र और हरा-भरा रहता है। एक निरासक्त, मुक्त पुरुष के साथ आप हजारों वर्ष रहें और चले जायँ, इससे आप उनके चित्त में किंचित् विक्षेप न डाल सकेंगे। वे ठीक दर्पणवत् होते हैं, जैसे दर्पण आपका मुखड़ा आपको वापिस दिखलाता है। आप जानते हैं कि दर्पण आपके मुख का ठीक-ठीक चित्र तो नहीं खीचता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि कुंडल आपके बायें कान में है, तो दर्पण में दायो ओर के कान में आप उसे पायगे। इसी प्रकार दाँया बायाँ हो जाता है, बायां दाँया होता है। आप सैकड़ों वर्ष दर्पण के सामने रहें, दर्पण सैकड़ों वर्ष तक आपको वैसा ही दर्शाता रहेगा। दर्पण को अलग कर दें, दर्पण तब भी वैसा का वैसा ही है; ऐसा ही ज्ञानवान् मुक्त पुरुष का हाल है। वह ऐसा है, जिस पर बाहर के दूषण अपना चिह्न नहीं छोड़ सकते (अर्थात् उसे दूषित नहीं कर सकते), जिसको कोई भी दूषित और कलंकित नहीं कर सकता और जो नित्य स्वतंत्र वा असंगत रहता है। आप आयें चाहे सारा समय उसकी स्तुति करके चले जायँ, तो आपके पीछे उसका चित्त उस स्तुति की जुगाली नहीं करता रहेगा अर्थात् चित्त उस स्तुति को पुनः-पुनः ध्यान में लाकर फूलता नहीं रहेगा। आप आयें और चाहे गुणदोष-विवेचक दृष्टि से और चाहे छिद्रान्वेषक की कुटिल दृष्टि से उस पर दोष लगा जायँ; आपके चले जाने के बाद वह आप के इस दोष-निरूपण वा छिद्रान्वेषण को बार-बार ध्यान में नहीं लायेगा। क्योंकि असंग, निःसंग हुआ वह अपने आत्मा में निश्चय रखता है।

अब राम कहता है कि यदि आप वेदान्त को ठीक-ठीक पढ़ें और उसकी शिक्षा को नित्य अपने सम्मुख रक्खें, प्रणव या अन्य कुछ चिह्नों द्वारा अपने भीतर के बोध के साथ, अपने भीतरी विचारों को ठीक दिशा में लगा कर आप अपने ईश्वरत्व का ध्यान करें, और नित्य अपने सत्य स्वरूप को सम्मुख रक्खें, तो यदि आपका चित्त शुरू से अस्थिर एव चंचल स्वभाव (unstable equilibruim) है, फिर स्थिर स्वभाव (stable equilibrium) हो जायगा, और यदि वह शुरू से स्थिर व एकाग्र स्वभाव है, तो वह दर्जे व दर्जे समता (neutral equilibrium) को प्राप्त कर लेगा, तब यह वेदान्त, यह सच्चाई आपको हरदम अपने सम्मुख रखनी होगी। नित्य इस अवस्था में रहने के लिए राम अब आपको कुछ बाहर के साधन व सहकारी उपाय बताता है। इन्हें आजमाओ और आप देखेंगे कि यद्यपि लोग इसका उपदेश नहीं करते, तथापि यह है एक विचित्र उपदेश। आप यह देखेंगे कि जब लोग राम के पास आकर बातचीत करते हैं, तो अनेकों बार दूसरों में छिद्रान्वेषण (कुटिल और दोषदृष्टि से छिद्रान्वेषण) करके चले जाते है। आप जानते हैं, राम कैसे अपने आपको उनके विचारों और उपदेशों से बचाये रखता है? इसके नाना रास्ते हैं। एक रास्ता यह छोटी सी पुस्तक है जो आप अपने सामने देखते हैं यह एक अद्भुत पुस्तक है। यह पुस्तक एक ऐसे मनुष्य द्वारा लिखी गयी है, जिसकी बराबरी का कहीं नहीं मिलता है। यह मनुष्य प्रसिद्ध नहीं है। यह मनुष्य भारतवर्ष में पूजा नहीं जाता। यह श्रीमद्भगवद्गीता के समान प्रसिद्ध नहीं है, यह श्रीभगवान् कृष्ण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वारा नहीं लिखी गयीं। यह उस मनुष्य द्वारा लिखी गयी है, जो आपको समस्त क्राइस्टस् कृष्ण, बुद्ध, सारे के सारे समझाता है, राम इस पुस्तक को लेता है। आप जानते है यह संस्कृत में है, और जब इस पुस्तक में से राम एक पद पढ़ता है: तो जन्मजन्म के कलंकों को तथा समस्त हृदय-तल को धोने और साफ करने के लिए यह काफी होता है। यह तत्क्षण राम को हर्षोद्रेग (ecstasy, अत्यानन्द) की अवस्था में डाल देता है। यह छोटी सी पुस्तक, इस पुस्तक का एक एक पद राम के हृदय को हिला देता है और उसे उन्नत कर उसमें ईश्वरत्व का विकास कर देता है। यह पुस्तक नीच प्रवृत्तियों का नाश कर देती है, और तत्क्षण माया के पर्दे को फाड़ देती है। इसलिए राम आपसे कहता है कि आप भी इसी प्रकार की पुस्तक अपने पास रक्खे, आप अपने पास कुछ ऐसे स्तोत्र रक्खें जो आपको या आपके विचारों को उन्नत कर सकें, आपमें रूह फूंक सकें, अर्थात् आपको प्रबोधन कर सकें, आप अपने पास कुछ ऐसे भजन रक्खें, जो आपको तत्काल प्रबोधन करा सकें, आप अपने पास ऐसी कवितायें रक्खें जो आपको चोट लगायें और ईश्वर की ओर प्रेरें। आप अपने पास बाईबिल, सर्मन ओन दीं माउंट (Sermon on the Mount) रक्खें। आप अपने प्रिय व रुचिकर लेखकों के पदों (वाक्यों) और वचनों पर निशान लगायें, ऐसे पदों (वाक्यों पर) जो आपमें रूह फूंक सकें, या ऐसी कोई प्रेरणा पैदा कर दें जो आपके विचारों को ऊँचा करे। आप अपने पास एक छोटी नोट बुक रक्खें जिसमें आप ऐसे वचनों को जमा कर रक्खें, जो आपको उत्तेजित करें आपको ऊपर उठावें, जो आपको प्रार्थना या उपासना के भावों से भर दें। आप इसी पुस्तक को रख लें, आप प्रसन्नता से इस पुस्तक के अन्त में यह कविता लिख लें। "Oh brimful is my cup of joy"—"ओह! मेरे हर्ष का प्याला ऊपर तक भरा है।" यह कविता या ऐसी ही कोई बात जो सत्पथ में आपको उत्तेजित उत्साहित करे आप इसमें लिख लें इसे आप हर वक्त ठीक हाथ में (समीप) रक्खें और जब आप मित्रों से मिलकर हटें, या जब आप भिन्न स्वभाव संगति को छोड़े, तब अपने मन को भटकने विक्षिप्त या निरन्तर भ्रमित अवस्था में रहने देने के स्थान पर आप तत्काल उस रूहा फूंकनेवाले उत्तेजित एवं प्रबोधन करने वाले पद को ले लें, और उससे अपने चित्त को स्थिर और सावधान करें।

अब आप देखें कि राम ने आपको कारण अर्थात् मन का साधारण रोग बता दिया है। राम ने साधारण रीति से मानुषी आध्यात्मिक रोग को आपके सामने रख दिया है। मन का साधारण रोग उसका चंचल स्वभाव है। और राम ने आपको बता दिया है कि कैसे हम मन को स्थिर व अचल रख सकते है।

हम इस विषय को अब किसी दूसरे समय शुरू करेंगे। . . ॐ! ॐ!! ॐ!!!

★ ऐसा प्रतीत होता है कि उस समय स्वामी जी के पास अव धूत गीता थी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिनांक १५ अगस्त १९५३ को प्रातः ब्रह्मलीन स्वामी हरिओ३म जी महाराज द्वारा दिया गया भाषण

प्रवचन

समुद्र के अन्दर सीप भी होती है मोती भी– इसी प्रकार वेदव्यास तथा अन्य ऋषियों ने संसार में इसी तथ्य की घोषणा की, जहां तक शरीर से संबंध है वहां आत्मा अन्तर रूप से अविनाशी विद्यमान है। परन्तु सारा ही मनुष्य के विचारों पर निर्भर है। जैसा २ विचार करता है, वैसा होता चला जाता है। योग-वाशिष्ट में भी सारा चित्त का ही व्यवहार बताया है। शरीर तो कोई वस्तु नहीं। परन्तु हम चौबीस घटे शरीर की पुष्टि के लिये यत्न करते रहते हैं परन्तु चित्त के सुधार करने का कोई प्रयत्न नहीं करते। वाशिष्ठ जी कहते हैं ज्यों हो अन्दर की भावना में दारिद्रय होता है, बाहिर वातावरण में भी दरिद्रता छा जाती है। चित्त की दशा बिगड़ते ही बाहिर की दशा बिगड़ जाती है। चित्त महान हो तो शरीर भी महान और वातावरण भी महान होता चला जाता है यही भौतिकवाद ओर आध्यत्मिक-वाद है। M.A. (एम.ए.) तक पढ़ने पर भी जीव की दृष्टि भौतिकवाद से नहीं उठती। मान, प्रतिष्ठा ज्ञानी और अज्ञानी दोनों ही चाहते हैं। सभी सुख की तालाश करते हैं। अन्तर इतना ही है कि अज्ञानी बाहिर का सुधार करता रहता है और ज्ञानी अन्तःकरण का। चित्त शुद्ध होना चाहिये। जैसे गुरु नानकदेव जो कहते हैं— "मन के जीते जीत" — मन की भावना को ऊंचा करना है। हर समय मास्टर बने रहना यही Divine life (रूहानी जिन्दगी) को पाना है। जो चित्त का सुधार करेगा — महान बनाना ही तो सुधार है। इच्छा करने से कोई वस्तु प्राप्त नहीं होती।

जीव की शक्तियों से ऊपर above एक शक्ति है जो उसकी योग्यता, अयोग्यता के अनुसार सुख दुःख को distribute (तकसीम) कर रही है। गौ का अर्थ उपनिषद् भी है, गौ भी है, पृथ्वी भी है। मेरे experiment (अनुभव) से गुजरा है कि जब तू परमात्मा से फिर जाता है, तो सृष्टि पीछे हटने लगती है। जब तू उसका होने लगता है तो हर चीज तेरी होने लगती है। तो प्रश्न उठता है परमात्मा तो है निराकार, अरूप कहां और कैसे तलाश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करें ? देखो भाई ! सड़क मंजिल नहीं पर सड़क पै चलते २ मंजिल तक पहुंच जाते हैं। चोर के steps (कदमों) के चिन्हों को दबाते २ हम चोर तक पहुंच जाते हैं। उसका एक ही चिन्ह ले लो — निर्भयता। प्राणी ! यदि तेरे अन्दर निर्भयता आ जाए तो इस निर्भयता की सड़क तक चलते २ ही तू परमात्मा तक पहुंच सकता है। निर्भयता का तात्पर्य परमात्म-पथ पर चलना है। कई प्रकार के प्रलोभन आते हैं। जहां डर जाता है, कहीं बिगड़ न जाए। जब भयभीत हो गए, सत्य से गिर गए। जो सत्य के principles (नियमों) को नहीं छोड़ता, वह एक दिन उस परमात्मदेव तक पहुंच ही जाता है। चतुष्टय साधन सम्पन्न ही तो ज्ञान का अधिकारी बनता है। यदि आप पूछें कि आत्मज्ञान कितने लोगों को हो चुका है — मैंने तो यही देखा कि ज्ञान की प्राप्ति के साधन भी किसी को नहीं आए — कोई दम मार कर नहीं कह सकता। हमें तो 24 घटे इस business (व्यापार) के सिवाय कोई काम ही नहीं। आध्यात्मिक लाईन का हमें भारत तक के सब का पता है कौन २ सा साधक कहां २ तक आत्म सम्पन्न है। जिसे ज्ञान थोड़ा सा भी सरफा है वह ईश्वर को नहीं पा सकता।

"ली जो करवट तो होश आया कि राम मुझ में मैं राम में हूं।"

हम तो दुनिया के व्यवहार से देख लेते हैं कि वह परमात्मा के कितना निकट है। आप कहें मास्टर जी टैस्ट न लीजिये, घर वालों से पूछिये मैंने रात दिन एक कर रखी है। खद्दर पहनता हूं, दो रोटी खाता हूं — मास्टर जी कहते हैं अरे तू दो की जगह दस रोटी खा, खद्दर की जगह रेशम पहन, प्लेटों की जगह सोने चाँदी के बर्त्तनों में खाना खा इससे मुझे कोई मतलब नहीं। मैं तो यह कहता हूं कि यह पेपर हल करके मेरे आगे रख दे। इसी प्रकार भगवान् ने हमारी माला नहीं गिननी, यह नहीं देखना सत्संग कितने वर्ष किया, कैसा और किस भावना से दान दिया। उसने तो देखना है कि तुम्हारा अन्तःकरण कितना शुद्ध हुआ। तुमने प्रभु के लिये कितनी कुर्बानी, कितना sacrifice (समर्पण) किया, कितना बलिदान दिया।

इंगलैंड और रूस का युद्ध हुआ। उनके कमांडर ने फौज के जत्थे को गलत आर्डर दे दिये। शायर लिखता है :—

"There is not to make reply,
There is not to season why,
There is but to do and die,
In to the short valley of death."

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कमांडर को पता चलता है कि ग़लत आर्डर issue कर (दे) दिए पर फिर क्या बन सकता था। जो चन्द एक वापिस भी आए उन्होंने गिला तक नहीं किया। वे जानते हैं कि आर्डर गलत है परन्तु order is order and must be obeyed (आज्ञा आज्ञा है और उसे अवश्य ही मानना है)। लेकिन हम परमात्मा के आर्डर पर कितना चलने वाले है! यदि यही रफ्तार रही तो न जाने कितने जन्म लग जायेंगे।

आज Independence Day (स्वतन्त्रता दिवस) है। महात्मा जो कहते थे यदि केवल एक प्राणी बच जाए और स्वतन्त्रता मिल जाए तो भी सस्ती है। बीज खाक में मिल कर ही गुलजार होता है। स्वामी राम कहते हैं "आत्मज्ञान पोथियों में रखोगे तो दीमक खा जाएगी" जो अपने धर्म से, कर्त्तव्य से भय खाता है, वह तो प्रभु प्राप्ति से करोड़ों मील दूर है। थोड़ी देर की रक्षा के लिए यह शरीर मिला है। क्या शरीर की रक्षा में ही हम मर जावेंगे, धर्म भूल ही जावेंगे सच्चाई के असूलों पे चलो तो कटा अंग भी न लग जावे तो बात ही क्या है। अवश्य ही लगेगा। वेदान्त कहता है यह तो नकद धर्म है। चतुराई को कुन्द करके भावना को उच्च कर देता है। जिनको मरकर पहुंचना है जीते जी बैकुंठ उतार देता। राम कहते हैं मेरी शिक्षा है स्वर्ग को यहीं उतारना है आत्मदेव तो महान है। बड़ा छोटे के पास भी चल कर जाता है? सिपाही को कप्तान से काम हो तो भी सिपाही चल कर जाता है वैकुंठ जाने की जरूरत नहीं, वह स्वयं नीचे उतर आवेगा। स्वतन्त्रता को अटल रख देश भक्ति कितनी बड़ी भगती है! महात्मा गाँधी कहते हैं "मैं कुरान पढ़ूगा मैं इंजील पढ़ूंगा, सब कुछ ही अध्ययन करूंगा — यह सब कुछ मेरी खिड़कियां है। दुनियां के चारों ओर से हवा मेरे अन्दर आए। मुल्क की विद्या मेरे अन्दर आए। परन्तु इतना होते हुए भी हिन्दू धर्म को किसी कीमत पर मैं छोड़ने को तैयार नहीं" उन्होंने करके दिखा दिया।

देखिये एक जापान के लड़के की चीन की लड़की के साथ शादी हो जाती है। वह business (व्यापार) चीन में ही करता है। मिलिटरी में भरती हो जापान चला जाता है उसे बताया जाता है कि जापान की हद पर इतने अफसर फलां २ समय पै जाएंगे, बम्बार्डमेंट करनी है। orders (हुक्मनामा) लेकर घर में आता है। सो जाता है। लड़की कागज पढ़ लेती है कि फलां २ समय पर fly(उड़ान) करके बम्ब गिराने हैं। लड़की ने सोचा एक तरफ से तो मेरा पति है [मेरा स्वार्थ ही है] दूसरी तरफ मेरा मुल्क लेकिन उसको आर्डर था और वह इन्सान था

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लड़की चुपके से जहाज के पिछले कोने में बैठ जाती है। जब उसका पति आता है जहाज start (चलाता] करता है तो उसे भी shoot (शूट) कर देती है और अपने को भी। देश भक्ति है। आप परमात्मा की भक्ति सुख के लिए करते हैं। जो कुछ बनने के लिए सत्य का मार्ग अपनाता, वह नहीं बनता। मिटने वाला ही बनता है।

स्वामी राम कहते हैं जो जाति भक्त नहीं वह ईश्वर भक्त नहीं हो सकता। जो अपना पैसा और समय नहीं दे सकता, क्या जान दे सकता है? पुत्र से क्या पैसा प्यारा है? नहीं, जरा पुत्र बीमार हो जावे तो धन की परवाह ही नहीं होती। बात तो यह है कि "दुनिया में हर सस्ती चीज महंगी के ऊपर कुर्बान की जा रही है" यह राज स्वामी राम कहते हैं।

जापान और जर्मनी का युद्ध हो रहा है १०,००० नौजवान चाहिये इस पुल के नीचे एक लाख applications (अर्जियां) आ जाती है। सोचता है कमाँडर किसे रखूं और किसे छोड़ूं। इंटरव्यू द्वारा चुनाव का फैसला होता है। जिसे योग्य समझेंगे रख लेंगे। एक लड़का आता है अफसर पूछता है तेरे कितने भाई बहन हैं? कहा, कोई नहीं बाप है? जी नहीं। मां है? है। तुझे नहीं रखूंगा। तेरे कुल का दीपक बुझ जावेगा। रोता २ घर जाता है। मां कहती है – बेटा मैंने तेरी आंखों में कभी आंसू नही देखे। माँ कमांडर ने application (अर्जी) फेंक दी है यह कहते हुए कि तेरी मां रोती रहेगी "यही बात है?" मां बोली। तो अच्छा रिवाल्वर को पकड़ा - "अगर मैं ही बाधक हूं बच्चे के बलिदान के लिए तो प्रसन्नता से मैं अपने बच्चे को भेजती हूं ले यह चिट्ठी अपने को शूट कर लेती है। लडका कमांडर के पास जाता है।

हमारा जीवन क्या है? क्यों हिन्दू जाति पतन की ओर जा रही? हम बातों के हाकिम बने है, कर्त्तव्य में नहीं लाते। जिस धर्म को आपने adopt (अपनाया) किया है, वह धर्म आपकी ओर आँख फाड फाड़ कर देख रहा है कि कौन देश भक्त आ के शिखर तक पहुंचा दे। थियोरैटिकल Theoratical knowledge [किताबी ज्ञान] बहुत है पर कर्त्तव्य-भ्रष्ट हम जैसा कोई नहीं। चौबीस घंटे में से आधा घंटा ही सेवा का दें, एक प्रतिशत ही धर्म कार्यों के लिये दें, कुछ तप करें दुःख सहन करें, तो भगवान फिर बिन बुलाए न आ जाएं तो जो मरजी कहियेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

वेदान्त व्यष्टि और समष्टि में घट रही घटनाओं की व्याख्या के लिए एक ही सूत्र बताता है। पिण्ड में ब्रह्माण्ड की बात का तात्पर्य यही है कि दूसरों का, अन्य का विश्लेषण करने से पहले, उन्हें, उनके बारे में कुछ कहने से पहले हम वहाँ भी देख लें, जो हमारे बहुत पास है व जिसे हम स्वयं के नाम से जानते हैं।

चीन के विख्यात दार्शनिक कन्फ्यूशस एक रोज मूड में थे। सागर तट पर नंग-धडंग होकर गर्म २ बालू पर लोट रहे थे, अपनी मस्ती में। कुछ लोगों ने स्थूल शरीर के कन्फ्यूशस को रेत में लिपटे देखा, बस फिर क्या था अपनी आदत के अनुसार छेड़छाड़ चालू कर दी लोगों ने। इस छेडछाड़ में कन्फ्यूशस की ओर बार बार इशारा उंगली से किया जा रहा था। कन्फ्यूशस ने बड़ी शांति से समझाया बच्चो! तुम मेरी ओर एक अंगुली उठा रहे हो। मगर याद रखो, तुम्हारे हाथ की तीन उंगलियां तुम्हारी ओर ही उठी हुई हैं।

बात स्पष्ट है, साफ है इसीलिए ऋषियों द्वारा अपनी ओर देखने की बात की जाती है, शायद इसी सत्यता का अनुभव करके ही कबीर ने कहा था – बुरा जो देखन में चला, बुरा न मिलिया कोय, जो दिल ढूंढा आपना मुझसे बुरा न कोय।

स्वामी राम ने इसी सत्य को स्पष्ट किया अपने स्पष्ट शब्दों द्वारा - मैं जब बाहर कहीं गिरता हूँ तो ढूंढता हूँ उसका कारण अपने भीतर और पाता हूँ कि बाहर गिरना तो अभिव्यक्ति थी अन्दर की, मैं बाहर गिरने से पहले अन्दर गिरा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसा नहीं कि यह बात हमें ज्ञात न हो। जानते हैं हम सब कि 'मन एव मनुष्याणां कारणं बन्ध मोक्षयोः' बन्धन का कारण और मुक्ति का भी कारण मन ही है। परन्तु फिर भी हमारी बहिर्मुखी प्रवृत्ति अन्तर के इस सिद्धान्त को स्वीकार नहीं कर पाती और हम अपनी असफलताओं, दुःखों, हानियों, अवनतियों का कारण दूसरों को कहते हैं, आरोपित कर देते है दूसरों पर अपने, स्वयं के दोषों को, परिणाम होता है हमारा 'अहं' कुछ समय के लिए सन्तुष्ट हो जाता है। लेकिन कब तक यह प्रक्रिया हमें बचाती रहेगी, कब तक हम अपने दोषों का आरोप दूसरों पर करते हुए दूसरों को अपने उद्धार के लिए आमंत्रित करते हुए गिड़गिड़ाते रहेगें कि हमारा उद्धार करो। नहीं यह समाधान नहीं है। समाधान है तो एक ही स्वयं से स्वयं का उद्धार। वह व्यष्टि से समष्टि, व्यक्ति से समाज सबके लिए बराबर है। दूसरा निदान जहाँ खोखलापन देगा हमें वहां सदैव परनन्त्रता देगा सदा की। दूसरा हमारा उद्धार करेगा भी नहीं' और समय २ पर धमकी भी देगा गिराने की क्योंकि जिसने उठाया है उसे तथा-कथित गिराने की सामर्थ्य भी है। कहाँ मुक्त होंगे हम भय से इसीलिए –

अपने दिल में डूबकर पा जा सुरागे जिन्दगी
तू अगर मेरा नहीं बनता न बन, अपना तो बन।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भजन

(स्वर्गीय श्री मदन मोहन 'कंवर' बकाया)

दीदार के प्यासे दुनियां में हर रोज नजारा करते हैं ।
और दिल ही दिल में दिलवर की तस्वीर उतारा करते हैं ॥

हम उस ईश्वर के दीवाने,
हम परवाने हैं मस्ताने ।

हम दर्श की खातिर जीते हैं, मरना भी गंवारा करते हैं ॥

यह सारा जग ही झूठा है,
नजरों को धोखा होता है ।

जो दिल के अन्दर आये नजर, हम उसका इशारा करते हैं ॥

जो लहर को सागर मान गये है,
वह ही सच्चाई जान गये ।

हम लहर हैं उस ब्रह्म सागर की, तूफां में गुजारा करते हैं ॥

गैरों से नफरत होती है;
यहां उसके सिवा कोई और नहीं ।

हम अन्दर बाहिर दोनों में, उसका ही नजारा करते हैं ॥

यह खास इशारा प्यारे 'कंवर,'
मकसूस दिलों को मिलाता है ।

जो उससे मुहब्बत करते हैं हर शै में नजारा करते हैं ॥

प्रे० महाराज कुमारी बकाया—अमृतसर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सच और झूठ

बुद्ध का एक सूत्र है :-

"जो अपने लिये या दूसरों के लिए पुत्र, धन या राज्य नहीं चाहता और न अधर्म से अपनी उन्नति चाहता है, वही पूजावान, शीलवान और धार्मिक है।"

"जो अपने लिए या दूसरों के लिए"- क्योंकि हम बड़े धोखेबाज हैं। हम कहते हैं, अपने लिए तो हमें कुछ भी नहीं चाहिए, बच्चों के लिए कर रहे हैं। हम कहते हैं, अपने लिए तो क्या करना है? अपने लिए तो हम संन्यासी ही हैं, लेकिन अब पत्नी है, बच्चे हैं, घर-द्वार है। हमारी बेइमानी का अन्त नहीं है। हम बड़ी तरकीबें निकालते हैं। हम दूसरों के कंधों पर बंदूकें रखकर चलाते हैं।

तो बुद्ध कह रहे हैं, जो अपने लिए या दूसरों के लिए पुत्र-धन या राज्य नहीं चाहता है, जो महत्वाकांक्षी नहीं हैं, जिसके मन में प्रतिस्पर्धा की दौड़ नहीं है।

ध्यान रखना। जब तुम कुछ चाहते हो बाहर के संसार में तो तुम्हें आत्मा से मूल्य चुकाना पड़ता है कौड़ी-२ भी तुम बाहिर से लाते हो तो कुछ गंवाकर लाते हो। ऐसे मुफ्त में नहीं मिलता। और बड़ा महँगा सौदा है।

पाँच रुपये कमा लेते हो जरा सा झूठ बोल कर तुम साचते हो, इतने झूठ में क्या बिगड़ेगा? लेकिन उतने झूठ में तुमने आत्मा का एक कोना गंवा दिया। तुमने भीतर की स्वच्छता गँवा दी। तुमने भीतर की शांति गंवा दी। क्योंकि एक झूठ हजार झूठ लायेगा; फिर कोई अन्त नहीं है। एक छोटा झूठ बोल कर देखो कि झूठ में कैसी संतानें पैदा होती हैं। झूठ की बड़ी शृंखला पैदा होती जाती है।

सत्य बिलकुल बाँझ है। ख्याल करो, जब भी तुम सत्य बोलते हो, बात खत्म हो गई, पूर्ण विराम आ गया। झूठ का सिलसिला अन्त होता ही नहीं। सच बोलते हो, याद भी नहीं रखना पड़ता। झूठ के लिए बड़ी याददाश्त चाहिए। सच के लिए याददाश्त की भी जरूरत नहीं; उतना बोझ भी जरूरी नहीं। झूठ के लिए तो याददाश्त चाहिए ही। किसी से कुछ बोला, किसी से कुछ बोला, इस आदमी से झूठ बोल दिया आज अब यह कल फिर पूछेगा तो कल का झूठ भी याद रखना चाहिये। और झूठ खिसकता है क्योंकि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

झूठ की कोई जगह नहीं होती ठहरने की। झूठ सरकता है। अगर तुम याद रखो, बार-२ लौट-२ कर याद न करो तो तुम खुद ही झँझट में पड़ जाओगे।

सत्य को याद करने की जरूरत नहीं। जो है उसे याद रखने की क्या जरूरत? वर्षों बाद भी याद आ जायेगा। जब जरूरत होगी याद आ जायेगा। उससे अन्यथा याद आने का कोई कारण नहीं सत्य बोलने वाले आदमी का मन निर्भार होता। जो निर्भार होता है, वह आकाश में उड़ जाता है।

झूठ बोलने वाला व्यक्ति अपने गले में पत्थर लटकाये चलता है। फिर आकाश में उड़ना चाहे तो कैसे उड़े? ये पत्थर जान ले लेते हैं। एक झूठ बोले, तुमने आत्मा का एक कोना खराब कर दिया। मंदिर में तुम गंदगी ले आये। फूल को तुमने पत्थर से ढाँक दिया। तुमने झरने का सहज धारा को खंडित कर दिया।

जरा सी चोरी कर लो- ध्यान रखना, चोरी जरा सी और बड़ी नहीं होती। जरा सी बड़ी ही है। सभी चोर यही सोच कर चोरी करते हैं कि इतनी सी से क्या बनता बिगड़ता है? तुमने कभी ख्याल किया, चोरी का, झूठ का गणित क्या है? झूठ सदा यही कहता है, इतना सा है क्या बनता बिगड़ता है? और आज बोल लिये, कोई सदा बोलता है। एक दफा संभल गई बात, संभल गई। चोरी भी यही कहती है; इतनी ही है, दो पैसे की चोरी और दो करोड़ की चोरी में कोई फर्क नहीं है। चोरी, चोरी है; छोटी बड़ी नही होती।

छोटा बड़ा झूठ भी नहीं होता। झूठ सिर्फ झूठ है, छोटा बड़ा कैसे होगा? सत्य सत्य है जो न छोटा होता हैं, न बड़ा होता है। न झूठ छोटा होता है न बड़ा होता है। न चोरी बड़ी होती है, न छोटी होती हैं।

मगर मन समझाये चले जाता है कि इतना सा झूठ है, क्या बनता बिगड़ता है? इतनी सी चोरी है, कर लो, कल दान कर लेंगे। और ध्यान रखना फिर तुम कितना ही भला करो, बुरे को अनकिया करने का उपाय नहीं है। भले से अच्छा नहीं होगा वह।

यह तो ऐसे ही हुआ, मैंने सुना है, इंगलैंड का सम्राट अपने एक वजीर को राजदूत बनाकर फ्रांस भेजना चाहता था। वजीर का नाम था मूर। लेकिन वह डरा हुआ था क्योंकि वह फ्रांस क सम्राट जो था, थोड़ा झक्की किस्म का था। और तनाव की अवस्था थी इंगलैंड और फ्रांस में। तो मूर ने कहा आप मुझे भेज तो रहे हैं, लेकिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह आदमी ऐसा पागल है कि किसी भी दिन, भरे दरबार में गरदन ले सकता है मेरी।

इस पर इंग्लैंड के सम्राट् ने कहा तू बिल्कुल फिक्र मत कर। अगर तेरी गर्दन काटी गई तो जितने फ्रांसवासी इंग्लैण्ड में हैं सबकी गरदन उसी दिन काट डाली जायेगी। तू बिल्कुल फिक्र मत कर।

उसने कहा, वह मैं समझा कि आप यह करोगे। आप उससे कुछ पीछे नहीं हो लेकिन उनमें से कोई भी गर्दन मेरे सिर पर बैठेगी क्या? मैं तो गया। तुम मेरी गर्दन के लिए हजारों फ्राँसीसियों की गर्दन काट दोगे माना लेकिन उनमें से कोई भी मुझे जिंदा कर पायेगी? इससे क्या फर्क पड़ता है फिर मेरे मरने के बाद तुम काटो न काटो? मैं गया! तुमने एक झूठ बोला इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि तुम कितने सच बोलोगे इसके बांद। तुमने एक आदमी को छुरी मार दी? इससे क्या फर्क पड़ता है कि तुमने फूलमाला पहनी? तुमने किसी को गाली दे दी इससे क्या फर्क पडता है कि तुम गये और स्तुति कर आये? लेकिन जीवन में निरन्तर तुम्हारा मन तुम्हें बातें समझाता है कि कोई हर्जा नहीं चोरी कर ली फिर पुण्य कर देंगे पाप कर लिया फिर तीर्थ—यात्रा कर आयेंगे, हाजी हो जायेंगे। ये सब तरकीबें मन की है। इससे सजग रहना।

जो किया, वह किया, उसको अनकिया करने का कोई उपाय नहीं है क्योंकि अतीत में वापिस जाने का कोई उपाय नहीं है। जो हो गया, हो गया।

हाँ, उससे पार होने का उपाय है उसको अनकिया करने का उपाय नहीं। तुमने अगर एक आदमी की गर्दन काट दी, अब तुम क्या करोगे? तुम लाख मन्दिर बनवाओ, तुम लाख पूजा चढ़वाओ, तुम हजार ब्राह्मणों को भोजन करवाओ इससे क्या होगा? जो हो गया, हो गया। हाँ यह हो सकता है कि तुम जाग जाओ, जाग जाओगे तो पार हो जाओगे अति-क्रमण हो जायेगा लेकिन जो किया जा चुका उसको अनकिया नहीं किया जा सकता।

इसलिए जब झूठ, बेईमानी तुम्हारे मन को पकड़े और तुम्हें दलीलें दे कि यह छोटी सी बात है करलो तब थोड़े सावधान रहना। कोई बात छोटी नहीं क्योंकि हर घड़ी तुम्हारी आत्मा दाँव पर है। और यहां मुफ्त कुछ भी नहीं है, हर चीज की कीमत चुकानी पड़ती है। और मजा तो यह है कि कीमत बहुत चुकानी पड़ती है मिलता कुछ भी नहीं। पूरी जिन्दगी के बाद हाथ तो खाली होते हैं आत्मा भी खो गई होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—गतांक से आगे

बड़ी पहेली -एक शिक्षा-प्रद कथा

राजा ने सोचा कि किसी भी उत्तर से सन्तुष्ट न होने का यह कारण हो सकता है कि वह उन्हें झूठा मानती हैं; इसलिए उसने कहा : हम दोनों झूठे हैं, वह हसती हुई बोली — क्या कभी अपना सही परिचय भी दोगे ? झूठे (नाम मात्र के) साधु तथा नास्तिक हैं। ऐसे साधु चिल्ला कर परमात्मा को जान लेने का दावा करते हैं जब कि उन्हें इस सम्बन्ध में कुछ भी ज्ञान नहीं होता। इसके विपरीत नास्तिक ईश्वर की सत्ता को भी हठपूर्वक नकारता है। ये दोनों कुछ भी नहीं जानते है क्योंकि झूठा ही अपने आपको सच्चा मानने का दावा करता है। 'मुझे तो तुम दोनों मस्खरे (Joker) दिखायी देते हो' वृद्धा ने कहा। इस पर राजा तुरन्त बोल उठा — मां, आपने ठीक कहा है, हम कोनों मस्खरे हैं। मनुष्य के मजाक (हँसी) करने वाले हैं सौन्दर्य और यौवन। वृद्धावस्था में ये दोनों चुपचाप चल देते हैं। क्या यह मजाक नहीं है कि अपने यौवन और सौन्दर्य पर गर्व करने वाला अपने आपको यत्न रहित पोपले मुंह, झुकी हुई कमर, झुर्रियों वाले चेहरे को देख कर सर पीटने लगता है। यौवनावस्था में मानव आकाश से तारे भी तोड़ कर लाने का साहस करता है परन्तु वृद्धावस्था में अपने शरीर पर बैठी हुई मक्षिका (मक्खी) को भी उड़ा नहीं पाता। इस प्रकार वृद्धा ने यह भी स्वीकार नहीं किया।

राजा ने सोचा कि हम अपनी राह ही नहीं खो चुके हैं वरन् हम तो अपनी बुद्धि के सभी मार्गों से भटक गये हैं। इस प्रकार उन दोनों की विद्वत्ता का सभी ज्ञान उस बुढ़िया की तीक्ष्ण-बुद्धि की आंधी के वेग से उड़ता हुआ प्रतीत हुआ।

अपने राजा को चिन्ताग्रस्त देख कर कवि-वर माघ आगे बढ़े और कुछ कहने लगे। राजा ने उसे मना किया किन्तु इस प्रकार अपनी पराजय न मानने वाला माघ बोला — महाराज ! इसके उत्तर तो गढ़े गढाये हैं, इससे वृद्धा की विद्वत्ता को नहीं आंका जा सकता। अतः मुझे भी इसे कुछ पूछने दें यह कहकर कवि ने कहा – माँ ! हम दोनों विद्वान हैं। यह सुनकर वह निकट से उन्हें देखने लगी और बोली - देखूं तो मैं इन विद्वानों के मुख, मुझे तो दोनों का विद्वता से दूर का सम्बन्ध भी नहीं दीख पड़ता है। विद्वानों के मुख्वयतः ये दो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुण पाये जाते है - वे कभी दूसरों से वह व्यवहार नहीं करते जो वे उनसे अपने प्रति नहीं चाहते, वे जो जानते है उसके अनुसार करते भी हैं। उनके ज्ञान का आधार उनकी अपनी योग्यता ही होता है न कि दूसरों का ज्ञान अथवा मत। कोई विद्यार्जन से ही विद्वान नहीं होता। वह तो एक बात को जान लेने के बाद उसको चरितार्थ करता है। ऐसे विद्वानों को ढूंढ़ निकालना ऐसे ही कठिन है जैसे हथेली पर उगे हुए बालों को। इस उत्तर से कविवर माघ का मुख पीला पड़ गया। उसकी दशा देखकर राजा बोला - माँ जी! हम दोनों परास्त होने की घोषणा करते हैं परन्तु वृद्धा बोली ... यह उत्तर भी गलत है। वस्तुतः, परास्त तो ऋणी तथा मजदूर है जिसको किसी का ऋण लौटाना नहीं है वह अधिक से अधिक भार वहन कर सकता है। मजदूर से परास्त कौन होगा जिसके हाँथ तथा पाँव सदा अपने स्वामी की इच्छानुसार चलते हैं। मैं तो तुम्हें पूछ-पूछ कर थक गयी हूं और तुम्हारा कोई भी उत्तर ईमानदारी वाला नहीं हैं।

ये कठोर शब्द माघ के लिए असह्य थे और वह आवेश में कुछ कहने लगा किन्तु राजा ने उसे रोका और कहा– हम दोनों सहनशील हैं। भला वृद्धा कब चुप रहने वाली थी? वह बोली सहनशीलता तो पेड़ों तथा पृथ्वी में मिलती है। फलों से लदी हुई डालियों वाले पेड़ ईंट पत्थर का प्रहार सहन करके भी फल फेंकते हैं फल न रहने पर भी वे अपनी लकड़ी को ईंधन के रूप में अर्पित करते हैं और भोजन बनान में भी सहायक होते हैं। पृथ्वी वक्ष-स्थल का तीक्ष्ण आयुधों (औजारों) से भेद न करने वालों को भी मीठा जल, खनिज पदार्थ और अन्य जीवनोपयोगी पदार्थ देती है। सोना, चाँदी आदि भी वहीं से मिलते हैं। मुट्ठी भर अनाज बीज रूप से प्राप्त करके वह उससे कई गुना अधिक अन्न लौटाती है। सबसे बड़ी बात यह है कि पृथ्वी आततायियों, नास्तिकों, आदि का भी भार उठाती है उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करती है इससे अधिक सहनशीलता का प्रमाण और कहां मिलेगा।

राजा ने फिर कहा-हम दोनों शान्तस्वभाव वाले हैं कौन ऐसा होने का दावा करता है इन शब्दों को कहकर बुढिया बोली ये तो अग्नि तथा गर्मी हैं। इस उत्तर से वे चकित हुए क्योंकि उन्होंने जो कुछ सुना हुआ था वह इसके विपरीत था। वह बोली मूर्खो! तुम्हें यह भी पता नहीं है, अभी तक तुमने जगत को समझा ही क्या है। अग्नि प्राणी मात्र की भूख को शान्त करती है और सूर्य की गर्मी फलों, सब्जियों आदि को पकाकर असंख्य प्राणियों को सन्तुष्ट करती है। ये दोनों प्रकृति के ठण्डा करने वाले सहायक हैं।

राजा की यह धारणा हुई कि इन शब्दों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को कहने वाला सन्त महात्मा ही हो सकता है। अतः वह बोला-हम दोनों सन्त है। वृद्धा का उत्तर था - इस श्रेणी में तो उनकी गणना हो सकती है जो सभी अवस्था में सन्तुष्ट हैं तथा जो कुछ भी नहीं जानते हैं, जो धन के लिए लालायित नहीं हैं और अपनी इच्छाओं की तृप्ति के लिए देवी देवताओं की शरण नहीं लेते है तथा आत्म-प्रशंसा तथा कुछ भी न जानने का दम भरते है वही वास्तविक सन्त है। तुम दोनों इस कोटि में कैसे आ सकते हो?

दिन ढल रहा था तथा उन्हें शीघ्र उज्जैन जाना था। अतः उन्होंने घुटने टेक दिये और बड़ी नम्रता से कहा— माँ! हम दोनों अज्ञानी तथा मूर्ख हैं। इस पर वृद्धा और भी निकट आकर बोली... मेरा इतना समय नष्ट करने के बाद अब तुम ठीक रास्ते पर आये हो। यह उत्तर ठीक है। तुम दोनों मूर्ख हो नहीं वरन् मूर्खो के अग्रगो हो। तुममें जो राजा है वह अपने आपको ईश्वर मान रहा है और इससे भी अधिक विचित्र बात यह है कि अपने आपको निष्णात मानने वाले राजा के विद्वान इस निराधार बात को मानकर शासक की प्रशंसा के पुल बाँधते हैं इसके लिए वे हास्यास्पद युक्तियाँ देने में भी संकोच नहीं करते।

राजा को देखते हुए वह बोली- तुम तो राजा भोज हो तथा यह तुम्हारे दरबार का कवि माघ है भला तुम मुझे कैसे धोखा दे सकते हो? मैंने अपनी आयु राजा से भिक्षा अथवा उसकी चाटुकारिता द्वारा नष्ट नहीं की है। मैं सदा अपने मस्तिष्क से ही सोच विचार करती हूं। जो भी अपने गाढ़े पसीने की कमाई पर निर्भर है वह कभी धोखा नहीं खा सकता।

इन शब्दों से रोष में आकर माघ ने कुछ प्रश्न पूछने का हठ किया। वृद्धा ने कहा, जो भी पूछना चाहो, पूछो, मैं अपनी समझ के अनुसार तुम्हें उत्तर देने की चेष्टा करूंगी।

"आकाश से भी ऊँचा क्या है?" माघ ने पूछा वृद्धा ने कहा—बस, तुम्हें यह सरल प्रश्न ही सूझ पाया है? मैं तो इसका उत्तर देना अपना अपमान मानती हूं। अभी मैं अपनी छोटी 'पौत्री' को बुलाती हूं, जो तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर देगी। उसने (वृद्धा ने) पुकारा तथा एक छोटी सी नंगी घडंगी लड़की वहाँ आ खड़ी हुई। माघ ने अपना प्रश्न दुहराया वह तुरन्त बोली—आकाश से ऊंचा मेरा अपना शिर है। मैं आकाश में तो दूर २ तक देख सकती हूं किन्तु मेरा अपना शिर मुझे दिखाई नहीं देता है।

माघ— पृथ्वी की सबसे निचली तह से भी गहरा क्या है?

बालिका— यह है हमारे पेट का गडढा। इसे हम दोनों समय भरते हैं किन्तु फिर भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह खाली रहता है।

माघ— 'शीरे' से भी मीठा क्या है ?

बालिका— इससे अधिक मीठी हमारी वाणी है ?

माघ— जल से भी पतला क्या है?

बालिका— हमारी दृष्टि।

कविवर माघ और भी प्रश्न करना चाहते थे किन्तु भोज ने उसे मना किया और धीरे से कहा— इतना ही पर्याप्त है और अधिक प्रश्न करना हमारी मूर्खता को ही सिद्ध करेगा। हमारा पथ- भ्रष्ट होना भी वरदान सिद्ध हुआ है, हमें जीवन में सद्प्रेरणा देने वाली अमूल्य निधि प्राप्त हुई है। हमें तो माता जी का कृतज्ञ होना चाहिए !

यह कह कर राजा ने बुढ़िया से उज्जैन के लिए सीधा मार्ग बताने की प्रार्थना की, उसने उत्तर दिया—राजन्! संसार के केवल दो मार्ग हैं जिन पर चल कर कोई अपनी राह नहीं भूलता है वे हैं (१) सत्य का मार्ग तथा (२) प्रेम का मार्ग, इन्हीं मार्गों का स्मरण रखना हमारा धर्म है।तब वह उनके साथ हो ली और कुछ दूरी तक जाकर रुकी तथा बोली- आप दोनों बिना किसी ओर मुड़े सीधे चले जायें, आप उज्जैन पहुंच जायेंगे !

(अंग्रेजी पुस्तिका 'भुवन्स जरनल' से रुपान्तरित)
प्रे०— भारत बन्धु शर्मा

व्यवहारदर्शन ही सत्संग है

— स्वामी ब्रह्मानन्दः, ऋषिकेश

सत्संग की महिमा तथा उससे होने वाले लाभ प्रायः सर्व विदित हैं किन्तु उस दिशा में की सभी की प्रवृत्ति नहीं हो पाती है जिसके लिये सामयिक और पूर्वापर अदृष्ट कारण हो सकते हैं, जिन्हें दुरित भी कहते हैं। प्रवृत्ति होना सरल कर्म नहीं, त्याग सरल है, किसी दिशा में कष्ट अथवा प्रतिकूलता देखते ही उस ओर झुकना नहीं; मुख मोड़ देना सरल है किन्तु यह वास्तविक विचार नहीं, इस के विपरीत विघ्न बाधाओं एवं कष्टों के आते हुए भी जो अंगीकृत कर्तव्य का धृति से, साहस से, विचार से सम्पादन करता है वह प्रशंसनीय के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतिरिक्त अनुकरणीय बन जाता है।

जीवन एक यात्रा है, यात्राकाल में यात्रियों को यत्र तत्र अनेक समस्यओं का सामुख्य होता है, जिनके सरलीकरण के लिये चतुर यात्री प्रयत्नशील रहते हैं, उलझना, तर्क वितर्क में समय नष्ट करना उचित नहीं मानते हैं। अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर रहते हैं, यथाशक्ति दूसरों को सन्मार्ग प्रदर्शित करते हैं, जिसको जिज्ञासु समझते हैं उसकी उस आवश्यकता के अनुसार सहायता करते हैं, साहाय्य भी अपने सामर्थ्यानुसार सम्भव है। सामर्थ्य अल्प और साहाय्य अधिक उपेक्षित हो तो उसका त्याग मान्य तथा प्रशंसनीय होता है, सामर्थ्य अधिक तथा साहाय्य अल्प है तो त्याग वाच्य है, स्तवनीय नहीं। प्रवृत्ति निवृत्ति दोनों की महत्ता है और उभय लोगों का योग्यतानुसार आकर्षण होता है किन्तु एक देश काल में जिसकी अपेक्षा होती है दूसरे देश काल में वह निरावश्यक समझा जाता है। इसके औचित्य का परिचायक है सत्संग जिसके परिणामस्वरूप मानव समयासमय का बोध प्राप्त करता है।

सज्जनों की संगति का नाम ही सत्संग है। सज्जन कौन हो सकता है, जो जन ही नहीं सत् भी है। उसके विपरीत असज्जन होता है, जो जन तो अवश्यमेव है किन्तु असत् भी है। जो अपने जन होने का ध्यान रखता है, सद्दत्त रहता वह सज्जन है, सभी का सकल्प से, शब्द से, आचरण से अपकार नहीं करता है वही सज्जन है, अर्थात् वह सत् का समादर करता हुआ जन है। उसके प्रतिकूल जो सत् नहीं वह संकल्प से, वाणी से, व्यवहार से किसी के लिये भी अपकारक सिद्ध होता है। अब व्यक्ति पर निर्भर करता है कि वह किस का संग करे अथवा करता है। संग के बिना तो किसी का जीवन चल नहीं सकता, संग किसी न किसी का अवश्यमेव अपेक्षित है। वातावरण का भी पर्याप्त प्रभाव पड़ता है, जिस ओर से रेल का इजन धुआं उगलता हुआ भागता है काला होना स्वाभाविक है, चाहे कितनी हो सफेदी पोत दी जाय, कलंक (दाग) रह ही जाता है। अतः संगति का प्रभाव मान्य है।

पण्डित उमानन्द देवरानी बताते थे, जब वे युद्ध काल में इरान में थे तो उन्हें भोजन की बड़ी कठिनता पड़ी, वे सेना में रहते हुए भी निरामिष थे और किसी का बनाया भोजन नहीं करते थे, उन्होंने वहां सत्तू खा कर समय निकाला। उन पर प्रभाव नहीं पड़ा किन्तु यह उदाहरण अपवाद है। जहाँ व्यापकरूप से कोई कार्य हो रहा हो वहां प्रभावशून्य रहना बहुत कठिन है। सम्प्रति हम देखते हैं जिस भौतिकवाद की जो महानुभाव शक्ति से

(शेष पृष्ठ २४ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

शुभ सूचना

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समस्त राम प्रेमियों को सूचित करते हुए अत्यन्त हर्ष होता है कि गत वर्षों की भाँति इस वर्ष भी ब्रह्मलीन तपोनिष्ठ व्यावहारिक वेदान्त के साकार विग्रह स्वामी राम की पावन स्मृति में ब्र० स्वामी हरिओ३म् जी महाराज द्वारा संचालित व ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज द्वारा संवर्धित–

४३ वें स्वामी रामतीर्थ आध्यात्मिक विराट् सम्मेलन

का आयोजन आचार्य स्वामी अमरमुनि जी महाराज, परमाध्यक्ष स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून के तत्वाधान व भारत के सुविख्यात विद्वान सन्त प्रवक्ताओं, भजनोपदेशकों की उपस्थिति में दिनांक २६-५-८० तदनुसार सोमवार से १-६-८० तदनुसार रविवार तक राजपुर रोड स्थित हरिओ३म् सत्संग भवन पर सायं ६ बजे से रात्रि के १० बजे तक किया जा रहा है।

इस पावन एक सप्ताह तक होने वाले सम्मेलन में विभिन्न आध्यात्मिक विषयों पर अनेकों विद्वानों के विचारों का श्रवण करने के साथ ही महापुरुषों के दर्शन का भी सौभाग्य आप को प्राप्त होगा। अतः आप सब अपने इष्ट मित्रों सहित इस अवसर का लाभ उठायें व जीवन के परम लाभ को प्राप्त करें। तद्धेतु राम दरबार आप सब को सादर व सप्रेम आमंत्रित करता है।

इस वर्ष लघु सम्मेलन १५-५-८० से २५-५-८० तक राजपुर रोड, सत्संग भवन पर सम्पन्न होगा।

संयम–सप्ताह इस वर्ष २-६-८० से ८–६–८० तक राजपुर आश्रमपर पूर्व आयोजित कार्यक्रमानुसार सम्पन्न होगा।

विशेष (१) सम्मेलन व साधना-सप्ताह में उपस्थिति के इच्छुक रामप्रेमी अपने सविवरण आगमन के समाचार से कम से कम १५ दिन पूर्व अवश्य विज्ञ करायें, जिससे समुचित सुविधा प्राप्त हो सके। (२) विस्तृत विवरण के लिए मई ८० का अंक अवश्य देखें।

—मंत्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टिहरी-गढ़वाल नरेश का स्वागत

रविवार, दिनांक ९ मार्च, १९८० को दिल्ली मिशन के साप्ताहिक सत्संग में टिहरी-गढ़वाल के महाराज श्री मानवेन्द्रशाह जी महारानी जी सहित पधारे। महाराज की आयरलैण्ड में भारत के राजदूत के रूप में नियुक्ति पर उनका स्वागत करने के लिए उन्हें आमन्त्रित किया गया था।

पाठकों, विशेषत: रामप्रेमियों को ज्ञात होगा कि ब्रह्मलीन श्री स्वामी रामतीर्थ जी महाराज तथा उनके पट-शिष्य स्वनाम धन्य श्री नारायण स्वामी को, समाचार—पत्रों के आधार पर टोकियो में होने वाले विश्व-धर्म सम्मेलन में भारत का प्रतिनिधित्व करने के उद्देश्य से भेजने की सभी व्यवस्था वर्तमान महाराज के दादा स्वर्गीय महाराज श्री कीर्तिशाह जी द्वारा की गई थी। वहीं राम को पूर्णसिंह की कोटि के 'रत्न' की उपलब्धि हुई थी। टिहरी राज्य में इन दोनों परमश्रद्धेय संन्यासियों के लिए कुटियाएं बनवाने तथा अन्य आवश्यक प्रबन्ध करने का कार्य तत्कालीन नरेश द्वारा ही किया गया था। अतः इस गौरवमय वंश के सुयोग्य उत्तराधिकारी को आमंत्रित करना सब प्रकार से उपयुक्त था।

महाराज एवं महारानी का मिशन की प्रधाना तथा कार्यकारिणी के कतिपय सदस्यों द्वारा स्वागत किया गया। दोनों, प्रधाना जी तथा उपप्रधानों द्वारा पुष्पमालाएं पहनायी गयी। प्रधान सचिव द्वारा संक्षिप्त—रूप में उनका स्वागत होने के बाद महाराज ने स्वामी राम के चित्र पर माला अर्पित की। इस अवसर पर संगीतज्ञ श्री कस्तूरी लाल चड्ढा द्वारा स्वामी राम की एक गजल तथा भजन सुनाये गये, जिनका सभी पर गहरा प्रभाव पड़ा। प्रधाना जी ने इस राज – दम्पति का स्वागत करते हुए इस युग के लिए नितान्त आवश्यक 'धर्म तथा नीति' के पारस्परिक समन्वय पर बल दिया और सम्माननीय अतिथियों की दीर्घायु: उत्तरोत्तर समृद्धि और धर्म में अधिक निष्ठा की कामना की।

इसके बाद महारानी जी को कुवैत से पधारे हुए राम-प्रेमी श्री श्रीराम जी जौली द्वारा पुस्तकें, महाराज को श्री अमोलक राज जी चोपड़ा द्वारा पुस्तकें, रानी बाग शाखा के श्री रामप्रकाश जी धींगड़ा जी द्वारा स्वामी राम का चित्र भेंट किया। श्री जगन्नाथ जी भसीन ने उनका सबकी ओर से धन्यवाद किया।

महाराज श्री मानवेन्द्रशाह जी ने महारानी जी तथा अपनी ओर से आभार व्यक्त करते हुए उस समय प्रकट किये गये विचारों तथा भावनाओं का समर्थन किया और स्वामी राम के श्रीचरणों में अपनी भावमयी; भावभीनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित की।

दोनों अतिथियों ने श्री रामतीर्थ धाम का निरीक्षण किया तथा अल्पाहार के अनन्तर उन्हें विदाई दी गयी। अपरिहार्य कारणों से परमपूज्य श्री परमाध्यक्ष जी महाराज पधार न सके।

-प्रेषित – प्रधान सचिव 'दिल्ली'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ गीत ॥

संकटों की आंधियों में, एक दीपक साधना का—
प्राण के स्नेह बल से, मैं जलाता ही रहा हूं ॥

फूल से सिर पर उठावे,
पर्वतों से भार मैंने ।
रक्त के कण से चुकाये,
वक्त के आभार मैंने ।

जिन्दगी के गरल घट में, बन्दगी का घूंट मीठा—
प्राण के संकेत बल से, मैं घुलाता ही रहा हूं ॥ १ ॥

फूल के पदचिन्ह पर चल,
मैं सुवासित कब हुआ हूं ?
वेदना के पींजरे में,
बन्द आशा का सुआ हूं !

आँसुओं के नीर-नद में, कामना के तीर पर रह—
चीर अपनी भावना के, मैं घुलाता ही रहा हूं ॥ २ ॥

आरती मैंने उतारी,
पत्थरों के देवता की !
उम्र यह मैंने गुजारी,
जंगलों में दासता की ।

भोर की पहली किरण संग, कल्पना का चांद अपना—
मौन हो मजबूर हो कर, मैं ढलाता ही रहा हूं ॥ ३ ॥

बिजलियों के कण्ठ में मैं,
बस गया आवाज बन कर ।
अश्रु-कण चुनता रहा हूं,
दर्द का अन्दाज बन कर ।

ज्ञान की भूली डगर को, प्रेम-पुर के राजपथ से —
सर्वथा लथपथ बदन हो, मैं मिलाता ही रहा हूं ॥ ४ ॥

— शास्त्री बलदेवराज "शान्त"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Self Confidence In Life

(by (Brahmleen) Swami Hari Omji)

[by (Brahmaleen) Swami Hari Omji]

Man is always a master in one subject For any other job he will have to approach a person concerned, he may be sanyasi, a wise philospher, or an expert engineer, but if he wants to get his shirt stitched, he will have to go to a tailor. No one can make a philospher, an engineer, or farmar stitch the shirt. That is why to achieve some knowledge about God or Brahmaone will have to approach a priest, because no other person no matter how wise he may be can do this work, but priest only.

Most of the people think that the meaning of 'Maya' is wealth, clothes or family which they use and which is an important factor in our daily life. But is not true, infact the root of this is our soul If our soul is not attracted by these worldly - things nothing can bound us to be a slave of 'Maya'. And if we feel that we are bound to these worldy things, ofcourse we should say that 'Brahma' itsalf is bound up with Maya.

We feel oursleves a sinner after killing only one living organism whereas on the other hand lord Shiva destroys whole of the earth. Hence, infact, these worldly - things themselves are not the medium to bound us, but our own soul.

We are not meant for wealth health etc. but these are meant for us. That is why it is much more important for us that not be a slave of all these things but though using all these things in our daily life for survival, we should be totaly free from all these things. This stage is the only aim of our life and an independent soul.
If you feel that you are much more precious than these worldly - things, you does not surrender in front of these, you does not even Compromise for these things, these ofcourse you are free from Maya thought you are living in it. If a Mahatama leaves for forest wearing only an under-garment and leaving everythig behind him does not mean that he has became a 'tyagi' or he has freed himself from 'Maya' because root of it is still in his soul and this can lead him again to compromise with Maya Hence, external changes do not have any value a man should mould himself interally. Thus it is necessary to free yourself or yout soul from the the undue attraction of 'Maya'.

A man should perform his duty, he should not worry about, the cutcomings of what he has done, this can be illustrated very clearly by the given example :—

Once ! there was an argument between a river and a pond. The pond said to the river ' Hey ! foolish river, why the hell you give your water to the Ocean when infact

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

he is not in need of it ? Instead it turnes your sweet water into saline." The river laughed and replied "I am not worried about my water concerned, I am not even concerned whether the ocean is thankful or not to me. I perform my duty. I love my work and work is my life and soul " Thus the above example clearly tells us to be dedicated towards your duty nomatter what the result is. This is the live truth. Leaving the five-metals apart of which our body is made, the greatest thing we have in this world is our indestructible soul. Hence, it is important for us to leave everything apart and dedicate ourselves toward our souls, and after understanding the soul we will see that all the luxuries we sort after are with us, multi - millioners will come to flatter us and everything in this world is with us. Therefore we must realise that we are much more great than these 'wordly - things.'

(It would have been a very shameful matter for us, and we would have lost a great deal of our precious time if we thought that all these worldly - things are much more great and keep on praying these and running madly after them).

We become mad, if somthing dear to us is lost or we start crying at the death of somebody who is much dear to us. This happens due to the lack of confidence we have. If we develop confidence in ourselves nothing of this sort can afraid us, for e.g. :—

Whenever we go to a forest we see the elephants in groups, but on the other hand if we watch a lion we find that he roams carelessly all alone, even in the most dangerous parts of the forest, and if there is an elephant all alone in the forest, he becomes mad out of fear. This show that it is confidence that counts not the physique because lion being smaller to elephant rules the forest wholly.

A person having less knowledge about himself will naturally have no confidence in him. He will be always like a blind - man who does not know where is his destiny. He will keep on going this or that way and will be dependant on the others. But the day he will come to know of himself his powers and his motive, confidence shall take birth in him and he will see that every thing is around him.

Therfore, we should move forword in the complicated path of life taking courage as a lamp in hand and confidence as our partner. After having these two weapons with us, we will find that no obstacee comes in our way, and we shall keep on heading towards our destiny without loosing courage during some sort of failture we may have which to face while moving towards our destiny.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समालोचना करते हैं वे उसके बिना चल भी नहीं सकते हैं। यह वास्तव में युगव्यवहार है। किसी समय पैदल का महत्त्व था जब कि आज पैदल का उपहास होता है। व्यवहार - दर्शन युग - दर्शन है, जो युगानुरूप अपना व्यवहार बना लेता वह निर्बाध गति से अग्रसर होता जाता है। भौतिक वस्तुओं अभौतिकता से कोई विरोध नहीं। उसका तद्विपरीत सहयोग है, भौतिक साधन आवश्यक है, उसका परिहास निन्दनीय है। सापेक्षता में निरपेक्षता को घसीटना धीमता नहीं। सापेक्षता में व्यवहार दर्शन मान्य है, और परमार्थ में निरपेक्षता का महत्त्व है।

आश्रम समाचार

आश्रम के भूतपूर्व महामंत्री तथा रामसन्देश के सम्पादक व अपने प्रिय-मित्र ब्रह्मलीन वासुदेवानन्द जी महाराज के श्रद्धाञ्जलि-दिवस में सम्मिलित होने के बाद स्वामी जी महाराज ने अद्वैताश्रम, जालन्धर में सम्पन्न हो रहे आयोजन में सम्मिलित होने के लिए जालन्धर प्रस्थान किया। १ मार्च को जालन्धर के सम्मेलन में भाग लेने के पश्चात निर्मल साधना ट्रस्ट, न्यू राजेन्द्र नगर, दिल्ली में आयोजित सम्मेलन में ४ मार्च को आपने भाग लिया।

६ को गीता भवन, नवाँशहर व दिल्ली होते हुए परमाध्यक्ष जी महाराज का देहरादून 'मिशन' पर आगमन हुआ १० को प्रातः। १२ को पंजाब सिन्ध क्षेत्र, ऋषिकेश के आयोजन में सम्मिलित होते हुए १३ को मिशन से ही आपने पुनः दिल्ली की ओर प्रस्थान किया।

१४ से १६ तक नजफगढ़ सम्मेलन, १८ को धर्म प्रचारक मंडल, वेदमन्दिर, लुधियाना, २० को सनातन धर्म सभा घोण्डा, आदि विभिन्न आयोजित कार्यक्रमों में सम्मिलित हो अपने विचारों द्वारा जनमानस को उद्बोधित करने के अनन्तर आचार्यप्रवर ने २२ की प्रातः 'सार शब्द मिशन' की झण्डे की रस्म में भाग लिया। इसी दिन दोपहर को पुनः स्नेहवश घोण्डा वापिस गये तथा तत्पश्चात् सार शब्द मिशन द्वारा राजौरी गार्डन में आयोजित सम्मेलन में भी आप सम्मिलित हुए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामनवमी के पावन-पर्व पर महाराज श्री की व्यस्तता का अनुमान निर्दिष्ट विभिन्न कार्यक्रमों में सम्मिलित होने से ही हो जाता है। २४ की प्रातः अर्थात् रामनवमी की प्रातः 'मिशन' के कार्यकर्ता श्री गोविन्द लाल जी बांगा के नवनिर्मित गृह में शिलान्यास करने बाद, जो 'होली फैमली' के पास निर्मित हो रहा है, सनातन धर्म सभा, ईस्ट पटेल नगर, सनातन धर्म सभा, न्यू राजेन्द्र नगर, राज बहिन के मन्दिर में राजेन्द्र नगर, स्वामी रामतीर्थ मिशन रामतीर्थ नगर, गणेश्वरधाम (अद्वैत जयन्ती के उपलक्ष में) राजौरी गार्डन चूनामंडी पहाड़गंज (संन्यास आश्रम) दिल्ली प्रान्तीय सत्संग मण्डल द्वारा रामनवमी के उपलक्ष में आयोजन, आनन्द निकेतन (श्री चुन्नी लाल शर्मा के निवास स्थान पर) दिल्ली शाखा की प्रधाना माता मेला देवी जी मल्होत्रा के यहाँ से होते हुए रानी बाग शाखा में अपना प्रवचन करने के अनन्तर वापिस मिशन।

गणेश्वर धाम, द्वारा रामनवमी का उत्सव २६ को आयोजित हुआ। महाराज श्री ने इसमें भी भाग लिया। श्री भगवान दास जी द्वारा स्थापित आइस फैक्ट्री में २९ को भाग लेने के अनन्तर आपका सायं चलकर ३० की प्रातः आगमन देहरादून हुआ।

"भगवान राम का सौन्दर्य कोटि (करोड़ों) कामदेवों के समान है उसकी प्रियता के कारण ही राक्षसीय वृत्तियों से सम्पन्न खर-दूषण भी कहते हैं - ऐसा सौन्दर्य हमने कहीं नहीं देखा। लेकिन सुग्रीव भयभीत है कि इन्हें बाली ने तो नहीं भेजा। भय, जो उसकी अपनी करनी का, उसके अपने विचारों का है डराता है उसे। डराते हैं उसी के कर्म, डराती है उसी की अपनी स्वार्थमयी वृत्ति। तभी तो डरता है राम से। हनुमान को भेजता है यह समझाकर कि मेरी तरफ अपना मुख रखना, अर्थात् राम की पीठ हो मेरी ओर। स्वार्थी का स्वरूप कैसा है राम का मुख नहीं देखना चाहता। सोचता है यदि बाली के भेजे होंगे तो भाग जाऊँगा और हनुमान। स्वार्थी अपने प्रिय - मित्र का भी बलिदान करने में हिचकिचाता नहीं। राम पहिचान जाते है भिक्षु-वेष वाले हनुमान को। लेकिन क्षमा कर देते हैं। यह सब इसलिए क्षम्य है क्योंकि हनुमान ने गुरू - आज्ञा का पालन किया। गुरू की आज्ञा है कि सुग्रीव की सेवा करना। गुरू ने कहा था जाते समय कि हनुमान मैं सुग्रीव का हाथ तुम्हारे हाथ में दिये जा रहा हूं। गुरु-आज्ञा का पालन करनेवाला हनुमान राम के साथ छल-कर रहा है, कपटकर रहा है केवल गुरू-आज्ञा से। अर्थात् राम के क्षम्य हैं वे जो गुरू की आज्ञा का पालन करते हैं। छोटा सा प्रसंग है यह रामायण का पर बताता है सब कुछ। रामायण का प्रत्येक प्रसंग महत्वपूर्ण है।" ये विचार थे स्वामी जी के रविवारीय सत्संग में, दिनांक ३० मार्च की प्रातः।

— सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूचना

१–मासिक पत्रिका 'राम सन्देश' न मिलने पर अपने समीपस्थ डाकखाने (पत्रालय) से पता करने के पश्चात हमें सूचित करें। क्योंकि कभी-किसी कारणवश "राम सन्देश" १५ ता० तक निकलता है। इसलिए शिकायत पत्र अपनी २ ग्राहक संख्या सहित दिनांक २० के बाद प्रेषित करने का कष्ट करें।

१–आप आश्रम में किसी भी प्रकार का धन भेजते समय यह लिखना न भूलें कि वह धन किस निमित्त भेजा जा रहा है तथा चैक स्वामी रामतीर्थ मिशन के नाम पर ही भेजें।

३–जो पाठक इस पत्रिका के आजीवन सदस्य बनना चाहते हैं वे अपना सदस्यता शुल्क सम्पादक के नाम प्रेषित करें। सदस्यों को आजीवन पुनः बिना किसी शुल्क के यह पत्रिका प्रेषित की जायेगी।

४–'राम सन्देश' के विदेशी ग्राहक अपना वार्षिक शुल्क १५ रु० भेजें। क्योंकि परमाध्यक्ष जी की आज्ञानुसार १२ रु० के स्थान पर ३ रु० वृद्धि का निर्णय लिया गया है।

५–पाठक अपनी अंक सम्बन्धी, प्रतिक्रियाएं, अवश्य भेजें, जिससे पत्रिका की उन्नति सम्भव हो सके।

६–अपनी रचनाएं – लेख, कविताएं भेजते समय स्पष्ट शब्दों में पृष्ठ की एक तरफ ही लिखें।

७–हर प्रकार की सामाजिक, शिक्षा सम्बन्धी, आध्यात्मिक या पारस्परिक तुलनात्मक आपकी लिखित वैचारिक भावनाएं सादर आमन्त्रित हैं।

—सम्पादक

बुक पोस्ट

ग्राहक संख्या _____

श्री / श्रीमती पुस्तकालय गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

स्थान _____

डाकखाना _____ हरिद्वार.

जिला _____

मासिक पत्र—

"राम-सन्देश"

स्वामी रामतीर्थ मिशन

राजपुर, देहरादून (उ०प्र०)

Pin–248009 भारत

स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून (उ० प्र०) के लिए प्रकाशक स्वामी अमर मुनि द्वारा न्यू आईडियल प्रिन्टिंग हाऊस (कांग्रेस भवन के पास) ४-बी नेशविला रोड, (देहरादून) में, मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम-सन्देश

मई
१९८०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकेतिका

विषय	लेखक	पृष्ठ
भजन		१
दुःख में ईश्वर	स्वामी राम	२
प्रवचन	स्वामी हरिओ३म् जी महाराज	५
बिनु-विवेक	तुलसिदास	७
सम्पादकीय		९
निष्काम-कर्मयोग, संन्यास	'मुन्शीसिंह राणा'	११
यशोदा का मोह	धनश्याम पंडित	१६
भक्ति	स्वामी अद्वैतानन्द	१९
गीत	पं० खुशदिल	२१
शुभ सूचना		२२
रामायण चरित्र-चित्रण	स्वामी तीर्थानन्द 'अज'	२३
आश्रम समाचार		२५

संस्थापक—
ब्रह्मलीन स्वामी हरिओउम् जी महाराज

संवर्धक—
ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज

व्यवस्थापक—
स्वामी अमर मुनि जी महाराज

सम्पादक—
काका हरिओउम् "निर्द्वन्द्व"

आजीवन सदस्यता शुल्क—

भारत में — १०० रु०
विदेश में — ५०० रु०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्र के हित के लिए यत्न करना ही विश्व की शक्तियों अर्थात् देवताओं की आराधना है'-स्वामी राम

वेदान्त, अध्यात्म, संस्कृति, धर्म एवं भक्ति का सजग सन्देशवाहक
तथा स्वामी राम के आदर्शों का एकमात्र लोकप्रिय मासिक—

राम सन्देश

वेदोपनिषदां तत्त्वम् सत्यं नित्यं सनातनम् ॥
तत्सर्वं "रामसन्देशे" पत्रेऽस्मिन्नवलोक्यताम् ॥

वर्ष २९ अंक ५	राजपुर, देहरादून, मई १९८०	वार्षिक भेंट १०) एक प्रति ८५ पैसे

★★★★★

★★★★

भजन

मेरे निठुर कन्हाई बोलो !
कैसी यह निठुराई है ? मेरे निठुर कन्हाई बोलो ॥
खोजत २ भई बांवरी, मीरा खोज न पाई।
मेरे निठुर ... ... —
हृदय बसो तुन नैन न देखें, पल पल बिसरो नांही
सदा रहूं मैं तेरे किनारे, बिछुड़न रात न आए ॥
मेरे निठुर ... ...
कहते तुम को प्रेम दयामय, दुःख भंजन सुखदाई,
मेरी बेर कहो क्यों रे प्रीतम, इतनी देर लगाई ?
मेरे निठुर — ... ...
बीत गए दिन श्याम न आए, जीवन शाम आई रे
मैं हारी तो हार के हारी, तेरी हूं कहलाई ॥
मेरे निठुर कन्हाई ... — ...
मैंने लगाई तुमने निभानी, अब भूलो न प्रभुताई
मेरे निठुर कन्हाई बोलो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुःख में ईश्वर

(ता० ८ फरवरी १९२३, रविवार के तीसरे पहर का भाषण)

भद्रपुरुषों और महिलाओं के वेष में मेरे ही आत्मन्

मनुष्यों को दुःख क्यों होता है? जगत् में दुःख का क्या कारण है? इस प्रश्न पर आज तीसरे पहर विचार होगा।

इतिहास में अथवा पौराणिक ग्रन्थों में जो कुछ पढ़ा है, उसकी दृष्टि से, एवं महात्माओं के वचनों व उक्तियों, और बुद्धिमान् पुरुषों की सम्मतियों की दृष्टि से राम इस प्रश्न पर विचार नहीं करेगा। यह ठीक है कि इन बड़े-बड़े विद्वानों, लेखकों, महान् विचारकों तथा ग्रन्थ-कर्त्ताओं ने सत्य ही कहा है। परम सत्य का जैसा रूप उनके अनुभव में आया, वैसा ही उन्होंने प्रकट किया है। परन्तु जब तक आप स्वयं पूरी छान-बीन न करेंगे और स्वयं अनुभव करके न देखेंगे, तब तक दुनिया के सारे लेखकों की सारी रचनाओं को इकट्ठा करने से भी विशेष लाभ न होगा। राम केवल वही कहेगा, जो उसने निज अनुभव द्वारा देखा है, और जो प्रत्येक व्यक्ति अपने आप अनुभव द्वारा देख सकता है।

आजकल लोगों में बड़े-बड़े विद्वानों, इतिहासों एवं बड़े-बड़े वैज्ञानिकों के प्रमाण देने की बड़ी रुचि है। और जो वक्ता उन महान् पुरुषों का प्रमाण दे सकता है, वही सब से अधिक सम्मानित होता है। यह प्रवृत्ति आत्मघातिनी है। राम आपको अपने अनुभव की बातें कहेगा और यह बतलायेगा कि आप अपने अनुभव से क्या-क्या सीख सकते हैं।

जगत् के दुःख का प्रधान कारण यह है कि "हम आन्तरिक अवलोकन नहीं करते, हम स्वयं अपनी सम्मति स्थिर नहीं करते, बहुत-सी बातों को हम यों ही मान लेते हैं, हम अपने सोचने का काम बाह्य शक्तियों के भरोसे छोड़ देते हैं।"

हम लोग भीतर बैठकर नहीं देखते, अपने बल पर भरोसा नहीं रखते, दूसरे जो कुछ कह देते हैं, उसे ही स्वयंसिद्ध मान लेते हैं। मुहम्मद, बुद्ध और कृष्ण में विश्वास रखने के अतिरिक्त हम लोगों ने बेहिसाब अपूज्य देवताओं को भी गढ़ रक्खा है, जिनके आगे हम सिर झुकाते हैं। एक बालक ही यदि हमारे आचरण की टीका - टिप्पणी कर डालता है, तो बस, उतना ही हमारी शान्ति को भंग करने के लिए, हमें क्लेश पहुंचाने के लिए काफी है। हम दूसरों के विचारों, दूसरों की आलोचनाओं की हद से ज्यादा परवाह करते हैं, और उनकी कृपा-संपादन करने में बेहिसाब समय बरबाद करते हैं। अपने आपको अड़ोस-पड़ोस के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोगों की ही आँखों से देखना, अपने सच्चे स्वरूप पर स्वयं ध्यान न देना बल्कि दूसरों की ही दृष्टि से अपना निरीक्षण करना, यह जो स्वभाव है यही हमारे सारे दुःखों का कारण है। दूसरों की दृष्टि में अपने को देखने की जो आदत है; उसे ही वृथा अभिमान, आत्म-श्लाघा (Self-aggrandisement) कहते हैं। यह हम दूसरों की नजरों में अत्यन्त भले जँचना चाहते हैं। यह समाज का सामाजिक दोष है, और सभी धर्मों का प्रधान अवगुण है।

हिन्दुस्तान के एक ग्राम में एक अंध पागल (नीम पागल) रहता था। जैसे यहाँ, अमेरिका में अप्रेल के महीने में दूसरों का उल्लू बनाने की रीति है, वैसे ही भारतवर्ष में मार्च के महीने में लोग अपने यार-दोस्तों के साथ तरह-तरह की ठट्ठे-मसखरी (मजाक) किया करते हैं। उस ग्राम के हँसमुख युवकों ने उस नीम पागल से मजाक उड़ाने का यह अच्छा अवसर समझा। बस, उन सभी ने उसे कुछ शराब पिलाकर मस्त बना डाला, और फिर उसके परम विश्वस्त, परम हार्दिक मित्र को उसके पास भेज दिया। उस पगले मनुष्य के नजदीक आते ही उसका मित्र गला फाड़-फाड़कर चिल्लाने लगा, आँखों से दिखावटी आंसुओं की धारा बहाने लगा, रोने-धोने लगा, और बोला, "भाई, मैं तुम्हारे घर से अभी-अभी आ रहा हूं, वहां मैंने देखा कि तुम्हारी स्त्री विधवा हो गयी है, मैंने उसे विधवा देखा।" इस पर वह पागल भी अपनी पत्नी के वैधव्य (विधवापन) पर रोने चिल्लाने और विलाप करने लगा और आंसू बहाने लगा। अन्त में दूसरे लोग आकर पूछने लगे, "तुम रोते क्यों हो?" पगले ने उत्तर दिया, मेरी स्त्री विधवा हो गयी है? इसी से रोता हूं।" वे बोले, "यह हो कैसे सकता है? तुम तो जीते हो और कहते हो मेरी स्त्री विधवा हो गयी है? जब तक तुम, उसके पति नहीं मरते, वह विधवा कैसे हो सकती है? तुम मरे नहीं, तुम स्वयं अपनी स्त्री के वैधव्य पर शोक कर रहे हो, यह तो बिलकुल बेतुकी बात है।" पर वह पागल कहने लगा, "अरे, जाओ; तुम नहीं जानते, तुम नहीं समझते; हमारे उस अत्यन्त विश्वास-पात्र मित्र ने कहा है, जो अभी हमारे घर से होकर आ रहा है, उसने हमारी स्त्री को वहां विधवा देखा है। वह इस बात का साक्षी है; वह देख आया है कि मेरी स्त्री विधवा हो गयी!" लोगों ने कहा— "देखो, यह कैसा भारी अनर्थ, बेहूदापन है" (हसी)। अभी हम इस मूढ़ की कहानी पर हंस रहे हैं कि वह अपनी स्त्री के वैधव्य पर रो रहा था और लोगों की बात नहीं मानता था कि उसके जीवित रहते उसकी स्त्री विधवा नहीं हो सकती, मानो अपने व्यवहार से वह कह रहा है :—

"तुम तो कहते हो सच मेरे भाई!
पर घर से आया है मोतबर नाई।

किन्तु याद रहे, जगत के मत-पथ, धर्म तथा सभी दंभी, अभिमानी और 'फैशनेबुल' लोग ऐसी ही विकट असंभव बातें कर रहे हैं। न तो वे अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नेत्रों से देखते हैं और न अपने मस्तिष्क से सोचते है। यहाँ ही देखिये, आपकी अपनी आत्मा, आपका सत्य स्वरूप, प्रकाशों का प्रकाश, निरंजन, परम पवित्र, स्वर्गों का स्वर्ग, आपके भीतर विद्यमान है। आपका अपना आप, आपका आत्मा सर्वदा जीवित, अजर, अमर, नित्य उपस्थित है, फिर भी आप रो-रोकर आँसू बहाते हुए कहते हो, अरे हमें सुख कब प्राप्त होगा? "और देव-ताओं का आह्वान करते हो कि वे आकर तुम्हें विपत्ति से उबार दें। आप देवताओं के आगे प्रणिपात होते हो, नीच भिखारी (sneeking habits) का अवलंबन करते हो, और स्वयं अपने को तुच्छ समझते हो। क्योंकि अमुक लेखक अमुक उपदेशक या महात्मा अपने को पापी कह गया है, वह हमें कीड़े-मकोड़े कहकर पुकारता है इसलिए हमें भी वही करना चाहिए इसलिए अपने को मृतक समझने में ही हमारी मुक्ति है। इसी तरीके से लोग सभी चीजों पर दृष्टि डालते हैं, पर इससे काम चलने का नहीं। अपने निज जीवन का अनुभव करने लग जाओ अपने निजात्मा को भान करना आरम्भ कर दो इस नशे की हालत को विदा कर दो, जो आपको अपनी मृत्यु पर रुला रही है। अपने पैरों पर आप खड़े हो जाओ, चाहे आप छोटे हो या बड़े, चाहे आप उच्च पद पर हो या नीच पद पर, इसकी तनिक परवाह न करो। अपनी प्रभुता का अपनी दिव्यता का साक्षात्कार करो। चाहे कोई हो, उसकी ओर निःशंक दृष्टि से देखो, हटो मत अपने आपको औरों की दृष्टि से अवलोकन मत करो, बल्कि अपने आप में देखो। आपका अपना आप आपको बारम्बार यह उपदेश देगा कि "सारे संसार में आप सबसे महान् आत्मा हो।"—क्रमश

आत्मानुभव

संसार में आपको जितना भी आकर्षण दिखायी देता है, वह सत्‌नारायण के सिवा और कुछ नहीं है। जो प्रियतम प्यारे के शरीर में आपको दिखायी देता है, वही तारों, पेड़ों, पर्वतों, नदियों में दूसरा वेष धारण कर लेता है। इस तथ्य का अनुभव कीजिये — बस, इस तथ्य के अनुभव से ही आप सांसारिक इच्छाओं और व्यसनों से ऊपर उठ सकते हैं। इस प्रकार आप सांसारिक इच्छाओं का आध्यात्मिक प्रयोग करके उनका निष्काम भाव से उपयोग कर सकते हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिनांक १५ अगस्त १९५३ को प्रातः ब्रह्मलीन स्वामी हरिओ३म जी महाराज द्वारा दिया गया भाषण

प्रवचन

उपनिषदों में एक गाथा आई है उसको विचार पूर्वक श्रवण कीजिए। अभिमन्यु का पुत्र तथा चार ऋषि कुमार अरूणी महात्मा के पास जाते हैं और ब्रह्मज्ञान पाने को लालायित हैं। अरूणी महात्मा ने कहा कि मैं इस शिरोमणी विद्या को भली भांति समझा सकने में असमर्थ हूं। अश्वपति राजा पूर्ण ज्ञानी हैं। वह आपके प्रश्न का भली भांति उत्तर देंगे तथा निर्णय पूर्वक संशयों की निवृत्ति करेंगे। वह छः मिलकर अश्वपति राजा के गृह जाते हैं। राजा ने छः का भली भांति सत्कार किया। उनके चरणों को धोया। तत्पश्चात् राजा हाथ जोड़ आज्ञा पूछता है तथा विनय पूर्वक कहता है कि आप अन्न, भोजन, कपड़ा इत्यादि लीजिये। मेरे यहाँ बड़ा भारी यज्ञ होने वाला है। जैसे दूसरे पुरोहितों को दक्षिणा दूँगा वैसे ही आपके प्रति भी करूंगा। ऋषिकुमार बोले – हम सांसारिक वस्तुओं के लिए नहीं आए। हमें तो ब्रह्मज्ञान की आवश्यकता है। राजा बोला तो जिज्ञासा पूर्वक अधिकारी बनकर आईये। अभिमान रहित होकर आइये ऋषि, ब्रह्मचारी निर्माण होकर जाते हैं। जिन्होंने पहले दिन पूजन कराया था उन्हीं को राजा के सामने हाथ जोड़कर जाना पड़ा। देखा निर्माण है राजा ने सब कुछ लेने को कहा। परन्तु बोले हमें तो ब्रह्म विद्या चाहिये। सांसारिक चीजों का मोह छोड़ ब्रह्मज्ञान को ले कृत्य २ हो गए और फिर वापिस लौटे।

जिस घड़ी को अलमारी में सजना है, वह बड़ी अच्छी है सुशोभित है। जिसे किसी के गले का हार बनना है, उसे अलमारी में से निकलना होगा। बार २ कुठारी के अन्दर गलना होगा, चोटें सहन करनी होंगी तभी किसी के तन पर शोभा पावेगी। सन्त भी राजा की तरह सत्कार करना बहुत अच्छी प्रकार जानते हैं। परन्तु जिनको कुछ बनना है, उनसे सीखना है, उन्हें निरभिमान होकर जाना है। मैं विद्वान नहीं हूं पर मुझे अनुभव जरूर है कि प्रभु प्राप्ति कैसे होती है मुझे मान है, गौरव है कि वह अवस्था कब और कैसे आती है यह डके की चोट है। इस बात की कि आत्मज्ञान की युक्तियों को मन से समझ लेना बहुत समझ की बात है। यह पूर्ण विश्वास रखो तुम शरीर नहीं, तुम सदा अविनाशी हो। यदि वृत्ति को स्थिर रखना चाहते हो, ब्रह्मानन्द पाना चाहते हो जिससे विश्व में रहते हुए भी आनन्द में रह सको तो साधन की आवश्यकता है। गले का हार बनने के लिये सोने की तरह कुठारी में बार २

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गलना होगा, तभी किसी के गले का हार बन सकोगे। तभी किसी के माथे का सेवन कर सकोगे सोने की डली को क्या कभी गले में लटकाये देखा है? सुनार की चोटों में से होकर जेवर बनना होगा। मट्टी ने घड़े से पूछा — तू कैसे महान बन गया? उत्तर दिया - मुझे पहले छाना गया, फिर गधे पर चढ़ा कर घर ले जाया गया और फिर पानी में भिगोया गया, चक पै घढ़ाया गया और फिर १७, १८ दिन आंच पै पकाया गया तब फिर सरे बाजार सजाया गया और कीमत डाली गई। खरीददार आए, जगह २ से मुझे ठकोरा गया। कहीं से कच्चा तो नहीं रह गया। मेरे में कच्चा-पन किसी अंश में भी न था - सो अब आज मैं इसके सिर पर चढ़ा हूं। हम भी उस प्रभु के बनना चाहते है बल्कि प्रभु प्यारे को तो नौकर बनाना चाहते हैं — हे भगवान हमारी दरिद्रता दूर हो जाए, मेरा लड़का पास हो जाए इत्यादि २। ओ भोले वह तो चिन्तामणी है लेकिन हमें योग्य बनना है। वह हमारा ही हो जाए किसी भी महान कार्य में छोटों की तो ड्यूटी लगा दी जाती है और बड़ों से कह दिया जाता है विनयपूर्वक जी आप कौन सा काम करेंगे? अश्वमेध यज्ञ हुआ छोटों की तो ड्यूटी लगा दी गई और भगवान कृष्ण से विनयपूर्वक पूछा गया जो भी करना चाहे, करें। कृष्ण भगवान बोले — युधिष्ठिर यदि ऐसा ही है तो मुझे भी सेवा का सौभाग्य प्राप्त हुआ है - मैं दो काम करूंगा (१) ब्राह्मणों तथा ऋषि महात्माओं के चरण धोऊंगा (२) जूठे पात्रों को उठाऊँगा। भगवान ने holy part play (पवित्र कला प्रदर्शन) किया। वहाँ विश्वभर के राजा महाराजा, योगी, सिद्ध आए हुए थे। कान्फ्रैंस हुई वहाँ जिसमें एक प्रश्न उठाया गया इस युग का पुरुषोत्तम कौन है? सब इसी विचार की तह तक पहुंचे कि इस युग के पुरूषोत्तम कृष्ण हैं। जयद्रथ ने अभिमन्यु को मारा। अर्जुन को गेट और ताले तोड़ कर जाना था वह चार बजे तक एक भी न तोड़ सका। भगवान कृष्ण सुदर्शन चक्र भेज सूर्य को आच्छदित कर देते हैं। किसी को होश नहीं। बिगुल बजा दिया गया, सायंकाल हो गया, युद्ध की समाप्ति हो गई। जयद्रथ खड़ा हो गया। अर्जुन ने हसते २ चंदन की चिता बनाई। जैसे पतिव्रता स्त्री सोलह श्रृंगार करके चिता में बैठती है, योद्धा भी अस्त्रों शस्त्रों से सुसज्जित हो चिता पै बैठता है। भगवान सुदर्शन से योगमाया को हटा देते हैं। अर्जुन उसी वक्त भगवान के इशारे से जयद्रथ को खत्म कर देता है।

मैंने कईयों को कहते देखा - आत्मज्ञान तो हो ही गया है। अब सन्तों के पास जाने की क्या जरूरत, सत्संग जाने की क्या जरूरत है। अरे आत्मज्ञान नहीं कोई भूत चला गया होगा अन्दर वह प्रतिज्ञा पे अटल रहता है।

रघुकुल रीत सदा चली आई।
प्राण जाएं पर वचन न जाई॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युधिष्ठिर का साथ केवल कुत्ता ही निभाता है बाकी तो रास्ते में ही हरिऊँ तत् सत् हो गए। उस साथी को छोड़ स्वर्ग के अन्दर enter (प्रवेश) करने को इन्कार कर देते हैं। उन्हें कहा जाता है। आप स्वर्ग से वंचित रह जायेंगे कहते हैं कोई बात नहीं। कुत्ता ही धर्मराज के रूप में प्रगट हो कहता है तू धन्य है। तेरा सत्य का प्रयोग और वचनों का निभाना और बैकुण्ठ का त्याग धन्य है – इसे कहते है सत्य का मार्ग।

★

"बिनु-विवेक"

माधव मोह - फांस क्यों टूटै ?
बाहिर कोटि उपाय करिय, अभ्यन्तर ग्रन्थि न छूटै।
घृत पूरन कराह अंतरगत, ससि प्रतिबिम्ब दिखावै
इंधन अनल लगाई, कलप सत औटत, नास न पावै,
तरू-कोटर-मंह बस बिहंग, तरु काटे मरै न जैसे।
साधन करिय बिचार - हीन मन, शुद्ध होई न तैसे।
अंतर मलिन विषय अतित मन, न पावन करिय पखारे।
मरै न उरग, अनेक जतन बलमीक विविध मारे
'तुलसिदास' हरि-गुरु-करुना-बिनु, विमल विवेक न होई।
बिनु विवेक संसार घोर-निधि, पार न पावै कोई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

यक्ष और युधिष्ठिर के संवाद में यक्ष द्वारा पूछे गये 'महान आश्चर्य क्या है?' का उत्तर धर्मराज द्वारा दिया गया - सब देख रहे है कि शरीर मरणधर्मा, अनित्य हैं लेकिन तब भी उसे कभी न मरने वाला और नित्य मानते है। इस बात की व्यावहारिकता का ज्ञान दैनिक, रोज के जीवन को देखने से होता है जहाँ हमारी मान्यताओं और स्वीकृतियों में अन्तर की स्पष्टता सम्मुख, अपरोक्षतया देखने को मिलती है, अनुभूत की जा सकती है। अतः स्पष्ट है कि जिस बात को हमारा बौद्धिकजगत् मानता है, बुद्धि मानती है यह आवश्यक नहीं है कि वह हमारे जीवन के व्यावहारिक-पक्ष को भी प्रभावित करें अर्थात् जो हम मानते है उसे करें भी यह स्आवश्यक नहीं है! यहां एक बात स्पष्ट है कि जो हम करते हैं वह मानते है यह स्वयं-सिद्ध है। क्योंकि बिना माने किसी बात को हम करते नहीं। पहले बुद्धि द्वारा स्वीकार किया जाता है तभी मूल्यांकन द्वारा उपयोगिता के आधार पर उसे किया जाता है।

बिना जाने इच्छा नहीं होती ओर इच्छा के बिना क्रिया नहीं यह सिद्धान्त है, जानाति, इच्छति, यतते। क्रिया के पीछे कारण है इच्छा और इच्छा कार्य हैं ज्ञान का, जानकारी का। अगर क्रिया में गड़बड़ी होती है तो स्पष्ट है इच्छा में भी कुछ गड़बड़ है और उसके भी पीछे जायें तो ज्ञान में कमी है। जानकारी स्पष्ट नहीं है उसकी जिसकी क्रिया गलत है। इसी बात को समक्ष रखकर वेदान्त के विद्वान शास्त्रकारों ने इस प्रश्न का कि शास्त्रज्ञ और मूर्ख के व्यवहार मैं समानता क्यों दिखायी देती है, अर्थात जानने वाला और न जानने वाला एक जैसा व्यवहार करते देखे जाते हैं इसका क्या कारण है? उत्तर देते समय स्पष्ट किया है अज्ञान को भी दो रूपों में विभाजित करके, एक है असत्वापादक अज्ञान और दूसरा है अभानापादक अज्ञान। पहला है, है या नहीं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसमें युक्ति, तर्क, और प्रमाणों का प्राधान्य होता है, इसका सम्बंध है बौद्धिक जगत से अर्थात इसकी निवृत्ति होती परोक्ष ज्ञान से। परोक्ष ज्ञान है अन्यों के अनुभूत ज्ञान का भण्डार, वह किसी भी रूप में हो सकता है। लेकिन इसमें आस्था, निष्ठा, श्रद्धा की प्रधानता होती है। अतः सम्भावना बनी रहती है विरोधी तर्कों के भी सामने आने की, विकल्प आते रहत हैं सामने और कभी-२ तो सकल्पों को दबा देते हैं विकल्प। दूसरा है अभानापादक अज्ञान वह है अपनी, स्वयं की अनुभूति के अभाव से उत्पन्न। पढ़ा है, बुद्धि ने भी स्वीकार किया है लेकिन जाना नहीं है। दूसरों के देखे के आधार पर, उनसे द्वारा कही गई बातों को प्रामाण्य मान श्रद्धावश कह रहे हैं लेकिन अपनी आंखों से देखा नहीं है। दूसरों द्वारा देखी गई और उन द्वारा सुनाई गई बात में ओर अपनी आंखों द्वारा देखकर कहीं जा रही बात में कितना अन्तर है यह स्पष्ट है। अपनी आंखों द्वारा देखा जाना, व्यवहार को परिवर्तित कर देता है।

स्वामी राम ने यद्यपि समन्वय को अपने समक्ष रखा, सबका आदर किया, लेकिन एक जगह जाकर दोनों में से एक के चुनाव की बात को स्पष्ट किया। जगत् और ब्रह्म एक ही समय में अनुभूति योग्य नहीं है। दर्शन और बर्तन में अन्तर जिन लोगो द्वारा प्रतिपादित किया जाता है वह स्पष्ट नहीं होता, अस्पष्ट है। दृष्टान्तस्वरूप रज्जु में सर्प भ्रान्ति के उदाहरण में कोई कहे कि वह रस्सी है और डरे, भय माने उससे दोनों समझ नहीं आते, दोनों में से एक बात गलत है क्योंकि रस्सी यदि रस्सी है तो सर्प नहीं और यदि सर्प है तो रस्सी नहीं। कहने और करने में अन्तर अस्पष्टता का, अधूरेपन का बोधक है।

परोक्ष-ज्ञान की सार्थकता तभी है जब वह दृष्टि दे, जब उसके द्वारा हम अपरोक्षानुभूति की ओर जाँये। जबतक हमारा जानना हमारी अपनी अनूभूति का परिणाम नहीं होगा तब तक द्वन्द्व का यह स्वरूप चलता रहेगा।

एक बात बहुत अधिक सुनने में आती है कि जिनकी शिक्षा विद्यालयों विश्वविद्यालयों में दी जाती है उनका प्रभाव न के बराबर होता है जीवन के व्यवहार में और जिनसे जीवन प्रभावित है उनका कोई स्कूल नहीं, कालेज नहीं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई यूनिवर्सिटी नहीं उसे संचालित करने के लिए। बात सही है, सुनने में अच्छी सी भी लगती है लेकिन क्या वैचारिक दृष्टि से यह बात सही है, तर्क संगत है यह? यदि हम इसका उत्तर स्वीकृतिमय शब्दों में 'हाँ' के रूप में दें तो यह मानना पड़ेगा कि बिना सिखाये भी हम सीखते हैं, कारण के बिना कार्य होता है कार्य है तो कारण दीखे न पर अनुमान तो लगाया जा सकता है उसका। तात्पर्य स्पष्ट है कि हम जो यह कहते हैं कि उनका कोई प्रशिक्षण स्थल नहीं है जो समाज के लिए हानिकारक है कहीं गलत न हो। कहीं ऐसा तो नहीं कि स्कूल आदि में जिस प्रक्रिया द्वारा समझाना चाहिए वह न हो पा रहा हो और कहीं वह समस्त प्रक्रिया घट रही हो जिसके भीतर व्यक्ति अनचाहे में वह सब कुछ इतना मजबूती से सीखता जा रहा हो जिसे वह चेतना द्वारा नहीं सीखना चाहता। वास्तविक स्थिति है यही आदर्शों में, जिन्हें वह शैक्षणिक - संस्थानों के माध्यम से सीखता है, तथा व्यावहारिक मूल्यों में समन्वय नहीं कर पा रहा है आज का समाज, व्यक्ति। उसे सिखाया जाता है सत्य बोलो यही धर्म है लेकिन व्यवहार में, दैनिक जीवन में वह पाता है, सामाजिक मूल्य उसेसमझाते है इससे विपरीत अर्थात बिना झूठ के साँसारिक व्यावहारिक कार्य सम्पन्न नहीं होंगे। कैसे नहीं दोनों में, जो केवल सीखा गया है और उसमें जो जीवन का बहुत पास का अनुभूत तत्व है, भिन्नता न होगी। यह भी आश्चर्य नहीं हैं कि हम जहाँ एक ओर चाहते है आदर्शवादी आदर्शमय जीवन वहीं हम अपेक्षा करते है कि आदर्शों का परित्याग कर तथाकथित व्यावहारिक सफलता भी प्राप्त हो। स्थिति बिल्कुल विरोधी है, परोक्ष और अपरोक्ष में भिन्नता हो तो कोई आपत्ति नही है क्योंकि वह तो सम्भाव्य है लेकिन यदि विरोध हो तो यह उचित नहीं क्योंकि इसमें तो स्थिति बिल्कुल उसी प्रकार है जिसमें किसी व्यक्ति के हाथ पैर बांध कर समुद्र में डाल दिया जाये और उसे कहा जाये कि वह भीगे न।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'निष्काम-कर्मयोग, संन्यास'

मुन्शीसिंह 'राणा'

न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः

इस गीता के तृतीय अध्याय के श्लोक में श्री कृष्ण ने स्पष्ट कर दिया है कि कर्म करना जीव का प्राकृतिक गुण है। अगर ऐसी स्थिति है तो कर्मयोग और संन्यास की अकर्मावस्था कैसी?

जैसा सर्वविदित है कि जब जीव कार्य करता है तो लक्ष्य साथ जुड़ा होता है। कर्म शुरु करने के पहले से ही जीव फल के चिन्तन मनन में अपनी कुछ उर्जा खर्च करता है, उसका कुछ समय निश्चित रूप से उस ओर लग जाता है। यही जीव यदि फल को एक तरफ छोड़कर सिर्फ कर्म को ही अपना धर्म माने तो निश्चय रूप से अपना अधिक समय, अधिक उर्जा इस ओर लगा सकेगा। उस जीव के साधन फल की ओर लालायित जीव से बहुत ज्यादा होंगे और जब साधन कई गुने हैं तो फिर नतीजा तो बिना लालच के और भी अच्छा मिलेगा। यही निष्काम कर्मयोग कहा जाता है। क्योंकि फल की जीव के अन्दर कोई कामना नहीं होती है अतः वह निष्काम है। निष्काम कर्मयोग में जीव का उद्देश्य होता है कि वह फल की प्राप्ति और अप्राप्ति को दूर रखकर कर्म में ही अपना सर्वस्व लगा देना चाहता है निष्काम कर्मयोगी को गीता का यही उपदेश है —

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्म फलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ॥४७॥

निष्काम - कर्मयोग में योगी कर्म करते हुए भी नहीं करता है। कर्म करना उसका स्वभाव बन जाता है। सूर्य विश्व का अन्धकार दूर करता है। यदि कोई सूर्य से जाकर कहे कि सूर्य ने अन्धकार दूर किया है तो क्या सूर्य को ऐसा अहसास होगा? शायद नहीं। क्योंकि सूर्य का स्वभाव बन गया है। अन्धकार उसके पास पहुंचाया नही जा सकता है। दूसरा उदाहरण माँ का अपनी सन्तान की देख रेख है। माँ को अपने बच्चे की सेवा से फल की कोई कामना नहीं होती। माँ का स्वभाव बन गया है बच्चे का ख्याल रखना। सूर्य की तरह यदि बच्चे की माँ से पूछा जाय तो वह यही जवाब देगी कि वह कोई कर्म नहीं कर रही है।

अतः निष्काम कर्मयोग में कर्म करना जीव का स्वभाव बन जाता है वह अच्छे—बुरे की राग-द्वेष की सीमा को लाँघ चुका होता है। किसी पागल आदमी को देखकर, जो सर्दी गर्मी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बरसात में हमेशा नंगा रहता है, कोई पूछे कि तुम्हें जाड़ों में ठण्ड नहीं लगती तो क्या जवाब देगा ? यही न, कि सर्दी गर्मी का निर्णय करना पूछने वाले का काम है उसका तो नंगा रहना स्वभाव बन गया है।

निष्काम कर्मयोग में जीव कर्म करते हुए भी नहीं करता है। कैसी पहेली जैसी लगती है। एक योगी जी के प्रवचन में ऐसा उपदेश देने पर एक श्रोता ने पहेली को समझना चाहा तो योगी जी ने एक उदाहरण सुनाया :—

"राजा जनक निष्काम कर्मयोगियों में श्रेष्ठ माने जाते हैं। उनके दरबार में एक बार एक ऋषि जी पहुंचे। द्वारपाल को बताया कि ऋषि जी महाराज से मिलना चाहते हैं। उसके अगले दिन शहर में बहुत बड़ा एक पर्व मनाया जाने वाला था अतः उसकी तैयारियां चल रहीं थीं। राजा जनक को द्वारपाल के बताए जाने पर, राजा जनक ने ऋषि जी को अन्दर आने के लिए बोल दिया। जब ऋषि जी अन्दर पहुंचे तो पाया कि वहाँ नाच-गाना चल रहा है। नर्तकियों के नाच गाने में राजा जनक तल्लीन है। ऋषि जी को बड़ा आश्चर्य हुआ कि जिन्हें इतना बड़ा योगी मान रखा है, वह सांसारिकता में इतने फंसे हुए हैं। खैर, ऋषि जी से न रुका गया और राजा जनक से पूछ ही लिया कि आप कैसे कर्मयोगी हैं ..... ?? राजा जनक ने अगले दिन शाम को जवाब देने के लिए कह दिया।

दूसरे दिन सुबह से ही पर्व की शुरूआत हो गई। शहर को सजाया, संवारा गया। सुबह राजा जनक ने ऋषि जी को बुलाया। राजा ने एक दूध से लबालब भरा गिलास ऋषि जो को दिया (आज के समय को देखते हुए चाय से लबालब भरा कप कहा जा सकता हैं) साक्ष्य में दो सिपाही बुलवाए। राजा ने ऋषि को मेला देखने के लिए कहा कि भरा गिलास हाथ में लेकर मेला देखने जाएं और सिपाहियों को हुक्म दिया कि दोनों सिपाही अपने हाथों में नंगी तलवारें ऋषि जी के सिर के ऊपर उठाए रखें और जब ही दूध की एक भी बूंद नीचे गिरे, उसके साथ ही तलवारें ऋषि जी के सिर पर गिरें और ... ...।

सारे दिन मेला देखने के बाद जब ऋषि जी भाग्यवश शाम को लौटे तो जनक ने पूछा कि स्वामी जी मेला कैसा लगा। स्वामी जी अब अपनी नई जिन्दगी की आशा पाकर बोले कि महाराज जी मेला क्या देखा, मैं तो पूरे दिन दूध के गिलास पर टकटकी लगाकर घूमता रहा क्योंकि एक भी बूंद का गिरना, जिन्दगी का अन्त था।

अब राजा ने कहा आपको अपने प्रश्न का उत्तर मिल गया होगा। मेले में घूमते हुए भी आपकी निगाहें दूध पर थी ठीक उसी प्रकार नाच-गाना दरबार में होते हुए मेरा ध्यान कहाँ था आप सोच सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतः ऊपर के उद्धरण से स्पष्ट है कि कर्मयोगी साँसारिक कर्म करते हुए भी नही करता है। उसका ध्यान उन कर्मों में लिप्त नहीं होता है। संक्षेप में निष्काम — कर्मयोगी संसार में उसी प्रकार रहता है जैसे कि जल में कमल। यही निष्काम कर्मयोग है। निष्काम-कर्मयोग में कर्म करने की कर्मठता फल-लालायित व्यक्ति से कई गुनी ज्यादा होती है। उसके अन्दर फल का कोई विचार ही नहीं होता है अतः राग-द्वेष नहीं होते हैं और वह काम, क्रोध, मद, लोभ और मोह सभी से परे ईश्वर को सर्वस्व अर्पण कर कर्म करता है।

कर्म क्योंकि सहज है प्रत्येक द्वारा चेतना व अचेतना में किया जाता है, इसलिए उसे जीवन की सत्यता से उपेक्षित नहीं किया जा सकता, यही कारण है कि प्रत्येक सम्प्रदाय, धर्म व सिद्धान्त ने, साधना की पद्धतियों ने इसे अवश्य स्वीकार किया है मूल में यही निष्काम कर्मयोग है जिस पर सब आधारित है सारी साधनाएं।

सन्यास

'निष्काम कर्मयोग में कर्मयोगी सब कुछ करते हुए भी कुछ नहीं करता है, और दूसरी तरफ संन्यासी कुछ भी न करते हुए सब कुछ करता है।'

निष्काम कर्मयोग में योगी की कामना शून्य हो जाती है, उसे फल नाम की याद भी नहीं रहती है। कर्म करना कर्मयोगी का स्वभाव बन जाता है। कर्मयोगी को ख्याल भी नहीं रहता कि वह कर्म कर रहा है क्योंकि उसको वह कर्म-कर्म नहीं रहता बल्कि स्वभाव होता है। जब माँ अपने बच्चे की सेवा-सुश्रूषा करती है तो क्या वह सोचती है कि वह कर्म कर रही है ? शायद नहीं हो। बच्चे की देख-रेख मां का स्वभाव बन गया है इसीलिए कर्मयोग में कर्मयोगी सब कुछ करते हुए भी कर्म नहीं करता है।

दूसरी तरफ संन्यासी कुछ भी न करते हुए सब कुछ करता है। अगर दोनों की तुलना करनी है तो किसी नाराज व्यक्ति के व्यक्त करने की क्रिया से की जा सकती है। एक व्यक्ति जब नाराज हो जाता है तो वह बड़बड़ाने लगता है, अपशब्द भी उपयोग करता है एवं अनजाने में बहुत कुछ कह जाता है। दूसरा व्यक्ति नाराज होने पर एकदम चुप हो जाता है, वह बात करना छोड़ देता है, नाराजगी दिखाने के लिए, उसकी तरफ जिस पर नाराज है, देखना भी बन्द कर देता है। वह बाह्य रूप में सभी क्रियाएं रोक लेता है परन्तु क्या आप कहेंगे कि वह कुछ कर्म नहीं कर रहा है ? निश्चय रूप से वह कुछ भी कर्म न करते हुए सब कुछ कर रहा है। संन्यासी की स्थिति बिल्कुल दूसरे नाराज व्यक्ति की तरह होती है जिसमें वह कुछ भी न करते हुए भी सब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीता में जगह-जगह पर दोनों ही मार्गों को लिखा है। दोनों का ही लक्ष्य एक है। जब लक्ष्य प्राप्त हो जाता है तो दोनों में ही कोई फर्क नहीं रहता है। लक्ष्य से पहले देखा जाय तो कर्मयोग तो कुछ जमता है कि सब कुछ कर्म करते हुए भी कुछ न करना। दूसरा संन्यास में कुछ भी न करते हुए सब कुछ करना तो कोरी पहेली लगती है। लक्ष्य प्राप्त होने से पहले तक संन्यास में कोई साधन ही नहीं है। संन्यास में सब ओर से अपने को हटाना, कुछ भी न करना आता है। क्या इसके लिए हिमालय की कंदराओं में ही जाया जाऐ। देखा ऐसा गया है कि जब व्यक्ति बहुत बड़े दुनियादारी के व्यापार में लगा होता है तो सोचता है कि संन्यास से ईश्वर की प्राप्ति होगी। घर बार छोड़कर जब जंगल में पहुंचता है तो वहां भी छोटी सी दुनियां बसाने लगता है। उसकी लगोटी, गुफा ही आसक्ति का आकार बन जाती है। पहाड़ों की पास-पास दो चोटियों पर रहने वाले संन्यासी एक दूसरे की तारीफ को सुनकर जल-भुन जाया करते हैं। अपने को जितेन्द्रिय तक की स्थिति में पहुंचाने से बाद भी वह ईर्ष्या की आग फिर भड़क उठती है। इससे लगता है कि यह आग उनकी खत्म नहीं हुई बल्कि दब गई थी। इससे साफ जाहिर है कि आत्मोन्नति के लिए दोष सामने आने चाहिए।

निंदक नियरे राखिए, आँगन कुटी छवाय।
बिन पानी साबुन बिना, निर्मल करे सुभाय॥

कर्मयोगी के लिए यह अच्छाई है। उसे अपने दोषों का पता लगता रहता है और आत्म-उन्नति के शिखर पर शनैः शनैः बढ़ता रहता है। कर्मयोगी के लिए 'साधन + निष्ठा' दोनों ही चाहिए जब कि संन्यासी को सिर्फ 'निष्ठा' ही। संन्यासी को साधन की कमी में मार्ग कुछ दुष्कर हो जाता है। अन्तिम लक्ष्य दोनों का ही ज्ञान की प्राप्ति ही है। कर्मयोगी को 'ज्ञान + कर्म' का संयोग होता है जबकि संन्यासी को ज्ञान + कर्माभाव, लक्ष्य मिलने की स्थिति में दोनों एक हो जाते हों

(कर्मयोग) ज्ञान+कर्म = ज्ञान+कर्माभाव (संन्यास) लेकिन यदि 'ज्ञान' दोनों तरफ हटा दिया जाए तो एक तरफ कुछ नहीं बाकी बचता है जबकि दूसरी तरफ 'कर्म जरूर बचता है दूसरे प्रकार से भी देखा जाए तो परमपिता परमात्मा ने सृष्टि की रचना की है तो उसे उसे चलाने के लिए कर्म जरूरी ही है: अतः कर्माभाव तो सृष्टि के मार्ग में बाधक ही बन जाता है।

तथ्य की गहराई में जाकर हम पाते हैं कि कर्मयोग और संन्यास में भेद दिखावा ही है दोनों का लक्ष्य एक ही है लक्ष्य की प्राप्ति पर दोनों एक हो जाते हैं। अपने धर्म शास्त्रों से पता चलता है कि याज्ञवल्क्य जी एक संन्यासी थे जबकि उनके शिष्य राजा जानक एक कर्मयोगी हुए। इन्हीं कर्मयोगी राजा जानक ने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री शुक देव जी को शिष्य बनाया जो कि एक संन्यासी थे। अतः 'संन्यासी - कर्मयोगी - संन्यासी' की एक माला बन जाती है

श्री विनोबा जी ने अपने 'गीता - प्रवचन' में इस भेद को समझाने के लिए बहुत ही अच्छा उदाहरण प्रस्तुत किया है एक बार ज्ञानदेव को चांग देव ने पत्र लिखा। चांग देव उम्र में ज्ञान देव से बड़े थे परन्तु ज्ञान देव ज्ञान में बड़े थे। सवाल था कि चाँगदेव पत्र के सिरनामे (आदर-सूचक शब्द) में क्या लिखें 'चिरंजीव' अगर लिखते हैं तो 'ज्ञानदेव' ज्ञान में बड़े है अतः अच्छा नहीं लगता है अगर सिरनामा 'पूज्य' लिखते हैं तो ज्ञानदेव के उम्र में छोटे होने के नाते अच्छा नहीं लगता इस सब पर सोच समझ के बाद उन्होंने कोरा कागज ही ज्ञानदेव को भेज दिया यह पत्र कईयों ने पढ़ा तथा अपने अपने अर्थ लगाए सबसे पहले निवृति नाथ ने पढ़ा और कहा "चांगदेव कोरे हैं शुद्ध हैं, निर्मल है, उपदेश देने के योग्य हैं" फिर ज्ञानदेव ने पत्र पढ़ा और छन्दों का एक 'चांगदेव — पासष्टी' लिख दिया। अन्त में मुक्ताबाई ने पत्र पढ़ा और कहा चांगदेव इतना बड़ा हो गया है पर है अभी कोरा का कोरा ही"।

अतः उस कोरे कागज को सभी ने अपने अपने ढंग से पढ़ा इसी प्रकार किसी शान्त संन्यासी को देखकर कुछ नहीं कहा जा सकता कि कितनी गहराई है। ईश्वर की अपरम्पार महिमा को कोरे कागज की तरह पढ़ने के अलग - २ तरीके हैं सिर्फ इतना ही है कि कर्मयोगी सब कुछ करते हुए भी कुछ नहीं करता और संन्यासी कुछ भी न करते हुए सब कुछ करता है लक्ष्य पाने पर दोनों एक हैं कोई अन्तर नहीं रह जाता है।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यशोदा का मोह

यशोदा के चिंतन में आया भगवान कृष्ण का स्वरूप विलुप्त हो जाता है। और जैसे ही मैय्या ने कृष्ण को अपने बेटे के रूप में देखा, तो मैया के स्तनों में दूध भर आया। मां का प्यार दूध में परिणत हो गया। कहां मैय्या कृष्ण को ईश्वर समझती रही, ध्यान में, और जब ध्यान टूटा, ध्यान संसार में आया, तो ईश्वर भाव बेटे के भाव में बदल गया। मां के स्तनों के रक्त-बिंदु दूध में बदल गए।

स्वामी रामतीर्थ मिशन, नई दिल्ली के अध्यक्ष श्री स्वामी अमर मुनि जी ने प्रवचन करते हुए कहा :--

"जगत का मोह ही मानव को ईश्वर चिंतन की ओर अग्रसर नहीं होते देता, ईश्वर इन्सान को अपनी शक्ति में लीन करना चाहते हैं, प्रयत्न भी करते हैं, किन्तु संसार के मोह से ग्रस्त इन्सान ईश्वर का चिन्तन-वन्दन नहीं कर पा रहा।

यशोदा भी मोह से ग्रस्त हो गई थी। इसीलिए ही अपने लल्ला - कृष्ण को अपना बेटा ही समझती रही।

एक दिन यशोदा मैया दधि - मंथन कर रही थी और दधि - मंथन करते - करते ही मैया का ध्यान कृष्ण जी की ओर आकृष्ट होता है। सोचती हैं-- मेरा लाड़ला साधारण बालक नहीं। नारायण का अवतार है। दधि - मंथन करते - करते ही मैया का मन लल्ला को देखने को ललचा उठता है। चाहती है वह आए, और मैं उसको छाती से लगा कर दूध पिलाऊं, दुलार करूं।

आप जिसका, जिस भाव से चिंतन करेंगे, वह उसी भाव से, उसी स्वरूप में आपके नेत्रों के सामने आ जायेगा। माँ ने भी दधि - मंथन करते हुए अपने लल्ला का चिंतन किया, तो वह आ उपस्थित हुआ। बाल - लीला करते हुए एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्र की भाँति। आप ध्यान में अपने गुरुदेव का चिंतन करते हैं, सच्चे मन से तो गुरुदेव की आकृति आपकी आंखों के सामने आ जाती है। वही स्वरूप आपके नेत्रों के सामने आ जाएगा, जिसका चिंतन आपने किया होगा। चिंतन विग्रह स्थापित करता है और जब विग्रह स्थापित हो जाता है, तो भावमय सम्बन्ध प्रबल हो जाते हैं। शत्रु का जब ध्यान करते हैं तो हृदय में क्रोध की ज्वालाएं भड़क उठती हैं। और जब प्रेम भाव प्रबल होता है तो आपके मन में इच्छित व्यक्ति के प्रति अगाध प्रेम जाग उठता है। इसी प्रेम भाव से, भक्ति भाव से जब मां यशोदा ने अपने लल्ला कृष्ण का चिंतन किया, तो वह उसी रूप में अपनी माँ के पास पहुंच गया। लेकिन मां तो अपने ध्यान में मग्न थी। लल्ला की ओर ध्यान नहीं देती। आँखे बन्द किए दधि - मंथन किए जाती है। कृष्ण मैया को देखते हैं। सोचते हैं– मैया बुलाती तो है, पर ध्यान नहीं देती। दधि - मंथन के मोह में ही फंसी हुई है। माँ का मोह तोड़ना होगा। इसी विचार से कृष्ण कह देते हैं – "मैया मैं दूध पिऊंगा। मुझे भूख लगी है।"

अचानक मैय्या की ध्यान - तंद्रा टूटती है। भाव विग्रह में बदलते हैं, लेकिन विग्रह में आते ही मोह पैदा हो जाता है। यशोदा के चिंतन में आया - कृष्ण भगवान, कृष्ण का स्वरूप विलुप्त हो जाता है। और जैसे ही मैय्या कृष्ण को अपने बेटे के रूप में देखा, तो मैय्या के स्तनों में दूध भर आया। माँ का प्यार दूध में परिवर्तन हो गया, कहाँ मैया कृष्ण को ईश्वर समझती रही, ध्यान में, और जब ध्यान टूटा, ध्यान संसार में आया तो ईश्वर भाव बेटे के भाव में बदल गया। मां के स्तनों के रक्त बिन्दु दूध में बदल गए। लेकिन माँ का मोह फिर भी दधि-मंथन की ओर आकृष्ट हो गया माँ लल्ला को दूध पिलाना चाहती है लेकिन दधि-मंथन बाधक बन गया है। माँ देखती है – दधि — मथन करते – करते मक्खन आने लगा है, और अगर मक्खन न निकला तो न मक्खन निकलेगा न लस्सी बनेगी। उदासीनता से कह देती है - 'कन्हैया, पहले मक्खन निकाल लूँ फिर दूध पीलाऊँगी।'

नहीं मैया मुझे तो भूख लगी है। मैं अभी दूध पिऊंगा लल्ला ने जिद पकड़ ली।

ओह, कृष्ण मैय्या को अपने रंग में रंगना चाहते है, अपने आनन्द में लीन करना चाहते हैं लेकिन मैय्या बेचारी दधि-मंथन से मोह में ही अपने को उलझाए बैठी है। पास खड़े नारायण की ओर ध्यान नहीं देती। साधारण सी सांसारिक वस्तु के लिए दिव्यानन्द को अनदेखी कर रही है वह लगातार दधि-मंथन भी कर रही है आँखे मूंदे गुनगुना भी रहीं है जिसका चिन्तन करती है वह पास खड़ा है, पर ध्यान नहीं देती मोहवश।

और जब कृष्ण पुनः आग्रह करते है- 'मैय्या मैं अभी दूध पिऊंगा मुझे बहुत भूख लगी है, तो मैय्या फिर टाल देती है। कन्हैया अभी मक्खन आया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि अ.या बस थोड़ा - सा और इन्तजार करो। बाद में तुझे दूध पिलाऊंगी।

उफ! मानव कितना फंसा हुआ है क्षण भगुर वस्तुओं के मोह जाल में। ईश्वर मैय्या को बुला रहे है। उसे परमानन्द देना चाहते हैं लेकिन मैया है कि दही और मक्खन के मोह में अपने आप को उलझाए जा रही है।

कन्हैया को मां का उत्तर सुनकर आश्चर्य नहीं हुआ यह जानता था ध्यान के टूटते ही वह संसार के मोह में उलझ जाएगी। माँ उसे ईश्वर का अवतार समझती तो है लेकिन तब जब वह अन्तर्मुख होकर, आनन्दमय होकर आनन्दमय भाव में उसे देखती है। लेकिन वह क्या करे चाहकर भी माँ को दूध और मक्खन के मोह से मुक्त नहीं कर पा रहा है। मां को इस मोह से निकालना, होगा कृष्ण ने निश्चय किया। अकस्मात् ही लल्ला ने पास पड़ा हुआ एक डन्डा उठाया और तड़ाक से मटके पर दे मारा।

तड़ाक मटका टूट गया। लस्सी बिखर गई मक्खन बिखर गया सारा फर्श मक्खन और लस्सी में भर गया। और मैय्या का ध्यान टूटा तो चकित हुई उसकी मेहनत बेकार गई। उसके स्तनों में रक्त बिन्दुओं से बना दूध छलकने लगा लेकिन वह चाहकर भी लल्ला को दूध न पिला पाई। उसका सारा ध्यान फर्श पर बिखरी, पड़ी लस्सी और मक्खन की ओर केन्द्रित हो गया। कन्हैया ने मां को सांसारिक वस्तुओं के मोह से हटाकर अपने आनन्द में लीन कर लेने के लिए मटके को फोड़ा था लेकिन मां बेचारी फिर उलझ गई संसारी की भांति ही क्रुद्ध हुई कहने लगी कन्हैया तूने मेरी सारी मेहनत बर्बाद कर दी। मैं तुझे दंड दूंगी।

उफ! मैया ध्यान में ईश्वर रूप में जिनका चिंतन करती है, ध्यान टूटते ही वह उसी को दण्ड देने की सोचने लगती है।

कितना फंसा हुआ है मानव इन्हीं क्षण मात्र आनन्द देने वाली विषय वस्तुओं में। हम सबका यही हाल है हम चाहकर भी ईश्वर वन्दना नहीं कर पा रहे हैं। इनसे छुटकारा पाना है तो कर्म करते हुए भी उस सच्चिदानन्द स्वरूप को सदा ध्यान में रखो, जो शाश्वत आनन्द प्रदान करता है, निजात्मानन्द देता है इसी में संसार का कल्याण निहित है।

भगवान कृष्ण ने अर्जुन से कहा था- हे अर्जुन! तुम्हारा जन्म हर बार होता है तुम कर्म के बंधन में बंधे आते हो, तुम पहले जन्म के कर्मों को भूल कर दूसरे जन्म के आनन्द - सुखों में फंस जाते हो। लेकिन मुझे हर जन्मों का ज्ञान रहता है, हर जन्म के बंधनों में बंधा हुआ भी मैं पूर्ण जन्म के कर्मों को विस्मृत नहीं करता। सभी जन्मों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के कर्म बंधन में बँधा हुआ भी धर्म की स्थापना करता हूं। साधु सन्यासियों की रक्षा के लिए कई जन्म लेता हूं। तुम कर्म करो कर्म का फल तो मैंने देना है। अच्छे कर्मों का फल कभी बुरा नहीं हो सकता। यह जगत है ही कर्म प्रधान यहाँ कर्म का फल मिलता है अकर्म का नहीं।

(पंजाब केसरी १५ अप्रेल १९८० से साभार)

भक्ति

— स्वामी अद्वैतानन्द

भक्ति योग, कर्मयोग, हठयोग और ज्ञान-योग इन चारों योगों का फल - मुक्ति ही है। हर एक कर्म का लक्ष्य महानता की ओर ले जाना है। हठयोग में अष्टाँगयोग होता है- यम, नियम, आसन, प्राणायाम प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि। ये सब के लिए साध्य नहीं हैं। ज्ञानयोग में भी वेदान्त पढ़ना, समझना, उस पर चलना, यह भी सब के लिए सरल नहीं है। भक्तियोग सभी के लिए सुलभ है। बालक, युवा, वृद्ध, शूद्र, वैश्य, क्षत्रिय और ब्राह्मण यह सभी के लिए साध्य है। शबरी पढ़ी लिखी नहीं थी परन्तु उसने मुक्ति को प्राप्त किया। भक्ति से पतित अजामिल भी सद्गति को प्राप्त हुआ। गणिका, गीध आदि को भी मोक्ष प्राप्त हुआ। तुलसीदास, सूरदास, कबीर आदि का यश आज भी गाया जाता है। केवल मात्र भक्ति के कारण उन्हें इतना महत्व प्राप्त हुआ कि विद्यार्थी उन पर शोध - प्रबन्ध लिखकर डाक्टर (पी. एच. डी.) की डिग्री प्राप्त करते हैं। कबीरदास जी ने तो स्वयं कहा है- मैंने जीवन भर में कागज एवं लेखनी को स्पर्श नहीं किया,

तुलसीदास जी कहते हैं—

सीया राममय सब जग जानी,
करहुं प्रणाम जोरि जुग पानी।

एक बार तुलसीदास जी की कुटिया में चोर आ रहे थे। चोरों ने देखा धनुष बाण लिए दो बालक पहरा दे रहे हैं। चोरों को चोरी करने का अवसर ही नहीं मिला।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी राम कहते हैं- जिधर देखता हूं उधर तू ही तू है। मतलब यह है कि भगवान कृष्ण को ही चारों तरफ देखते थे। यहां तक गुलाब के कांटों से भी लिपट कर भगवान कृष्ण का ही आलिंगन करते थे। खूंखार जानवरों से भी प्रेम करते थे। जड़ एवं चेतन में भगवान कृष्ण को ही देखते थे।

जो भगवान को ही सदैव देखता है उसी को भक्त कहते हैं। भक्तों का यही लक्ष्य है। हनुमान जी ने तो अपने हृदय को फाड़ कर दिखाया राम उसमें विराजमान हैं। ध्रुव पांच वर्ष के बच्चे थे उन्होंने भगवान को प्राप्त किया। यहाँ पर भगवत् प्राप्ति के लिए अपने को मिटाने के अतिरिक्त अन्य कोई साधन नहीं है।

नारद भक्ति सूत्र में समर्पण को ही भक्ति कहते हैं। इसी से भक्ति की प्रधानता है। तुलसीदास जी लिखते हैं कि नौ प्रकार की भक्ति होती है। जैसे बालक की मां हमेशा रक्षा करती है ऐसे ही भगवान भक्तों की सदैव रक्षा करते हैं। भक्त अपना कुछ रखता ही नहीं सर्वस्व ईश्वर को समर्पित कर देता है। भगवान राम कहते हैं 'जननी जनक बन्धु सुत दारा, तन धन भवन सुहृद परिवारा। सब कर ममता ताग बटोरी, मम पद बाध मनही बर डोरी।'

जब भगवान सब कुछ ले लेते हैं तब उसे भक्ति प्रदान करते हैं। ऐसे ही भगवान कृष्ण ने अर्जुन के रथ की बागडोर अपने हाथ में ले ली। रथवान बनकर उसकी रक्षा की। अर्जुन भगवान से कुछ नहीं कहता कि मेरा रथ इधर ले चलो। भगवान के इशारे पर ही सारे कार्य करता है। श्वास-श्वास से कृष्ण-कृष्ण रटता है। भक्तों की यही गति है। अपने अहम् को मिटा कर भगवान को सर्वरूप मानते हैं। इसी से गोपियों ने भगवान को अपने अग संग रखा। भगवान में भक्ति की प्रधानता है। सब योगों में भक्ति योग प्रधान है एवं सभी को सुलभ है- ज्ञानहि भक्तिहिं नहिं कछु भेदा, उभय हरहिं भव सम्भव खेदा।

प्रेम और भक्ति

ओ मनुष्य! तुम अपनी ही चितवन से सारी वस्तुओं को चित्ताकर्षक बना देते हो। उन (प्रेमभरी) आंखों से जब तुम उनकी ओर देखते हो, तो तुम्हीं स्वयं अपनी चमक उन पर डाल देते हो और फिर तुम्हीं उनके प्रेम में फँस जाते हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभू राजी न हो जब तक किसी से कुछ नहीं होता

ये मत समझो प्रभु की बन्दगी से कुछ नहीं होता,
प्रभु से दूर रहकर आदमी से कुछ नहीं होता ।
भरोसा है जिसे भगवान का - उस नेक बन्दे को,
किसी की दुश्मनी व दोस्ती से कुछ नहीं होता ।
हो दिल में प्रेम ईश्वर से तो मिलता है सकूने दिल,
चरस, अफीम, गांजा, मैकश से कुछ नही होता ।
जमाने भरके दुःख सुख का ताल्लुक है फकत दिल से,
जो दिल काबू में हो जर की कमी से कुछ नहीं होता ।
वो बक्शा जाएगा तोबा करेगा सच्चे दिल से जो,
दिखावे की फकत शर्मिन्दगी के कुछ नहीं होता ।
मुसीबत दूर करने के जतन लाखों किये जाओ,
प्रभू राजी न हो जब तक किसी से कुछ नहीं होता ।
दिली राहत मिलेगी नेकी और निष्काम सेवा से,
अमीरी से फकीरी से खुदी से कुछ नहीं होता ।
हमेशा शायरों ने सोती कोमों को जगाया है,
गलत है जो कहे ये शायरी से कुछ नहीं होता ।
हर एक हालत में खुश रहने की आदत डाल लो 'खुशदिल'
यही है जिन्दगी मुर्दा दिली से कुछ नहीं होता ।

— पं० खुशदिल, सम्पादक 'देशसेवक'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुभ सूचना

समस्त राम प्रेमियों को सूचित करते हुए अत्यन्त हर्ष होता है कि गत वर्षों की भाँति इस वर्ष भी ब्रह्मलीन तपोनिष्ठ व्यावहारिक वेदान्त के साकार विग्रह स्वामी राम की पावन स्मृति में ब्रह्मलीन स्वामी हरिओ३म् जी महाराज द्वारा संचालित व ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज द्वारा संवर्धित–

४३ वें स्वामी रामतीर्थ आध्यात्मिक विराट् सम्मेलन

का आयोजन आचार्य स्वामी अमरमुनि जी महाराज, परमाध्यक्ष स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून के तत्वाधान व भारत के सुविख्यात विद्वान सन्त प्रवक्ताओं, भजनोपदेशकों की उपस्थिति में दिनांक २६-५-८० तदनुसार सोमवार से १-६-८० तदनुसार रविवार तक राजपुर रोड स्थित हरिओ३म् सत्संग भवनपर सायं ६ बजे से रात्रि के १० बजे तक किया जा रहा है।

इस पावन एक सप्ताह तक होने वाले सम्मेलन में विभिन्न आध्यात्मिक विषयों पर अनेकों विद्वानों के विचारों का श्रवण करने के साथ ही महापुरुषों के दर्शन का भी सौभाग्य आप को प्राप्त होगा। अतः आप सब अपने इष्ट मित्रों सहित इस अवसर का लाभ उठायें व जीवन के परम लाभ को प्राप्त करें। तद्धेतु राम दरबार आप सब को सादर व सप्रेम आमंत्रित करता है।

इस वर्ष लघु–सम्मेलन १५-५-८० से २५-५-८० तक राजपुर रोड, सत्संग भवन पर सम्पन्न होगा।

संयम–सप्ताह इस वर्ष २-६-८० से ८–६–८० तक राजपुर आश्रमपर पूर्व आयोजित कार्यक्रमानुसार सम्पन्न होगा।

विशेष (१) सम्मेलन व साधना-सप्ताह में उपस्थिति के इच्छुक रामप्रेमी अपने सविवरण आगमन के समाचार से कम से कम १५ दिन पूर्व अवश्य विज्ञ करायें, जिससे समुचित सुविधा प्राप्त हो सके।

—मंत्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामायण चरित्र चित्रण ★★★ "विभीषण" स्वामी तीर्थानन्द अज्ञ,

विभीषण राम का एकमात्र अनुचर था। इस कारण वह सबसे अधिक निन्दा-स्तुति का विषय बन गया है। कुछ उसकी स्तुति करते है। तो कुछ एक उसकी निन्दा करते हैं। उस पर आरोप करते हैं कि वह अ त्मघ ती, कुलघ्न, राष्ट्र-घाती तथा विश्वासघाती था। यह आरोप निन्दित नहीं, युद्धकाण्ड में इन्द्रजीत यही आरोप विभीषण के ऊपर करता है। वह उसे राष्ट्रघाती तथा स्वार्थी कहता है।

रामानुज संप्रदाय विभीषण को प्रसन्न भक्ति का उत्कृष्ट उदाहरण मानते है। "विभीषणस्तु धर्मात्मा नित्यंधर्म व्यवस्थितः"। विभीषण उत्कृष्ट जाज्वल्यस्वाभिमानी, आत्मनिष्ठा एवं चारित्र्य सम्पन्न तेजस्वी व्यक्ति था। सीता हरण के पहले रावण जब-जब अनेकानेक स्त्रियों का हरण कर लाया था। उस प्रत्येक समय मे विभीषण ने उसे फटकारा है।

"ईहशैस्त्वं समाचारैः यशोर्य कुलनाशनैः।
धर्मणः प्राणिनाँ ज्ञात्वा स्वमतेव विचेष्टसे ॥"

हे रावण! तेरे लिये नहीं अपितु लंका के अहित के लिये तू गढ़ा खोदता है। तेरा उत्कर्ष तो दूर रहा, परन्तु तेरे अपकर्ष का कारण बनेगा। क्योंकि तू यश, तप और दान को नष्ट कर रहा है। कीर्ति, सत्ता तथा वैभव तेरे हाथ से दूर होने वाले हैं। हे असत् आचार करने वाले, पर स्त्री लाने वाले दुरात्मा! जरा तो विचार कर। क्या तूने राक्षस कुल का विनाश करने की ठानी है? यदि शौर्य था तो सहस्त्रार्जुन तथा बाली को हाथ दिखाना था। राजगद्दी को प्रतिष्ठा के लिये भी वह हर समय तैय्यार रहता है। अगद के राज्य सभा में प्रवेश करने पर जब रावण उसे मारने की आज्ञा देता है। उस समय भी विभीषण ने राज-नीति के नियम समझाकर एक राजदूत की हत्या करने पर होने वाली राजगद्दी को अप्रतिष्ठा से बचाया है। उसकी बात सुनकर रावण भी कुछ बोल न सका। इस प्रकार उस समय उसने राज-गद्दी की इज्जत बचायी थी।

उस समय के प्रत्येक जिम्मेदार व्यक्ति को रावण का हठ तथाउसका दुराग्रह पसन्द न था। परन्तु, रावण के सर्वे सर्वा होने के कारण उसके सामने किसी की कुछ नहीं चलती थी। इसी कारण उसके सामने कोई सिर ऊँचा करके बोल नहीं सकता था। रावण का सबसे पहले विरोध कुम्भ-कर्ण ने किया था। किन्तु, स्वयं की मुक्ति के हेतु वह अन्त में राम के विरुद्ध लड़ने को आया और अपनी मुक्ति करा ली। लेकिन विभीषण ने अपने साथ सम्पूर्ण राक्षस कुल का उद्धार कर छोड़ा है। युद्ध के मैदान में कुम्भकर्ण के आने पर जब विभी-षण उसे नमस्कार करता है। तब वह उसे कहता है, कि 'हे भ्राता! तुमने समस्त राक्षस कुल का उद्धार कर दिया हैं। लड़ाई के पूर्व की अन्तिम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभा में रावण को समझाने के लिए विभीषण ने बहुत कुछ कहा। लेकिन उन्मत्त मंत्रियों और इन्द्रजीत जैसे गर्विष्ठ लोगों के सामने उसकी कुछ न चली। और रावण कहना सबको मान्य हो गया। उस समय राक्षस व राष्ट्र के कल्याण हेतु विभीषण राम के पक्ष में जाकर मिला है। इसी वजह से यह कहना पड़ता है विभीषण गद्दार नहीं था।

और अगर युद्ध दो राष्ट्रों के बीच या दो जातियों के बीच होता तो बात कुछ और ही बनती लेकिन वहाँ तो मानवता और पशुता के बीच युद्ध हो रहा था। और विभीषण मानवता की कीमत जानता था। जिस कारण वह राम के समर्थन प्राप्त मानवता के पक्ष में जाकर मिला था। इसलिये उसे हम राष्ट्रद्रोही नहीं कह सकते क्योंकि लंकावासियों के कल्याण और राजगद्दी की प्रतिष्ठा कायम रखने वाले मानवता वादी कुलाभिमानी विभीषण के सामने इसके सिवा दूसरा कोई रास्ता नहीं था।

अन्याय के परिमार्जन के लिये न्याय स्थापित करने के लिए और मानवता का निर्माण करने के लिये राजसभा की आवश्यकता पड़ती है। रावण ने इन तीन सूत्रों को तोड़ राज्य निष्ठा को सुलगा दिया था। जहाँ पर ऐसी शासन संस्था होगी वहां के मानवतावादी महा-पुरूष हाथ पर हाथ धरके स्वस्थ नहीं बैठ सकते। रामायण में विभीषण का वर्णन एक मानवता-वादी भव्य महापुरूष के रूप में किया गया है। अविरत खून का पानी करके विभीषण ने रावण को समय २ पर समझाया हैं। इस कारण उसे राज्य लोभी अथवा स्वार्थी नहीं कह सकते। आज का चिकित्सक जगत् विभीषण को 'नीच क्लास' का आदमी समझकर उसे दूर फेंकता हैं। परन्तु स्वयं रामने भी उसके लिए 'My Man' मेरा आदमी कहकर शब्द प्रयोग किया है। इसी में विभीषण की दिव्यता प्रगट होती हैं। विभीषण का चरित्र एक दिव्य और भव्य महापुरुष का चरित्र हैं।

— राम— —राम— —राम —

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"आश्रम समाचार"

महाराज श्री परमाध्यक्ष जी ने देहरादून से दिल्ली की ओर प्रस्थान किया दिनांक ६ को, दिल्ली में स्वर्गीय श्री तलवार साहिब को आपने अपनी भावमयी श्रद्धाञ्जलि समर्पित करते हुए रामचरणों में प्रार्थना की कि गतात्मा को शान्ति प्राप्त हो व वह प्रभुचरणों में निवास करे।

म. मं. स्वामी पूर्णानन्द जी के तत्वाधान व विभिन्न प्रवक्ताओं की उपयिति में सम्पन्न हुए वेदान्त सम्मेलन में उपस्थित होकर आपने १३-४-८० को सामाजिक व सांस्कृतिक भारतीय चिन्तन का बिस्लेषण किया। तदन्तर स्वामी कृष्णनन्द जी गोविन्दानन्द जी महाराज की अध्यक्षता में आयोजित आयोजन में आचार्य प्रवर ने उपस्थित कर उत्सव के मंगलमय होने को कामना की। इसी समय कैलाश आश्रम, ऋषिकेश के शताब्दि उत्सव में भी आपकी उपस्थिति हुई। इस प्रकार हरिद्वार अर्धकुम्भ के पावनोत्सव पर आपने विभिन्न मंचों से आध्यात्मिक जगत् को सम्बोधित किया। तत्पश्चात् देहरादून होते हुए अद्वैताश्रम, मथुरा द्वारा आयोजित सम्मेलन में आपने भाग लिया व साथ हो वृन्दावन में बिहारी जी के दर्शन भी किये।

देहली होते हुए आप बम्बई बाबा श्री चन्द्र मन्दिर में पहुंचे, जहां श्री च द्र मन्दिर की जयन्ती का आयोजन था।

उज्जैन में लगे कुम्भपर्व पर भी आप उज्जैन गये व वहां से ३० को दिल्ली होते हुए ब्रह्मलीन स्वामी प्रेमानन्द जी महाराज की पुण्यस्मृति में आयोजित श्रद्धाञ्जलि दिवस में भाग लेने के लिए आप मुकेरियां पहुंचे।

जैसा पाठक विज्ञ ही हैं कि स्वामी रामतीर्थ आध्यात्मिक विराट् सम्मेलन इस वर्ष २६-५-८० से १-६-८० तक राजपुर रोड पर और संयम-सप्ताह २-६-८० से ८-६-८० तक राजपुर आश्रम पर सम्पन्न हो रहा है, तद्धेतु स्वामी जी का ५-५-८० को मुकेरियां से आश्रम (राजपुर) पर आगमन हुआ।

आश्रम पर आजकल सम्मेलन की तैय्यारियाँ चल रही हैं। जिसमें रामप्रेमियों की कर्मठता के साथ ही उनका सहयोग व स्नेह भी प्राप्त हो रहा है।

—सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूरभाष—८४२२५ राजपुर, ४२९७ देहरादून, तार का पता — (वेदान्त) देहरादून, रजि. नं डी. एन. १५

सूचना

१—मासिक पत्रिका 'राम सन्देश' न मिलने पर अपने समीपस्थ डाकखाने (पत्रालय) से पता करने के पश्चात हमें सूचित करें। क्योंकि कभी-किसी कारणवश "राम सन्देश" १५ ता० तक निकलता है। इसलिए शिकायत पत्र अपनी २ ग्राहक संख्या सहित दिनांक २० के बाद प्रेषित करने का कष्ट करें।

१—आप आश्रम में किसी भी प्रकार का धन भेजते समय यह लिखना न भूलें कि वह धन किस निमित्त भेजा जा रहा है तथा चैक स्वामी रामतीर्थ मिशन के नाम पर ही भेजें।

३—जो पाठक इस पत्रिका के आजीवन सदस्य बनना चाहते हैं वे अपना सदस्यता शुल्क सम्पादक के नाम प्रेषित करें। सदस्यों को आजीवन पुनः बिना किसी शुल्क के यह पत्रिका प्रेषित की जायेगी।

४—'राम सन्देश' के विदेशी ग्राहक अपना वार्षिक शुल्क १५ रु० भेजें। क्योंकि परमाध्यक्ष जी की आज्ञानुसार १२ रु० के स्थान पर ३ रु० वृद्धि का निर्णय लिया गया है।

५—पाठक अपनी अंक सम्बन्धी, प्रतिक्रियाएं, अवश्य भेजें, जिससे पत्रिका की उन्नति सम्भव हो सके।

६—अपनी रचनाएं – लेख, कविताएं भेजते समय स्पष्ट शब्दों में पृष्ठ की एक तरफ ही लिखें।

७—हर प्रकार की सामाजिक, शिक्षा सम्बन्धी, आध्यात्मिक या पारस्परिक तुलनात्मक आपकी लिखित वैचारिक भावनाएं सादर आमन्त्रित हैं।

—सम्पादक

बुक पोस्ट

ग्राहक संख्या _____

श्री / श्रीमती गुरुकुल पुस्तकालय

स्थान गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

डाकखाना _____

जिला हरिद्वार,

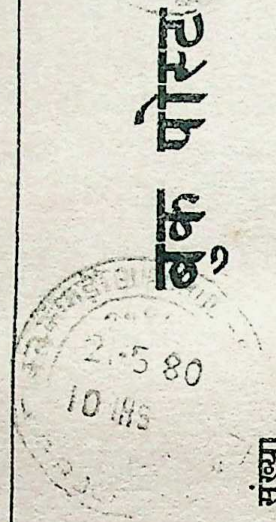

मासिक पत्र—

"राम-सन्देश"

स्वामी रामतीर्थ मिशन

राजपुर, देहरादून (उ०प्र०)

Pin—248009 भारत

स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून (उ० प्र०) के लिए प्रकाशक स्वामी अमर मुनि द्वारा न्यू आईडियल प्रिन्टिंग हाऊस (कांग्रेस भवन के पास) ४-बी नेशविला रोड, (देहरादून) में, मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम-सन्देश

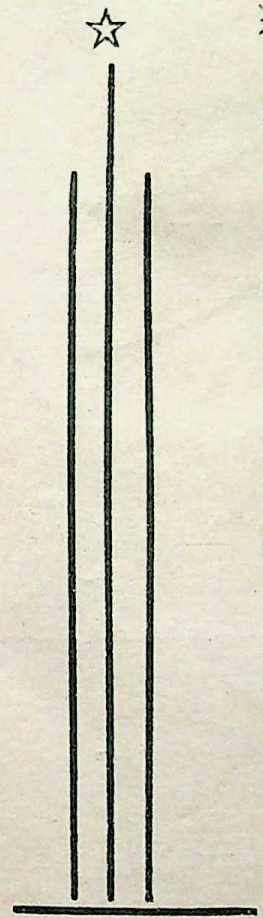

जून
१९८०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकेतिका

विषय	लेखक	पृष्ठ
राम - हृदय		१
दुःख में ईश्वर		२
प्रवचन	स्वामी हरिओ३म् जी महाराज	५
पत्र - पुष्प	घनानन्द पाण्डेय	६
मेरे सब कुछ तुम्हीं बन जाओ		१४
यिड्डीश कहावतें	स्वामी तीर्थानन्द 'अज्ञ'	१५
जीव और इश	स्व. मदन मोहन कंवर	१६
रामायण चरित्र चित्रण	स्वामी तीर्थानन्द 'अज्ञ'	१८
महाभागवत द्रोपदी	बल्लभ दास बिन्नानी	१६
मेरे विचार में	स्वामी ब्रह्मानन्द	२२
आश्रम समाचार		२५

संस्थापक—
ब्रह्मलीन स्वामी हरिओउम् जी महाराज

संवर्धक—
ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज

व्यवस्थापक—
स्वामी अमर मुनि जी महाराज

सम्पादक—
काका हरिओउम् "निर्द्वन्द्व"

आजीवन सदस्यता शुल्क—

भारत में — १०० रु०
विदेश में — ५०० रु०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्र के हित के लिए यत्न करना ही विश्व की शक्तियों अर्थात् देवताओं की आराधना है'-स्वामी राम

वेदान्त, अध्यात्म, संस्कृति, धर्म एवं भक्ति का सजग सन्देशवाहक
तथा स्वामी राम के आदर्शों का एकमात्र लोकप्रिय मासिक—

राम सन्देश

वेदोपनिषदां तत्त्वम् सत्यं नित्यं सनातनम् ।।
तत्सर्वं "रामसन्देशे" पत्रेऽस्मिन्नवलोक्यताम् ।।

वर्ष २९ अंक ६	राजपुर, देहरादून, जून १९८०	वार्षिक भेंट १०) एक प्रति ८५ पैसे

★★★★★ ★★★★

राम-हृदय

राम आपसे कहता है, केवल अपने सहारे रहिये, दूसरों की रायों की परवाह न कीजिये। स्वतंत्र हो, केवल एक स्वामी, एक आत्मा, एक अद्वितीय सच्चे पति, सच्चे स्वामी, अपने ही अन्दर के राम को प्रसन्न करने की चेष्टा कीजिये। हजारों को, जनता को, बहुमत को आप कदापि सन्तुष्ट न कर सकेंगे और आप इस अनेक सिरों वाली जनता को संतुष्ट करने के लिए वाध्य भी तो नहो हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गतांक से आगे

दुःख में ईश्वर

इसी प्रकार लोग कहते हैं कि ईसाई या बौद्धमतादि हमें ऐसा मानने को कहते हैं, किन्तु राम कहता है कि आपके अन्तर्स्थित स्वर्ग से यह वाणी निकल रही है कि आप अपने को जीर्ण-शीर्ण और पापिष्ठ कभी मत समझो। अपने भीतर के दिव्य स्वरूप का अनुभव करो।

"The mountain and the- squirrel
Had a quarrel,
And the former called the latter 'Little prig'
Bun (squirrel) replied :—
" You are doubtless very big,
But all sorrs of things and weather
Must be taken in together,
To make up a year,
And a sphere
And I think it no disgrace
To occupy my place,
If I'm not at large as you,
You are not so small as I,
And not half so spry,
I'll not deny you make
A very pretty squir el track,
Talents differ, all's well and wisely put,
If I cannot carry forests on my back·
Neither can you crack a nut. "

एक बार पर्वत गिलहरी में हुई लड़ाई;
"तुच्छ जीव-कह घमंडी" गिरि ने अकड़ दिखायी।
गिलहरी बोली,- "तुम महान् हो, यह तो है सत्य
किन्तु बरस भर में सब ही ऋतुयें आवश्यक हैं।
"ज्यों छोटी और बड़ी चीज मिल 'ग्रह' है बनती,
मैं जैसी हूं, अतः उसे मैं बुरा न गिनती।
"यदि मैं तुमसी बड़ी नहीं, तो लघुता को मम,
तुम भी पाते नहीं; न हो चंचल मेरे सम।
"बात नहीं ऐसी कि कुछ मुझे अस्वीकार हो—
बन पथादि के सहते तुम संपूर्ण भार हो।
"बुद्धि भिन्न हैं, बाह्य भेद भी दुनिया में हैं,
किन्तु सुभग उपयुक्त सभी निज-निज थल में हैं।
"हम न वनों को अपनी पीठ उठा यदि सकते,
तो वृक्षों से, भला, तोड़ फल क्या तुम सकते ?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस प्रकार, आपका शरीर उस क्षुद्र गिलहरी के समान छोटा हो सकता है, और आपसे भिन्न कोई दूसरा शरीर पर्वताकार हो सकता है, पर इससे अपने को आप कनिष्ठ मत समझो। उस चमरपुच्छ गिलहरी के समान बुद्धिमान् बनो। याद रक्खो, यदि आपका शरीर अत्यन्त छोटा भी हो तथापि इस संसार में आपको कोई ऐसा विशेष कार्य करना है, जो विशाल शरीर से संपादित नहीं हो सकता। तब आप अपने आपको तुच्छ क्यों समझो? आनन्दित और प्रसन्नचित्त रहो।

एक सज्जन राम के पास आये, और कहने लगे कि मेरा बड़ा अफसर सदैव मेरे साथ बुरा बर्ताव करता है। राम ने उससे कहा कि आपका अफसर इसलिए नीच दृष्टि से देखता है कि आप स्वयं अपने को नीच दृष्टि से देखते हो। यदि हम अपना सम्मान स्वयं करें, तो प्रत्येक मनुष्य अवश्य हमारा सत्कार करेगा। यदि इस छोटी-सी पुस्तक पर एक आना मूल्य लिखा हो, तो इसके लिए कोई दो आने नहीं देगा। पर इस छोटी पुस्तक का मूल्य १) रु० रक्खा गया है, तो सभी इसके लिए १) देने को राजी होंगे।

इसी तरह अपना मूल्य कम कर दो, और देखो, कोई भी आपका अधिक मूल्य नहीं समझेगा। स्वयं अपना अधिक से अधिक मूल्य निर्धारित करो, आत्म-सम्मान करो, अपने देवत्व (divinity), अपने ईश्वरत्व (godhead) का भान करो तब प्रत्येक मनुष्य को वह मूल्य देना ही पड़ेगा।

लोग कहते हैं कि विश्वास आपका उद्धार करेगा, परन्तु बाह्य सिद्धान्तों (Principles) का विश्वास आपका उद्धार नहीं करेगा, किन्तु अपने निजी स्वरूप का विश्वास आपका उद्धार करेगा। अपने दिव्य स्वरूप में निश्चय रखते हुए विश्वास करो, आत्म-सम्मान करो, तब प्रत्येक मनुष्य आपका सम्मान करेगा।

जिस सद्गृहस्थ ने राम से अपने अफसर की शिकायत की थी, उसने राम के उपदेशानुसार अपने समय को अपने आत्मदेव के अनुभव में बिताना शुरू किया। वह नित्य प्रार्थना करने लगा। पर प्रार्थना का यह अर्थ नहीं कि किसी शब्द को बराबर दुहराते रहना, बल्कि अपने आत्मदेव का भान करना और अनुभव करना ही प्रार्थना है। वह इस प्रकार प्रार्थना करने लगा। इसका फल उसने देखा कि उससे अफसर को अब उसका सम्मान और उसके साथ सद्व्यवहार करना ही पड़ता था। एक दिन उसका अफसर बहुत खीझ कर बोला, पर उस सज्जन ने अति मधुर स्वर से, मनोहर रीति से उत्तर दिया और कहा—भगवन्! अवश्य ही आपकी तनख्वाह मेरी तनख्वाह से बहुत बड़ी है, और मैं जानता हूं कि आप जो विशेष काम करते हैं, वह मुझसे नहीं होने का, और आपसे मुझे सदा काम रहता है, यह भी सत्य है। पर इसके साथ यह भी सत्य है कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपको भी मेरी आवश्यकता है। क्या मेरी जगह पर किसी को रक्खे बिना आप काम चला सकते हैं? नहीं आप नहीं कर सकते। अतः जैसी मुझे आपकी अत्यन्त आवश्यकता है, वैसी ही मेरी अत्यन्त आवश्यकता है और वस्तुतः आपको पहले मेरी जरूरत हुई। आपको इस जगह पर किसी के रखने की जरुरत हुई और इसलिए आपने मुझे भेजा। मैं आपकी सेवा नहीं करता। यदि मैं किसी का सेवक हुं तो अपनी ही जरूरतों और आवश्यकताओं का सेवक हूं। मैं आपका नौकर नहीं बल्कि अपना नौकर हूं। मैं किसी का दास नहीं। उत्तम अर्थ में सेवा करना ठीक है।

ऐसी अवस्था में आप जगत् में किसी के अधीन नहीं हो, यदि कोई अपनी ही इच्छाओं के अधीन है तो ऐसी अवस्था में आप जगत् में किसी और से अधीन नहीं। बाह्य अधीनता तो केवल भ्रम है। वास्तव में तो हम केवल अपने ही अधीन हैं। अतः आप अपनी स्वतंत्रता का अनुभव करो उसे प्राप्त करो, तुम्हें अपने को किसी देवता या ईश्वर, मुहम्मद वा कृष्ण अथवा संसार के किसी महात्मा के अधीन क्यों समझना चाहिए? तुम सब के सब स्वतंत्र हो, मुक्त हो। मुक्ति के भाव को ग्रहण करते ही वह तुम्हें सुखी बना देगा।

एक बार एशिया के एक राजा ने एक आदमी को अपराधी समझा, उसको अपराधी इसलिए समझा कि उसने राजा को सलाम नहीं किया था। उस बूढ़े राजा को जब कोई सलाम न करता, तो वह बहुत क्रोधित होता। उस अपराधी से राजा ने कहा— "तू नहीं जानता कि मैं कितना प्रतापी और कठोर शासक हूं? तू इतना धृष्ट है! तुझे मालूम नहीं कि मैं तुझे मार डालूंगा?" उस मनुष्य ने उसकी ओर मुंह पर थूक दिया और इतनी कड़ी नजर से उसकी ओर देखा कि वह घबड़ा गया। फिर वह बोला — "अरे मूर्ख पुतले! वह तेरी शक्ति, तेरे अधिकार में नहीं कि तू मुझे मार सके। मैं आप अपना स्वामी हूं। तेरा अपमान करना मेरी शक्ति में हैं, और यह भी मेरे अधिकार में है कि इस शरीर को सूलों पर चढ़ा देखूं। अपने शरीर का मैं आप स्वामी हूं। तेरा अधिकार पीछे है, मेरा अधिकार पहले है।" इसी प्रकार महसूस करो, अनुभव करो कि आप सदा अपने स्वामी हो। निज आत्मा की दृष्टि से सब चीजो को देखा, दूसरो की आँखों से नहीं। अपनी स्वतंत्रता का अनुभव करो, अनुभव करो कि आप ईश्वरों के ईश्वर, स्वामियों के स्वामी हो, क्योंकि आप वही हो, 'तत्त्वमसि'।

क्रमशः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिनांक १६ अगस्त १९५३ को प्रातः ब्रह्मलीन स्वामी हरिओ३म जी महाराज द्वारा दिया गया भाषण

प्रवचन

भजन

राम चरण सुखदाई भज मन रामचरण सुखदाई।
जिन चरणन सों निकसी सुरसरी, शंकर जटा समाई ॥
जटा शंकरी नाम पडयो है, त्रिभुवन तारन आई ॥
जिन चरणन की चरण पादुका, भरत रहयो हिय लाई ॥
सोई चरण केवट धोई लीन्हे, फिर हरि नाव चढ़ाई ॥
सोई चरण सन्त जन सेवत, सदा रहत लव लाई ॥
सोई चरण गौतम ऋषि नारी, परस परम पद पाई ॥
कपि सुग्रीव बन्धु भए व्याकुल, तिन सिर छत्र झुलाई ॥
रिपु को अनुज विभीषण निशिचर, परसत लंका पाई ॥
दंडवत वन प्रभु पावन कीनो, ऋषियन त्रास मिटाई ॥
सोई प्रभु त्रिलोकी के स्वामी, कनक मृगा संग धाई ॥
शिव सनकादि और ब्रह्मादिक, शेष सहस्त्रमुख गाई ॥
'तुलसीदास' मारुतसुत की प्रभु, निज मुख करत बड़ाई ॥

आज हम तुलसी जयन्ती मनाने के लिये एकत्रित हुए है। गोस्वामी तुलसीदास जो ब्राह्मण कुल के थे। जब धर्मपत्नी को मायके से लेने आते हैं तो कहती है--

"लाज न आई तोहे दौडयो आयो साथ।"

अर्थात् आपको लाज नहीं आई, मेरे साथ दौड़े आए। यदि इतना स्नेह राम के लिए हो जाए, सच्चिदानन्द अन्तरात्मा भगवान् राम से प्रेम हो जाए तो निश्चय ही बेड़ा पार हो जाए। यह एक ऐसी चोट थी, या कुछ पूर्व जन्म का संस्कार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था

अब राम को ही अपनाना है, प्रतिज्ञा कर ली। तब उन्होंने प्रभु के दर्शनों के लिए कई प्रकार की परिक्रियाएं की। फिर महावीर के दर्शन होते हैं। तब साधन युक्ति प्राप्त करते बारह साल के बाद साक्षात् राम के दर्शन होते है। धारणा - ध्यान - समाधि - दर्शन यही भूमिका करते - चित्त इतना निर्मल व शुद्ध हो जाता है कि भगवान को अवतीर्ण होना ही पड़ता है। जब तक हिन्दू समाज है और हिन्दू समाज विश्व में कायम है, धर्म का नाम है, सन्त तुलसीदास जी को सन्त शिरोमणी के नाम से ही पुकारा जाएगा।

अपना २ तप, अपना २ भजन, अपना २ स्वाध्याय है। श्री रामायण जी को रचने से पूर्व उन्होंने साक्षात् राम के दर्शन किए। आज तुलसी जयन्ती है। सन्त तुलसीदास सगुण ब्रह्म के उपासक हुए। आज सगुण जिज्ञासु भक्तों को पूर्ण गौरव है कि वह महापुरुषों से भगवान् की लीला का श्रवण करें।

हमें तो तत्व के ऊपर उतरना है। भक्ति सर्व सुख की खान है। बगैर तप के प्राप्त कोई नहीं कर सकता। जब तक पुण्यों के ढेर नहीं लग जाते, राम के समर्पित नहीं हो जाते, बिना सन्त मिलाप के भक्ति के भाव जाग्रत नहीं होते। बीज गल जाते हैं। यदि सन्त मिल जायें तो खिल उठने हैं। सत्संग का जल नहीं मिलता तो बीज सड़ जाते हैं। श्रद्धा व खाद के बिना बीज बढ़ता नहीं।

कई लोग विचार करते हैं भक्ति ऊंची है या ज्ञान।

एक राम दशरथ का बेटा,
एक राम धट २ में लेटा,
एक राम का सकल पसारा,
एक राम है सबसे न्यारा॥

महाऋषियों ने तथा अन्वेषकों ने यही अनुभव किया कि सगुण की भक्ति करते देह अध्यास से जीव ऊपर उठ जाता है तो फिर ब्रह्म में मिल जाता है। वह attachments (आसक्तियों) से ऊपर उठ जाता है और आसक्तियों से ऊपर उठ कर कर ब्रह्म ही हो जाता है। बाकी तो सब मिथ्या Self (अहं) से ऊपर उठने के साधन हीं हैं। गीता का नाम निरासक्तयोग भी कहा है। तिलक जी कहते हैं कर्म - ज्ञान – भक्ति त्रिवेणी की एकता करते हैं निरासक्तयोग में जा मिलतो है। यदि कोई मनुष्य निराकार का भक्त है, परन्तु अहंगता है तो वह मुक्त नहीं। कोई भक्त कहला कर कितने अखंड पाठ क्यों न करे, यदि मान अपमान ने घर कर रखा है तो उसका कल्याण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं हो सकता। स्वामी राम से किसी ने प्रश्न किया — सगुण की भक्ति श्रेष्ठ है या निर्गुण की? उत्तर देते हैं — वही सर्वश्रेष्ठ है जिसके द्वारा अमली जामा पहन लो। भक्ति करनी हो तो महावीर की तरह करनी चाहिए। उन्हें माला दी जाती है। एक पत्थर पर दूसरा पत्थर रख दानों को फोड़ते हैं। लक्ष्मण जी कहते हैं – "तुम बन्दर के बन्दर ही रहे -- यह पहनने की चीज है।" बोले -- मैं देख रहा हूं इसमें राम नाम है या नहीं। यदि राम नाम है तो यह काम की है नहीं तो नहीं। तुमने सांसारिक सुखों की माला पहन रखी है जो राम नाम को भुला देती है। वह तोड़ देने योग्य है, मुंह मोड़ देने योग्य है।

कृष्ण गरुड़ पै सवार हो सकते हैं। मानो गरुड़ की सवारी जहाज की तरह थी। पर यह आज तक नहीं बताया गया कि महावीर संजीवनी बूटी लेने कैसे गए। राधाकृष्ण भक्ति थ्योरी को जो फिलोसाफिकल तरीके से बताते हैं -- Stages (स्टेजिज) आती हैं। धारणा से धीरे - २ ध्यान बंधने लगेगा। समाधि धारणा ध्यान से उठता है तो आती है। ध्यान बलपूर्वक किया जाता है। समाधि में बल नहीं लगता, स्वयं वृत्ति लग जाती है। जिसमें बल न लगा हो, वह स्वयं समाधि है। ध्यान अवस्था में ध्यान करता है भगवान् कैसा है। यह तो दौड़ है। जो जिसका ध्यान करता है, उसकी शक्तियां धीरे - २ Transfer (तबदील) होने लगती हैं। जैसे एक bottle (बोतल) का दूध दूसरी बोतल में पल्टा जाता है, इसी प्रकार शक्तियाँ ट्रांसफर हो जाती हैं। महावीर जी की समाधि अवस्था में यह शक्तियां भी आ गई। उनके अन्दर ट्रांसफर हो गई। जो जिसका ध्यान करता है उसका स्वभाव और गुण उसके अन्दर आने लगता है। भगवान् का एक ही रेट है दो नहीं। Control price (कंट्रोल रेट) है – देहाध्यास से उठ जावे।

आप कमरे में किसी एक्टर की फोटो लगा दें, मन वही रूप होता चला जाता हैं। आप उस की जगह महात्मा गांधी जी की फोटो लगा दें, मनोवृत्ति वैसी बनती चली जाती है। कितनी लज्जा की बात है आपने घर में लड़की और दामाद की फोटो लगा रखी है, राम, कृष्ण और टैगोर की नहीं। आप कितने भी मन के मलिन क्यों न हों, यदि आप राम, कृष्ण की फोटो लगा देंगे तो आप का मन उनका रूप ही होता चला जावेगा। सूक्ष्म वस्तु धीरे – २ स्थूल हो जाती है। एक - एक सैकेंड का ध्यान धीरे - २ समाधि अवस्था का रूप धार लेता है। राम को क्यों पूजा जाता? है? दशरथ को क्यों नहीं पूजा जाता? भगवान के घर पिता – पुत्र का, छोटे - बड़े का, उच्च-नीच का प्रश्न नहीं। राम का ही पूजन होता है। वह अपने पिता दशरथ का पूजन करवाने में असमर्थ रहे। कारण क्या है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कानूने कुदरत है। पंपासा सरोवर के पास ही १०,००० वर्ष पहले ही पता चल गया था कि भगवान राम के पग आने हैं। इस कारण ऋषि सरोवर के चारों ओर ही रहते हैं। जब राम को बनवास होता है तो राम वहां पहुचते हैं। क्या देखते हैं कि वहाँ तो कितने ही हवन कुण्ड बने हैं। १००, १०० वर्षों के योगियों, में चारों वेदों का कंठस्थ कर रखा था। लक्ष्मण जी इशारा करके राम जी को कहते हैं -महाराज इधर चलिये (सरोवर की ओर)। राम पगडडी पर खड़े हो देखने लगे कि कौन सा रास्ता भिलनी की कुटी की ओर जाता है - उधर चल दिए। भिलनी का नियम था लकड़ियां काट-काट कर ऋषियों के नजदीक रख आना, रास्ते के कांटे चुनना। राम जाते है उसकी कुटी में तो माँगते हैं कुछ खाने को भी लगाते है। लक्ष्मण पास खड़ा कहता है किसी समय इनकी भी अक्ल खराब हो जाती हैं। ऋषियों को छोड़ स्त्री के घर चले गए। भिलनी के प्रेम भरे बेर लक्ष्मण जी नहीं खाते। लेकर पीछे फैंक देते हैं। राज्य, सुख, सम्पदा को लात मार फकीरों का बाना पहना, इसी को सभ्यता, इसी को सेवा कहते हैं। बाहर १२ घंटें पहरा देता हूं। खून बहाना पड़े तो बहा दूं। यह अपमान मैं नहीं सह सकता। यही बेर फलां पर्वत पर साँजीवनी बूटी बनेंगे। जब मेघनाथ बरछी से तू घायल होगा, यही बेर तूझे जीवन प्रदान करेंगे। क्यों नहीं पूजन किया जाता माता कौशल्या का, क्यों नहीं पूजा की जाती राजा दशरथ की? जो ईश्वर की तरह न्यायाधीश बन जाता है वह ईश्वर ही हो जाता है। लोभ, मोह प्रलोभनों की वृत्तियाँ हमारे सामने आती हैं तो धर्म का परित्याग कर देते हैं। राम स्वयं भिलनी के यहाँ चल कर जाते हैं - इसे कहते हैं न्याय। स्वामीराम गोस्वामी तुलसीदास जी की नौंवी कुल में से थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्र-पुष्प

घनानन्द पाण्डेय 'विशारद'
२३, रामजे रोड, नैनीताल

"बोले बिहँसि महेस तब ग्यानी मूढ़ न कोइ ।
जेहि जस रघुपति करहिं जब सो तस तेहि छन होइ ॥"

उक्त दोहे के संदर्भ में श्रीरामचरित मानस के निम्नांकित प्रसंगों पर संक्षेप में विचार करना रोचक होगा ।

"सुमिरत जाहि मिटइ अग्याना, सोइ सरवग्य रामु भगवाना ।"

जिनके स्मरण मात्र से अज्ञान का नाश हो जाता है, वही सर्वज्ञ भगवान् श्रीराम हैं । और ऐसे भगवान् श्रीराम पर सती ने भारी भ्रम ओर मोह के कारण अपना अज्ञान आरोपित किया ।

"मैं संकर कर कहा न माना, निज अग्यानु राम पर आना ।"

सती के मन में श्रीराम के प्रति विशेष सन्देह उत्पन्न हो गया ।

"सती सो दसा संभु के देखी, उर उपजा संदेहु विसेषी ।
अस संसय मन भयउ अपारा, होइ न हृदय प्रबोध प्रचारा ।"

तब इस प्रकार की अज्ञान की विषम स्थिति में शिव-शंभु को सती से कहना पड़ा –

"जैसे जाइ मोह भ्रम भारी, करहु सो जतनु विवेक विचारी ।"

सती का यह अज्ञान पार्वती के रूप में जन्म लेने पर भी बना रहा, तब उन्होंने भोलेनाथ से अपना अज्ञान दूर करने हेतु निवेदन किया ।

"तौ प्रभु हरहु मोर अग्याना, कहि रघुनाथ कथा विधि नाना ।
ससि भूषन अस हृदयँ विचारी, हरहु नाथ मम मति भ्रम भारी ।"

दोहा— "देखि चरित महिमा सुनत भ्रमित बुद्धि अति मोर ।"
"अग्य जानि रिस उर जनि धरहू, जनि विधि मोह मिटै सोइ करहू ।
अजहूं कछु संसय मन मोरे, करहु कृपा विनवउँ कर जोरे ।"

तब भोलेनाथ की अमृत-वाणी से पार्वती का मोह दूर हुआ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"करि प्रनाम रामहि त्रिपुरारी, हरषि सुधा सम गिरा उचारी,
ससि कर सम सुनि गिरा तुम्हारी मिटा मोह सरदातप भारी"

दूसरे प्रंसग में देवर्षि नारद भी मूढ़ हो गए।

माया विबस भए मुनि मूढ़ा, समुझी नहिं हरि गिरा निगूढ़ा"
कामदेव को पराजित करने पर नारदजी को अत्यन्त अभिमान होगया—
तब नारद गवने सिव पाहीं, जिता काम अहमिति मन माहीं,
नारद कहेउ सहित अभिमाना, कृपा तुम्हारि सकल भगवाना,

देवर्षि नारद जिन्होंने कुछ समय पूर्व ही कठोर तपस्या के बल पर कामदेव पर विजय प्राप्त की थी। विश्वमोहिनी राजकुमारी के रूप से मोहित हो कर पराजित हो गए।

'देखि रूप मुनि बिरति बिसारी। बड़ी बार लगि रहे निहारी
जप तप कछु न होई तेहि काला, हे विधि मिलइ कबन विधि बाला,

और मोह के वशीभूत होकर देवर्षि की दशा अत्यन्त शोचनीय हो गई।

मुनिहिं मोहु मन हाथ पराए हँसहि संभु गन अति सचु पाए
जदपि मुनहिं मुनि अटपटि बानी समुझि न परइ बुद्धि भ्रम सानी
मुनि अति बिकल मोह मति नाठी। मनि गिरि गई छुटि जनु गाँठी।

इसके उपरान्त देवर्षि ने जब अपना कुरूप वेश देखा तो अत्यन्त क्रोधित होकर उन्होंने शिवजी के गणों को शाप दे दिया। तथा क्रोध के आवेश में श्रीहरि को भी दुर्बचन कह दिए, यद्यपि श्रीहरि ने मीठी वाणी में उनकी विकलता पूछी

'बेषु बिलोकि क्रोध अति बाढा तिन्हहि सराप दीन्ह अति गाढ़ा।
फरकत अधर कोप मन माहीं। सपदि चले कमलापति पाहीं।
बोले मधुर वचन सुरसाई मुनि कहँ चले बिकल की नाई।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुनत बचन उपजा अति क्रोधा। माया बस न रहा मन बोधा।
पर संपदा सकहु नहिं देखी। तुम्हरें दूरिष्षा कपट विसेषी।,

दोहा–स्वारथ साधक कुटिल तुम्ह सदा कपट व्यवहारु॥

परन्तु श्रीहरि ने जब अपनी माया हटा ली तब देवर्षि को अपने व्यवहार पर पश्चात्ताप हुआ और उन्होंने श्रीहरि के चरण पकड़ कर क्षमा याचना की।

जब हरि माया दूरि निवारी, नहि तहँ रमा न राजकुमारी।
तब मुनि अति सभीत हरि चरना, गहे पाहि प्रनतारति हरना।
मैं दुर्वचन कहे बहुतेरे कह मुनि पाप मिटिहिं किमि मेरे।

प्रभु को शिवजी अत्यन्त प्रिय है तथा नारद जी ने सर्वप्रथम अपना अभिमान शिवजी पर प्रकट किया था। अतः प्रभु ने नारदजी से शिवजी का नाम जपने को कहा।

जपहु जाइ सकर सत नामा। होइहि हृदयं तुरत विश्रामा।
कोउ नहिं सिव समान प्रिय मोरे, अस परतीति तजहु जनि भोरें
जेहि पर कृपा न करहिं पुरारी, सो न पाव मुनि भगति हमारी
अस उर धरि महि बिचरहु जाई, अब न तुम्हहि माया नियराई।

इस प्रकार प्रभु ने नारदजी का मोह दूर कर उनको प्रबोध करवाया

दोहा- बहुविधि मुनिहि प्रबोधि प्रभु तब भए अंतरधान।

सत्यलोक नारद चले करत राम गुन गान।

एक अन्य प्रसंग में जब विश्वमित्र आश्रम की रक्षा के लिए राजा दशरथ से श्री राम लक्ष्मण की याचना करने लगे तों दशरथजी को मोह और अज्ञान हो गगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वामित्र जी ने दशरथ जी से कहा :-

असुर समूह सतावहि मोही। मैं जाचन आयउँ नृप तोही।
अनुज समेत देहु रघुनाथा। निसिचर बध मैं होय सनाथा।

दशरथजी का हृदय मोह और अज्ञान के कारण काँपने लगा और उन्होंने म्लान मुख से कहा :-

सुनि राजा अति अप्रिय बानी। हृदय कंप मुख दुति कुमुलानी।
चौथेपन पायउँ सुत चारी। बिप्र बचन नहिं कहेहु बिचारी।

मुनि विश्वामित्र ने दशरथजी से मोह और अज्ञान का त्याग करने की सलाह दी :-

देहु भूप मन हरषित तजहु मोह अज्ञान।
धर्म सुजस प्रभु तुम्ह की इन्ह कह अति कल्यान।

तब गुरु वशिष्ठ ने भी दशरथजी को बहुत प्रकार से समझाया और उनका अज्ञान जनित संदेह दूर किया।

तब वशिष्ठ बहुविधि समझावा। नृप संदेह नास कंह पावा।

सीता - स्वयंबर के अवसर पर 'विदेह' राजा जनक भी अज्ञान वश विकल हो गए। देश - विदेश से आए हुए राजा, शिव -धनुष को नहीं तोड़ सके और श्रीहीन होकर थके - हारे हुए अपने - अपने समाज में बैठ गए।

'श्रीहत भए हारि हिय राजा, बैठे निज - निज जाइ समाजा।'

तब स्वयंबर की भरी सभा में राजा जनक व्याकुल हो गए और क्रोधपूर्ण स्वर में उपस्थित राजाओं को सम्बोधित कर अपना रोष प्रकट किया।

नृपन्ह बिलोकि जनक अकुलाने। बोले बचन रोष जनु साने।
दीप - दीप के भूपति नाना। आए सुनि हम जो पनु ठाना।
देव दनुज धरि मनुज सरीरा। बिपुल बीर आए रनधीरा।

दोहा — कुँअरि मनोहर बिजय बड़ि कीरति अति कमनीय।
पावनिहार बिरंचि जनु रचेउ न धनु दमनीय।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब जनि कोउ माखै भटमानी । वीर विहीन मही मैं जानी ।
तजहु आस निज निज गृह जाहू । लिखा न विधि वैदेहि बिबाहू ।
सुकृतु जाइ जौं पन परिहरऊं । कुंअरि कुआरि रहउ का करऊं ।

तब विश्वामित्र मुनि की आज्ञा से श्रीराम ने 'विदेह' राजा जनक का परितापजन्य अज्ञान दूर किया ।

उठहू राम भंजहु भव चापू । मेटहु तात जनक परितापू ।

और श्रीराम के द्वारा धनुष - भंग होने के साथ - साथ राजा जनक का सोच और परिताप दूर हो गया तथा उन्हें अपार सुख प्राप्त हुआ ।

जनक लहे सुखु सोचु बिहाई । पैरत थके थाहु जनु पाई ।

अस्तु, बडे बड़े ऋषि - मुनि, योगी - यती, तपस्वी आदि भी श्रीराम की माया का पार नहीं पा सके, साधारण मनुष्य तो किसी भी कोटि में नहीं आता है । इसीलिए शिवजी द्वारा नारद - मोह के प्रसंग की चर्चा करने पर पार्वतीजी को अत्यन्त आश्चर्य हुआ ।

गिरिजा चकित भई सुनि बानी । नारद विष्णु भगत पुनि ग्यानी ।
कारन कवन शाप मुनि दीन्हा । का अपराध रमापति कीन्हा ।
यह प्रसंग मोहि कहहु पुरारी । मुनि मन मोह आचरज भारी ।

तब महादेवजी ने हंसकर पार्वतीजी से कहा, हे गिरिजा ! न कोई ज्ञानी है न मूढ़ है : श्रीराम जब भी जिसको जैसा करते हैं, वह उसी क्षण वैसा हो जाता है ।

दोहा — बोले बिहंसि महेस तब ज्ञानी मूढ़ न कोइ ।
जेहि जस रघुपति करहिं जब सो तस तेहि छन होइ ।

इस प्रसंग को श्री दुर्गासप्तशती में वर्णित भगवती की इस स्तुति के अंश से समापन किया जाता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हिसा
बलादाकृष्य मोहाय महामायां प्रयच्छति

या देवी सर्व भूतेषु बुद्धि रूपेण संस्थिता
नमस्तस्यै नमस्तस्यै तमस्तस्यै नमो नम :

या देवी सर्वभूतेषु भ्रान्ति रूपेण संस्थिता
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नम :

अन्त में अपने अज्ञान को भगवान् श्रीराम के चरणों में समर्पित कर प्रार्थना है कि प्रभो! आप हमें अज्ञान के अन्धकार से बचाकर ज्ञान प्रकाश की ओर ले जायँ

" तमसो मा ज्योतिर्गमय "

धनानन्द पाण्डेय (विशारद)
२३ - रामजे रोड, नैनीताल

★★★

मेरे सब कुछ तुम्हीं बन जाओ

बन जाओ तुम मेरे सब कुछ जप-तप, ध्यान, ज्ञान-विज्ञान।
बन जाओ तुम मेरे साधन-साध्य, यज्ञ-व्रत, संयम-दान॥
बन जाओ तुम मेरे शम,दम, श्रद्धा, समाधान, शुचि योग।
बन जाओ तुम मेरे मन-मति, अहंकार, इन्द्रिय, सब भोग॥
बन जाओ तुम मेरे प्राणों के रहस्य, जीवन के मर्म।
बन जाओ तुम मेरे वस्त्राभूषण, खान-पान, गृह-धर्म॥
स्पर्श तुम्हारा मिले सर्वदा सबमें सभी ठौर अविराम।
मेरे तुम हो, मेरे तुम हो सभी भाँति हे प्राणाराम!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

" यिड्डीश कहावतें "

भगवान : -

१) भगवान लंबा इंतजार कराता है, मगर ब्याज समेत चुकाता है।

२) भगवान एक हाथ से मारता है दूसरे हाथ से मरहम लगाता हैं।

३) जिसे भगवान हंसाना चाहे इंसान उसे रूला नहीं सकता।

४) तुम्हारा संकल्प पक्का हो तो भगवान मदद करेगा।

५) न कुछ के बदले भगवान कुछ नहीं देता।

६) भगवान का दिया चुटकी-भर इंसान के दिये घड़ी-भर से बेहतर है।

" पैसा "

१) गम्लेच्छा बाप का बेटा होकर भी पैसा सदा कुलीन

२) सोने की कील सोने के रथ से ही गिरेगी।

३) कमाऊ से बचाऊ श्रेष्ठ।

४) कफन में जेब नहीं होती।

५) दोजरब में दमड़ी का एक बैल बिकता है।
मगर दमड़ी वहाँ किसी के पास नहीं होती।

६) गरीब सदा दरिया दिल।

७) भरे पेट को ही भक्ति सूझती है भूखे पेट को नहीं।

संग्राहक :-
स्वामी तीर्थानन्द (अज्ञ)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीव और ईश का दिलचस्प वार्तालाप।

भक्ति और आत्मज्ञान

भक्त बड़ा है या भगवान।

(लेखक : स्व.मदन मोहन कंवर बकाया, अमृतसर।

जीव

खुदाया बड़ी है अजब तेरी कुदरत,
मगर कम नहीं है हमारी भी हिम्मत।
यह पाँचों तत्व जो अजब हैं बनाये,
मगर मैंने भी खूब काबू में लाये।
बना करके वायू को हैरां किया है,
मगर मैंने भी इस को काबू किया है।
उड़ाये गुब रे हैं तेरी हवा में,
बिना पर के उड़ता हूं तेरी फजा में।
बनाई थी बिजली अगर आसमाँ में,
उसे खच लाया हूं अपने मकाँ में।
वह बिजली नमूदी फकत आरजी हैं,
यह बिजली मेरे काम में आ रही है।
तेरी बख्शी आवाज रहती नहीं है,
मगर काबू कर लूं तो मिटती नहीं है।
यह फोनो ग्राफ ओर यह रेडियो,
करिश्मे हैं मेरे जरा देख तो।
तेरे आग पानी मेरे दास हैं सब,
हजारों ही इंजन मेरे पास हैं अब।
मेरी रेल गाड़ी मेरे कारखाने,
मेरी कुदरतों के हैं गाते तराने।
समुन्दर की तह की खबर मैंने लाई,
हिमालय की चोटी पै की है चढ़ाई।
हर इक जा पे अब तो है मेरी रसाइ,
तेरा चांद भी दे रहा है गवाही।
बता मुझ से किस बात में तू बड़ा है।

ईश

खुदाई के दावे पे नाहक अड़ा है।।
ओ बंदे तह बातें बनाता है कैसी ?
मुझे अपनी कुदरत दिखाता है कैसी ?
मेरे इक इशारे से पैदा हुआ तू,
मेरी शक्ति पा के ही जिंदा रहा तू।
अकल जिस पे नाजाँ है मेरी है बख्शिश,
बता फिर यह विश्वास मैं क्यू है लरजिश।
किया पैदा बंदा करे बंदगी को,
मगर यह उछाले सदा गंदगी को।
यह साइंस तेरी बरगलाती है तुझको,
जहन्नुम का रस्ता दिखाती है तुझ को।
मेरी कुदरतों का इलम तुझ को क्या है ?
जरा सी समझ पे जो फूला हुआ है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बता यह जहां कैसे पैदा हुआ है ?
यह किस के सहारे पे अब तक खड़ा है ।
बना कर मिटा दे, मिटा कर बना दे ।
तो मैं मानलूं कि तू मुझ से बड़ा है ।

जीव

यह सच है कि पैदा किया तूने बंदा ।
मगर सच्च बता किस लिये था यह धंदा ?
अकेला पड़ा था तू उकता गया था,
तभी तो जहां तूने पैदा किया था ।
तरसता था कोई कहे तुझको भगवां,
तेरे काम आया नहीं कोई हैवां ।
फिर आखिर में इसांन बनाया था तूने,
उसे नाम अपना सिखाया था तूने ।
जो अपनी खुशी से किया हमको पैदा,
तो फिर इसमें एहसान हम पै है कैसा ?
तू बंदा बना करके ही रह गया था,
बता मैं न होता तू किसका खुदा था ?
खुदा ही नहीं तुझ को इन्सां बनाया,
कहीं राम और कृष्ण भगवां बनाया ।
कहीं बेर जूठा था तुझ को खिलाया,
कहीं छिलका केले का तुझको खिलाया ।
गोकल की गलियों में तुझको नचाया,
तुझे मैंने पत्थर से भगवाँ बनाया ।
तेरे ही तो जलवों का इजहार हूं मैं,
तेरी कुदरतों का ही इसरार हूं मैं ।
तेरी जात ही तो मेरी जात है,
जो तू है सो मैं हूं यह सच बात है ।
खुदा से खुदाई अलहदा नहीं है,
कि बिन धूप सूरज हवैदा नहीं है ।
तू मेरा है तेरा हर इक आन हूं मैं,
खुदा है अगर तू तेरी शान हूं मैं ।
अलहदा 'कंवर' तुझ से बंदा नहीं है ।
यहां छोटे बड़े का तो कजिया नहीं है ।

ईश

की बंदे हकीकत को अब तूने पाया,
तभी जात तेरी 'कहाई' बकाया ।
संसार असल में है मेरा ही साया,
मेरे खयाल ने ही जगत यह बनाया ।
जगत मेरा सुपना है मैं ही जगत हूं,
अगर मैं हूं भगवाँ तो में ही भगत हूं ।
सिवाये मेरे और कुछ भी नहीं है,
जगत है नामूदी असल में नहीं है ।
अहं ब्रह्माऽस्मि का निश्चय जो करले,
तो मुक्ति सी नेहमत को हासल वह करले
जो सोचोगे आखिर में वह ही बनोगे
अनलहक का वायेदा भी तब ही करोगे

(द्वारा महाराज कुमारी बकाया)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामायण चरित्र चित्रण ★★★ "हनुमान"

स्वामी तीर्थानन्द 'अज्ञ'

हनुमान का चरित्र श्रेष्ठ, ज्येष्ठ और अपूर्व हैं। रामायण में हनुमान का स्थान बहुत बड़ा हैं। राम और हनुमान की जोड़ी अविभाज्य है। जिस प्रकार उन्होंने अपने प्रयत्न से, शक्ति से, सामर्थ्य और दैवी गुणों से देवत्व प्राप्त किया है जिसके कारण आज इतने बरसो के बाद भी उसकी पूजा हो रही है। उसी प्रकार हनुमान का भी है। समस्त विश्व में राम का ऐसा कोई भी मन्दिर नहीं मिलेगा जिसमें पहले हनुमान न हो। परन्तु हनुमान के ऐसे अनेक मन्दिर हैं जिसमें राम की मूर्ति नहीं मिलेगी। राम के परिवार में एक ही व्यक्ति हैं जिसका स्वतंत्र मन्दिर हैं। वह है हनुमान। ऐसी अलौकिकता हनुमान में थी। राम और हनुमान का सम्बन्ध किष्किन्धा काण्ड से आता है। और फिर रामायण की समाप्ति तक उनका सम्बन्ध अधिकाधिक बढ़ता जाता है।

में वह इतना बढ़ चुका हैं कि आज हजारों वर्ष अन्त बीत गए फिर भी राम हनुमान के साथ होते हैं। जनसमुदाय के हृदय में राम के जितना ही आदरणींय स्थान हनुमान को प्राप्त हुआ हैं। उत्तरकाण्ड में

शौर्यं दाक्ष्यं बलं धैर्यं ग्राह्यता नयसाधनम्
विक्रमश्च प्रभावश्च हनूमति कृतालयः ॥

इत्यादि श्लोकों से हनुमान वर्णन आरम्भ होता है राजनीति प्राज्ञ, धीर, वीर, निपुण इत्यादि विशेषण से राम उन्हें सम्बोधित करते थे। इसके उपर से उनके योग्यता की कल्पना की जा सकती हैं। हनुमान सीता की खोज करके वापस आते हैं तो राम कहते है हनुमान तुम्हारे मेरे उपर अगनित उपकार हुए- "एकैकस्योपकारस्य प्राणान् दारयामि ऋणे" और पूछते है " तुझे क्या दूँ ? इस जगत की कौन सी ऐसी चीज है जो तुझे दे सकूँ। कोई भी नहीं। इसलिये मैं तुझे मात्र आलिगन दे सकता हूं। हनुमान ? तेरे उपकार कहूं या प्रेम। यह सब इतना सबकुछ हैं कि उसके लिये एक—एक-प्राण निकाल दूंगा तो भी कमी पड़ेगी क्योंकि तेरा मेरे ऊपर पंच प्राण की अपेक्षा अधिक विशेष प्रेम है। दूसरा क्या देकर तेरा मोल चुकाउं ? यह तो तेरे प्रेम की गणना कहलायेगी। तेरे प्रेम का मूल्यांकन करना मेरे लिये संभव ही नहीं हैं।" इसी बात से राम के अंतःकरण में उनको क्या स्थान प्राप्त था इसकी कल्पना आती हैं। उत्तरकाण्ड में राम ने उन्हें पुरुषोत्तम की पदवी देकर विभूषित किया है। राम कहते हैं कि कोई भी ऐसा कार्य नहीं कर सकता।

"यो ही मृत्यो नियुक्तः सन् कर्मणि दुष्करे।
कुर्यात तदनुरागेण तमाहु : पुरूषोत्तमम् ॥"

ऐसा कहकर राम उनको पुरूषोत्तम की पदवी देते हैं। धन्य हैं वे हनूमान जिनको प्रभु स्वयं अपने मुखसे पदवी देते हैं। ऐसा सौभाग्यशाली व्यक्ति इस जगत में शायद ही कोई होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाभागवत द्रोपदी

बल्लभ दास बिन्नानी 'व्रजेश'

द्रोपदी राजा द्रुपद की पुत्री थी, ये यज्ञवेदी से उत्पन्न हुई थी। इनके शरीर का रंग बड़ा ही सुन्दर श्यामवर्ण था। इससे इन्हें कृष्णा, कहते थे। द्रोपदी अनन्त गुणवन्ती, बड़ी पतिव्रता, आदर्श गृहिणी और भगवान की सच्ची भक्त थी। द्रोपदी श्रीकृष्ण को पूर्णब्रह्म, सच्चिदानन्दघन, परमेश्वर समझती थी और भगवान भी उनके सामने अपनी अन्तरंग लीलाओं का भी छिपाकर नहीं रखते थे। जिस वृन्दाबन के पवित्र गोपी प्रेम की दिव्य बातें गोपरमणियों के पति पुत्रों तक को मालूम नहीं थी, उन लीलाओं का भी द्रोपदी को पता था, इसीलिए चीर - हरण के समय द्रोपदी ने भगवान को गोपीजन प्रिय कहकर पुकारा था।

जब दुष्ट दुःशासन दुर्योधन की आज्ञा से एकवस्त्रा द्रोपदी को सभा में लाकर बलपूर्वक उनकी साड़ी खींचने लगा और किसी से भी रक्षा पाने का कोई भी लक्षण न देख कर द्रोपदी ने अपने को सर्वथा असहाय समझकर अपने परम सहाय, परम बन्धु परमात्मा श्रीकृष्ण का स्मरण किया। उन्हें यह दृढ़ बिश्वास था कि मेरे स्मरण करते ही भगवान अवश्य आयेंगे। मेरी कातर पुकार सुनने पर उनसे कभी नहीं रहा जायेगा। द्रोपदी ने भगवान का स्मरण करके कहा —

गोविन्द द्वारिकावासिन् कृष्ण गोपीजन प्रिय।
कौरवैः परिभूतां मां कि न जानासि केशव।।
हेनाथ हे रमानाथ व्रज नाथार्तिनाशन।
कौरवार्णवमग्नां मामुद्धरस्व जनार्दन।।
कृष्ण कृष्ण महायोगिन् विश्वात्मन् विश्वभावन।
प्रपन्नां पाहि गोविन्द कुरुमध्येऽवसीवतीम्।।
(महा० रमा० ६७)

हे गोविन्द! हे द्वारिकावासिन्! हे कृष्ण! हे गोपी जनप्रिय! हे केशव! क्या तुम नहीं जान रहे हो कि कौरव मेरा तिरस्कार कर रहे हैं? हे नाथ! हे लक्ष्मीनाथ! हे ब्रज नाथ! हे दुःख-नाशन! हे जनार्दन! कौरव समुद्र में डूबती हुई मुझको बचाओ। हे कृष्ण! हे कृष्ण! हे महा-योगिन्! हे विश्वात्मन्! हे विश्वभावन! हे गो-विन्द! कौरवों के हाथों में पड़ी हुई मुझ शरणागत की रक्षा करो।

तब द्रोपदी की पुकार सुनते ही जगदीश्वर भगवान का हृदय द्रवीभूत हो गया और वे —

त्यक्त्वा शय्यासनं पद्भ्यां कृपालु, कृपयाभ्यगात्।

कृपालु भगवान कृपा परवश हो कर शय्या छोड़कर पैदल ही दौड़ पड़े। कौरवों की दानवी सभा में भगवान का वस्त्रावतार हो गया। द्रोपदी के एक वस्त्र से दूसरा और दूसरे से तीसरा- इसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकार भिन्न -२ रंगों के वस्त्र निकलने लगे वस्त्रों का वहाँ ढेर लग गया। ठीक समय पर प्रियबन्धु ने पहुंच कर अपनी द्रोपदी की लाज बचा ली, दुःशासन थक कर जमीन पर बैठ गया।

पाण्डव बन में रहकर अपने दुःख के दिन काट रहे थे, परन्तु दुर्योधन की खलमण्डली अपनी दुष्टता के कारण उनके विनाश की ही बात सोच रही थी। दुर्योधन ने एक बार दुर्वासा मुनि को प्रसन्न करके उनसे यह वर मांगा कि- हमारे धर्मात्म बड़े भाई महात्मा युधिष्ठिर अपने भाइयों सहित वन में रहते हैं। एक दिन आप अपने एक हजार शिष्यों सहित उनके यहां भी आकर अतिथि होइये। परन्तु इतनी प्रार्थना है कि वहाँ सब लोगों के भोजन कर चुकने पर जब यशस्विनी द्रोपदी खा पीकर सुख से आराम कर रही हो, उसी समय जइयेगा। दुर्योधन ने दुष्टमण्डली की सलाह से यह सोचा कि द्रोपदी के खा चुकने पर उस दिन के लिए सूर्य के दिए हुए पात्र से अन्न मिलेगा नहीं, इससे कोप व स्वभाव से दुर्वासा पाण्डवों को शाप देकर भस्म कर डालेंगे और इस प्रकार सहज ही अपना काम सध जायेगा। सरल हृदय दुर्वासा दुर्योधन के इस कपट को नहीं समझे, इसलिए वे उसकी बात मानकर पाण्डवों के यहां काम्यक वन में जा पहुंचे। पाण्डव द्रोपदी सहित भोजनादि कार्यों से निवृत्त हो कर सुख से बैठे वार्तालाप कर रहे थे। इतने ही में दस हजार शिष्यों सहित दुर्वासा जी वहां पहुंचे। युधिष्ठिर ने भाइयों सहित उठकर ऋषि का स्वागत सत्कार किया और भोजन के लिए प्रार्थना की। दुर्वासा ने प्रार्थना स्वीकार कर ली और नहाने के लिए नदी पर चले गये। इधर द्रोपदी को बड़ी चिन्ता हुई। परन्तु इस विपत्ति से प्रिय बन्धु श्रीकृष्ण के सिवा उनकी प्यारी कृष्णा को कौन बचाता- उसने भगवान का स्मरण करते हुए कहा- हे कृष्ण! हे गोपाल! हे अशरण - शरण! हे शरणागतवत्सल! अब इस विपत्ति से तुम्हीं बचाओ-

दुःशासनादहं पूर्वं सभायां मोचिता यथा।
तथैव संकटादस्मान्मामुद्धर्तमिहार्हसि।।

(महा० वन० २६३ / १६)

तुमने पहले कौरवों की राजसभा में जैसे दुष्ट दुःशासन के हाथ से मुझे छुड़ाया था, वैसे ही तुम्हें इस विपत्ति से भी मुझे उबारना चाहिए। इस समय भगवान द्वारका में रुक्मिणी जी के पास महल में थे। द्रोपदी की स्तुति सुनते ही उसे संकट में जानकर भक्तवत्सल भगवान रुक्मिणी को त्याग कर बड़ी ही तीव्रगति से द्रोपदी की ओर दौड़े। अचिन्त्यगति परमेश्वर को आते क्या देर लगती? वे तुरन्त द्रोपदी के पास आ पहुंचे। द्रोपदी के मानो प्राण आ गये। उसने प्रणाम किया सारी विपत्ति भगवान को कह सुनायी। भगवान ने कहा- यह सब बात पीछे करना। मुझे बड़ी भूख लगी है, मुझे कुछ खिलाओ। द्रोपदी ने कहा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान् ! खाने के फेर में पड़कर तो मैंने तुम्हें याद ही किया है। में भोजन कर चुकी हूं, अब उस पात्र मे कुछ भी नहीं है। भगवन् बड़े विनोदी हैं, कहने लगे-

कृष्णे न नर्मकालोऽयं क्षुच्छमेणातुरे मयि।
शीघ्रं गच्छ मम स्थालीमानयित्वा प्रदर्शय।।
(महा० वन० २६३ / २३)

हे द्रोपदी ! इस समय मैं भूख और रास्ते की थकावट से व्याकुल हो रहा हूं। यह मेरे साथ विनोद का समय नहीं है। जल्दी जाओ और सूर्य का दिया हुआ वर्तन लाकर मुझे दिखलाओ।

बेचारी द्रोपदी क्या करती ? पात्र लाकर स मने रख दिया। भगवान ने तीक्ष्णदृष्टि से देखा और एक साग का पता ढूंढ निकाला। भगवान वोले- तुम कह रही थी न कि कुछ भी नहीं है, इस पत्ते से तो त्रिभुवन तृप्त हो जायेगा। यज्ञ भोक्ता भगवात ने पत्ता उठाया और मुंह में डालकर कहा-

विश्वात्मा प्रीयतां देवस्तुष्ठश्चास्त्विति यज्ञमुक्।
(महा० वन० २६३ / २५)

इस पत्ते से सारे विश्व के आत्मा यज्ञ भोक्ता भगवान तृप्त हो जाय। साथ ही सहदेव से कहा- लाओ ऋषियों को भोजन के लिए बुलाओ। उधर नदी तट पर दूसरा ही गुल खिल रहा था। सन्ध्या करते - २ ही ऋषियों के पेट फूल गये। और डकारें आने लगी। शिष्यों ने दुर्वासा से कहा- महाराज ! समारा तो गले तक पेट भर गया है, वहां जाकर हम खायेंगे क्या ? दुर्वासा की भी यही दशा थी, वे बोले- भैया ! श्रीकृष्ण के अनन्य हैं; वे चाहें तो हमें वैसे ही भस्म कर सकते हैं जैसे रुई के ढेर आग से। मैं अभी अम्बरीष वाली घटना भूला नहीं हूं, श्रीकृष्ण के शरणांग से तो मुझे बड़ा भारी डर लगता हे। दुर्वासा के ये वचन सुन शिष्य मण्डली यत्र - तत्र भाग गयी। सहदेव को कहीं कोई न मिला।

जब भगवान ने पाण्डवों से और द्रोपदी से कहा- लो, मब तो मुझ द्वारका जाने दो। तुम लोग धर्मात्मा हो, जो कोई निरन्तर यज्ञ करने वाले हैं उन्हें कभी दुःख नहीं होना-

धर्मनित्यस्तु ये केचिन्न ते सीदन्ति कर्हिचिन्।
(महा० वम० २६३ / ४४)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरे विचार में

स्वामी ब्रह्मानन्द,
कांतिकयाश्रम, ऋषिकेश

अपने मिथ्यात्व को संसार के लिये ओर भी अधिक रहस्यमय बनाना अधिकतर वा चर्चा ही नहीं स्वभाव बन गया है। व्यक्ति का व्यक्तित्व वास्तव में ज्ञेय नहीं अनुमेय है जिसकी तुलना अपने व्यक्तित्व से मानव करता है, बहिर्जगत् मे रहस्य वना रहता है और अन्तर्जगत में तो रहता ही है। बहिर्जगत् दृश्य है तथा अन्तर्जगत् अनुमेय। क्या सत्य है और अलीक क्या, ग्राह्य हेय व्यक्तित्वपरक है सापेक्षत्वात्। रहस्य के लिये बासना कारण है, तृष्णा ही विकास का कारण है, मनीभाव तृष्णोत्पादक है, अमनीभाव का उपदेश मिलता है। मनीभाव से अमनीभाव की कामना भी तो तष्णा ही है।

तृष्णा का मूल कारण ही जिजीवेच्छा, यह भावना प्राणिमात्र में है, वैदिक प्रार्थना तो दीर्घायुस्परक ही है, जीवेम शरदः शतम्। पश्येम शरदः शतम्। सो वर्ष पर्यन्त जीवित हों, सौ वर्ष पयन्त देखें, स्वस्थ एवं निरुज हो कर। शुभदेखें, शुभ श्रवण करें, वर्तनी शुभ हो, कटु न कहें, कटु न सोचें किन्तु हम हैं क्या, हम क्या प्रदर्तिश करते हैं हममें कोई अपरिचित नहीं। दूसरों मे सर्वदा अपेक्षा रहती है कि किसी भी प्रकार उपेक्षा न करें।

व्यवहार दर्शन का सिद्धान्त से अधिक महत्त्व ही नहीं प्रभाव भी है, ऐसे अनेक निदर्शन विश्व में सुलभ हैं, जिनके व्यवहारदर्शन से संसार के अधिक अधिक जन प्रभावित हो गये। व्यवहार दर्शन प्रभावदर्शन मान लेना भ्रम ही होगा। कलाबाज अपने इन्द्रजाल से मितराम् व्यामोहित कर देता है, उसके कृत्यों को सत्य मान कर आश्चर्यचकित हो जाते है। प्रभाव दर्शन का प्रभाव अचिर होता है, आँख से अंजन घुलते ही समस्त व्यामोहिकासृष्ट तिरोहित हो जाती है। व्यवहार दर्शन का प्रभाव दर्शन से भेद जानना आवश्यक है। व्यवहार दर्शन प्रर्शनपरक होने पर प्रभाव दर्शन में परिणत हो सकता है, किन्तु वह वस स्वभावपरक है, प्रदर्शन की कोई वासना नहीं तो वह साधक ही सिद्ध होता है। एवमेव सिद्धान्त दर्शनों की विश्व में प्रचुरता है।

व्यवहार तथा सिद्धान्त के वास्तविक भेदक हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कथनी एवं बर्तनी, कहना और बर्तना, अपने भावों को अपने व्यवहार से प्रकट करना व्यवहार दर्शन है, अपने भावों को उपदेश अथवा आदेश में कहना सिद्धान्त है। वैयाकरणों के वृद्ध व्यवहार से उभयविध निदर्शन सुलभ हैं। गामानीय बधान कलशमानय। गौ लाकर बांधों, घडा ले आओ। बडे वृद्ध ने छोटे वृद्ध से कहा। पास ही में खेलते हुए शिशु ने वाक्य सुने, उनकी निष्पत्ति देखी और इनके भेद तथा अभेद को भी देखा समझा, गाम् तथा कलयुग में भेद एवम् आनय में अभेद।

संसार में जिसे हम निपट मूर्ख समझते हैं वह वास्तव में हमारी दृष्टि की सृष्टि है, हमारी दृष्टि में यदि कोई हीन है, तो बहुत सम्भव है हम उसकी दृष्टि में हीन हों। उच्चावच्च की भावना तृष्णामूलक है, मैं मान्य रहूं और वह अमान्य। व्यवहार दर्शन के लिये अधिक सिद्धान्तों के संग्रह की अपेक्षा नहीं होती है, परन्तु सिद्धान्तों का प्रभाव नहीं होता। श्रोतव्यः, मन्तव्य : का पुनः पुनः आदेश मिलता है परन्तु अधिकतर लक्ष्य से विमुख हो जाते हैं और अवान्तर मार्गों पर दौड़ लगाते है। मनोविज्ञान के छात्रों को भलीप्रकार ज्ञात है यह दौड़ स्वर्थी मूषक के सदृश है जो भ्रान्त लक्ष्य पर भगता है और विधुदाघात पाता है।

समीपतम होने पर भी आत्मा को श्रवण करना चाहिये, उनका मनन करना चाहिये, उसका निदिध्यासन करना चाहिये। हम बहिर्जगत् में भ्रमण करते है हमें सुख मिले, बहिर्जगत् ऐन्द्रिक है विषयों में इन्द्रियां आसक्त हो जाती है, मक्खियों का गन्ध दुर्गन्ध की ओर नागना स्वभाव है एवमेव इन्द्रियों का भी विषयों की ओर आकृष्ट होना है, साफल्य वैफल्य है गोनकपरक। इन्द्रियों की अपर संना है करण, साधन, माध्यम। इनके बिना शरीर कुछ नही, हनकी संख्या एकादश है और प्रत्येक का अपना कार्य है। कर्मेन्द्रियों का सम्पर्क विषयों से निर्माध्यम होता है, ज्ञानेन्द्रियाँ माध्यम से विषयों के सन्निकट पहुंचतीं हैं। मनस् को उभयोन्द्रिय कहा गया है जो संकल्प विकल्प में जुटा रहता है। किन्तु अन्तर्जगत भी सपेक्षता से शून्य नहीं, अन्तः कारण हैं, भीतरी इन्द्रियों की संज्ञा ही अन्तः करण है। आत्मा इन सबसे भिन्न है, निरपेक्ष है, अज्ञान के कारणवह बद्धवदिव भाति बद्ध के समान प्रतीत होता है, प्रतीयमानता असत्य है, सत्य तथा असत्य की मीमांसा प्रायः सभी दार्शनिकों ने विशदता से की है। सत् आभास प्रबन्ध में ब्रेल्डे ने कहा सत् आभास नहीं एवं व्यत्ययता से, किन्तु सत् कहाँ है आभास के बिना, सत् में ही आभास है और आभास में ही सत् है। वेद मिथ्या है, मिथ्या का अर्थ सदसत् होता है। भेद का अर्थ है माया, वह मिथ्या है। वह अनिर्वनीय है। अतः अस्वीकार्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं, किन्तु पारमार्थिक नहीं। उस समीपतम आत्मा को मायिकोपाधि से बद्ध मानता है। उस की छित्ति से वह निर्मल हो जाता है। आत्मा निष्कोषक है, शरीर स्थूल सूक्ष्म कारण कोशों का संघात है, जो प्याज के सदृश आवृत हैं परत पर परत।

यह ज्ञातव्य है कि सिद्धान्त दर्शन के साथ ही व्यवहारदर्शन पर संसार मे प्रपुष्कल सामग्री सुलभ है, भाषाभेद हैं, जिन चिंतकों ने स्वयमेव अपने अनुभवों को परोपकार की धारणा से लिख दिया अथवा लिखते हैं उनकी भाषा प्रांजल तो होती है किन्तु उनका बोध दुरवगाह होता है, उन की भ पाओं के सरलीकरण हेतु टीकोपटीका होती हैं और मूल से दूर चले जाते हैं, मूल सिद्धान्त के स्थान पर अपना ही सिद्धान्त उसमें घुसेड़ देते हैं। जिन चिंतकों के अनुभव उनके अनुयायियों द्वारा [illegible] होते है, वे भाषा की दृष्टि से स्खलित होते [illegible] अपने आधार का सब प्रकार से [illegible] उक्त दोनो प्रकार के प्रकाशित [illegible] सामग्री है तृतीय जिसे घपला [illegible] है ससार में सम्प्रति घपला [illegible] सर्वाधिक्य प्रभुत्व है।

यह भी ज्ञातव्य है उक्त महानुभाव अपने प्रकाशित साहित्य के प्रसार हेतु प्राणपण से प्रयत्न करते हैं। अपने प्रचार प्रसार के लिये कोई उपाय छोड़ते नहीं, संसार का उद्धार करना है किन्तु संसार में अपना प्रतिद्वन्द्वी नही आता है, अपने प्रतिद्वन्द्वी को त्रास देना, उसका ह्रास देखना और उसकी श्रीसमृद्धि को न सहना, तब भी कहना कि कोई शत्रु नहीं, कोई मित्र नहीं। समस्त संसार ईश्वरमय है। राममय संसार है, किन्तु तिलक नहीं लगाया तो वह नास्तिक है, नीच है, म्लेच्छ है। समस्त ब्रह्ममय है, शिवमय है परन्तु त्रिपुण्ड नहीं लगा तो वह नास्तिक है। मन्दिर में नहीं गया तो उसे नास्तिक कहने में कोई संकोच नहीं। वेद पर श्रद्धा करो, धर्माचरण करो, किसी की निन्दा न करो, वह काफिर है जो मूर्तिपूजक है, पैगम्बर पर विश्वास नहीं करता, उसे मार भगाना चाहिये, जो इंजील नहीं पढ़ता अथवा सुनता वह स्वर्ग पहुंच नहीं सकता, जो बुद्धि पर विश्वस्त नहीं उसका मोक्ष सम्भव नहीं, जो तीर्थंकरों को नहीं मानता वह बद्ध है, जो जरदस्त्र पर विश्वास नही करता उसे दुःख ही मिलता है। विश्वास पर सब बल देते हैं, धर्माचरण की शिक्षा सभी कहते हैं, परन्तु विश्वास क्या है, धर्म क्या है, स्पष्ट नहीं कहते हैं, अनन्त को सीमित बनाना ही सबका उपदेश है, एतावता उनके मिशन टकराते रहते हैं। सब का कर्ता, पालक, उपसंहारक एक ही है, तो कलह क्यों ?

शोक समाचार

श्री गुलजारी लाल जी कपूर की धर्मपत्नी श्रीमती सतवती कपूर का देहांत २-४-८० को देहरादून में लम्बी शारीरिक अस्वस्थता के पश्चात् हुआ। रामदरबार परिवार के प्रति अपनी हार्दिक संवेदना प्रकट करता है तथा परमात्मा के चरणों अपने चरणों में स्थान देने की प्रार्थना भी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

" आश्रम समाचार "

विराट् सम्मेलन की भूमिका रूप में लघुसम्मेलन दिनाँक १५ को पूर्व निर्धारित कार्य - क्रमानुसार प्रारम्भ हुआ। स्वामी दिव्यानन्द जी महाराज का आगमन किन्हीं विशिष्ट व सामयिक कारणों के कारण १५ को न हो सका, वे १७ को पधारे। स्वामी स्वभावानन्द जी महाराज ने 'हितं मनोहारिच दुर्लभं वचः' की उक्ति चरितार्थ करते हुए जहां शास्त्रीय परिभाषा युक्त वेदान्त के प्रक्रियात्मक स्वरूप को स्पष्ट किया वहीं बाल सन्त स्वामी दिव्यानन्द जी महाराज ने दैनिक घटने वाली घटनाओं के दृष्टान्तों से युक्त आध्यात्मिक उद्बोधन द्वारा जनमानस को जीवन-पथ पर विवेक पूर्व अपनी यात्रा को तय करने को प्रेरणा दी, स्वामी जी का प्रमुख उद्देश्य इस बात से जन समुदाय को भिज्ञ कराना था कि परिस्थितियाँ कैसी भी हों यदि हम मानसिक रूप से स्वस्थ हैं, हमारे विचार स्पष्ट हैं तो प्रत्येक परिस्थिति हमारे लिए आनन्दमयी है। हालात कैसे भी हों खयालात अच्छे होने चाहिए कारण खयालातों से हालातों का परिवर्तन सम्भव है यदि कर्ता में आत्मविश्वास हो।

यद्यपि उपस्थिति को और अन्य प्रत्ययों ने भी प्रभावित किया परन्तु विभिन्न बाधक प्रभावकों से प्रभावित न होकर आने वाले श्रोताओं ने बृहत् सम्मेलन मे भारत के विभिन्न कोनों से आये महान सन्त प्रवक्ताओं के विचारों से अपने को नवशक्ति से संचरित पाया। प्रत्येक वक्ता का जोर आज के भौतिक प्रधान समय में नश्वरता और अनश्वरता का विवेक प्राप्त कर सिद्धान्तों को व्यावहारिक रूप देने की ओर अधिक था। मंच का संचालन स्वामी रामतीर्थ मिशन, दिल्ली के मंत्री श्री भारतबन्धु जी शर्मा ने किया।

'संयम-सप्ताह' विभिन्न साधना के अंगों का विश्लेषणात्मक स्वरूप उपस्थित कर रामप्रेमियों को जीवन के प्रति सचेत कर रहा है एक नई दृष्टि दे रहा है, जिसमें जीवन को समूचा देखा जा सके।

वर्षा; आन्धी से दून घाटी युक्त है। हरितपरिधानाप्रकृति स्वच्छ, साफ है।

सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूचना

१–मासिक पत्रिका 'राम सन्देश' न मिलने पर अपने समीपस्थ डाकखाने (पत्रालय) से पता करने के पश्चात हमें सूचित करें। क्योंकि कभी-किसी कारणवश "राम सन्देश" १५ ता० तक निकलता है। इसलिए शिकायत पत्र अपनी २ ग्राहक संख्या सहित दिनांक २० के बाद प्रेषित करने का कष्ट करें।

१–आप आश्रम में किसी भी प्रकार का धन भेजते समय यह लिखना न भूलें कि वह धन किस निमित्त भेजा जा रहा है तथा चैक स्वामी रामतीर्थ मिशन के नाम पर ही भेजें।

३–जो पाठक इस पत्रिका के आजीवन सदस्य बनना चाहते हैं वे अपना सदस्यता शुल्क सम्पादक के नाम प्रेषित करें। सदस्यों को आजीवन पुनः बिना किसी शुल्क के यह पत्रिका प्रेषित की जायेगी।

४–'राम सन्देश' के विदेशी ग्राहक अपना वार्षिक शुल्क १५ रु० भेजें। क्योंकि परमाध्यक्ष जी की आज्ञानुसार १२ रु० के स्थान पर ३ रु० वृद्धि का निर्णय लिया गया है।

५–पाठक अपनी अंक सम्बन्धी, प्रतिक्रियाएं, अवश्य भेजें, जिससे पत्रिका की उन्नति सम्भव हो सके।

६–अपनी रचनाएं – लेख, कविताएं भेजते समय स्पष्ट शब्दों में पृष्ठ की एक तरफ ही लिखें।

७–हर प्रकार की सामाजिक, शिक्षा सम्बन्धी, आध्यात्मिक या पारस्परिक तुलनात्मक आपकी लिखित वैचारिक भावनाएं सादर आमन्त्रित हैं।

—सम्पादक

बुक पोस्ट

ग्राहक संख्या 6334,

श्री / श्रीमती Gurukul University

स्थान Gurukul Kangri

डाकखाना _____

जिला (Uttarakhand)

मासिक पत्र—

"राम-सन्देश"

स्वामी रामतीर्थ मिशन

राजपुर, देहरादून (उ०प्र०)

Pin—248009 भारत

स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून (उ० प्र०) के लिए प्रकाशक स्वामी अमर मुनि द्वारा न्यू आईडियल प्रिन्टिंग हाऊस (कांग्रेस भवन के पास) ४-बी नेशविला रोड, (देहरादून) में, मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम-सन्देश

जुलाई
१९८०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकेतिका

विषय	लेखक	पृष्ठ
भजन		१
दुःख में ईश्वर		२
प्रवचन	स्वामी हरिओ३म् जी महाराज	६
सम्पादकीय		९
अद्वितीय दुग्ध - पान		११
राम – हृदय		१३
महर्षि रमण तथा उनकी माता जी	श्री ए०आर०नटराजन	१४
राम-हृदय		१७
बालक अढैया भक्त	बल्लभ दास बिन्नानी	१८
बी०बी० गिरी शोक समाचार		२१
गुरूपूर्णिमा महोत्सव		२२
पुण्य तिथि		२३
शोक समाचार		२४
आश्रम समाचार		२५

संस्थापक—
ब्रह्मलीन स्वामी हरिओउम् जी महाराज

संवर्धक—
ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज

व्यवस्थापक—
स्वामी अमर मुनि जी महाराज

सम्पादक—
काका हरिओउम् "निर्द्वन्द्व"

आजीवन सदस्यता शुल्क—

भारत में	—	१०० रु०
विदेश में	—	५०० रु०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्र के हित के लिए यत्न करना ही विश्व की शक्तियों अर्थात् देवताओं की आराधना है'-स्वामी राम

वेदान्त, अध्यात्म, संस्कृति, धर्म एवं भक्ति का सजग सन्देशवाहक
तथा स्वामी राम के आदर्शों का एकमात्र लोकप्रिय मासिक—

राम सन्देश

वेदोपनिषदां तत्त्वम् सत्यं नित्यं सनातनम् ।।
तत्सर्वं "रामसन्देशे" पत्रेऽस्मिन्नवलोक्यताम् ।।

वर्ष २९ अंक ७	राजपुर, देहरादून, जुलाई १९८०	वार्षिक भेंट १०) एक प्रति ८५ पैसे

★★★★★ ★★★★

भजन

श्याम को हमने जा बजा देखा।
कहीं बन्दा, कहीं खुदा देखा ।।
सूरते गुल में खिलखिला के हंसा,
शक्ले बुलबुल में चहचहा देखा ।।
कहीं है बादशाहे – तख्ते नशीं ।
कहीं कासा लिये गदा देखा ।।
कहीं आबिद बना कहीं जाहिद ।
कहीं रिन्दों का पेशवा देखा।।
करके दावा कहीं अनहलक का ।
बर सथे दार वह खिंचा देखा ।।
देखता आप है सुने है आप ।
न कोई उसके मासिवा देखा ।।
बल्कि यह बोलना भी तकल्लुफ है ।
हमने उसको सुना है या देखा ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गतांक से आगे

दुःख में ईश्वर

लोग क्यों दुख सहते हैं ? व दुःख भोगते है निज आत्मा की अज्ञानता के कारण, जिससे उनको अपना सत्य स्वरुप भूल जाता है, और जो कुछ दूसरे उनको कहते हैं , वही वे अपने को समझ लेते है। और यह दुःख तब तक बराबर बना रहेगा जब तक मनुष्य आत्मा का साक्षात्कार नहीं कर लेगा, जब तक यह अज्ञान दूर नहीं हो जायेगा।

अज्ञान ही अन्धकार है। यदि किसी अँधेरे घर में आप जाओ, तो दीवार अथवा किसी और चीजों से आप अवश्य ही टक्कर खायेंगे, अवश्य किसी प्रकार की चोट खायेंगे यह अनिवार्य है, आप इससे बच नहीं सकते। कहीं—कहीं पूर्वी हिन्दुस्तान में झोपड़ियों में रहनेवाले कुछ लोग इतने अकिंचन होते है कि घर में एक दीपक भी नहीं जला सकते। राम ने गलियों आते - जाते समय अक्सर देखा है कि घर का स्वामी अंधेरे घर में आते - जाते अवश्य अपनी स्त्री वा अन्य गृह-वासियों को दोष देता है। वह कहता है —"अरे तुमने यह मेज यहाँ क्यों डाल रक्खी है, अभी मेरा घुटना टूट जाता ?" अथवा इसी तरह की कुछ और शिकायत करता है। क्या इसकी कोई दवा है ? नहीं, बिल्कुल नहीं क्योंकि यदि वह मेज या कुर्सी घर के दूसरे कोने में रक्खी जाय, तो उसे जब वहाँ जाना होगा तब वह वही चोट खायेगा जब तक अंधकार है तब तक हाथ पैर गर्दन वा सिर अवश्य टूटेगा, अवश्य ही कभी सिर भी दीवाल से टकरा उठेगा , वह बचाया जा नहीं सकता। यदि घर में सिर्फ चिराग जला दो, तो फिर आपको परेशान होने की जरूरत नहीं । जो जहां है उसे वहीं रहने दो, आप एक जगह से दूसरी जगह बिना चोट खाये आ जा सकते हैं।

संसार की भी यही दशा है। यदि आप अपने दुखों का अंत करना चाहें तो आपको इसके लिए अपनी बाह्य परिस्थिति पर या अपने सामाजिक पद, स्थान के समाधान (adjustment) पर भरोसा नहीं करना चाहिए। वरन् अन्तर्स्थित सूर्य के समीकरण के उपाय पर भरोसा रखना चाहिए। सब लोग मानो फरनीचर (Furniture, सामान) को यहाँ से वहाँ हटाकर, एवं सांसारिक पदार्थों को इधर से उधर फेर कर द्रव्य इकट्ठा कर, या बडे - बड़े महल बनवा कर अथवा दूसरे की जमीन लेकर, दुःख से पीछा छुड़ाना चाहते हैं अपनी परिस्थिति के सुधारने, एवं चीजों को इस तरह वा उस तरह सजाने से आप कभी दुख से नहीं बच सकते केवल अपने घर में दीपक जलाने से, प्रकाश प्रकाशित करने से, केवल अपने हृदय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की अंधेरी कोठरी में ज्ञान का प्रकाश करने से ही छूट सकता है, हटाया जा सकता है या दूर किया जा सकता है। अन्धकार दूर होने दो, फिर कोई आपको हानि नहीं पहुंचा सकता।

हिमालय के किसी भाग में कुछ ऐसे जंगलों में लोग रहते थे, जिन्होंने आग कभी जलायीं ही न थी। पहले से जंगली लोग न जलाते थे —आग जलाना उन्हे मालूम न था। मछली को सुखाकर और अन्न को सूर्य की किरणों में पकाकर वे खाते थे। वे सध्या होते ही सो जाते और सूर्योदय के बाद उठा करते थे। इस प्रकार अंधेरे से उन्हें कभी काम नहीं पड़ता था। उनके निवास - स्थान के निकट बड़ी एक गुफा थी। वे जंगली समझते थे थे कि हमारे पूज्य पितर लोग इसी में रहते है। वस्तुत: बात यह थी कि किसी समय उनके पूर्वज उस उस गुफा में गये थे, और दलदल में फँसकर या किसी नुकीली चट्टान से टकराकर मर गये थे। अत: वे जंगली लोग उस गुफा को पवित्र और पूज्य मानने लगे ये। पर उन विचारों को अंधेरे का ज्ञान न होने से वे उस गुफा के अंधकार को बड़ा भारी राक्षस समझते थे और उसे दूर करना चाहते थे (हंसी)। आप लोग इस मूर्खता पर हंसते है, पर आजकल के लोग इससे कहीं बड़ी बज्र मूर्खता कर रहे है, अस्तु। किसी ने कहा है कि उस अंधकार - रूपी राक्षस की पूजा करो तो वह गुफा त्यागकर चला जायेगा। बस, वे सब - के - सब गुफा के नजदीक जाकर बरसों उसे दण्ड-वत् - प्रणाम करते रहे, पर अन्धकार इस भक्ति-भाव से दूर नहीं हुआ। इसके बाद किसी ने सम्मति दी— "अंधेरे को धमकाओ और उसके साथ युद्ध करो, तो वह भाग जायेगा।" फिर क्या था, सब अपना-अपना तीर-कमान, भाला, लकड़ी आदि फेंकने लगे; पर अंधेरा उससे भी दूर न हुआ, किञ्चित् भी विचलित न हुआ। तीसरे ने कहा— "उपवास करो, उपवास! उपवास करने से अन्धकार हटेगा, अब तक तुम लोग उल्टी बातें कर रहे थे, असल में उपवास की आवश्यकता है।" बिचारे उपवास करने लगे, परन्तु वह राक्षस गुफा से न हटा, अन्धकार दूर न हुआ। तब अन्य किसी ने कहा— "दान करने से अंधेरा दूर होगा।" इस पर जो कुछ उनके पास था, वे सब दान में देने लगे। पर पिशाच ने इस पर भी गुफा न छोड़ी। अन्त में एक आदमी आया, उसने कहा— "मेरी बात मानो, तो अन्धकार दूर हो जायेगा।" तब उन्होंने पूछा कि वह क्या बात है? उसने उत्तर दिया — "कुछ बाँस की लकड़ियां लाओ, थोड़ी-सी घास उन्हें बांधने के लिए ओर थोड़ा मछली का तेल लाओ।" फिर उसने कुछ चिथड़े, खर या कोई अथवा कोई ऐसी चीज जलाने के लिए मांगी। इन सबों को बांस के किनारे लपेट कर; चकमक पत्थर से आग झाड़ी और उस घास को जलाया। आग जलायी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गयी। इन जंगलियों ने आग पहले कभी देखी न थी, इसलिए यह जलती हुई आग उनके लिए एक अनोखा दृश्य था। अब उस मनुष्य ने उन सबों से कहा कि इस मशाल को लेकर गुफा में जाओ और जहां वह अन्धकार-राक्षस मिले, वहां से उसे कान पकड़कर बाहर घसीट लाओ। पहले उन्हें इस पर विश्वास न हुआ। वे कहने लगे— "यह कैसे ठीक हो सकता है। हमारे पूर्वजों ने उपवास करना, दान देना, पूजा आदि बतलाया था। वह सब करने पर भी यह राक्षस दूर नहीं हुआ, अब इस अनजाने आदमी पर कैसे विश्वास कर लें, यह निःसंदेह हमें ठीक राय नहीं दे सकता। इसकी राय व्यर्थ है। ओ, हमतो इसको नहीं मानेंगे?" उन लोगों ने आग बुझा दी, पर कुछ दूसरे थे, वे इतने पक्षपात-पूर्ण नहीं थे। वे प्रकाश लेकर गुफा में गये, पर वहां तो पिशाच था ही नहीं! वे उस लम्बे खोह में आगे बढ़ते गये, फिर भी राक्षस दिखायीं न पड़ा। तब उन लोगों ने सोचा कि राक्षस कहीं सुराख वा दरार में छिपा होगा, इसलिए कोने – कोने में रोशनी ले गये, पर कहीं नहीं मिला, मानो वह कभी उसमें था ही नहीं।

ठीक वैसे ही आपके अन्तःकरण की गुहा में अज्ञानांधकार रूपी राक्षस घुसा हुआ है। वही दुःख और डर उत्पन्न कर इस सृष्टि को नरक - तुल्य बनाता है। सारी चिन्तायें, सारे दुःख - दर्द आपके भीतर ही रहते है, कभी बाहर नही होते। जब कोई आपको गालियां देता है या अपशब्द कहता है, तब मानो वह आपके लिए भोजन तैयार करता है, जो ग्रहण करने से हानि करेगा। इस प्रकार कोई भी वस्तु तब तक आप को क्षुब्ध वा क्रुद्ध नहीं कर सकती, जब तक आप उसे लेकर हृदय में धारण न कर लें। राम कभी किसी विषय को अपने भीतर नहीं लेता। राह चलते समय राम पर कितने ही लोग टीका करते है, पर ऐसे शब्दों का तब तक कोई असर नहीं होता, जब तक उन्हें सत्य मानकर हृदय में न रखा जाय।

वेदान्त की दृष्टि में वही मनुष्य साक्षात्कार को पाये हुए है, जो ऐसे विषैले भोजन को जरा भी ग्रहण और स्वीकार करने का कष्ट नही उठता। ऐसा स्थित - प्रज्ञ पुरुष अपनी वृत्ति को कभी विक्षिप्त या क्षुभित होने नहीं देता।

अपने सत्य स्वरूप, अपने ईश्वरत्व में स्थित रहो। दूसरों की निन्दा, दूसरों पर दोषारोपण करनेवालों पर दया करो। अपने को अपमानित पद - दलित वा पतित कभी मत समझो। अपने 'ऐश्वर्य' की प्रतीति करो, अपने दिव्य स्वरूप में निष्ठा रक्खो: अन्यथा सब अज्ञान है, और सब कुछ अन्धकार है। आपके अन्तःकरण का अज्ञान ही है, जो आपके लिए संसार को नरक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बनाता है। इस अंधकार को दूर करने के लिए आप ज्ञान के अतिरिक्त चाहे जो उपाय भले हीं करें, पर किसी से कुछ न सरेगा।

जब तक आप अपने अन्तःकरण के अन्धकार को दूर करने पर न तुलोगे, तब तक सौ तेंतीस कोटि क्राइस्ट क्यों न अवतार लें, पर तो भी कुछ लाभ न होगा। परावलम्बी मत बनो। जब तक आपके हृदय में अज्ञान है, तब तक इस देव - मन्दिर से उस मन्दिर में जाना, या इस समाज से उस समाज में सम्मिलित होना, तथा क्राइस्ट कृष्ण के आगे प्रार्थना करना, यह पूजा, यह पदार्थ - पूजा या वह पदार्थ - पूजा सब बेकार है। जो मन माने करो, किन्तु कुछ होने का नहीं। इसका एकमात्र उपाय है प्रकाश, और जीता - जागता विश्वास। यहीं एकमात्र उपाय है, और और दूसरी राह नहीं-- (नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय।)

ऐ महिलाओं और भद्र पुरुषों के रूप में विराजमान देव ! ऐ प्रति-व्यक्ति-रूप में मेरे आत्मन्! इन सब शरीरों के रूप में ऐ मेरे प्रिय शुद्ध अपना आप! ऐ सर्व-देह रूपिणी जगज्जननि! ऐ सर्वरूपधारी आनन्दमय आत्मन्! प्रकाश का तात्पर्य है सत्य का इतना अधिक अनुभव कि सब दृश्यमात्र देह और रूप शून्यता में परिणत हो जायें।

भीतरी प्रकाश या सत्य का प्रत्यक्ष अनुभव बस्तु-मात्र को स्फटिक बना देगा और सब नाम-रूप व्यक्तियों को वायु का बुदबुदा सा बना देगा। अनुभवी पुरुष के सामने कैसा ही व्यक्ति आ जाय, वह उस व्यक्ति के तुच्छ अहंकार या बाह्य शरीर को नहीं देखेगा, वह केवल उसमें ईश्वरत्व देखेगा। उसके लिए तो बाह्य रूप या शरीर एक मिथ्या भ्रम, अन्धकार और अज्ञान है।

अज्ञान के दूर होने का तात्पर्य है ईश्वर-दर्शन, अपने यथार्थ स्वरूप का दर्शन, तत्व - मात्र का साक्षात्कार, आत्मा का अनुभव और सब भय तथा चिन्ता से छुटकारा!

ऐ दिव्यस्वरूप! ऐ परमात्मदेव!! इन सब शरीरों में विद्यमान, ऐ मेरे परम प्रिय परमेश्वर!!! औरों की दृष्टि में जो लोग मेरे शत्रु कहलाते हैं, वे सब-के-सब वस्तुतः मेरे निजात्मा हैं, और जो लोग दूसरों की दृष्टि में मेरे मित्र कहलाते है, वे सब-के-सब भी वस्तुतः मेरे निजात्मा है। क्षुद्र अहंभाव को मत देखो, बाह्य व्यक्तित्व पर ध्यान न दो। अन्य सब शरीरों में ही नहीं, अपितु अपने शरीर में भी ईश्वर-दर्शन करना ही प्रकाश है, जिससे निज आत्मा और ईश्वर बिलकुल एक-जैसा दिखने लगता है। 'ईश्वर' मेरे सत्य-आत्मा, वास्तविक रूप का पर्यायवाची शब्द है।

क्रमशः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह वास्तविक स्वरूप 'मैं' सब जगह है, उस मैं का अनुभव करो, उसी का निदिध्यासन करो, उसी का अनुष्ठान करो सब दीवारें सब कठिनाइयाँ सब विघ्न और सब बाधायें हवा हो जायेगी। कैसा अद्भुत दर्शन है! कैसा सुन्दर सत्य है! कितना भव्य तत्त्व है!!! दुःख है कि इसका वर्णन नहीं हो सकता, दुःख है कि किसी शब्द की वहाँ पहुँच नहीं, यह दुःख है कि कोई भाषा इसे चित्रित नहीं कर सकती यह एक असली तत्व है, यदि आपको इसकी जिज्ञासा होगी, एक असली तत्व है यदि आपको इसको जिज्ञासा होगो, यदि आप में इसके लिए उत्कष्ट अभिलाषा होगी, तो आप इसे अवश्य पा लेंगे।

क्रमशः

दिनांक १६ अगस्त १९५३ को प्रातः ब्रह्मलीन स्वामी हरिओ३म जी महाराज द्वारा दिया गया भाषण

प्रवचन

माताओ, देवियो व सज्जनो! जैसे साबुन वस्त्र के मल को धो देता है, इसी प्रकार परमात्मा का चिन्तन तथा सेवा-भाव मन की शुद्धि कर देते हैं। परन्तु वस्त्र इधर पड़ा हो, साबुन उधर लगाते रहो, फिर भी काम नहीं होगा। बाहर से शरीर कितना उज्ज्वल तथा सुन्दर क्यों न हो परन्तु अन्तःकरण का ऐसा होना जरूरी नहीं। शरीर को नेल, अंजन, मंजन की, अन्मृःकरण को नाम की, भजन को आवश्यकता है। यद्यपि नाम जाप करने से, नाम साथ तो है पर — "माला फिरे तो हाथ में, मनुआ फिरे दस कोस" — इस प्रकार कार्य सिद्धि नहीं होगी। यदि मन इस कर्त्तव्य के साथ नहीं होता तो वह फलीभूत नहीं होता। इसी कारण देखने में आता है कि उच्च कोटि के संत बाहर के आडम्बर को छोड़ अन्तरमुख हो जाते हैं: माला वगैरा फेरना तो भूमिका हैं। धोरे-२ इस तथ्य पर पहुंचना चाहिये जैसे शरीर खाद बिना सूख जाता है, इसी तरह मन को प्रभुनाम से शुद्ध करना है। हमारा नाम मन तक तो पहुंचता नहीं। आप हाथ से माला जप रहे हैं बड़े भले है, आप जिह्वा से जप रहे है, बड़े श्रेष्ठ है — परन्तु धीरे-२ उस नाम को, मनमें अन्तःकरण में पहुंचाना चाहिये, उतारना चाहिये। अन्तःकरण की शुद्धि का स्वरूप क्या है? निरभिमान सरल स्वभाव हो जाना निर्माण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो जाना है, दूसरे की बात को सहना, छोटे बड़े का ज्ञान हो जाना, हित अनहित की सोझी हो जाती है। शुद्ध अन्तःकरण डांवाडोल नहीं होगा। इच्छा, कामना बहुत कम उठेंगी क्योंकि मन किसी के समर्पण हो चुका है। वहाँ आजादी नहीं रहीं, जंजीर हल गई है — उसका मालिक है, स्वामी है। विक्षिब्धता दूर हो जातो है नाम जाप से। बच्चा माता की गोद में पड़ा खाने पीने का चिंतन नहीं करता। इसी प्रकार वह मन जो प्रभु समर्पण हो चुका है, इच्छा तथा चिंता नहीं करता। ऐसे अन्तःकरण के अन्दर साक्षात्कार होना ही है, इसमें सन्देह नहीं।

अच्छा! जरा बताइये एक बड़ा आदमी आपकी कोठी आकर बैठ जावे तब आप झाड़ पोछ करेंगे या पहले साफ करके रखेंगे पहले? निसन्देह भगवान के आने से पहले सफाई होनी परम आवश्यक है। वहाँ अभिमान इत्यादि न हो।

केनोपनिषद् में कथा आती है — सुर असुरों का युद्ध हुआ, असुर हार गए। देवता जय जय कार मनाने लगे: उन्हें अभिमान हो गया। अब भगवान ने सोचा यदि देवताओं को भी अभिमान हो गया तो पृथ्वी डोलने लगेगी। अभिमान से बढ़कर दूसरा पाप नहीं है सभी देवता अपने को बड़ा कहने लगे। तभी ज्योति स्वरूप प्रगट होता है। देख कर देवता चकित होने लगे कि यह तेज का पुंज कहां से आ गया। अग्निदेव! तू ही बलवान है पता ला यह तेजोमय स्वरूप कौन है। अग्निदेव जाते हैं, नमस्कार करके बैठ जाते हैं पर साहस नहीं पूछने का। तब जो यज्ञ की भांति तेजोमय स्वरूप था स्वयं पूछता है तू कौन है? कैसे आया है? बोला मैं जितने उत्पन्न होने वाले पदार्थ है सबका ज्ञाता हूं तथा तेज का पुंज हूं। चाहूं तो सारे विश्व को जला कर भस्म कर दूं। एक तिनका उठाया ज्योतिर्मय स्वरूप ने और बोला लो इसे जरा जला दो। अग्निदेव न जला सका। बोला देव! मेरी शक्ति से बाहिर है। न जाने का क्या कारण है। इसी प्रकार वायुदेव जाते प्रणाम करके बैठ जाते है परन्तु उनका भी साहस नहीं पड़ता पूछने का तू, कौन है वह ज्योति पुंज स्वयं पूछते हैं तू कौन है? उत्तर देते हैं अन्तरिक्ष में भी मेरी ही गति काम कर रही है। तेरे में शक्ति क्या है? मैं सारे विश्व को वायु रूप से उड़ा दूं। ज्योतिपुंज बोले जरा तिनका तो उड़ा। वायुदेव यत्न करने पर भी तिनका न उठा सके। निराश हो वापिस लौटे। जब मुनीमों से काम नहीं होता तो मालिक स्वयं जाता है। इन्द्र जाता है। क्या देखता है कि तेजोमय स्वरूप अन्तर्ध्यान हो गया। वह भी अन्तर्ध्यान हो जाता है। जब नेत्र खोलता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है तो दिव्य मूर्ति उमा, पारवती को अनेक भूषणों से सुशोभित देख दंडवत् प्रणाम करता है। पूछना है अभी जो अर्न्तध्यान हुआ वह कौन था यह वह परब्रह्म भगवान है जो किसी की जय, अजय जो चेतन रूप से जड़ में समाया है यह वह परब्रह्म है। तुम्हें देहअध्यास हो गया सो उसे तोड़ने के लिये आए। तब सभी प्रभु के गुणानुवाद गाने लगे।

एक बार सप्तऋषि मृतलोक में राजा विजय के पास आते है। उसने दंडवत् प्रणाम किया, आदर का पूरा पार्ट अदा किया। मेरा नगर इतना धर्म परायण है। घर में पुत्र आ जाए कितनी खुशी होती है। शादी विवाह पर भी खुशी होती है। परन्तु घर में सत्संग का होना, सब का पधारना बड़े उच्च घर का लक्षण है। यद्यपि टी०बी० के मरीज को फ्लिट ठीक नहीं कर सकती, तो भी फ्लिट की जाती है। अत्यन्त ज्ञानी महामूढ़ लोंगो के घर महात्मा के आने से भी रोग भले ही दूर नहीं होता लेकिन कष्ट ताप की निवृत्ति हो जाती है। जैसे (किटाणुओं) की फ्लिट से! भई सोए को जगाया जा सकता है जागते को कौन जगाए।

परोपकार और सेवा के धन से पार होना है। मूढ़ यदि निश्चय कर लेता है कि बुरा गरक करना है तो करके ही रहता है। किसी का अन्न खा लेने से अपना तपोबल और भजन का फल क्षीण हो जाता है। ऋषि नदी किनारे जा जल से हाथ मुंह धो कंद मूल फल खाने को रखते हैं। स्नान के बाद ध्यान में बैठते हैं तो भूखे सप्तऋषि के इकठ्ठे किए फल इन्द्र ने उठा लिए। क्रोध में आकर कहते हैं- "जा तेरा सर्वनाश हो जाए।" पास ही एक पेड़ था। राजा इन्द्र फलों को ले उतर आता है और साथ और भी फल fruit ले आता है सप्त ऋषि पूछते हैं तू कौन है? तुझे इतनी सम्पत्ति दे रखी है तो हमारे कन्द मूल क्यों ले गया? मुझे भय पड़ गया है कि कहीं मुझसे इन्द्र पदवी न छिन जाए। महान तपोबल वाला निर्बल तप वाले पर जय पाता है। क्रोध और अभिमान से तप क्षीण हो जाता है। सप्त-ऋषि का भी तप क्षीण हो सकता है। अभिमान क्रोध से उठ अपने आप को surrender (बलिदान, समर्पण) करना चाहिये।

भला काम किसे कहते है? जिससे अपना तथा दूसरे का कल्याण हो। Health Officer (स्वास्थ्य विभाग का अफसर), स्वास्थ्य सबंधी instructions (हिदायत) देता है — सफाई करो। संत जानते हैं जीवों का पतन कैसे होता है और उद्धार कैसे होता है। सर्व कर्त्ता नारायण है। जीव समझता है मैंने करना है। यदि भक्त को कोई काम कहे तो सोचने लगता है। ओ भोले तेरे को चिन्ता की भावना की क्या जरूरत है। good begining is half ending.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

यह बात सत्य है कि शब्दों ने कभी भी सत्य का स्पर्श नहीं किया, सत्य सदैव अनिर्वचनीय रहा। सम्भवतया यही अनभिव्यक्ति का स्वरूप ही जीव को सदैव प्रेरित करता रहा अनादि काल से। जीव ने बहुत प्रयास किये, समस्त प्रसुप्त चेतना को जागृत किया, उस सत्य-तत्व तक पहुँचने के लिये। लेकिन हुआ क्या? जाना अवश्य उसे, पर कैसा है इस प्रश्न के उत्तर के समय असमर्थ पाया। आप्तदृष्टा, आप्तवक्ता ऋषियों ने सारी खोज के अन्त में जो निष्कर्ष निकाला वह था केवल 'नेति, नेति'। इसके कारण जो असुविधा हुई वह थी जो अभिव्यक्त था वह निरपेक्ष न था, सापेक्ष था। निरपेक्ष तक पहुँचने के लिए धैर्य की, निरन्तर प्रयास की आवश्यकता थी। उस तक पहुँचने के लिए प्रारम्भिक जो आधार था वह निरपेक्ष नहीं था बल्कि सापेक्ष था। कैसी अजीब पहेली थी जिसे सुलझाना था सत्पथ के यात्री को। सुलझाता रहा, सुलझा भी पर कुछ, सब कुछ नहीं, सब नहीं।

शब्दों की इसी सीमित पहुंच ने विश्लेषण में किसी भी परिभाषा को पूरा-पूरा कसौटी पर सही न उतारा। शब्दों ने ही परिभाषा को परिभाषित किया लेकिन उस कसौटी पर स्वयं ही खरे न उतर पाये।

यदि यह पूछा जाये कि अव्यक्त को व्यक्त रूप किसने दिया? तो उसका भी उत्तर होगा शब्द ही ने। यही कारण है कि शब्द ब्रह्म के द्वारा 'ब्रह्म' का, व्यक्त रूप शब्द ऋषियों द्वारा स्वीकार्य हुआ। लेकिन वह शब्द ब्रह्म भी स्वयं का, अपना निर्वचन करने में सक्षम न हो सका।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लक्ष्य, साधन, साधक के योग्यता—स्तर का विवेचन भी तो इसी शब्द ने ही किया, समस्त भावात्मक व नामात्मक विश्लेषण का आधार कौन रहा यही शब्द, परन्तु फिर भी वास्तविक तथ्य तक के लिये केवल एक आडम्बर पूर्ण सी रही यह सारी शब्द-यात्रा। वाक्वैखरीशब्दझरी भुक्तये न तु मुक्तये— द्वारा आचार्य शंकर ने इस शब्द जंजाल के स्वरूप को, जिसमें उसका खेल का मात्र स्वरूप था, भोगों के लिये स्वीकार किया मुक्ति, मोक्ष के लिये नहीं। शब्दावली से युक्त पर भावविहीन, ज्ञान विहीन को अर्थात् शब्दों के संकेत को न समझ केवल शब्दों की पकड़कर बैठनेवाले को, शब्द समुच्चय को ही अपना साध्य मानने वाले को आचार्य ने उपमा दी उस गर्दभ (गधा) की जिसके कन्धों पर चन्दन लदा है, और जो केवल उसका भार जानता है मूल्य नहीं- यथा खरश्चन्दनभारवाही भारस्यवेत्ता न तु चन्दनस्य।

यात्रा चाहे अध्यात्म की हो या व्यवहार की, दोनों में ही अनुभूति-विहीन शब्दविश्लेषणात्मक रूप केवल वाचालता है और हम सब जानते हैं। कि वाचालता कभी भो लक्ष्य प्राप्ति न करा सकेगी तथा लक्ष्य तक न पहुँचाने वाला कोई भी साधन तथाकथित होगा। कारण, साधन वही है जो साध्य-प्राप्ति कराये। यह बात सत्य है कि शब्दों की यात्रा सापेक्ष है पर उसे उपेक्षित नहीं किया जा सकता, यात्रा का प्रारम्भ वहीं से होगा लेकिन यहां यह भी ध्यान रखना होगा कि उसकी स्वीकृति इसलिये है क्योंकि वह निरपेक्ष की ओर संकेत करती है, तथा संकेत मूल्यवान उसो के लिये हैं जो संकेतों को समझ उसे प्राप्त कर लेता है जिसे प्राप्त कराना चाहते हैं वे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अद्वितीय दुग्ध - पान

कर्म की सफलता उसकी सहजता में होती है। कर्म जब सहज हो जाता है, क्रिया जब अपने आप स्वाभाविकरूप से घटती है तभी वह सफल होती है क्योंकि उसमें अभाव होता है कर्तृत्व का। जब कर्म कर्म नहीं तो कर्ता कहाँ और कर्तृत्व के अभाव की स्थिति ही होती है सत्वगुणसम्पन्न स्थिति। यद्यपि यह भी पूर्ण दोषरहित नहीं होती परन्तु फिर भी यह ज्ञान उत्पन्न कर साधक को मुक्तिपथ पर अग्रसरित कर देती है।

जैसे गाय वत्स को देखते ही स्वाभाविकरूप से अपने स्तनों से दुग्ध का, अमृत का, जीवन का स्राव करती है। (बल्कि यदि यह कहा जाये कि वह अपने आप ही होने लगता है, अनायास ही होता है तो अनुचित न होगा क्योंकि गो की इच्छाशक्ति तो वात्सल्य से इतनी सरोबार होती है कि वह कुछ करने की स्थिति में ही नहीं होती।) वैसे ही आज माँ यशोदा भी अपने लाल गोपाल को देखकर बिल्कुल (गोवत्स की) सहज स्थिति में है। उठाती है उसे अपनी गोद में और दधि-मन्थन क्रिया का परित्याग कर पिलाने लगा जाती है दुग्ध अपने लाल को, यहाँ तक कि जब तक क्रिया हो, गोपाल स्तप-पान करें स्नेह वेग रुक नहीं पाता और भिगो देता है वस्त्रों को आवरण को भी। समस्त क्रियाएं बन्द हैं। सत्व की उच्चतम स्थिति है। रोमांच है मां के शरीर में देखती है अपने पुत्र की आंखों में लेकिन आनन्दाश्रु बन जाते हैं रुकावट। वे नहीं चाहते कि कृष्ण दृश्यरुप बने आँखें मुंद जाती हैं मां की आनन्दातिरेक से। आनन्द की चरमसीमा है यहाँ। मां भूल गयी है सब कुछ, यहाँ तक उसे भी जिसे दूध पिला रही है।

देश कालपरिस्थिति से अनभिज्ञ है वह इस समय। लेकिन यह क्या? यह परिवर्तन क्यों? आनन्द का वह स्वरुप विच्छिन्न क्यों हो गया? पुत्र को गोद से नीचे रखा और भागी। क्रिया हुई। अग्नि में उफन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर गिरते दूध की गंध ने सब समाप्त कर दिया। कृष्ण बौखलाये, अरे! यह क्या, ? मुझे दुग्ध-पान के आनन्द से वंचित क्यों कर रही है माँ ? क्या, प्राप्त हो रहे आनन्द से भी अधिक मूल्यवान है कोई। देखा मुड़कर। यह सब तो थोड़े से दूध के कारण हुआ था। समझा, भौतिक हानि ने मेरे साथ के आनन्द को तोड़ दिया। रजोगुण के कारण क्रिया हुई और उस क्रिया ने अलौकिक, सहज आनन्द से दूर कर दिया माँ को। अच्छा माँ! तुम बस थोडे से दूध के लिए भागी, तो यह लो और तोड़ दिया नटखट ने वो मटका, जिसमें दधि-मन्थन हो रहा था। मां ने सोचा था उसने बचा लिया दूध। वापिस आई। देखा। बिखर गया। उतना बचा न पाई जितना बिखर गया था। प्रयास की बिफलता से कामना पर लगी चोट से उत्पन्न क्रोध ने भुला दिया अपने स्वभाव के अनुसार। कामना के उस रूप ने मां-पुत्र के स्नेह बन्धन को हिला सा दिया। सबसे अधिक प्रिय को, अपने प्राण को दण्ड देने चली। पर, यह क्या ? रस्सी तो दो अंगुल कम होने लगी। मां बढ़ाती है पर रस्सियां कम है उस छोटे से गोपाल को बाँधने के लिये। सखियां देख रही हैं, हँस रही है, देखकर सारी घटना। माँ ने देखा गोपियों को भी हंसते हुए, जले पर मानो नमक छिड़का गया हो, हंसी ने तीर का काम किया, और भड़क पड़ी मां, बरस पड़ी उन पर भी। मां को लगा यह उपहास उस पर है। कभी देखा है किसी को गिरते हुए, कितनी फुर्ती दिखाता है उठने में, कोई देख न ले। अपनी सफलता को हम गा-गा कर सुनाते हैं पर असफलता किसी तक न पहुंचे, यहां तक कि अपने से भी, खुद से भी छिपा जाते हैं हम। व्यामोह होता है मां को। भूल जाती है कि इसी तरह मिट्टी मुंह में देखने के समय सारा ब्रह्माण्ड देखा था उसने, उसने खुद को भी तो देखा था उस छोटे से नटखट नटवर के मुख में। यह है तमो – गुण का स्वरूप, अतीत अनुभूतियों की विस्मृति।

मां ने सत्वस्थिति में आनन्द पाया, अवर्णनीय, अद्वितीय-आनन्द। क्रिया हुई, रजो-गुण ने लाभ की प्रवृत्ति ने, प्रेरित किया और कुछ बचाने के चक्कर में बहुत कुछ, कम से कम उससे तो अधिक ही खो दिया उसने, जितना बचाया था। क्रोध, अपमान सारी मानसिक स्थितियों से गुजरती हुई ने आखिर उसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बांधने की ठान ली जिसने केवल दो चरणों में सारे ब्रह्माण्ड को नाप दिया था, जो ब्रह्माण्ड नायक है, जिसका स्वरूप जान चुकी है वह मिट्टी देखने की इच्छा से।

ये विभिन्न मनोदशाएं यशोदा में दिखी, विभिन्न गुणों के परिवर्तन के साथ। प्रत्येक में घटती है ये घटनाएं। कौन है जो इन तीनों गुणों के परिवर्तनों से अछूता रहा हो। सभी, छोटे बड़े इन परिवर्तनों से गुजर रहे हैं। बस, प्रयास यह होना चाहिये कि अधिक से अधिक सत्व की स्थिति में रहा जाये।

●

राम - हृदय

सारी दुनियाँ उसके साथ सहयोग करने के लिए बाध्य होती है, जिसका सम्पूर्ण जगत् के साथ तादात्म्य हो जाता है, जो सब के साथ एकता का अनुभव करता है।

दोनों काम एक साथ नहीं चल सकते, एक, आप दुनिया का भी मजा लेते रहें और दूसरे, स्वस्वरूप ईश्वर का भी साक्षात्कार कर ले।

साक्षात्कार एक ही छलांग में नहीं हो सकता। उसके लिए समय की आवश्यकता होती है। इस नर - देह के विकास तक पहुंचने में ही हमें करोड़ों वर्ष लग चुके हैं।

शिव मन्दिर, राजपुर आश्रम में सांय परमाध्यक्ष श्री स्वामी अमर मुनि जी महाराज के प्रवचन के आधार पर —

सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महर्षि रमण तथा उनकी माता जी

— ले० श्री ए० आर० नटराजन

प्रो० डी० एस० शर्मा की उच्चकोटि के धर्म-श्रेष्ठ इतिहासकर्त्ताओं ने कहा है कि सन् ५०० ई० में आविर्भूत जगद्गुरु आदिशंकराचार्य के बाद यदि सर्व महान कोई ज्ञानमार्गी माना जाता है तो वह भगवान श्री रमण महर्षि हैं।

कुछ व्यक्तियों की यह धारणा निराधार है कि ज्ञानावस्था में (जब सिद्ध पुरुष का निज शरीर एवं मन में लगाव नहीं होता) उस महात्माओं में भावनाओं की गहराई का अस्तित्व नहीं होता। यह भी कहा जाता है कि ज्ञानी, जो अन्य घटनाओं, व्यक्तियों और पदार्थों को केवल मात्र दृष्टा के रूप में बिना किसी आसक्ति के देखता है, में अपने सगे - सम्बन्धियों तथा दूसरों के लिये अपेक्षित मानव - भावनाओं का अशमात्र नहीं मिलता। वास्तविकता यह है कि वह इसके सर्वथा विपरीत होता है अर्थात् ऐसा ज्ञानी ही निज निकट सम्बन्धिओं सहित सबको अपना विशुद्ध प्रेम प्रदान कर सकता है।

मेरे विचार में यथार्थता को सिद्ध करने की दृष्टि से ऐसे उदाहरण प्रस्तुत करने होंगे जिनसे यह स्पष्ट हो जाये कि अध्यात्ममार्ग के बड़े - २ महापुरुषों का अपनी माताओं के साथ कैसा सम्बन्ध था। इस दिशा में महर्षि रमण के अपने माता के प्रति सम्बन्धों का उल्लेख करना प्रासंगिक होगा। ऐसे महात्माओं के अपनी माताओं के प्रति सम्बन्धों पर दृष्टि डालना केवल इस कारण उपयुक्त नहीं है कि वेदों में जननी को परमात्मा का साक्षात्स्वरूप माना गया है वरन् इसलिये भी कि माता तथा सन्तान का पारस्परिक सम्बन्ध अनूठा है।

यह कहा गया है कि महान शंकराचार्य ने संन्यास धारण करते समय अपनी माता को यह वचन दिया था कि जब उसको शरीर का त्याग करते समय अपने पुत्र का स्मरण हो उठेगा तो वह वहां उपस्थित हो जायेगा। यह तथ्य भी सर्वविदित है कि अपनी माता के मृत्यु शय्या पर लेटे होने के समय आदर्श सुपुत्र शंकराचार्य न केवल वहां पहुंचे वरन् उन्होंने उन मर्यादाओं की अवहेलना करके सभी अनुष्ठान किये जब कि संन्यासी को क्रिया - कर्मादि से दूर रहना चाहिये।

जहां तक रामकृष्ण परमहंस का सम्बन्ध है, उनके जीवन काल में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं जब उन्होंने अपनी माता श्रीमती चन्द्रदेवी के लिये बड़ी चिन्ता व्यक्त की। जब वे स्वयं वृन्दावन की यात्रा पर गये तो उन पर वहां के सात्विक वातावरण का इतना प्रभाव पड़ा कि उन्होंने वहां पर ही रहने का निश्चय कर लिया किन्तु बाद में उन्हें इच्छा न होने पर भी जाना पड़ा क्योंकि उन्हें ध्यान आया कि उनकी अनुपस्थिति में उनकी माता की समुचित सेवा शुश्रुषा न हो सकेगी।

एक अन्य उदाहरण द्वारा उनके मातृ-प्रेम की एक और झलक दिखायी पड़ती है। श्री रामकृष्ण परमहंस के एक भाई का अल्पायु में देहावसान होने पर उन्हें इस बात की आशंका हुई कि इससे उनकी माता को असह्य वेदना होगी। अतः माता के पास जाने से पूर्व वे सीधे काली मन्दिर में गये तथा अपनी आराध्या देवी से प्रार्थी हुए कि उनकी माता को पर्याप्तशक्ति प्राप्त हो जिससे वह आघात सहन किया जा सके।

अब हम महर्षि रमण की ओर आते हैं। उनका अपनी माता के प्रति व्यवहार अत्याकर्षक था। माता 'अलगम्माल' से उनके सम्बन्ध को तीन चरणों में विभक्त किया जा सकता है और सभी में उनके हृदय में प्रेम निरन्तर बना रहा।

महर्षि की जीवन-यात्रा में इस सम्बन्ध का विस्तृत वर्णन मिलता है और उनका प्रेम अपनी सीमाओं को लांघ गया जब सन् १८९५ ई० में उनकी माता जी आपके बेटे घर लौटने को मनाने के लिये 'तिरुवलमलाई' पहुंची। आपने लाडले को शिर पर जटाएं तथा शिर पर एक मैली कौपीन (लंगोटी) देखी तो उनका दिल बैठ गया और उन्होंने अपने बेटे को घर लौट जाने का हठ किया। उस समय महर्षि 'मौन' धारण किये हुए थे। उन्होंने कागज के एक पुर्जे पर तमिल भाषा में ये शब्द लिखे :- "सर्वव्यापक भगवान उपयुक्त समय आने पर प्रत्येक प्राणी के कर्मों का फल देते हैं। भावी अवश्य घटित होगी तथा जो कुछ नहीं होना है वह कभी न होगा, चाहे हम कुछ भी कहें अथवा करें। अतः आत्मसमर्पण की भावना को अपनाना आवश्यक है।" इस प्रकार उन्होंने अपनी माता को यह परामर्श दिया।

सन् १९१४ ई० में तिरुपतिस्थित वेंकटरमण मन्दिर की यात्रा के अनन्तर अलगम्मा ने अपने पुत्र के साथ अरुणाचल पर स्थित विरुपाक्ष गुहा में कुछ वर्ष बिताये। वहाँ उन्हें अवधिक ज्वर (मियादी बुखार) हो गया। अब उनकी दशा बिगड़ गयी तो अपनी माता के प्रति विशुद्ध प्रेम रखने वाले रमणमहर्षि ने अरुणाचल के अधिपति देव से अपनी माता जी को शीघ्र स्वस्थ करने की प्रार्थना की। इसके दो पद्यों का अनुवाद नीचे दिया जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

" मुझे शरण देने वाले, हे पर्वत देव ! तुम तो जन्म जन्मान्तर के बन्धन से मुक्त करने वाले हो। अतः अब तुम्हें ही माता जी को रोग-मुक्त करना है क्योंकि तुम तो मृत्यु के लिये भी 'मृत्यु' हो।

" मेरे शरणदाता ! अपनी कृपा की वर्षा ारी माता जी पर करो। तथा उनकी मृत्यु से क्षा करो। यदि हम इस तथ्य पर मनन करें ो मृत्यु का अस्तित्व क्या है ? " कहते हैं क महर्षि के जीवन भर में यह एक - मात्र दाहरण मिलता है कि जब उन्होंने 'प्रार्थना' ारा घटनाओं के क्रम को बदल दिया। यहाँ ! बताना अनुचित न होगा कि अलगम्मा ीः स्वस्थ ही गयी।

सन् १९२२ ई० तक अलगम्मा 'तिरुवलमलाई' रही तथा उन्होंने अपने जीवन के कुछ तम वर्ष अपने बेटे के साथ व्यतीत किये। ष ने इस अवधि में अपनी माता जी में यात्म' का अधिक से अधिक संचार किया उन्हें 'मुक्ति' प्राप्त करने के योग्य बना ा।

उनकी माता कभी अपने पुत्र से पृथक रहना चाहती थी। जब उनकी एक पुत्री ापने नव-निर्मित गृह में प्रवेश करके उसे पवित्र करने का माता से आग्रह किया तो पुत्र के वियोग को सहन न कर सकने के कारण अलगम्मा ने वहाँ जाना स्वीकार नहीं किया।

उन्होंने तो अपने बेटे से यहाँ जक कह रखा था कि मैं तो तुम्हारी बाहों में प्राण त्याग करना चाहूंगी, भले ही तुम मेरे मृत शरीर को निकटवर्ती झाड़ियों में फेंक दो। महर्षि ने इन दिनों का अपनी माता के लिये सदुपयोग किया तथा तब गीत की भी रचना की।

१९ मई, १९२२ ई० को महर्षि की माता जी गम्भीर रूप से रुग्ण हो गयी और यह जानकर कि अन्तिम समय आ पहुंचा है वे स्वयं निकट बैठे रहे। इनका दाँया हाथ अपनी माता के वक्षस्थल (हृदय) पर तथा दूसरा हाथ माथे पर धरा था। उसदिन रात्रि में लगभग ८ बजे अलगम्मा ने महासमाधि प्राप्त की। जब किसी ने कहा कि माँ का देहान्त हो गया है तो उन्होंने तनिक रुखेपन से उसकी भूल को सही करते हुए कहा कि देहान्त नहीं हुआ टिन्क माँ 'समा' गयी है। जिन दश-बारह घण्टों की अवधि में महर्षि माता के पास बैठे रहे उन्हें स्वयं क्या अनुभव हुआ, इसको वर्णन करते हुए उन्होंने बताया " इस समय (वासना से) यथा बीते हुए काल की सूक्ष्मस्मृतियां जो कि भावी जन्म की सूचक हैं, तीव्रता से गतिमान थी। माता जी के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्तर्तम की सूक्ष्म चेतना में दृश्यों की भरमार थी क्योंकि बाह्यचेतना लुप्त थी। उनके भीतर व्यक्तित्व का चक्र चल रहा था जिससे आत्मा जन्म–मरण की 'पकड़' से दूर रह कर परमात्मा में विलीन हो रही थी। अन्तिम चरण तक पहुंचने तक आत्मा सभी कोषों का त्याग कर चुकी थी। इस प्रकार वह (आत्मा) उस अवस्था को प्राप्त कर चुकी थी जहाँ से अज्ञान के जगत् में लौटना असम्भव है:

अपनी ज्ञान विचार-धारा में महर्षि ने मनुष्य तथा स्त्री में कोई अन्तर नहीं देखा तथा मुक्तात्मा के शरीर का उपयुक्त स्थान 'श्मशान' की बजाय 'मन्दिर' बताया। इसलिये अलगम्मा के पार्थिव शरीर को एक 'लिङ्ग' के साथ अरूणाचल की दक्षिणी ढलान पर भूमि में गाड़ दिया गया जहां 'मातृभूतेश्वर' नाम से एक समाधि बनायी गयी। एक मास के बाद महर्षि स्वयं 'स्कन्द–श्रमण' से हटकर वहीं समाधि के निकट आ गये जहां कुछ वर्षों में श्री रमणाश्रम की स्थापना हुई। सन् १९४५ ई० में महर्षि के श्रद्धालुओं ने धन एकत्र करके वहां एक सुन्दर समाधि बनायी जो माता-पुत्र के अविभक्त प्रेम का सजीव उदाहरण प्रस्तुत करती है।

(भवन्ज जर्नल से साभार)
अनुवाद भारतबन्धु शर्मा

राम–हृदय

यदि आप कर्म के विधान को यह कहकर समझाते हैं कि वह तो ईश्वर की इच्छा है, बस उसी का काम है: यह स्पष्ट रूप से प्रश्न को टालना है: और प्रश्न को टालना विचारात्मक नहीं होता: उससे आपकी अज्ञानता प्रकट होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालक अढैया भक्त

गाजीपुर जिले में गायघाट गांव में एक किसान का लड़का था, उसके खास चार भाई थे। तीनों काम-काज में निपुण थे, किन्तु छोटा लड़का बहुत आलसी था। खाने में बहुत बहादुर था। पूरा ढ ई सेर खाता था, इसी से इसका नाम अढैया पड़ गया। सब लोग अढैया - २ कह कर कर पुकारने लगे। पिता के मर जाने के बाद अढैया को भाइयों ने घर से निकाल दिया। बेचारा रोता-कलपता घर से बाहर निकल पड़ा। जाते—जाते एक जंगल में जा पहुंचा। घनघोर भयंकर जंगल में उसे डर लग रहा था। अंधेरा हो चला था। वह बहुत घबराने लगा। कुछ दूर और जाने पर उसे एक संत की कुटिया दिखलायी दी। वह प्रसन्न होकर कुटी में जा पहुंचा। अढैया को देखकर बाबा जी पूछने लगे — बताओ, तुम क्या चाहते हो? अढैया ने कहा— मेरा कोई नहीं है। मुझे अपना शिष्य बना लीजिये। मैं आपका सारा काम कर दूंगा। सिर्फ पेटभर भोजन दे दीजिये।

संत महाराज ने उसको अपने पास रख लिया। कंठी - तिलक लगाने की विधि बतायी। राम-राम जपने को कहा। अब अढैया को कोई कष्ट नहीं था। प्रेम और प्रसन्नता से श्रद्धापूर्वक उस साधु की कुटिया में अढैया रहने लगा।

अढैया बहुत सीधा - सादा लड़का था और हृदय का बहुत साफ था। छल — कपट करना बिल्कुल नहीं जानता था। वह भगवान् का सच्चा भक्त था। खूब प्रेम से तथा सच्चे मन से विश्वास के साथ वह रामनाम बराबर रटा करता। रामनाम जपने में उसका बहुत मन लगता था। वह रोज गाय चराया करता और बराबर रामनाम का स्मरण करता रहता था। एक दिन एकादशी थी। बाबा जी ने कहा - बेटा। आज एकादशी है, आज तो मेरे यहां भोजन नहीं मिलेगा। तुम्हें भी आज उपवास करना पड़ेगा। यह सुनकर अढैया बोला — बाबा! और सब कुछ तो मुझसे होगा, लकिन बिना कुछ खाये नहीं रहा जायगा न मैं उपवास करूँगा और न ठाकुर जी को उपवास करने दूँगा। इसलिए सबसे अच्छा है कि मुझे खाने पीने का सब सामान दे दीजिये, मैं सामने के तालाब पर जाकर भोजन बना लूँगा। मन मसोसकर, दुःख मानकर अढैया को बाबा ने सीधा दे दिया। पर केवल अढैया के लिए ही दिया। इस पर अढैया बोला-और ठाकुर जी के लिए मैं कहां से लाऊंगा, उनके लिए भी दीजिये उनका हिस्सा क्यों बाकी रखते है? बाबा जी ने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हंसकर कहा–अरे पागल, ठाकुर जी भी कहीं खाते है, क्यों तू परेशान कर रहा हैं। अढैया ने समझा बाबा जी मुझसे हँसी कर रहे है, लड़का समझ कर भुला रहे हैं। उसने कहा नहीं - नहीं बाबा ठाकुर जो के लिए दीजिये। हमने सुना है कि वे जरूर खाते हैं।

अन्त में उससे हार मानकर, झुंझला कर बाबा जो ने थोड़ा - सा सीधा और दे दिया। एक छोटी सी सीताराम जी को मूर्ति तथा सीधा लेकर अढैया तालाब के किनारे चला गया।

गौओं को चरने के लिए छोड़ दिया और प्रेम से भोजन बनाकर पत्तलों मैं परोस दिया। अढैया श्रीसीताराम की मूर्ति के पास जाकर बोला– चलो, ठाकुर जी! भोजन कर लो।

ठाकुर जी काहे को उठें, मौन धारण किये सदैव की तरह बैठे रहे। पीतल के ठाकुर जी उठते कैसे। जब अढैया बहुत जोर - जोर से मुंह बनाकर चिल्ला - चिल्लाकर कहने लगा- अरे ठाकुर जी! इतनी देर क्यों करते हो? मुझे बड़ी भूख लगी है, आकर खाते क्यों नहीं? बाबा जी जरा सी घंटी डुला देते थे तो तुरन्त आकर गपागप खा लिया करते थे। आज मैं घंटों से चिल्ला रहा हूं तो सुनते ही नहीं। क्या मुझसे शर्मा रहे हैं चलो, मैं भी नहीं खाऊंगा।

यह कहकर अढैया रूठकर बैठ गया। इस पर भी ठाकुर जी तो नहीं आये। शाम हो गयी। अढैया चुपचाप बैठा ही रह गया।

अन्त में भगवान् अढैया का प्रेम और दृढ़ता देखकर रीझ गये। उनका आसन डोल गया सीता जी और राम जी दोनों पहुंच गये। उन्हें देखकर अढैया प्रसन्न तो हुआ, किन्तु उसे थोड़ा सा क्रोध भी आ गया। सीधा - सादा छोटा अबोध बालक। उसने झट धृष्टता के साथ भगवान् से कहा कि इतनी देर तक तो मुझे भूख ने परेशान किया, फिर आये तो, साथ में मेरी इज्जत बढ़ाने के लिये तथा सबको दिखाने के लिये इन महारानी जी को लेते आये। भला, औरत को सथ लाने की क्या जरूरत थी? अकेले आते डर लगता था? मेरे बाबा जी ने हमारे और तुम्हारे लिये ही सीधा दिया था। तुम बिना समझे - बूझे इन्हें साथ लेते आये। अब तो आधे - पेट ही रहना पड़ेगा। भगवान् अढैया की प्रेम भरी अटपटी बातें सुनकर हंसने लगे और अढैया का परोसा हुआ भोजन पाने लगे। अब दूसरी एकादशी आयी। अढैया ने उस दिन बाबा जी से तीन व्यक्तियों का सीधा मांगा। बाबा जी ने बिगड़कर कहा– अरे! मुझे ठगने चले हो? इस पर अढैया बिगड़ कर बोला– वाह, क्या मैं झूठ बोलता हूं। अढैया मेरा नाम ही भर है, ठाकुर जी मुझसे भी ज्यादा खाते हैं। इस पर भी दिखाने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिए साथ में स्त्री भी लाते हैं। मुझे बहुत बुरा लगता है। न विश्वास हो तो चलकर देख लीजिये न।

बाबा जी ने लाचार होकर तीन व्यक्तियों के लिये सीधा दे कर झंझट दूर किया। भोजन तैयार कर अढैया तीस पत्तलों में परोस दिया। मूर्ति के सामने जाकर कहा- चलो, ठाकुर जी! भोजन तैयार है। इतना सुनते ही भगवान् श्रीराघवेन्द्र श्रीसीता जी और लक्ष्मण जी के साथ फौरन पहुंच गये। अब तो लक्ष्मण जी को देख कर बिगड़ कर वह बोला- सुनो, ठाकुर जी! तुम धीरे - २ पैर फैला रहे हो। लालच बढ़ता जा रहा है। बिना बुलाये, बिना नेवता दिये आज तीन आ गये। तुमने तो आफत मचा दी। आज भी भूखों मरना पड़ा। भगवान् अपने सीधे साधे भोले भक्त की कटु वाणी सुनकर इतने प्रसन्न हुए कि जितने महाज्ञानी की स्तुति-प्रार्थना से भी नहीं हुआ करते।

इस तरह एकादशी - पर - एकादशी आती गयी। तीसरे में भरत जी चौथे में शत्रुघ्न जी भी पहुंच गये। उधर अढैया बिगड़ता था। इधर बाबा जी अलग क्षुब्ध थे। यह पता लगाना चाहा कि अढैया झूठ बोलता है या सच। जब पांचवी एकादशी आई, तब बाबा जी ने इस बात की जांच करनी चाही।

उस दिन अढैया ने छः व्यक्तियों का सीधा ले जाकर उसने तालाब के किनारे पटक दिया। क्रोध में आकर झुंझलाकर बोला- आज आओ, ठाकुर जी तुम्हीं लोग भोजन बनाओ। मैं तो अकेला खाता हूं; तुम पांच - २ जने टपकते हो। आज हमसे भोजन बनाना पार नहीं लगेगा। इस दिन हनुमान जी भी पहुंच गये। अब तो अढैया क्रोध के मारे उछलने-कूदने लगा। ठाकुर जी से कहने लगा - तुम्हें इतना समझाता हूं, पर तुम अपनी आदत से बाज नहीं आते। जान बूझ कर परेशान करने के लिए रोज एक-एक आदमी बढ़ाते ही जाते हो। हमारे बाबाजी का भी बेकार खर्चा कराते हो। इससे तुमको कौन सा लाभ है? ऐसा ही करना हो तो जिस वक्त बाबा जी के पास सीधा लेने जाता हूं, उसी वक्त क्यों नहीं मुझसे पहले ही कह देते हो कि, आज हम इतने आदमियों के साथ आयेंगे। व्यर्थ मुझे क्यों परेशान कर रहे हो रोज-रोज भूखों मारते हो। जिस समय सीधा लेने जाता हूं, उस वक्त तो तुम मौनी बाबा बनकर आसन पर बैठे रहते हो। मालूम होता है कभी कुछ खाते ही नहीं, न कुछ जानते ही हो। खाने के समय पलटन लेकर आ पहुंचते हो और ढेर के ढेर झटपट स्वाहा कर जाते हो। मैं इतना परिश्रम करके सीधा ले आता हूं, भोजन बनाता हूं, पर किसी दिन भी तुम लोगों के मारे पेट भर भोजन नहीं कर पाता। भगवान! क्या तुम यह चाहते हो कि मैं भूखों मर जाऊं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान् क्या कहते, मुस्कराकर रह गये। श्रीमाता सीता जी रसोई बनाने बैठी और हनुमान जी इधर-उधर का टहल-टिकोरा करने लगे। उधर बाबा जी पूजा पाठ से छुट्टी पाकर अढैया की जांच करने चले। जब वे तालाब के नजदीक पहुंचे, तब उन्होंने देखा कि पांच-छः जने भोजन कर रहे है। बाबाजी तो अवाक् रह गये। उनके लिए यह घटना अत्यन्त आश्चर्यजनक थी। महान् आश्चर्य में डूबकर वे जहां के तहां खड़े रह गये। उनको इस बात की चिन्ता हुई कि मैंने इतनी सेवा की, भगवान् ने मुझे कभी दर्शन नहीं दिया और यह गंवार मूर्ख बिना सेवा किये ही भगवान् का अपूर्व दर्शन पा गया। बाबाजी का मन ईर्ष्या की आग से जल गया। उसी समय भगवान् अन्तर्ध्यान हो गये। हनुमान जी अढ़ैया का हाथ पकड़ कर उड़ चले। ऐसा चमत्कार देखकर बाबाजी भी दौड़े। अढैया का बाबा जी ने पैर पकड़ना चाहा, किन्तु वे पकड न सके। निराश होकर रोने लगे। उन्हें रोते देखकर हनुमान जी ने कहा - तुम्हारा हृदय अभी मलिन है, निर्मल स्वच्छ पवित्र नहीं है। जितनी तुमने तपस्या की थी, उसके बदले में उतना फल तुमको मिल गया। तुम्हारी तपस्या से तुमको दर्शन मिल गये। अब शुद्ध मन से कुछ दिन और भगवान् का भजन करो। यह कहकर अढैया के साथ हनुमान जी भी साकेत धाम को चले गये। अढैया भक्त का जीवन सहज में ही बिना तप, जप, योग किये ही श्रीराम नाम के प्रताप से नाम रटने के फलस्वरुप सफल हो गया।

कर्मनिष्ठ देश-भक्त श्री वी० वी० गिरी

हमारे भूतपूर्व राष्ट्रपति श्री वी० वी० गिरी के निधन से उच्च विचारक देशभक्त और श्रमिक वर्ग के हितचिन्तक से, देश वंचित हो गया। वी० वी० गिरी की स्वतंत्रतासंग्राम में देन और मजदूरों के लिए त्याग सराहनीय है। मजदूरों के हित के लिए उनके प्रति निष्ठा का परिणाम यह था कि उन्होंने केन्द्रीय मंत्रीमण्डल से इस्तीफा दे दिया। एक बार वी० वी० गिरी से मिलने का अवसर मिला टाऊन डिग्री कालेज में हुआ था उस समय आप उ० प्र० के राज्यपाल थे। कितने सत्यवादी थे उनका हृदय कितना सरल था इसकी अभिव्यक्ति उनकी दो - चार बातों से होती है। १९५९ के मार्च के आसपास की घटना है उन्होंने हम बच्चों को नेहरू जी के बारे में अपना संस्मरण सुनाया कि मैंने मजदूरों के बिषय में पं० जवाहर लाल नेहरू से मत भेद होने पर केन्द्रीय मंत्री परिषद से त्याग पत्र दिया और नेहरु जी के प्रति कड़े शब्दों का प्रयोग किया, किन्तु उस महापुरुष ने मेरे उस कार्य को कभी मन में स्थान नहीं दिया, नेहरू जी का हृदय पवित्र प्रतिशोध से रहित स्नेहभरा था उनके प्यार का ही काम है कि यद्यपि में लोक सभा के चुनाव में हार गया और मेरा राजनैतिक जीवन एक प्रकार से समाप्त हो गया था ऐसे समय उनके विशाल हृदय ने मुझे उ० प्र० का भारत के सबसे अधिक का संख्या के प्रदेश का राज्यपाल बना दिया। ये संस्मरण वी.वी. गिरी की नेहरू जी के प्रति जहां कृतज्ञता प्रगट करता है वहां उसके अपने चरित्र को भी प्रगट करता है कितने महान केवल उनके हृदय में मजदूरों के लिए कितनी करुणा और प्यार था कि उसके लिए वह सभी अपनेसर्वस्व का उत्सर्ग करने के लिए सन्नद्ध रहते थे। ऐसे उस महान व्यक्तित्व की स्थानपूर्ति असम्भव दिखाई देती है रामदरबार परिवार के शोक संतप्त सदस्यों के साथ अपनी संवेदना प्रकट कसता है तथा रामचरणों में प्रार्थना करता है कि उन्हें धर्य्य व विवेक पूर्वक इस दुःख को सहने की क्षमता करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वभूत हिते रता :

ॐ

गुरुपूर्णिमा महोत्सव

वंदे बोधमयं नित्यं गुरूं शंकररूपिणम् ।
यमाश्रितो हि वक्रोऽपि चन्द्रः सर्वत्र वन्द्यते॥

आप सबको यह सूचित करते हुए अत्यन्त हर्ष होता है कि इस वर्ष गुरुपूर्णिमा महोत्सव परमश्रद्धेय आचार्य श्री स्वामी अमरमुनि जी महाराज की उपस्थिति में दिनांक २७ जुलाई १९८० तदनुसार रविवार को राजपुर आश्रम पर प्रातः ९ बजे से आयोजित किया जा रहा है। इस महोत्सव में समाधिपूजन, गुरुपूजन, गीतापाठ, यज्ञादि धार्मिक कृत्यों के साथ ही इसके महत्व पर पधारे हुए विद्वान प्रवक्ताओं द्वारा दिये गये प्रवचनों के श्रवण का भी लाभ होगा!

अतः इस अवसर पर आपको अपने इष्ट-मित्रों सहित रामदरबार सादर आमन्त्रित करता है।

निवेदक
काका हरिओ३म्
मंत्री-स्वामी रामतीर्थ मिशन
राजपुर, देहरादून
(उ०प्र०)

दूरभाष :- 4297 राजपुर
84225 देहरादून

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुण्य तिथि

रविवार, दिनांक ४ मई १९८० ई० को स्वामी रामतीर्थ मिशन (रजि०), दिल्ली के साप्ताहिक सत्संग में मिशन की प्रधाना श्रीमती मेलादेवी मल्होत्रा जी के स्वर्गीय सुपुत्र श्री स्वदेश मल्होत्रा की पांचवीं पुण्यतिथि के उपलक्ष्य में विशेष आयोजन किया गया है। प्रातः ८.३० बजे से १०.३० बजे तक स्वर्गीय श्री पं० दीनानाथ दिनेश भार्गव जी द्वारा लिखित समूची श्रीमद्भगवद्गीता के पदों का मस्वर पाठ किया। तदनन्तर रामस्तोत्र व संकीर्तन हुआ। इस अवसर पर सुप्रसिद्ध संगीतज्ञ श्री फकीरदास आजाद के सुन्दर भजन हुए। श्री स्वामी निर्मल चेतन जी महाराज ने गुरुवाणी का उल्लेख करते हुए जीवन की अस्थिरता तथा आत्मा के अमरत्व पर प्रकाश डाला। अन्य विद्वानों के उपदेश हुए।

प्रिय स्वदेश जी की पुण्यस्मृति को ताजा करते हुए उनकी माता श्रीमती मेलादेवी जी मल्होत्रा ने इस पत्र का उल्लेख किया जो उन्हें प्रिय पुत्र की ओर से प्राप्त हुआ था। उसमें लिखा था कि प्रभु की कृपा से हमें प्रायः सभी साधन सुलभ हैं और हम सब प्रकार प्रसन्न हैं किन्तु मुझे अपने उत्तर में कोई आध्यात्मिक उपदेश दें जिससे मन को शान्ति प्राप्त हो। इससे पूर्व कि उत्तर जाता स्वदेश जी इस संसार से विदा हो चुके थे। इस पर खेद व्यक्त करते हुए उनका मन भर आया।

अन्त में प्रसाद वितरण किया गया। प्रधाना जी ने सभी महान्माओं एवं विद्वानों के प्रति आभार व्यक्त किया तथा उन्हें सम्मानित भी किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ॐ

जो हमारे बीच न रहे।

अनादिनिधनं ब्रह्मशब्दतत्वम् यथाक्षरम्, विवर्ते अर्थभावेन प्रक्रियाजगतो यतः ।

शब्द तत्व का सार ब्रह्म, ब्रह्म का विस्तार शब्द, और जगत ब्रह्म का स्वरूप, ऐसा सार शब्दानन्द "आनन्दंवैब्रह्म" और ब्रह्म ही स्व, का स्वरूप प्रियता का मूर्तिमानरूप स्वामी सारशब्दानन्द आज उस प्यार के विग्रह से वंचित हो गये। हम उनसे मिल सकते हैं स्वप्न में, ध्यान में, क्योंकि वह हम सबका स्वरूप थे। जब भी ध्यान में बैठेंगे तो स्वप्नों में उनके दर्शन करेंगे। हम चर्मचक्षुओं से आज उनके प्यार भरे दिव्य स्वरूप को नहीं देख सकते।

उनके स्नेह और वरदहस्त के आनन्दमय स्पर्श से हम वंचित हैं। यादें आती हैं, कभी २ तो यादें सामने प्रत्यक्ष दिखाई देती हैं, जब देखते हैं तो सोचते हैं कि ये सब सत्य है या वो सत्य था।

गतः गत्व संक्षपः

सत्व के पुंज श्री संजय गांधी के आकस्मिक निधन से देश की अपूर्णनीय क्षति हुई। देश अपने सुनहरी स्वप्नों को श्री संजय के सपनों में से देख रहा था। देश का युवा-वर्ग और विचारक समुदाय श्री संजय गांधी के विचारों में अपने विचारों को पा रहा था। ये थी अद्भुत एकता की अनुभूति जो श्री संजय ने सब काल में स्थापित की। श्री संजय गांधी का अपूर्व-धैर्य, साहस देश-निष्ठा, प्रेम तथा देश के सुन्दर स्वप्न हम सबके स्वप्न बन के रह गये। ऐसे समय सभी राम प्रेमी अपनी भाव-भीनी श्रद्धांजली अर्पित करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"आश्रम समाचार"

आत्मविश्लेषण, आत्मस्वीकृति आत्मानुभूति जैसी व्यक्तिगत समस्याओं पर साधना-सप्ताह पर जहाँ विचार किया गया वहीं मानव के सहज स्वरूप मर्यादापुरुषोत्तम के जीवन पर विभिन्न दृष्टियों से अपनी अनुभूतिपरक विशिष्ट विवेचना पद्धति द्वारा प्रकाश डाला परमश्रद्धेय आचार्य स्वामी अमर मुनि जी महाराज ने। महाराज श्री ने श्रीमदभगवतगीता के दार्शनिक व मनोवैज्ञानिक स्वरूप से समुपस्थित साधकों को परिचित कराने का प्रयास किया यद्यपि सामान्ये-स्तर पर दार्शनिक विचारों को लाना कोई सरल कार्य नहीं है फिर भी शब्दों की पहुँच से परे के तत्व को अपने अनुभव के सहारे से आचार्य प्रवर ने उपस्थित श्रोताओं तक पहुँचाया। सांयकालीन आरती के पश्चात् महाराज श्री द्वारा ईशावास्योपनिषद् के मंत्रों का व्याख्यान किया गया। स्वामी स्वभावानन्द जी महाराज ने अपने सुमधुर हास्यमिश्रित प्रक्रियात्मक वेदान्त द्वारा साधकों की इस मान्यता को कि वेदान्त रूखा है अस्वीकार करते हुए हँसते २ उसके समूचे प्रक्रियात्मक स्वरूप को विश्लेषित किया इतने थोड़े से सप्ताह भर के समय में, अपने शरीर की परवाह किये बिना, अब आप स्वस्थ हैं [राम दरबार सदैव आपके स्वास्थ्य की शुभकामना करता है]

श्री स्वामी सारशब्दानन्द जी महाराज को श्रद्धांजलि देने के लिए महाराज श्री दिल्ली गये, वहां आपने इसे अध्यात्मजगत् की एक क्षति माना तथा पारमार्थिक दृष्टि से उनके वास्तविक, सारूप को उपस्थित किया।

आजकल आश्रम के परितः स्वच्छ व हरितरूपा प्रकृति के सौन्दर्य का अद्वितीय दृश्य है। वर्षा यहाँ दैनिक-चर्या के रूप में हो रही है। रामप्रेमियों का आवागमन अभी चल रहा है। शारीरिक व मानसिक ताप से संत्रस्तों के लिए शान्तमय तथा आनन्दमय है आश्रम का वातावरण। कुल मिला अपने नामानुरूप गुणों से युक्त हो शनैः-२ अपने उद्देश्यों की ओर बढ़ रहा है महान पुरुषों के संकल्पों का साकाररूप ये।

— सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूरभाष–८४२२५ राजपुर, ४२९७ देहरादून, तार का पता — (वेदान्त) देहरादून, रजि. नं डी. एन. १५

सूचना

१–मासिक पत्रिका 'राम सन्देश' न मिलने पर अपने समीपस्थ डाकखाने (पत्रालय) से पता करने के पश्चात हमें सूचित करें। क्योंकि कभी-किसी कारणवश "राम सन्देश" १५ ता० तक निकलता है। इसलिए शिकायत पत्र अपनी २ ग्राहक संख्या सहित दिनांक २० के बाद प्रेषित करने का कष्ट करें।

१–आप आश्रम में किसी भी प्रकार का धन भेजते समय यह लिखना न भूलें कि वह धन किस निमित्त भेजा जा रहा है तथा चैक स्वामी रामतीर्थ मिशन के नाम पर ही भेजें।

३–जो पाठक इस पत्रिका के आजीवन सदस्य बनना चाहते हैं वे अपना सदस्यता शुल्क सम्पादक के नाम प्रेषित करें। सदस्यों को आजीवन पुनः बिना किसी शुल्क के यह पत्रिका प्रेषित की जायेगी।

४–'राम सन्देश' के विदेशी ग्राहक अपना वार्षिक शुल्क १५ रु० भेजें। क्योंकि परमाध्यक्ष जी की आज्ञानुसार १२ रु० के स्थान पर ३ रु० वृद्धि का निर्णय लिया गया है।

५–पाठक अपनी अंक सम्बन्धी, प्रतिक्रियाएं, अवश्य भेजें, जिससे पत्रिका की उन्नति सम्भव हो सके।

६–अपनी रचनाएं – लेख, कविताएं भेजते समय स्पष्ट शब्दों में पृष्ठ की एक तरफ ही लिखें।

७–हर प्रकार की सामाजिक, शिक्षा सम्बन्धी, आध्यात्मिक या पारस्परिक तुलनात्मक आपकी लिखित वैचारिक भावनाएं सादर आमन्त्रित हैं।

—सम्पादक

बुक पोस्ट

ग्राहक संख्या 534,

श्री / श्रीमती Gurukul Pustkalya.

स्थान Gurukul Kangri University

डाकखाना

जिला Haridwar.

मासिक पत्र—

"राम-सन्देश"

स्वामी रामतीर्थ मिशन

राजपुर, देहरादून (उ०प्र०)

Pin—248009 भारत

स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून (उ० प्र०) के लिए प्रकाशक स्वामी अमर मुनि द्वारा न्यू आईडियल प्रिन्टिंग हाऊस (कांग्रेस भवन के पास) ४ बी नेशविला रोड, (देहरादून) में, मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम - सन्देश

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी
6/1/79

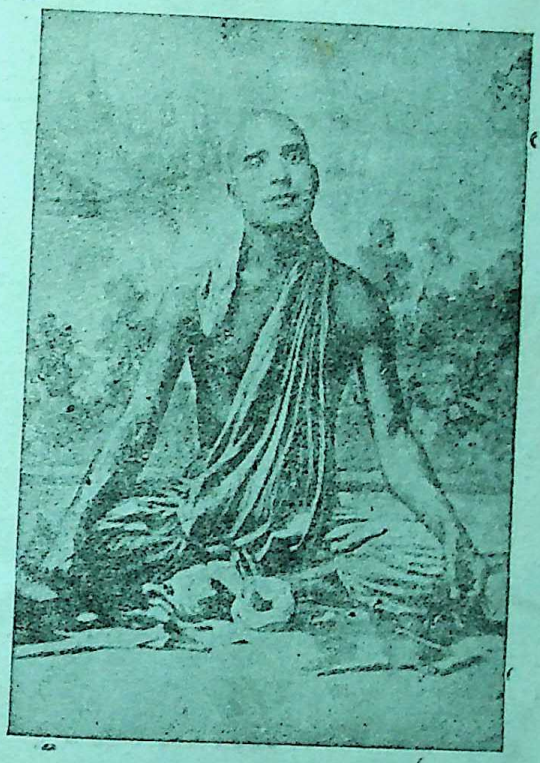

जनवरी १९८७ ई०

सस्थापक—
ब्रह्मलीन स्वामी हरिॐ जी महाराज

संवर्धक—
ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्दप्रकाश जी महाराज

व्यवस्थापक—
स्वामी अमर मुनि जी महाराज

सम्पादक—
काका हरिॐ "निर्द्वन्द्व"

आजीवन सदस्यता शुल्क—

भारत में — १०० रु०
विदेश में — ५०० रु०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* विषय-विज्ञान *

विषय	लेखक	पृष्ठ
तृप्ति	... श्री स्वामी विज्ञानानन्द जी अवधूत	१
मृत्यु के बाद	... स्वामी राम	२
श्रेष्ठ भक्ति	... संकलित	५
भाषण	... ब्रह्मलीन श्रीस्वामी हरिॐ जी महाराज	७
स्वामी हरिओम् लोकमित्र थे	... श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी	१०
राम-रूप	... (अध्यात्म रामायण से)	१३
रामायण चरित्र चित्रण	... श्री स्वामी तीर्थानन्द जी	१४
क्यों नहीं तुम आज आये ?	... श्री गुणानन्द जी थपलियाल	१६
"सम्पादकीय"	... ...	१७
सच कहना !	... "निर्द्वन्द्व"	१९
सदाचार का आधार पट सच्चरित्रता	... श्री वल्लभदास जी बिन्नानी	२०
स्वामी राम के समग्र ग्रन्थ	... ...	२३
वेदान्त व्यवहार में	... श्री बी० एस० पागे	२४
आश्रम समाचार	....	२५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

❀ ॐ ❀

'राष्ट्र के हित के लिए प्रयत्न करना ही विश्व की शक्तियों अर्थात् देवताओं की आराधना है'–स्वामी राम

वेदान्त, अध्यात्म, संस्कृति, धर्म एवं भक्ति का सजग सन्देशवाहक तथा
स्वामी राम के आदर्शों का एकमात्र लोकप्रिय मासिक—

राम सन्देश

वेदोपनिषदां तत्त्वम् सत्यं नित्यं सनातनम् ।
तत्सर्वं "रामसन्देशे" पत्रेऽस्मिन्नवलोक्यताम् ॥

वर्ष २८
अंक १

राजपुर– देहरादून— जनवरी १९७९.

वार्षिक भेंट १०)
एक प्रति ८५ पैसे

❀ तृप्ति ❀

खुले ज्ञान चक्षु से देखा जिधर है ।
उधर मैं ही मैं हूँ वहाँ कुछ न फिर है ॥

न बनने बिगड़ने का कोई जिकर है ।
न जीने की इच्छा न मरने का डर है ॥

न अच्छे बुरे की रही अब नजर है ।
नफा और नुकसान में भी सबर है ॥

हुआ सारा संसार अब बे कदर है ।
न मिलने बिछुड़ने में कोई उजर है ॥

गये सर्व चिन्ता से 'विज्ञान' तर है ।
समझ आपको हो गये बे फ़िकर है ॥

— स्वामी विज्ञानानन्द अवधूत

—❀—❀—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मृत्यु के बाद

१५ जनवरी, १९०३ को स्वामी रामतीर्थ जी द्वारा अमेरिका में दिया गया प्रवचन

[गताङ्क से आगे]

वेदान्त तो यह कहता है कि मृत्यु के बाद कोई भी व्यक्ति सदा के लिए एक ही स्थिति में नहीं रहता, मृत्यु के बाद जन्म और जन्म के बाद मृत्यु का घटित होना निश्चित प्रक्रिया है; मृत्यु शब्द का अर्थ है स्थिति में परिवर्तन होना। 'मृत्यु' कोई भयावनी अथवा घिनौनी स्थिति नहीं है। मृत्यु को ऐसा समझना हमारी बड़ी भूल है, मृत्यु तो खेलमात्र स्थिति में परिवर्तन होना है।

संसार में जीवित रह कर तुम जाग्रतावस्था को अनुभव करते हो, मृत्यु की अवधि अनुपातत: अधिक लम्बी होती है, इसको हम निद्रावस्था की संज्ञा देते हैं। जिस प्रकार अपनी २४ घण्टे की दिनचर्या में हम चार-पाँच घंटे सोने के अनन्तर जाग उठते हैं, उसी प्रकार मृत्यु के अनुभूत विश्राम के उपरान्त हम संसार में पुन: जाग्रतावस्था में लौटते अथवा जन्म लेते हैं, जो कि संसार में निद्रा के अनन्तर जग जाने की स्थिति है।

वेदान्त का मत है कि व्यक्ति मृत्यु के बाद तुरन्त दूसरा जन्म धारण नहीं करता है। किसी पेड़ से भूमि पर गिरा बीज तुरन्त वृक्ष के रूप में खड़ा नहीं हो जाता, इसके लिए कुछ समय अपेक्षित है। एक स्थान से दूसरे स्थान को जाने वाला व्यक्ति उसी समय अपने निर्दिष्ट स्थान पर नहीं पहुँच जाता। उसे एक घर छोड़ने तथा दूसरे घर तक पहुँचने में समय लगेगा। ऐसे ही 'मृत्यु' के बाद व्यक्ति को 'जन्म' की स्थिति में पहुँचने तक समय लग जाता है, यह अवस्था 'मृत्यु' अथवा सुप्तावस्था कहलाती है। आइये देखें कि यह मध्यवर्ती अवस्था कैसी है ? इसमें (जीवन में अनुभूत) सुप्तावस्था के सभी तत्व मौजूद होते हैं। आपको विदित है कि सुप्तावस्था में प्राणी स्वप्न-जगत् में जाकर उन्हीं पदार्थों को देखता है जिनसे वह जाग्रतावस्था में परिचित होता है। यह एक सामान्य नियम है, कुछ गिने-चुने मामलों में ही इस नियम में अपवाद हो सकता है।

विश्व विद्यालयों के विद्यार्थी राम के इस विचार से सहमत होंगे कि परीक्षा के निकट आने पर स्वप्नावस्था में जाग्रतावस्था के समान उन्हीं बातों की अनुभूति होती रहती है। जब परिणाम की प्रतीक्षा होती है तब भी परिणाम से सम्बद्ध स्वप्न आते रहते हैं, जो अनिश्चय की स्थिति के सूचक होते हैं। किसी विशेष व्यक्ति अथवा आकर्षक वस्तु के प्रति आकर्षित होने वालों को स्वप्न में भी वे प्राय: दीखते रहते हैं।

अपनी बी० ए० परीक्षा की तैयारी के दिनों में राम का कमरे में एक और विद्यार्थी साथी था, जो अधिकतर अपना समय सोने, खेलने, गाने-बजाने आदि में व्यय करता था। एक बार किसी ने उस छात्र से प्रश्न किया कि—"भई ! तुम प्रतिदिन कितने घण्टे पढ़ाई में व्यस्त रहते हो ?" वह मुस्कराया और बोला—"जी ! १८ घण्टे।" विस्मित होकर प्रश्नकर्ता ने कहा—"मैं तो तुम्हें चार-पाँच घण्टे नष्ट करते देखता हूँ और साथ ही तुम आठ-नौ घण्टे से कम सोते भी नहीं। तो १८ घण्टे की पढ़ाई कैसे होती है ?" दूसरी ओर 'राम' को देखो, जो कई विषयों की पढ़ाई में व्यस्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहकर अपने समय का एक मिनट भी नष्ट नहीं करता है, इस पढ़ाई के साथ साथ उसे चौगुना अतिरिक्त कार्य भी करना पड़ता है। वह विद्यार्थी बोला—"राम तो २४ घंटे पढ़ता रहता है।" चकित होकर वह सज्जन बोला—"यह बात भी मेरी समझ में नहीं आती, राम का समय सोने, स्नान, भोजनादि में भी व्यतीत होता है, तो फिर यह कथन कैसे सत्य होगा ?" उस विद्यार्थी ने बड़े विश्वास से कहा—"मैं इसे सिद्ध कर सकता हूँ, भोजन करते हुए भी राम अपने सामने कागज रखकर कुछ न कुछ लिखता रहता है, भले ही वह गणित का कोई प्रश्न हो, कोई वैज्ञानिक समस्या या दर्शनशास्त्र का कोई विषय, स्नान करते समय भी वह दीवार पर खड़िया (चॉक) से आकृतियाँ बनाता रहता है या कविता लिखने में ही लगा रहता है। सुप्तावस्था में भी वह स्वप्न में कुछ न कुछ करता रहता है। उसका अर्थ यह हुआ कि राम चौबीस घण्टे व्यस्थ रहता है।"

उस सज्जन ने धीरे से कहा—"यह तो सही है, परन्तु तुम कैसे १८ घंटे प्रतिदिन पढ़ाई में व्यतीत करते हो ?" उत्तर मिला—"राम २४ घंटे पढ़ता है और मैं १२ घंटे; इस प्रकार दोनों की औसत १८ घंटे निकली और मेरा यह कथन सही हुआ।"

उस छात्र की इस उक्ति में कुछ सच्चाई है, क्योंकि १८ घंटे पढ़ाई करने का दावा करने वाला विद्यार्थी स्वप्न में भी कुछ ऐसा ही कार्य करता रहता होगा। कुछ व्यक्तियों के इस कथन में कोई सच्चाई नहीं है कि उन्हें स्वप्न में ऐसे पदार्थों, व्यक्तियों आदि के दर्शन होते हैं जिन्हें उन्होंने इससे पूर्व कभी नहीं देखा। वेदान्त इसको नकारता है, कल्पना कीजिये कि एक व्यक्ति स्वप्न में एक ऐसे दैत्य को देखने की बात करता है जिसका शिर सिंह का, जिसकी पूँछ सर्प की, पीठ ऊँट की और पाँव कछुवे के थे। उसको स्पष्ट करने के लिए वेदान्त कहता है कि तुमने नर आकृति वाले व्यक्ति, सिंह, सर्प, ऊँट और कछुवे को तो पहले देखा है। तुम्हें दीखने वाले दैत्य में इन सबका सम्मिश्रण हो गया और तुम्हें आश्चर्य होने लगा, वस्तुतः तुम उन सभी आकृतियों से पूर्व परिचित थे, तुमने इन्हें जाग्रतावस्था में देखा था।

जिस व्यक्ति ने रूस देश देखा ही नहीं और न कभी उसके विषय में कुछ सुना है, उसको स्वप्न में सेण्ट पीटर्ज़बर्ग (तत्कालीन राजधानी) कभी नहीं दिखायी देगा। क्या कभी कोई दर्शनाचार्य्य (फ़िलास्फ़र) स्वप्न में मोची का कार्य कर सकता है, भले ही एक मोची उसके पड़ोस में रहता हो ? इस प्रकार अपनी मृत्यु की 'दीर्घ निद्रा' में तुम क्या अनुभव कर सकते हो ? वेदान्त कहता है कि यह काल तुम्हें 'स्वर्ग' अथवा 'नरक' के रूप में दृष्टिगोचर होगा, जो वास्तव में स्वप्न के दृश्यों से इतना भिन्न नहीं होता है।

एक निष्ठावान् धर्म-प्रवृत्ति का ईसाई प्रति रविवार को गिरजाघर में प्रार्थना के लिए जाता है। भोजन करने से पूर्व कृतज्ञता के रूप में अपने ईश्वर (गॉड) का धन्यवाद करता है, ईसामसीह के द्योतक 'क्रास' को सदा अपने पास रखता है और जीवन के क्षणों को ईसा मसीह के चिन्तन, आराधना आदि में व्यतीत करता है। ८० अथवा ९० वर्ष की अपनी संसार-यात्रा के अनन्तर वह चिर-वाञ्छित के अनुसार स्वयं को अपने आराध्य देव की दायीं ओर बैठने का सौभाग्य प्राप्त कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेता है और देव-दूत (उसकी धारणा के अनुसार) उसकी सेवा में उपस्थित रहकर उसका गुणगान करते हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं।

ऐसे ही एक सच्चा मुसलमान, जिसे क़ुरान शरीफ़ और हज़रत मुहम्मद से पूरी निष्ठा है और जो नियमानुसार पाँच बार नमाज़ पढ़ता है तथा ईमान के लिए प्राण भी न्योछावर करने को तत्पर रहता है, मृत्यु के बाद निश्चय से स्वर्ग (बहिश्त) में जाकर परियों (हूरों) आदि को प्राप्त करके सुख अनुभव करता है, क्योंकि उसने अपने जीवन काल में इस सुख का स्वप्न जो लिया था। रसूल पाक द्वारा निर्दिष्ट सभी सुख उसे स्वर्ग (बहिश्त) में प्राप्त होते हैं।

उपर्युक्त दोनों स्थितियों को प्राप्त करने का धर्मपरायण व्यक्तियों को सौभाग्य प्राप्त होता है। वे अपने कर्मानुसार अपने अपने आराध्य देव की दया से वाञ्छित फल प्राप्त करते हैं। भले ही वे संसार के किसी भी भाग अथवा देश में रहते हों। यहाँ वेदान्त अपना मत इस प्रकार व्यक्त करता है— इन धर्मनिष्ठों को ऐसी स्थिति प्राप्त होती है और उन्हें अपनी धारणा के अनुसार जीवनयापन करने का पूर्ण अधिकार है, किन्तु उन्हें यह घोषणा करने का क्या अधिकार है कि केवल उनके धर्म अथवा मत वालों को यह अवस्था प्राप्त होती है। ऐसी स्थिति अन्य मतावलम्बियों को भी अनुभव हो सकती है। वस्तुतः 'स्वर्ग' अथवा 'नरक' आपके जीवन काल के आपके स्वप्नों का ही प्रतिरूप है। आपका यह अनुभव है कि स्वप्नावस्था में हमें जो कुछ दिखायी देता है, वह यथार्थ प्रतीत होते हैं। ऐसे ही मृत्यु के अनन्तर 'स्वर्ग'–'नरक' आदि वास्तविक प्रतीत होते हैं, किन्तु वे स्वप्न के पदार्थों से इतर नहीं हैं।

कुछ व्यक्ति कहते हैं कि यदि उनके धर्मशास्त्रों में दिये गये आश्वासन यथार्थ हैं, तो मृत्यु के बाद उन्हें शाश्वत सुख या दुःख की अनुभूति होगी। इस आश्वासन का क्या कारण है ? वेदान्त की भाषा में 'शाश्वत' शब्द का अर्थ 'एक समयावधि' है, जो अनन्त है, आपको विदित है कि 'स्वप्न-जगत' से 'जाग्रतावस्था' भिन्न होती है और इन दोनों के समय (काल) में भी अन्तर होता है, कल्पना कीजिये कि जागतावस्था में आपके सामने एक पर्वत आकर खड़ा हो जाता है, वही पर्वत स्वप्नावस्था में आपको ५०० वर्ष का प्राचीन भी हो सकता है। वेदान्त की धारणा है कि स्वप्नावस्था में प्राप्त 'स्वर्ग'–नरक' आदि अनादि (बहुत लम्बे) प्रतीत होते हैं, जब कि जाग्रतावस्था में ऐसा अनुभव नहीं होता। इस प्रकार मृत्यु के बाद की स्थिति के विषय में वेदान्त भिन्न धर्मों या मतों में समाधान करता है।

यह 'जन्म' तथा 'मरण' अवस्था क्या है ? हम किन महापुरुषों को 'मुक्त' मानते हैं ? वेदान्त के अनुसार मृत्यु के बाद प्रत्येक व्यक्ति 'स्वर्ग' या 'नरक' की अनुभूति नहीं करता है और न तुरन्त जन्म ही लेता है, ऐसी पावन आत्माएँ भी हैं जो जन्म-मरण से 'मुक्त' रहती हैं और जिनपर 'स्वर्ग'–'नरक' आदि के बन्धनों का कोई प्रभाव नहीं होता। यथार्थ में 'स्वर्ग'–'नरक' आदि उनकी अन्तरात्मा में व्याप्त रहते हैं। यह उक्ति सर्वथा सत्य है कि इन 'मुक्तात्माओं' के भीतर समूचा ब्रह्माण्ड रहता है।

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रेष्ठ भक्ति

श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान् ने अपने भक्तों को आर्त (दुःखी) जिज्ञासु (ज्ञान की इच्छा वाला) अर्थार्थी (लोक, वित्त, पुत्र, कलत्र आदि पदार्थों को चाहने वाला) इन चार विभागों में विभक्त करके ज्ञानी को अपना आत्मा निरूपण किया है। 'ज्ञानी-स्वात्मैव मे' ज्ञानी तो मेरा आत्मा ही है। श्रुति भी कहती है—'ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति, अयमात्मा ब्रह्म तत् त्वमसि' इत्यादि। अतः श्रुति-स्मृति-समन्वय से वह निश्चय होता है क अद्वैतात्मज्ञानवान् ही सर्वश्रेष्ठ भक्त है, तथा अद्वैतात्मबोध ही परा-भक्ति है। 'आत्मनस्तु कामाय सर्वं प्रियं भवति' इत्यादि लोकसिद्धार्थानुवादिनी श्रुति से यह निर्विवाद सिद्ध है कि अपने आप में ही मुख्य प्रीति है, और अपने से भिन्न पदार्थों में अपने लिए ही प्रीति है, उनमें तथा आत्मा में उन पदार्थों के लिये प्रीति नहीं है, अतः आत्मा से भिन्न पदार्थों में गौणी प्रीति है। इस न्याय से यह निर्णय हुआ कि स्वभावतः (अज्ञानतः) प्राप्त जीवेश्वर भेद-विषयक दृष्टि जब तक विद्यमान है तब तक ईश्वर में जो भक्ति (रति=प्रीति) है, वह ईश्वर के लिये नहीं, अपने लिये है, अतः वह परामुख्या भक्ति नहीं प्रत्युत अपरा (गौणी) है। जो भक्त 'तत्व' पदार्थ का शोधन करके अद्वैतात्मदर्शनरूप महावाक्यार्थ-ज्ञान से सम्पन्न है अर्थात् अद्वैतात्मदर्शी है, उसी की ईश्वर में परा (मुख्या) भक्ति है, अतएव वही ईश्वर का परभक्त है, क्योंकि ईश्वर का वह आत्मा है और ईश्वर उसका आत्मा है और इसीलिये श्रीभगवान् कहते हैं कि मैं ज्ञानी के लिये अत्यन्त प्रिय हूँ और ज्ञानी मेरे लिये अत्यन्त प्रिय है।

'तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते।
प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं स च मम प्रियः॥'

मेरे भक्तों में से ज्ञानी विशिष्ट (श्रेष्ठ) भक्त है, क्योंकि वह नित्ययुक्त' है और 'एक भक्त' है। आर्त भक्त का आर्ति से छूटकर, जिज्ञासु का ज्ञान पाकर, और अर्थार्थी का अर्थ को पाकर भक्ति से विरत हो जाना सम्भव है, अतः यह तीनों भक्त नित्ययुक्त नहीं हैं और अज्ञानी होने के कारण 'एकभक्ति' भी नहीं है। परन्तु अद्वैतात्मदर्शी 'एकभक्ति' है। 'यह जगत्, मैं और ईश्वर एक (अभिन्न) ही है, जिस पुरुष की ऐसी अन्तःकरण-वृत्ति है, वह 'एकभक्ति' कहाता है, इस प्रकार सर्वभूतात्मभूतात्मा पुरुष ही निर्व्याज भक्त है, अतएव भागवतोत्तम है और उसी की भक्ति 'परा' भक्ति है।

एक भक्त-श्रेणी ऐसी भी है जिसका यह विश्वास और निश्चय है कि यह जगत, जीव और परमेश्वर परस्पर विभिन्न हैं, तथा वह भेद पारमार्थिक (सत्य) है। तथापि 'सर्वं वासुदेवः, सर्वं खल्विदं ब्रह्म' इत्यादि शास्त्रविधिवशात् जगत्, जीव और ईश्वर में अभेद का आरोप (आहार्य्य-बुद्धि) करके वह भक्त-श्रेणी, मैं और यह विश्व नारायणस्वरूप हैं, ऐसी उपासना निष्कामभाव से करती है, इस श्रेणी का पुरुष भी अतिशीघ्र ज्ञानवान हो जयेगा, क्योंकि जो अभेद उसकी दृष्टि से आरोपित है वह वस्तुतः यथार्थ है, संवादिभ्रमवत् वह दृष्टि भगवदनुग्रह से शीघ्र ही यथार्थ अद्वैत-बोधरूपता को प्राप्त होती है, इसी अभिप्राय से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रिष्ट लोगों की यह उक्ति प्रचलित हुई है कि 'भक्तिर्ज्ञानाय कल्पते'। भक्ति ज्ञानरूप में परिणत होती है, अतः ऐसे भक्त को भी भागवतोत्तम ही मानना चाहिए। ऐसा महात्मा भी सुदुर्लभ है। यद्यपि इन दोनों भक्तों में ज्ञानाज्ञान प्रयुक्त भेद अवश्य है तथापि भेद-दृष्टि-भक्त भी सत्वर ही अभेद-दृष्टि हो ही जाता है, अतः 'इदानीं भागवतोत्तमजातीय' होते हुए भी भावी विचार से वह भागवतोत्तम है।

निष्काम-भक्ति से आराध्यमान परमात्मा शीघ्र ही आकृष्ट होता है, अहैतुकी भक्ति से बढ़ कर भगवान् के वशीकरण के लिये कोई मन्त्र-तन्त्र नहीं है। 'भक्तिप्रियो माधवः' माधव भक्तिप्रिय हैं, या माधव भक्तप्रिय हैं और 'भक्तो माधवप्रियः' भक्त माधवप्रिय है। अन्यान्य प्रेमाभिभूत हो एक दूसरे का परित्याग या वियोग सहन कर नहीं सकते। भक्त लोग यद्यपि निःस्पृह हैं तथापि भगवान् उनके हृदय-कमल में निविष्ट होकर उनके पापपुञ्ज को निःशेष विनष्ट कर देते हैं और उनके योगक्षेम को स्वयं वहन करते हैं, यह उनकी प्रतिज्ञा है—

कौन्तेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति॥
अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥

(संकलित)

— ❀ • ❀ —

बैलगाड़ी के बैल — विवेक और वैराग्य

मोक्ष को जाने वाली गाड़ी की धुरी और वाहन हमें बैलगाड़ी बताती है। क्योंकि बैलगाड़ी में दो बैल विवेक व वैराग्य के प्रतीक हैं। मनुष्य की जीवनरूपी बैलगाड़ी जब विवेक व वैराग्य के बैलों द्वारा चल रही होती है, तो उसे लक्ष्य तक पहुँचने में देरी नहीं लगती। विवेक हाथ में एक टार्च सरीखा है, उसे हाथ में लेकर मनुष्य घोर अन्धकार तथा भयंकर स्थानों में भी जा सकता है। वैराग्य मनुष्य को मोह व काम इत्यादि के फन्दे के अन्दर अटकने नहीं देता। वैराग्य लक्ष्य को सदा सामने रखता है, कभी ओझल नहीं होने देता। इस कारण लक्ष्य के सम्मुख होने के कारण मनुष्य लक्ष्य की ओर चलता है।

बैलगाड़ी में एक धुरा होता है, दोनों पहिये उस धुरे के आश्रित चलते रहते हैं। इसी प्रकार मनुष्य का द्वैत व्यवहार एक अद्वैत आत्मा के सहारे चलता है। क्योंकि व्यवहार में तो द्वैत होते हुए भी परमार्थतः अद्वैत ही है।

— हरिकिशनदस अग्रवाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१४-८-१९५५, प्रातः १० बजे, अलीगढ़ में ब्रह्मलीन श्रीस्वामी हरिॐ जी महाराज का—

❀ भाषण ❀

यह शरीर दो भागों में बटा हुआ है, प्रकृति और पुरुष दोनों ही भिन्न हैं। यही जुगल जोड़ी है, राधा-कृष्ण, सीता-राम, प्रकृति और पुरुष। इसी से सृष्टि का निर्माण हुआ है। परन्तु जैसे बच्चे में माता-पिता दोनों का अंश होता है, वैसे ही प्रकृति और पुरुष में परमात्मा का अंश होता है। ऐ मनुष्य ! तेरे में दूसरा भाग सत्य चित् और पूर्ण आनन्द का है कैसे ? जैसे सबको बच्चों से प्यार है। सर्पणी का स्वभाव है बच्चों को पैदा करना और पैदा करते ही उन्हें खाने लगती है। इसी तरह माया प्रकृति जीव की माता तो है, परन्तु जीव को भूल में डालते रहना इसका स्वभाव है। जिसका जैसा स्वभाव बन जाता है, वह वैसा ही करता रहता है। इसी प्रकार प्रकृति माता का स्वभाव है। यही चाहती है कि सब दुखी हों, माता-पिता इसको समझते हैं, स्वयं बहुत दुःखी हो रहे हैं। एक मनुष्य देख रहा है कि मैं इसमें तप रहा हूँ। परन्तु वह अपने बच्चों को भी वैसा ही बनाना चाहता है। साधु यह चाहता है कि सब साधु ही बने, गृहस्थी ग्रसा हुआ है, फिर भी वह यह चाहता है कि दूसरे भी ऐसे ही बनें, सन्तान कितनी जीवन की समस्या है। यदि किसी ने गृहस्थ देख लिया, परन्तु सन्तान उत्पन्न नहीं होती, तो उसके लिए रात दिन यही प्राथना करते हैं कि हे भगवान् ! इसे बाल बच्चे दो, वह प्राणी यही चाहता है कि सब मेरी तरह ही हो जावें। सर्पणी बच्चों को पैदा करती है और उसी समय खा जाती है। परन्तु कोई भाग्यवान उनमें से निकल भागता है, उसी प्रकार गृहस्थी भी अपने बच्चों को ग्रसने की चेष्टा करते हैं। शायद कोई भाग्य वाला सर्पणी के बच्चों की तरह निकल भागे, परन्तु नहीं तो वह खा ही जाती है। संसार में खाया, पिया और सो गये— इसके अतिरिक्त भी कोई कार्य है ? यह मनुष्य का लक्ष्य जो है, नीच श्रेणी का है, इससे ऊँचे भी लक्ष्य हैं— अपनी आत्मा को पहचानना; यह संसार तीन तापों में जल रहा है, उनसे निकल भागना यह भी सर्पणी के बच्चे के समान चतुराई है।

सारे जीव मोह, ममता के अन्दर फँसे पड़े हैं। चिन्ता न करो, वस्त्र छोड़ने से क्या होगा ? बच्चे छोड़ने से क्या होगा ? मन को छोड़ना चाहिए। माया का परित्याग करना चाहिए। काला सर्प तो मन है, उसका परित्याग नहीं किया जायेगा तो कोई फायदा नहीं। प्रत्येक वस्तु ममत्व से बँधी हुई है।

यदि किसी दूसरे का बच्चा बड़ा गुणवान् है, समझदार श्रेष्ठ है, परन्तु हम उसके लिए दो आने भी खर्च नहीं कर सकते और अपना बच्चा चाहे मूर्ख है, पागल है, तब भी उसके लिए हम लाखों रुपये खर्च करने को तैयार रहते हैं। योग्य बच्चा है, परन्तु माँ-बाप के पास पैसा नहीं, तो हमें उसे उत्साह देना चाहिए। उसे अपने बच्चे के तुल्य समझ कर खर्च करना चाहिए। काबिल इन्सान वह है जो दूसरे के काम आवे। राम जैसे महापुरुष कहते हैं— यह अन्याय क्यों ? मनुष्य जब पैदा होता है— माँ के अभी कोख में ही होता है, तो माँ की यही भावना होती रहती है कि मेरा पुत्र इतने दिनों का हो गया। ज्यों ही वह बाहर आता है— तो माँ-बाप कहने लगते हैं— मेरा पुत्र, मेरा पुत्र, वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीव कितना ही भाग्यवान् क्यों न हो, माँ ने जो पहले ही ममता की भावना उसमें भर दी। ममता की ग्रन्थि डाल दी, वह इस तरह मजबूत हो जाती है कि फिर वह टूटती नहीं। यह ममता मनुष्य की कुछ स्त्री में, बच्चों में और कुछ धन-दौलत में फँसी हुई है। वह इन चीजों को ही सब कुछ समझता है, उन्हीं को ही अपना समझता है। बच्चे बड़े होकर चाहे जवाब दे जाते हैं, उनको फिर भी अपना ही समझता है, नौकर तेरी इतनी सेवा करते हैं, परन्तु उनको तू फिर भी अपना नहीं समझता, तेरी यह क्या लीला है ? केवल मेरा-मेरा करते-करते पशुवत् जीवन बन जाता है। जिस सीढ़ी से चढ़ते हैं, उसी से ही उतरते हैं; यह मोह अन्याय वृत्ति निकल जावे तो यही जीव ईश्वर से मिल जावे। जो मनुष्य प्रकृति रूपी माता के आधीन रहता है, वह पशु है, मूर्ख है। वह जड़ परिछिन्न है, वफा की उम्मीद न रख, ज्ञानी और अज्ञानी में फरक यही है। दोनों ही एक ही कार्य का प्रयत्न करते हैं, जैसे दोनों के पास गायें हैं। दोनों बीमार हो जाती हैं। दोनों डाक्टर के पास ले जाते हैं। दवाई इत्यादि करते हैं, परन्तु वह दोनों नहीं रहतीं; तो ज्ञानी कहेगा कि प्रभु मेरा कर्तव्य पूर्ण हुआ, इसकी जान निकलना तो तेरे हाथ में है, प्राणपति तो तू है, मैं नहीं। तेरी इच्छा है।

बस, इसके बाद न उसे हर्ष होता है और न शोक होता है। अज्ञानी यह नहीं समझता कि प्राणों का रहना या न रहना यह मेरा अधिकार नहीं। वह बड़ा दुखी होगा, रोयेगा, पीटेगा। ज्ञानी पुरुष चीजों को कुछ नहीं समझता, वह सब कुछ भगवान् को ही समझता है। वह तो केवल अपने खेलों का प्रदर्शन करता रहता है। एक ज्ञानी बाल बच्चों का पालन करता है। अगर उससे यह पूछा जाय कि यह तुम्हारे हैं ? वह कहेगा कि यह भगवान् के हैं, मेरे नहीं हैं। जैसे अस्पताल का फर्नीचर डाक्टर साफ करवाता है, झड़वाता है। अगर उसको कोई उठाने लगेगा तो उसे कहेगा कि तुम कौन हो ? उसका कर्तव्य है कि उसकी देखभाल करे। ज्ञानी पुरुष बच्चों की देखभाल वैसे ही करता है, जैसे अज्ञानी करता है। परन्तु ज्ञानी उन पर अहंता की मोहर नहीं लगाता। डाकखाने की सभी कुर्सियों पर R. M. S. लिखा रहता है। यह उस डिपार्ट की हैं, उसे कोई नहीं चुरा सकता। इसी प्रकार प्रत्येक वस्तु पर, बच्चों इत्यादि पर यह Stamp लगा देनी चाहिए। भगवान् की मोहर लगा देनी चाहिए। अपनी अहंता की मोहर नहीं लगानी चाहिए। अपने शरीर पर भी भगवान् की मोहर लगानी चाहिए कि हे भगवान् ! यह शरीर मेरा नहीं है। स्वामी राम लिखते हैं— गृहस्थ में कमल के समान रहो— यदि संसार में ही उत्पन्न हुए तुम्हारी वृत्ति संसार से उठी रहे, जिस प्रकार कमल जल में उत्पन्न होता है, परन्तु फिर भी जल में नहीं भीगता। उसी प्रकार मनुष्य ! तुझे संसार में रहना चाहिए। अज्ञानी का पुरुषार्थ फेल हो जाता है तो रोने लगता है। परन्तु ज्ञानी नहीं रोता, वह समझता है कि बच्चों का पालन-पोषण करना मेरा कर्तव्य है। लिखा-पढ़ा दिया, शादी इत्यादि कर दी, इससे ज्यादा मेरा और कोई कर्तव्य नहीं और कोई मतलब नहीं, वेदों में ४ आश्रम बताये गये हैं। २५ वर्ष की उमर में शादी, ५० वर्ष की उमर में वानप्रस्थ आश्रम, ७५ वर्ष तक उसमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहकर फिर संन्यास ले लेना, नारायण की ज्योति में ज्योति मिलाना, परन्तु हम इसे जानते नहीं, यह जीवन पुरातन है। जैसा जैसा अभ्यास करता है, वैसा ही होता जाता है, पंखे में केवल एक ही चीज, लोहा ही नहीं होता। बल्कि उसमें करेण्ट भी होती है। जिससे वह चलता है। अगर उसमें करेण्ट ही न हो, तो फिर वह लोहा किस काम का। इसी तरह शरीर है। उसमें दूसरी वस्तु आत्मा है। एक बाहर का शरीर है और दूसरी वस्तु जो करेण्ट रूपी आत्मा है, वह उसके भीतर है, जिससे शरीर रूपी लोहे का संचालन होता है, परन्तु हमारी वृत्ति बालबच्चों तथा अपने शरीर तक ही सीमित है— जिसका रूप असत्य है— वह तेरी वृत्ति को बनाये भी, परन्तु यदि तेरी वृत्ति उसको पहिचानना शुरू करेगी, तो तेरी वृत्ति सत्-चित्-आनन्द का अनुभव करने लगेगी। Examinar यह नहीं देखते कि तू स्कूल में पढ़ा या घर में। घर पढ़ा या बाहर, किसी बाग में, दिन में पढ़ा या रात में, वह तो केवल पेपर ही देखेगा, पेपरों से ही उसका मतलब है, पढ़ने से नहीं। इसी प्रकार तुम घर में रहकर भजन करो या त्यागी बनकर जंगलों में जाकर करो— परन्तु जब तक तुम इस प्राबलम को हल नहीं करोगे कि मैं क्या हूँ ? किसका कहला रहा हूँ ? जब तक जीवन रूपी यह प्रश्न हल नहीं करोगे, तब तक तुम घर रहो या वन में, शादी की है या नहीं की, बच्चे हैं या नहीं हैं। पेपर में तो यही देखना है कि तुमने कितने शुभ कार्य किये हैं। कर्मों को देखा है या नहीं।

भगवान् को तो केवल शुभ कर्म ही देखने हैं। उसे यह नहीं देखना है कि आप क्या खा रहे हैं ? साधु बने या गृहस्थी रहे। उसे तो केवल सत्-चित्-आनन्द ही देखना है। हमारा सबसे पहला फर्ज यही है— हम अपने को पहचाने कि हम क्या हैं। क्या करने आये हैं और क्या कर रहे हैं।

ओ३म् शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!

—❀०❀—

टिकट — ज्ञानी तो हर समय टिकट लिये ही बैठा है। शरीर चाहे जब छूट जाए। वह अपने निज ज्ञान से मुक्त ही है।

दानी — दान देने के बाद— उस दिये धन से रहित धन-हीन को भी दानी कहते हैं। धन-हीन भी दानी होते हैं। केवल भाव का फर्क है।

दुनिया का द्रष्टा— दुनिया तो देखते-देखते मिट जाती है। द्रष्टा में भिन्न नहीं हो पाती। परन्तु अपने को जानना होता है। अपनी ही कल्पनाओं की जब आप उत्पत्ति करता है तो द्रष्टा बनकर देखता है और अपने को अपना ही स्वरूप समझने के लिये ज्ञात हो जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी हरिओम् लोकमित्र थे

स्वामी ब्रह्मानन्द जी

सापेक्ष संसार में कोई भी घटना असकृत् नहीं हो पाती है, भले ही धरणी चक्र लगाकर प्रस्थान स्थल पर पहुँच जाय, किन्तु पहुँचते ही पुनः प्रस्थान करती है और अपने संक्रमण में संरत हो जाती है। अनन्त काल से यह प्रक्रिया प्रचलित है तथा अनन्त काल तक गतिमती है, किन्तु विश्वधिक नहीं। आगमन और निर्गमन की परम्परा व्याप्त है, आगमन की घटना सकृत् होती है एवमेव निर्गमन की। कितना अच्छा होता यदि ये घटनाएँ असकृत् होतीं, किन्तु एकात्वच्छेदेन घटना साधारण-तया सकृत् ही होती हैं। समयानन्तर में तत्सम घटना हो जाती है। जन्म तथा निधन सकृत् घटना हैं। आविर्भाव की एक घटना है, एक काल में, एक देश में, एवमेव तिरोभाव की भी सकृत् ही घटना है। लोक में जन्म पर सभी प्रकार के प्रसादक उत्सव मनाते हैं तथा निधन पर विषादक यात्रा का अनुभव होता है। जनन तथा मरण जीवन की घटना है, ये सकृत् होती हैं, कभी किसी जात शिशु का पुनर्जन्म नहीं होता है, मरण के अनन्तर ही सम्भवतः पुनर्जन्म का विश्वास है, यह पुनः की प्रथा विश्वासमूलक है और कारण हैं कर्म एवं कर्मफल। जब तक कर्मक्षय नहीं होता है, तब तक जीव "यस्यमिव जायते म्रियते च।" जन्म से निधनपर्यन्त लोक में कोई किसी का आकर्षक अथवा विकर्षक होता है। तभी तक कोई मित्र है, कोई अमित्र तथा काई कुछ भी नहीं; यही सापेक्षता है, निधन होते ही प्राणी वर्तमान शरीर को छोड़ कर अदृश्य हो जाता है। इसके पश्चात् की घटनाओं में विरलजन ही रुचि रखता है, स्थूल तनु का सब प्रसार है, खेल है, मेला है, झमेला है; स्थूल के अतिरिक्त सूक्ष्म एवं कारण शरीरों की भी धारणा प्रचलित है। जिस शरीर का प्रत्यक्ष निश्चैतन्य गोचर होता है, वह सदा के लिये हेय हो जाता है, उसे ममी के रूप में संगृहीत रखना विश्वासियों की आस्था पर आश्रित है। जीवित शरीर से ही सबका येनकेन प्रकारेण सम्बन्ध है, प्रतिच्छाया स्मारिकामात्र है, समय समय पर प्रतिच्छाया के साक्षात्कार होने पर पुरुष विशेष का स्मरण हो जाता है। उसी प्रतिच्छाया को पुरःसर कर समय समय पर स्मृति दिवसोत्सव सम्पन्न होते हैं। जन्मोत्सव तो सभी मनाते हैं, निधन के अनन्तर भी यह प्रथा प्रचलित रहती है, किन्तु निर्वाणोत्सव विरल रहता है। आय से लाभ होता है और लाभ हर्षमूलक है, व्यय से हानि होती है, एतावता अवसादक है। आय-व्यय सापेक्ष हैं, एक के बिना दूसरे की सत्ता सम्भव नहीं। आय-व्यय का अपना महत्त्व है, दोनों सोद्देश्य हैं, जन्म से लाभ है, क्योंकि उत्तराधिकारी मिल गया, अतः समारोह मनाना अच्छा ही है, निधन से हानि, क्योंकि आशा पर पानी फिर गया। शिशु के जन्म से सबको हर्ष होता है, किसी को नहीं भी होता है, किन्तु शिशु के निधन पर किसी को प्रसन्नता नहीं होती है। आयुस् पूर्ण होने पर किसी का निधन सर्वथा विषादक नहीं होता है, किन्तु अल्पायु ही चल दे, तो बहुत कष्ट होता है, दुःख होता है, पुनः पुनः उसका स्मरण होता है। विशेष कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब जाति को अत्यावश्यकता हो, ऐसी अवस्था में वह छोड़ कर चल दे तो उतना दुःखात्मक नहीं होता है, यह अवसर की बात है।

बुद्ध का जन्म और निर्वाण उसी पूर्णिमा को हुआ। यद्यपि अस्सी सम्वत्सर के अनन्तर एवमेव स्वामी दयानन्द तथा स्वामी रामतीर्थ का जन्म तथा निर्वाण दीपावली को हुआ। अतः समारोह सदा प्रसादक ही हैं। दिन विशेष तथा तिथि विशेष की कल्पना भी विश्वासमूलक है। ज्योतिष के आधार पर तिथि-नक्षत्र-वार-पक्ष-मास, यान तथा सम्वत्सर विशेष का जन्म-मरण के लिये अपना महत्त्व है। एवमेव धर्मशास्त्रियों ने संस्कारों पर बल दिया है, कब क्या औचित्यपरक है तथा क्या अपकारक शास्त्रकृत हैं, जिनका मूल अनुभव है, परम्परा व्यवस्थापक है। जगत् अनुभवमूलक नहीं मायापरक तथा अविद्यामूलक है। कब जन्म हो और कब निधन सब आचारपरक है, किन्तु वस्तु-परक जगत् नियमों पर नहीं चल सकता है। उत्तरायण तथा दक्षिणायन, कृष्णपक्ष तथा शुक्लपक्ष की विशेषता विश्वासमूलक है। वास्तव में जगत् परमेश्वरकर्तृक है एतावता ईश्वर की सृष्टि किसी भी अंश में सदोष नहीं हो सकती है। इसका विशदीकरण पश्चिमी दार्शनिक श्री लाइब्निट्स ने किया है; पूर्ण परमेश्वर अपूर्ण जगत् का स्रष्टा क्यों? सदोष विश्व का कर्ता निर्दोष कैसे? क्या ईश्वर अपने सदृश ही निर्दोष, सर्वगुण सम्पन्न, पूर्ण जगत् की सृष्टि नहीं कर सकता था? यदि नहीं कर सकता था, तो वह निर्दोष, सर्वगुण सम्पन्न, पूर्ण कैसे हो सकता है? वह पूर्ण भी है, निर्दोष भी है, सर्वगुण सम्पन्न भी है; किन्तु वह जगत् को अपने सदृश नहीं बनाना चाहता था, तो वह भला ईश्वर कैसे हो सकता है? ये विचार तर्कणापरक हैं, जिनका कोई निष्कर्ष नहीं। समस्त जीवन और जीवनयात्रा विश्वासपरक है, अतः प्रभु की सृष्टि में कुछ भी अपूर्ण, सदोष, निर्गुण नहीं। सभी दिन राम के हैं, सभी संसार राम का है। निधन भी सभी दिनों में सम्मत है। सारी भूमि गोपाल की है, सारा समय प्रभु का है, अतः कोई कहीं शरीर त्यागे, कभी शरीर छोड़े, सभी समीचीन तथा उचित है। जीवन के रहते जीवन का युक्तियुक्त उपयोग करना ही अच्छा है।

लोक में पूर्व का आदर होता है, उसी से हर्ष होता है, उसी को मनाते हैं। किन्तु अभिज्ञजन उत्तरपक्ष का भी उसी प्रकार सम्मान करते हैं, वह भी प्रेरणास्रोत होता है। अपने समय का सदुपयोग करना जो जानता है उसी का जन्म हर्षमूलक है, उसी की स्थिति सन्तोषकर है और उसी का जीवन सार्थक है। समय गतिमान् है, देश परिवर्तनशील है। अभिज्ञ महानुभाव जानता है, अतः तदनुसार अपनी चर्या बना लेता है, वह जीवित है, अपने लिये, दूसरों के लिये। यह दूसरों पर निर्भर है, वह किसके लिये प्रेरक सिद्ध होता है, किस के लिये नहीं। सामान्यजन महापुरुष के जीवन पर भी सन्देह करता है, किन्तु संशय तो क्षयकारी है, विश्वास के बिना कोई कुछ नहीं कर सकता है। विश्वास जीवनोन्नायक है, अच्छे कर्म की प्रशंसा, दुष्कर्म की निन्दा होती है। कर्म कोई भी हो, सापेक्ष है। दूसरों को किसी न किसी रूप में प्रभावित करता है, अतः कोई भी कर्म व्यक्तिपरक नहीं। सुगन्धितधूपवर्तिका के जलाने पर समस्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वातावरण सुवासित होता है. सबके लिये जो विकलेन्द्रिय नहीं। करण की शुद्धता, तीव्रता का महत्वपूर्ण स्थान है। विकलेन्द्रिय भी विषय विशेष के सुख की कामना करता है। गुणग्राही, करण सम्पन्न की कथा क्या। जहाँ गुणी और गुणग्राही दोनों का संयोग हो जाय वहाँ तो 'सोने में सुगन्धि' का कार्य होने लगता है। अपने सद्गुणों के कारण कोई किसी के लिये आकर्षण का केन्द्र बन जाता है। सज्जन की प्रशंसा सर्वत्र होती है, क्योंकि वह सर्वहितैषी होता है, परोपकारी होता है, अपने साथ दूसरों का भी उद्धार करता है, ऐसे प्रयास और साधन एकत्र करता है जिससे दूसरे उसका अनुशीलन करें, दूसरों के लिये आदर्श बनता है, वह ऐसा कोई कर्म नहीं करता जिससे दूसरे निम्न हों। श्रेष्ठ का आदर श्रीकृष्ण ने भी किया है। जो जो कर्म श्रेष्ठ करते हैं, दूसरे भी वही करते हैं। लोक संग्रह के लिये महापुरुष भी साधारण जन के समान छोटे-मोटे कर्म करता है, वह सबका सम्मन करता है, जैसा वह समझ सकता है वैसा ही वह करता है, महापुरुष की अभिज्ञता कदापि वाच्य नहीं होती, पूर्वापर के कारण कार्यों का सर्वथा ध्यान रखते हुए यह किसी दिशा में अभिगमन करता है। दिशा सभी उचित हैं यात्री के ऊपर निर्भर रहता है कि वह उधर क्या प्रयास कर सकता है तथा कितना सफल हो सकता है। संसार में प्राणी अपने परिश्रम से दूसरों के साथ अपना सम्बन्ध स्थापित कर लेता है। ईश्वर की सृष्टि में किसको निष्प्रयोजन कहा अथवा माना जाय। संसार के प्रति ननु न च की शंका मढ़ना अपना समय व्यर्थ करना है।

प्रभु की सृष्टि में दोषदर्शन करना स्वयम् को अपराधी श्रेणी में छाँटना है। सद्भावना से अपना कर्म करता हुआ मानव कभी वाच्य नहीं होता है।

स्वामी हरिओम् ने सीमित परिवार से बृहत् परिवार में सम्बन्ध स्थापित किया और अपने गुरुप्रसाद से अपने लक्ष्य पर अग्रसर रहे। श्री रामतीर्थ मिशन की स्थापना की, देश भर में "रामसन्देश का प्रचार-प्रसार किया, यत्र तत्र सत्संग स्थापित किये, "रामसन्देश" पत्रिका का प्रकाशन किया। प्रारम्भ में हिन्दी-अंग्रेजी तथा उर्दू भाषा में प्रकाशन होता था, किन्तु पश्चात् शनैः शनैः हिन्दी रह गयी, यद्यपि कुछ समय श्री काका हरिओम् के प्रयास से अंग्रेजी भी चलती रही, अब वह रुक गयी। स्वामी हरिओम् "रामसन्देश" प्रचारार्थ भाषा विशेष के पक्षपाती नहीं रहे, स्वामी रामतीर्थ ने अपने व्याख्यान-प्रवचन अधिकतर अंग्रेजी में दिये, किन्तु पर्शियन तथा उर्दू में पर्याप्त लिखा, उनकी लिखी पुस्तक "उपासना" महत्वपूर्ण है। स्वामी हरिॐ महात्मा थे, साधारण मनोभावों से ऊपर थे, लोकमित्र थे, अपने लक्ष्य को समझते थे, अपने समय को जानते थे, अतः अपना समस्त जीवन सत्कर्म एवं सत्प्रयास में लगाया, उनके सदुपदेशों का अपने प्रोत्थान तथा दूसरों के सहयोग के लिये वास्तविक उपयोग करना ही उनके प्रति श्रद्धाञ्जलि है।

— ❀ • ❀ —

झिड़कियाँ — मूर्खों से प्रशंसा सुनने के बजाय बुद्धिमानों की झिड़कियाँ सुनना उत्तम है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम-रूप

गन्धर्व बोला— हे राम ! आप अनन्त आदि अन्त से रहित और मन वाणी के अविषय हैं, (तथापि) आज मेरा मन आपकी स्तुति करने को बड़े वेग से उत्सुक हो रहा है। हे प्रभो ! आपके स्थूल और सूक्ष्म दोनों शरीर (विराट और हिरण्य गर्भ) से आपका वास्तविक ज्ञानमय स्वरूप सूक्ष्म अर्थात् योनियों से भी सर्वथा दुर्ज्ञेय है। इसके अतिरिक्त जो कुछ है वह जड़ दृश्य और अनात्मा है। अतः आपसे भिन्न यह जड़ मन आपको कैसे जान सकता है ? बुद्धि और चिदाभास का अन्योन्याध्यास रूप ऐक्य ही जीव कहलाता है। इन बुद्धि आदि सबका साक्षी ब्रह्म ही है, वह मन वाणी आदि किसी का भी विषय नहीं है, उसी निर्विकार सर्वात्मा में अज्ञान वश इस सम्पूर्ण चराचर जगत को आरोपित किया जाता है। हे राम ! आपका सूक्ष्म-देह हिरण्य गर्भ और स्थूल देह विराट् कहलाता है। आपका भावनामय (हृदय-कमल में ध्यान करने योग्य) सूक्ष्म रूप जिसमें भूत-भविष्यत् और वर्तमान यह सम्पूर्ण जगत् दीख पड़ता है। अपने ध्यान करने वालों का मङ्गल करने वाला है। अपने-अपने उत्तरवर्ती तत्वों से प्रत्येक दस गुणा अधिक महत्त्वादि सात आवरणों से घिरे हुए आपके स्थूल ब्रह्माण्ड शरीर में ही धारणा का आश्रय रूप विराट् शरीर स्थित है। आप ही एकमात्र सर्वमोक्ष स्वरूप हैं। सम्पूर्ण लोक, आप ही के अवयव हैं। पाताल आपका चरण तल (तलुआ) है। महातल एँड़ी है। हे राम ! रसातल गुल्फ (टखने) हैं, तलातल जानु हैं तथा सुतल आपकी जंघाएँ और वितल आपके दो उरू हैं, अतल और पृथिवी आपकी जघन भाग (कटिदेश) है, भुर्लोक नाभि है, स्वर्लोक वक्ष स्थल है तथा महर्लोक आपको ग्रीवा है। हे रघु श्रेष्ठ ! जन लोक आपका मुख है, तपः लोक ललाट है। तथा हे प्रभो ! सत्य लोक आपका मस्तक है। हे राम ! इन्द्रादि लोक पाल गण आपकी भुजाएँ हैं, दिशाएँ कर्ण हैं, अश्विनीकुमार नासिका है और अग्नि आपका मुख बताया गया है।

हे राम ! सूर्य आपके नेत्र हैं, चन्द्रमा मन है, काल भ्रू भङ्गी है और वृहस्पति भी आपकी बुद्धि हैं। हे निर्विकार ! रुद्र आपका अहंकार है। वेद आपकी वाणी है, यम आपकी दाढ़ें हैं और नक्षत्रगण आपकी दन्तावली है। सबको मोहित करने वाली माया आपका हास्य है, सृष्टि आपका कटाक्ष है, धर्म आपका आगे का भाग है, अधर्म पीछे का भाग है। हे रघुनन्दन ! रात और दिन आपके निमेषोन्मेष हैं। हे प्रभो ! सातों समुद्र आपकी कुक्षि और नदियां नाड़ियां हैं। हे प्रभो ! वृक्ष और ओषधियाँ आपके रोम, वृष्टि आपका वीर्य और ज्ञानशक्ति आपकी महिमा है। यही आपका स्थूल शरीर है। यदि पुरुष आपके इस स्थूल शरीर में मन स्थिर करे (धारणा करे) तो वह अनायास ही मुक्त हो जाता है। हे राम ! आपके इस स्थूल रूप में पृथक् और पदार्थ नहीं है। अतः हे राम ! मैं आपके उस स्थूल रूप का ही सदा चिन्तन करता हूँ, जिसके ध्यान मात्र से ही शरीर में रोमाञ्च के सहित हृदय में प्रेमरस का सञ्चार हो जाता है। हे राम ! जब यह जीव आपके विराट् रूप का चिन्तन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करता है; तो तत्काल ही उसकी मुक्ति हो जाती है, तो भी मुझे उसकी आवश्यकता नहीं। मैं तो आपके इस (राम रूप) का ही चिन्तन करूँगा। हे रघुनन्दन ! मेरी यही प्रार्थना है कि लक्ष्मण जी के सहित सीता को खोजता हुआ आपका जटा वल्कल-विभूषित धनुष-वाणधारी तरुण वयस्क श्याम रूप सदा मेरे मन में विराजमान रहे। हे रघु श्रेष्ठ ! आपके इस दिव्य रूप का पार्वती जी के सहित सर्वज्ञ श्री शंकर भगवान् सर्वदा चिन्तन करते हैं और काशी में मरने वालों का ब्रह्मवाचक 'राम राम' इस तारक मन्त्र का उपदेश करते हुए सदा अति आनन्द में मग्न चित्त रहते हैं। अतः हे जानकी-नाथ ! आप निश्चय ही परमात्मा हैं। आपकी माया से मोहित होने के कारण सब लोग आपका वास्तविक स्वरूप नहीं जानते। हे संसार की रचना करने वाले परमात्मा राम ! मैं आपको नमस्कार करता हूँ। हे सौमित्र सेवित अयोध्या-नाथ ! आपको नमस्कार है। हे जगन्नाथ ! आप मेरी रक्षा कीजिये; आपकी माया मुझे मोहित न करे।

(अध्यात्म रामायण से)

रामायण चरित्र चित्रण

"प्रस्तावना"

श्री स्वामी तीर्थानन्द जी

बहुत दिनों से सोच रहा था। मन में अनेक प्रकार के विचारों का तूफान उठता था। बहुत रोकने की कोशिश की, लेकिन समय पाकर, बाँध तोड़कर, सारे बाहर निकल आये। कागज पर एक के बाद एक झम से पंक्तिबद्ध होते गये और आखरी जब देखा तो विस्मय हुआ। थोड़ा सा खेद हुआ कि इन विचारों को रोकने से "रामचरित मानस" के प्रेमी जनों पर घोर अन्याय होगा। विस्मय इसलिये कि अपने हाथों ऐसी कोई दिव्य चीज प्रकाश में आ जायेगी, इसकी उम्मीद न थी।

आज तक अनेक विद्वानों ने 'रामचरित मानस' को लेकर अपने विचार जनता के सामने रखे होंगे, किन्तु सभी ने राम और सीता को ही रामायण का आधार स्पष्ट किया है। वस्तुतः रामायण के अन्दर इतने पाम भरे पड़े हैं। अगर उन पर कोई प्रकाश डालना चाहें तो उसका एक और महाकाव्य बन जायेगा। यह दुनिया का दस्तूर है कि— "मेहनत करे कोई, फल किसी और को"। इसलिये किसी शायर ने लिखा है—

"लगेंगे हर बरस मेले, शहीदों की समाधी पर।
धर्म पर मिटने वालों का, यही नामोनिशाँ होता॥"

मैंने अपनी तरफ से सभी पामों को प्रकाश में लाने की भरसक कोशिश की है, फिर भी किसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम के बारे में कोई बात स्पष्ट न हो गई हो, तो पाठकगण मुझे क्षमा करें। क्योंकि विश्व का प्रथम महाकवि वाल्मीकि जैसों की प्रतिभा इसका वर्णन करते करते थक गई। तो यह पामर कहाँ समर्थ होगा ? जिन चरणों में बैठकर इस महाकाव्य के बारे में ज्ञान हुआ, उन गुरुचरणों में यह शाब्दिक कुसुमाञ्जलि समर्पित करते हुए आप सबका हार्दिक धन्यवाद करता हूँ।

मनोगत

रामायण के ऊपर बोलना अथवा लिखना एक अदम्य साहस की बात है। क्योंकि भगवान् रामचन्द्र का चरित्र हिमालय की भाँति उत्तुङ्ग, भव्य, दिव्य एवं शुभ्र है। वाल्मीकि रामायण की रचनोपरान्त रामकालीन कुटुम्ब का वर्णन करते समय महाकवि कालीदास ने "मैं मन्द हूँ" इन शब्दों के साथ ही 'रघुवंश' की शुरुआत की है। भक्त शिरोमणि स्वामी एकनाथ को भी यह कहना पड़ा है कि—मैं रामायण का भावार्थ तो नहीं केवल शब्दार्थ ही करता हूँ। श्रेष्ठ वाल्मीकि के समान ख्याति प्राप्त गोस्वामी तुलसीदास जी को भी यह स्वीकार करना पड़ा कि "रामायण के सम्पूर्ण आकलन के लिये चराचर सृष्टि को बुलाना पड़ेगा।" जब ऐसे महापुरुषों की यह दशा, तो मुझ जैसे अज्ञानी की क्या बात। सच पूछो तो चरित्रनिरूपण में मैं कच्चा हूँ। वास्तव में आज के वैज्ञानिक अनुसन्धानों से बढ़े हुए संसार को देने जैसा अगर हमारे पास कुछ है तो वह है 'रामायण', हम कितने सौभाग्य सम्पन्न हैं। रामचरित्र के कारण समस्त भारत देश भाग्यशाली बना है। इससे अधिक इस ग्रन्थ की महत्ता क्या कहूँ ?

'रामायण' और 'इलियड़'

इसकी रचना करने वाले कवि अलौकिक, वह काल अलौकिक। रामायण का वर्ण्यविषय अलौकिक और उसका हेतु भी अलौकिक। अनेक भाषाओं में अच्छे अच्छे काव्य होते हैं। किन्तु रामायण की बराबरी कर सकें, ऐसा एक भी काव्य आज तक न लिखा गया। न आगे कोई लिख सकेगा, ऐसी उम्मीद कर सकते हैं। जैसे रामायण हमारा प्राचीन काव्य है, वैसे ही ग्रीस देश का प्राचीन काव्य है 'इलियड़'।

रामायण का हेतु लोकोत्तर है, क्योंकि यह अपने अन्दर हम सबको आज भी सुधारने की शक्ति रखती है और पथ-भ्रष्ट मानव-समाज को मार्ग प्रदर्शन भी करती है। रामराज्य इतना प्रभावशाली था कि राम को न मानने वाले इस युग के नास्तिक लोग भी आज 'रामराज्य' की अभिलाषा करते हैं—

ऐसे अति मनोहर 'रामायण' की रचना करने वाले कविश्रेष्ठ वाल्मीकि को साष्टांग प्रणिपात करते हुए यह अल्प विचारधारा जिस प्रेममयी, स्नेहमयी, करुणामयी देवी के सान्निध्य से उदित हुई, उस 'सावित्री देवी' को सस्नेह सादर समर्पित करते हुए पाठकों से यह नम्र निवेदन करता हूँ कि—इस लेख में जो कुछ अच्छाई है, वह रामकृपा है और जो कमियाँ होंगी, वह अपनी हैं। इसमें अगर किसी को थोड़ा सा भी लाभ हुआ, तो मैं अपने आपको धन्य समझूँगा।

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्यों नहीं तुम आज आये ?

श्री गुणानन्द जी थपलियाल

नयन दर्शन के लिये थे, आज कितने तड़फड़ाए—
क्यों नहीं तुम आज आए ?

बैठ प्रिय पथ पर अकेला, कल्प-सा दिन है बिताया।
थी मुझे जिसकी प्रतीक्षा, मीत मेरा वह न आया।
'आ गए' आभास देती, पाद आहट सघन छाया।
प्रात से सन्ध्या हुई, तो सोचता हूँ मैं सर झुकाए—
क्यों नहीं तुम आज आए ?

कुछ नई ऋतु-वाटिका से, फूल चुन-चुनकर मैं लाया।
प्रेम का गजरा तुम्हीं को, आज मैंने था बनाया।
चहक कोयल ने रसीला गीत क्यों कर है सुनाया।
आज मन के मोर नाचे, आज घन आकाश छाए—
क्यों नहीं तुम आज आए ?

बैठ तरु की छाँव में मैं, मिलन-वंशी था बजाता।
कल्पना के अर्द्ध स्वर में, प्रिय मिलन के गीत गाता।
जब विकल होता कभी मन, धैर्य तब उसको बँधाता।
एक युग तो हो चुका है, आस फिर भी हूँ लगाए—
क्यों नहीं तुम आज आए ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"सम्पादकीय"

चला जा रहा है समय ! हर वर्तमान अतीत में खोता जा रहा है। हर वो भविष्य, जो किसी समय बहुत दूर होता है, भाग कल्पना से व्यक्ति जिसे छू सकता है, एक दिन वर्तमान के रूप में सामने खड़ा होता है; परन्तु प्रतीक्षा-जन्य विह्वलता की अनुभूति से अभी हट उस प्राप्ति-जन्य सुख की अनुभूति करने हेतु व्यक्ति अभी आँखें मूँदता ही है कि उसे लगता है मानो वह रीता हो रहा है, उसके विह्वलता-युक्त कसे बन्धनों से कुछ सरक रहा है ऐसी प्रतीत होती है उसे, ऐसा नहीं कि रोकने का प्रयत्न न करता हो सारी शक्ति लगा देता है उसे जाते हुए को रोकने में, परन्तु उसके समस्त प्रयत्न निरर्थक हो जाते हैं और आई वस्तु फिर चली जाती है दूर, बहुत दूर ! वो अब ऐसी कल्पना का विषय बन जाती है जिसका यथार्थ असम्भावित है अब। अव्यक्त, जो व्यक्त बनकर सामने आया था, थोड़ा सा सुख प्राप्त किया था जिसे प्राप्त करके पुनः चला जाता है किसी अन्धेरी गुहा में, अर्थात् फिर वही अव्यक्त।

यही तो है समय का खेल। इसी खेल में व्यक्ति उतरता-चढ़ता है, डूबता-तैरता है और उसी उतरने-चढ़ने, डूबने-तैरने में बीत जाती है उसकी आयु। कारवाँ आ चुका है, आँखों से ओझल हो गये हैं सारे साथी, मात्र रह गयी हैं देखने वाली बोझिल दो आँखें और दीख रहा केवल गुबार। उन गुबार की स्मृतियों पर फिर बनाता है आशा के भवन, सँजोता है अतीत से इधर उधर बिखरे फूलों को, पर फिर वही समय खेल खेल में झटका देता है, उठा पटकता है यथार्थ की भूमि पर, जहाँ टूटे सपनों की स्मृतियाँ उसे दुःख देती हैं, देती हैं निराशा ही निराशा।

लेकिन ऐसे ही समय में, जब काल की उठा-पटक में वह कुछ सुनकर अपने को अशक्त अनुभव करता है, अचानक वह नाच उठता है, कट जाती हैं— उसकी सारी ग्रन्थियाँ। अब वो रोता नहीं, मुस्कराता है, इसी उठा-पटक में उसे आनन्द आता है, क्योंकि अब वह समुद्र के किनारे बैठे जल में होती क्रीड़ा को देख आनन्दित होते व्यक्ति को जान जाता है सब कुछ, वह समझ जाता है क्रीड़ा को और कहता है यह सारी क्रीड़ा जल का क्या बिगाड़ेगी; जल तो जैसा था, वैसा है और ऐसा ही रहेगा।

वही कुछ तो सुनना हमारे मनुष्य जीवन की सार्थकता है और उसी कुछ को आप तक यह पत्रिका पहुँचाने का प्रयास भी कर रही है। अतः यह 'पत्रिका' अपने समस्त पाठकों के जीवन में उसी पूर्वोक्त द्रष्टारूप जीवन की कामना करती हुई रामचरणों में प्रार्थना करती है कि वह सबको शक्ति प्रदान करे कि सब आदर्शों को, सिद्धान्तों को अपने जीवन में व्यावहारिक स्थान दें व "सब सुखी हों", "कोई किसी से द्वेष न करें" इस भावना का आचरण कर जीवन में नवीनता का संचार करने में सक्षम हों।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वतन्त्रता—

इस मास २६ जनवरी को हम दिन मनायेंगे स्वतन्त्रता की आशा का। इसी दिन तो हमें मुक्त होने का आश्वासन मिला था उस दासता से, जो हम पर हजारों वर्षों से चली आ रही थी। यही दिन परिणाम था उस कर्मठता का, आत्मविश्वास का जिसने 'स्वतन्त्रता हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है' इस नारे से हमें प्रेरित किया था व जिस स्वतन्त्रता के बदले में माँग थी धन की नहीं, नारे-बाजी की नहीं, माँग आदर्शों व सिद्धान्तों की नहीं, बल्कि उसे स्वीकार करने की जिससे व्यक्ति सदैव भयभीत रहता अर्थात् मृत्यु की, "तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूँगा।" और ऐसी बात नहीं कि इसके लिये कोई तैयार न हुआ हो, आवाज सुनायी इसी माँग के उत्तर में—

सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है।
देखना है जोर कितना बाजुए काबिल में है॥
खेंच लाई है हमें तो कत्ल होने की उमीद।
आशिकों का आज जमघट कूचा-ए कातिल में है॥

अर्थात् यह दिन न जाने कितनी स्मृतियों को, जो आज इतिहास के पन्नों पर हैं या जो समय के पृष्ठों पर परोक्ष में लीन हैं, हम अपने सामने पाते हैं।

कितना उल्लास होता है, खुशी होता है इस दिवस पर, क्यों न हो स्वतन्त्रता ही तो जीवन है, तभी तो बन्द तोता पिंजरे से निकल प्रसन्नता से गाता है. परन्तु इस उल्लास का, खुशी का एक दूसरा पक्ष भी है जिस पर दृष्टिपात होते ही समस्त सम्वेगजन्य उल्लास, हर्षमयी भावनायें बादलों की भाँति छँट जाती हैं। नीरवता ही नीरवता दिखायी देती है चारों तरफ। कुछ प्रश्न हमारे सामने खड़े होकर समाधान चाहते हैं और कहते हैं इन समाधानों का अभाव तुम्हें सुख न देगा। वे प्रश्न हैं—

क्या हमने उनका, जिनके जीवन-रक्त से यह स्वतन्त्रता का दीप जला, पूरा-सही सम्मान किया? क्या हम उन्हीं कारणों को अनजाने में फिर से तो नहीं पैदा कर रहे जिनके कारण "सोने की चिड़िया" कहलाने वाला देश, हमारा देश दास हो गया, गरीबों का, भिखमंगों का कहलाने लगा, यही नहीं विश्वगुरु के रूप में विश्ववन्द्य भारत चारित्रिक पतन की पराकाष्ठा को छूने लगा? हमारी जीवनी शक्ति कहीं फिर व्यापारियों द्वारा काँच के स्थान पर धोखा देकर फिर तो नहीं छीनी जा रही? क्या 'हम भारती हैं' इस बात से हम में आत्महीनता की भावना तो नहीं जागती? और क्या वास्तव में हम भारतीय पूर्णतया स्वतन्त्र होकर अपने उद्देश्यों की प्राप्ति करने में अविभाजित होकर संलग्न हैं?

ये सारे वे प्रश्न हैं जिनपर आज भी हमें, भारतीयों को विचार करना है और रक्षा करनी है अपनी वैचारिक स्वतन्त्रता की। यदि ऐसा न हुआ, तो स्वतन्त्रता के इस बाह्य रूप का आवरण किसी भी समय टूट सकता है।

तो क्यों न हम २६ जनवरी के पावन-दिवस पर अपने आदर्शों को साक्षी मान इन प्रश्नों पर विचार करें और राष्ट्र-हित में अपने ही निजी तुच्छ स्वार्थों का परित्याग कर, राष्ट्रीय सेवा का व्रत लें, उन्हें याद करते हुए जिन्होंने अपनी इस प्रतिज्ञा को पूरा किया।

"हम नहीं चाहते कि हमारी सन्तानें भी उसी परतन्त्रता में, दासता में जन्में, जिनमें हमने जन्म लिया है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपसे— दो बातें :—

क्योंकि आप पाठक हैं इसलिये आपको कोई न कोई शिकायत अवश्य रहती होगी जैसे पत्रिका मिलने में विलम्ब, पत्रिका का न मिलना, उसकी विषय-सामग्री आदि। पर, यहाँ आप, पाठकगण, यदि सब हम पर डाल दें उचित न होगा क्योंकि इन सबके निदान के लिये आपके परामर्शों की, सहयोग की भी अपेक्षा है।

पत्रिका में विलम्ब सम्भव जैसा कि प्रकाशन की कठिनाइयों से आप भिज्ञ ही हैं, परन्तु दुःख उस समय होता है जब आप कहते या लिखते हैं कि आपको पत्रिका नहीं मिली। नहीं मिली इससे भी हमारा दोष हो सकता है, परन्तु जब २, ३ मास से या एक वर्ष से नहीं मिल रही आप ऐसा कहते हैं तो अधिकतर दोष आप पर होता है यदि आपने पत्र द्वारा न मिलने की सूचना यहाँ सम्पादक के नाम कार्यालय में नहीं दी। उसमें आप ग्राहक संख्या का निर्देश जब नहीं देते और यहाँ तक 'पत्रिका' किसी के नाम से जा रही है और शुल्क-राशि भेजने वाले कोई और हैं, तो ऐसी स्थिति में प्रस्तुत होने वाली कठिनाइयों को आप स्वयं समझ सकते हैं।

विषय-सामग्री के विषय में भी यही बाधा सम्मुख है। आपको सामग्री कैसी चाहिए, इसका ज्ञान तो हमें आपकी अंक पर हुई प्रतिक्रियाओं से होगा। जबकि इस विषय में हमें निराशा ही मिली है, यद्यपि पत्रिका द्वारा आपसे कई बार इस विषय में प्रार्थना की जा चुकी है।

अतः आप सब पाठकों से हम नववर्ष पर यह अनुरोध करते हैं कि पत्रिका की उन्नति को दृष्टिगत कर तथा जिससे हमें यह भी ज्ञात हो कि आप कैसी सामग्री चाहते हैं, आप अपने परामर्शों व प्रतिक्रियाओं से अवश्य अवगत करायें तथा साथ ही पत्रिका के न मिलने पर हमें पत्र द्वारा २० ता० के बाद अवश्य सूचित करें, लेकिन अपनी ग्राहक संख्या लिखना न भूलें।

यही स्थिति है जिससे पत्रिका की अव्यवस्था को हटाया जा सकता है, पर आपका सहयोग भी अपेक्षित है।

सच कहना !

आती हुई हर आहट में,
बहते हुए हर झोंके में,
ध्वनित हो रहे हर शब्द में
मैंने तुम्हारे प्यार भरे सन्देश को
सुनना चाहा,
परन्तु, आये और चले गये सब,
कोई भी तो मेरी हृदय की व्याकुलता को,
मन की तड़प को
सान्त्वना न दे सका।

तुम सच कहना कि तुमने
सन्देश भेजा भी या नहीं,
कहीं ऐसा तो नहीं कि
भूल गये तुम,
या मैं अपनी अयोग्यता के कारण
पा न सका तुम्हारे
सन्देश को।

—निर्द्वन्द्व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सदाचार का आधार पट सच्चरित्रता

श्री वल्लभदास जी विन्नानी 'ब्रजेश', साहित्यरत्न, धर्मरत्न, आगमवाचस्पति, डी० डी०

किसी भी राष्ट्र की सम्पत्ति सोना, चाँदी, जवाहरात, डाक्टर, इन्जीनियर, कल, कारखाने या वहाँ की सेना नहीं है; वरन् वहाँ के चरित्रवान् व्यक्ति होते हैं। सौभाग्य है इस भारत भूमि का जहाँ पर महापुरुषों ने आकर अनेक चरित्रवान् व्यक्तियों को पैदा किया और मानव जाति को पतन के मार्ग से बचाया। इसीलिये स्वामी विवेकानन्द जी ने कहा था कि यदि— संसार में सौ चरित्रवान् मनुष्य हैं तो भी हमें हताश होने की आवश्यकता नहीं। यदि सारी मनुष्य जाति को हम पवित्र, शिक्षित और आध्यात्मिक शक्ति से सम्पन्न बना सकें तो समस्त दुःखों का अन्त हो सकता है, उसके पूर्व नहीं। देश को तथा देश के प्रत्येक गृह को दानशाला बना दें, उसे औषधियों से भर दें; किन्तु जब तक मनुष्य के चरित्र में परिवर्तन नहीं होगा, तब तक उसके दुःखों का भी अन्त नहीं होगा। क्योंकि महाभारत में आदेश है कि—

वृत्तं यत्नेन संरक्षेत्, वित्तमायाति याति च।
अक्षीणो वित्ततः क्षीणो वृत्ततस्तु हतो हतः॥

वृत्त (चरित्र) की यत्न से रक्षा करें, क्योंकि वित्त (धन) तो आता और जाता है, परन्तु वित्त से क्षीण हुआ क्षीण नहीं, अपितु वृत्त से गिरा हुआ तो मरा हुआ ही है।

सूर्य की ज्योतिर्मयी किरणों के बिना दिन की कल्पना नहीं की जा सकती है। चन्द्रमा की शीतल एवं स्निग्ध ज्योत्स्ना के अभाव में रात्रि का सौन्दर्य हमारे मन को आकर्षित नहीं कर सकता है, ठीक उसी तरह चरित्र के बिना मानव-जीवन की महत्ता, उसके तेज और गरिमा की कल्पना असम्भव है। चरित्र के बिना मानव-जीवन का प्रकाश धुंधला हो जाता है, उसकी महिमा खंडित हो जाती है। त्रैलोक्य की सम्पदा से परिपूर्ण ऐश्वर्यशाली व्यक्ति सम्पूर्ण विद्याओं में पारंगत पण्डित तथा शास्त्र-संचालन में कुशल योद्धा भी चरित्र के बिना पूजनीय नहीं हो सकता।

चरित्र मनुष्य के सद्गुणों के समन्वित रूप को कहते हैं। जिससे समाज और व्यक्ति दोनों का कल्याण होता है। बिना सामाजिक स्वीकृत के किसी के गुण को गुण नहीं माना जा सकता। जब एक समाज या बहुसंख्यक जन किसी गुण को अच्छा मानते हैं, तभी उसे श्रेष्ठ माना जाता है। यह कभी नहीं हो सकता कि कोई गुण अपनी सामाजिक उपयोगिता को खोकर भी महत्वपूर्ण बना रहे। दान, न्याय, स्वावलम्बन, ब्रह्मचर्य, विनय, परोपकार इत्यादि गुण मनुष्य के भूषण हैं, किन्तु ये गुण इसलिए भूषण माने जाते हैं कि उनसे समाज और व्यक्ति दोनों का लाभ होता है। दूसरी बात यह है कि केवल एक ही गुण का होना पूर्ण चरित्र का बोधक नहीं। जब किसी व्यक्ति में अनेक सद्गुणों का समावेश हो जाता है, तभी उसे सच्चरित्र कहा जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्यवादिता या सत्यभाषण तथा सत्य का समर्थन चरित्र की सबसे बड़ी विशेषता है। सत्यवादी होने का अर्थ होता है—असत्य का विरोध, अन्याय का प्रतिशोध तथा अनेक दुर्गुणों का विनाश। सत्यवादी में धैर्य, स्वावलम्बन आदि गुण अपने आप आ जाते हैं।

दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि सत्यवादिता एक ऐसा गुण है जो स्वयं अन्तर्निहित है। सच तो यह है कि सत्य की साधना ही अन्य उच्च गुणों की साधना है। सत्य-पालन की कसौटी पर खरा उतरने के बाद मनुष्य की मार्ग की बाधायें छिन्न भिन्न हो जाती हैं, संकट भाग जाते हैं और वह शिष्य विजयी की भाँति उन्नत मस्तक होकर जीवन व्यतीत करता है। सत्य-पालन का चरम आदर्श उपस्थित करने के कारण ही राजा हरिश्चन्द्र आज पूजनीय हैं।

नम्रता या विनयशीलता चरित्र का दूसरा शोभाप्रद अंग है। विद्या, ऐश्वर्य, वीरता इत्यादि प्राप्त कर जब तक मनुष्य विनयशील नहीं होता है, तब तक उसे यश प्राप्त नहीं होता है। विनय मनुष्य के हृदय की कोमलता और उदारता का द्योतक है। उसके बिना सभी ऐश्वर्य मिथ्या हैं। उसके अभाव में मनुष्य अहंकारी और दुर्विनीत हो जाता है। इसलिए साधन-सम्पन्न होते हुए भी अपने यश एवं मान की रक्षा नहीं कर पाता है।

चरित्र-निर्माण के लिए उदारता भी एक आवश्यक गुण है। उदारता का अर्थ है—संकीर्णता एवं स्वार्थ-परायणता का त्याग। उदारता एक विशुद्ध सामाजिक गुण है, जिसका विकास सामाजिक सेवाओं और सम्पर्कों के फलस्वरूप होता है। उदार व्यक्ति अपने निजी स्वार्थ की संकुचित सीमा से निकल कर दूसरों के हित और उनकी सहायता के लिये उद्यत रहता है।

धैर्य और स्वावलम्बन चरित्रवान् व्यक्ति की अन्य विशेषतायें हैं। कठिन आपत्ति काल में भी धैर्य रखना और विचारपूर्वक कार्य करना साहसी और पुरुषार्थी के लक्षण हैं। चरित्रवान् अपने चरित्र की दृढ़ता से सभी बाधाओं को कुचलता हुआ आगे बढ़ता जाता है। विपत्तियों के पहाड़ टूट पड़े हैं। धन-जन, सर्वस्व का हरण हो गया है। नग्न तलवार सिर पर नाच रही है। उसे हाथियों के पंक पाँवों तले कुचला गया है। तो भी चरित्रवान् अपने चरित्र पर अटल है। सच्चरित्रता को दबाने वाली शक्ति आज तक नहीं हुई है, न होगी। वह अजेय है। भीष्म के पास एक चरित्र-बल है। वे उसी बल पर श्रीकृष्ण को चुनौती देते हैं। श्रीकृष्ण को अपना व्रत छोड़ना पड़ता है। पाण्डवों-कौरवों की सुगठित सेना से लोहा लेने में समर्थ हुए क्यों ? सच्चरित्रता के बल पर। जो चरित्रवान् हैं वे अपनी राह आप बनाते हैं। वे दूसरों के लिए आदर्श बनते हैं।

सच्चरित्र के लिए अपनी पत्नी के अलावा संसार की सारी स्त्रियाँ माँ-बहन हैं। अपनी मेहनत की कमाई के अलावा संसार की सारी सम्पदा उसके लिए मिट्टी है। सच्चरित्र अपने मन का स्वामी स्वयं होता है। अपने मन की लगाम को वह अपने हाथ में रखता है। जब कि चरित्र-हीन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने मन का गुलाम होता है। अपने मन का स्वामी होने के कारण सच्चरित्र अपने आपको सद्गुणों की ओर ले जाता है। वह लोभ ईर्ष्या-द्वेष आदि से ऊपर उठ जाता है। पर मन का गुलाम होने के कारण चरित्र-हीन दुर्गुणों के दलदल में फँस जाता है।

आधुनिक काल में तो सब कुछ वित्त को ही समझ लिया गया है। तो उल्टी हवा बहने लगी है। जिसने वृत्ति (चरित्र) का नाश कर दिया। क्योंकि धन कमाने के लिये हर प्रकार का छल-कपट और दुर्व्यवहार होने लगा है। अर्थशास्त्रियों ने भी करेंसी के दोष बताते हुए कहा है कि इससे मनुष्य का ईमान पाना है।

स्त्रियों का सतीत्व तथा धार्मिकों का धार्मिकत्व छीना है। इतना ही नहीं विश्व की अमूल्य सम्पत्ति चरित्रवानों का चरित्र छीना है। व्यवहार में देखने से यह आता है कि वर्तमान समय में सब कुछ वित्त को ही समझ लिया गया है। जबकि सिद्धान्त तो यह था कि :—

धन का नाश हो जाये तो कुछ नहीं बिगड़ा, स्वास्थ्य का नाश हो जाए तो थोड़ी हानि हुई, लेकिन जब चरित्र का नाश हो जाय तो सर्वनाश हो गया। परन्तु वस्तुस्थिति यह है कि आधुनिक काल में इसके ठीक विपरीत दिखाई देता है। नीचे की चीज ऊपर आ गयी और ऊपर की चीज नीचे चली गयी। इसी बात की परिपुष्टि भारतीय व्यवस्था समाज के प्रतीष्ठापक आचार्य मनु जी के कथन में होती है। जिसमें मानव-जीवन के चार उद्योगों में प्रथम धम, द्वितीय अर्थ, तृतीय काम, चतुर्थ मोक्ष बताया था। पर आज माँगवाद की प्रधानता के कारण अर्थ का स्थान सर्वोपरि सर्व प्रथम हो गया है। आज भ्रष्टाचार का बोल बाला है। धन के मोहिनी रूप ने लोगों को मोह लिया है। धन प्राप्ति के लिए अनेक कुकर्म किए जा रहे हैं। फिर भी सच्चरित्रता का महत्व ज्यों का त्यों बना हुआ है। दूध वाला दूध में पानी मिलाकर बेचता है। पर वह भी चाहता है कि बनिया उसे शुद्ध घी दे। बनिया शुद्ध घी के नाम पर डालडा बेचता है। पर वह भी चाहता है कि मास्टर उसके लड़के को ईमानदारी से पढ़ाये (अजीब बात है)। सभी एक दूसरे को धोखा देते हैं। पर दूसरों से ईमानदारी की उम्मीद करते हैं। व्यापारी सरकार को भले ही धोखा दे, पर अपने कर्मचारी से ईमानदारी की ही आशा रखेगा।

तो, इस काले बाजार के लोगों की सच्चरित्रता जीवित है। यह जीत है लोगों के अन्तर्मन में और कुछ के जीवन में। कुछेक जो सच्चरित्र हैं, गरीब भले ही हैं, पर हृदय के धनी हैं। भले ही उनके पास भौतिक सुख के साधनों का अभाव हो, पर वास्तव में सुखी वे ही हैं। भले ही उनके पास कार न हो, आदमीयता तो है।

अगर इस संसार में आकर हमने विद्या पढ़ी, धन का संचय किया, पर चरित्र-बल न प्राप्त किया; तो हमारा जन्म ग्रहण करना निष्फल है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

❀ स्वामी राम के समग्र ग्रन्थ ❀

—: हिन्दी में :—

भाग	ग्रन्थ नाम	मूल्य
भाग १	अन्तरात्मा	३.००
,, २	सफलता का रहस्य	३.००
,, ३	आत्मानुभव	४.००
,, ४	विश्वानुभूति	४.००
,, ५	धर्मतत्व	३.००
,, ६	वेदान्तशिखर से	३.००
,, ७	भारत माता	३.००
,, ८	अरण्यसम्वाद	३.००
,, ९	सुलह की जंग गंगा की तरंग	७.००
,, १०	भक्तियोग रहस्य	३.००
,, ११	व्यावहारिक वेदान्त	३.००
	रामहृदय	३.००

राम—पत्र

(राम के पत्रों का संग्रह)	३.००
राम-वर्षा (भाग १)	४.००
राम-वर्षा (भाग २)	३.००
स्वामी राम की जीवन-कथा	१०.००

पुस्तक नाम	मूल्य
नक़द धर्म	६० पैसे
राम के चुने पत्र तथा वचन	५० पैसे
उपासना	७५ पैसे
सुधार	३५ पैसे

स्वामी राम द्वारा प्रशंसित वेदान्त के अनुपम ग्रन्थ

(आत्मदर्शी बाबा नगीना सिंह वेदी रचित)

१— वेदानुवचन (वेदान्त-दर्शन की सरल व्याख्या)	७.००
२— भगवत्-ज्ञान के विचित्र रहस्य	३.००
३— आत्मसाक्षात्कार की कसौटी	३.००
४— जगजीत-प्रज्ञा	१.००

श्रीमद्भगवद्गीता की एक सर्वश्रेष्ठ व्याख्या

(श्रीमन्नारायण स्वामी कृत)

प्रथम भाग— केवल भूमिका	१०.००
द्वितीय भाग— प्रथम से षष्ठ अध्याय पर्यन्त	१०.००
तृतीय भाग— सप्तम से अष्टम अध्याय पर्यन्त	१०.००

उर्दू ग्रन्थ

कुल्लियाते राम (भाग १) मूल्य ४.००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वेदान्त व्यवहार में

"वेदान्त इस जगत की ही चर्चा करता है। वह स्वर्ग की चर्चा नहीं करता। वेदान्त का स्तर अलग है, इसी जन्म में मुक्ति पाने की बात है। वेदान्त इसी जगत की विद्या है। वेदान्त की उत्तर मीमांसा में इस जगत की ही बात है। तुलसीदासजी ने कहा है कि— "सुरपुर कहाँ है ? यमपुरी कहाँ है ? राम के गुलाम को तो यह जगत ही बहुत अच्छा लगता है।"

वेदान्त समझने के बाद, ज्ञान के साक्षात्कार के बाद, मनुष्य का क्या होता है ? उत्तर है कि वह जीवन मुक्त होता है। घूमते फिरते, सब व्यवहार करते हुए भी वह समाधि में रह सकता है। वेदान्त के तथा भक्तिमार्ग के तत्वज्ञान का सम्बंध इस जगत के साथ बहुत अधिक है, स्वर्ग अथवा दूसरे जगत के साथ बहुत कम। इसके अलावा यह भी बात है कि हमारा धर्म किसी दूसरे धर्म को झूठा नहीं मानता। सारे धर्मों और पंथों को वह मान्यता देता है, अतः वेदान्त सही माने में 'सेक्यूलर' है। सेक्यूलर का एक अर्थ यह भी है कि किसी पंथ का नहीं। किसको आत्मा मान्य नहीं है ? यहूदियों को आत्मा मान्य नहीं है या मुसलमानों को आत्मा मान्य नहीं है ? क्या उनकी किताबों ने 'मैं' का स्वरूप खोजा नहीं है ? क्या 'मैं' और ईश्वर का स्वरूप अथवा दोनों के सम्बन्ध का उल्लेख नहीं है ?— ये तो सब धर्मों में हैं।

स्वामी विवेकानन्द जी से लेकर स्वामी अखण्डानन्द जी तक, वेदान्त की भाषा में कहीं ऐसा नहीं लगा कि यह थोड़े लोगों के लिए ही हैं जो हिन्दू कहलाते हैं। सब धर्मों, सभी सम्प्रदायों में वेदान्त एक-सा है। सच्ची अध्यात्म विद्या सर्वत्र समान एवम् साम्प्रदायिकता से मुक्त हैं।

— बी. एस. पागे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आश्रम समाचार

दिनांक १-१२-७८ से ६-१२-७८ तक आचार्यप्रवर श्री परमाध्यक्ष जी महाराज ने आश्रम में निवास किया। दिनांक २ दिसम्बर ७८ को ब्रह्मलीन श्री स्वामी हरिॐ जी महाराज का निर्वाण दिवस उत्सव प्रारम्भ हुआ। दिनांक २ को रामायण का अखण्ड पाठ रखा गया तथा दिनांक ३ को प्रातः पाठ की समाप्ति और मन्दिर के सामने हवन इत्यादि हुआ।

दिल्ली से पधारी हुई श्रीमती माता मेला देवी जी, श्रीमती निर्मल भण्डारी जी, श्रीमती गोविन्दलाल बाँगा एवं श्री बाँगा सा० तथा कुवैत से पधारे हुए श्री जौली आदि रामप्रेमियों ने यज्ञ की पूर्णाहुति में भाग लिया।

सायंकालीन सत्संग में हरिद्वार से पधारे हुए डा० स्वामी श्याम सुन्दरदास जी एवं श्री माधवाचार्य जी ने अपने मधुर उपदेश के द्वारा निर्वाण-दिवस मनाने के महत्त्व पर प्रकाश डाला। तत्पश्चात् श्री परमाध्यक्ष जी महाराज के आशीर्वाद के पश्चात् सत्संग की समाप्ति हुई।

दिनांक ४ को प्रातः गीता, उपनिषद् पाठ की समाप्ति के बाद हवन इत्यादि हुआ। तत्पश्चात् देहरा ून एवं दिल्ली इत्यादि से पधारे हुए रामप्रेमियों ने कीर्तन आदि के माध्यम से सत्संग किया। इसी दिन १० बजे समाधि पूजन और श्रद्धाञ्जलि का कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। सभी रामप्रेमियों ने अपनी भावभीनी श्रद्धाञ्जलि श्री हरिॐ जी महाराज के चरणों में समर्पित की तथा उनके बताये हुए पथ पर चलने की प्रेरणा ली। श्रद्धाञ्जलि के पश्चात् भण्डारे के साथ साथ उत्सव की सम्पन्नता हुई।

दि० ९ को श्री परमाध्यक्ष जी महाराज चिरञ्जीव विनोदपुरी की शादी में सम्मिलित हो नव दम्पत्ति को आशीर्वाद देकर दिनांक १२ दिसम्बर ७८ को दिल्ली प्रस्थान किया। वहाँ से गुजरात, नडियाढ़, बड़ौदा आदि जगहों में रामप्रेमियों को उपदेश एवं आशीर्वाद प्रदान करने के पश्चात् बम्बई के लिए प्रस्थान किया। वहाँ पर हरि कुञ्ज में महाराज श्री का प्रवचन चल रहा है।

इस मास के अन्त तक श्री परमाध्यक्ष जी के आश्रम में पधारने की सम्भावना है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूरभाष– ८४२२५ राजपुर, ४२६७ देहरादून, तार का पता–(वेदान्त) देहरादून, रजि. नं. डी. एन. १५

* प्रेम *

इच्छ मात्रा प्रेम है और प्रेम ही ईश्वर है और वही ईश्वर तुम हो।

* * *

प्रेम में न छुटाई है, न बड़ाई, न उँचाई, न निचाई।

* * *

भय केवल घनीभूत प्रेम है, अन्यथा प्रेम भय पर कैसे विजयी हो सकता था ?

* * *

दिखावटी प्रेम, झूठी भावनायें और कृत्रिम भावुकता— ये सब ईश्वर के प्रति अपमान है।

* * *

यह सत्य है कि बकवादियों, बाहरी नामरूपों में विश्वास करने वालों, और लज्जाजनक 'प्रतिष्ठा' के निर्लज्ज दासों की संगति के समान और कोई विषैला पदार्थ नहीं है। परन्तु यह भी सत्य है कि जहाँ पर प्रेम का डेरा जमता है, वहाँ पर कोई भी गुस्ताख़ आवारा पर नहीं मार सकता।

—स्वामी राम

बुक पोस्ट

ग्राहक संख्या ५३५

श्री/श्रीमती ... तुलसीराम पुस्तकालय

स्थान ... तुलसीपाड़ी (पिथौरागढ़)

डाकख़ाना ... ...

जिला ... ...

मासिक पत्र—

"राम–सन्देश"

स्वामी रामतीर्थ मिशन

राजपुर, देहरादून (उ. प्र.)

Pin–248009 भारत

स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून (उ० प्र०) के लिए प्रकाशक स्वामी अमर मुनि द्वारा शहन्शाही सर्वहितकारी प्रेस, राजपुर (देहरादून) में, मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम - सन्देश

संस्थापक—
ब्रह्मलीन स्वामी हरिॐ जी महाराज

संवर्धक—
ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्दप्रकाश जी महाराज

व्यवस्थापक—
स्वामी अमर मुनि जी महाराज

सम्पादक—
काका हरिॐ "निर्द्वन्द्व"

आजीवन सदस्यता शुल्क—

भारत में	—	१०० रु०
विदेश में	—	५०० रु०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* विषय-विज्ञान *

विषय	लेखक	पृष्ठ
कुरुक्षेत्र	... 'दिनकर'	१
प्रवचन	... ब्रह्मलीन स्वामी हरिॐ जी महाराज	२
जगत में कुछ भी बुरा नहीं है	... श्री जे० पी० वासवानी	४
न जानें किन उमीदों पर ... !	... श्री गुणानन्द जी थपलियाल	७
हिन्दी-सन्त-साहित्य की अमर विभूति : स्वामी राम	... श्री विद्यानन्द जी "ब्रह्मचारी"	८
वेदान्त के भिन्न-भिन्न सिद्धान्तों के अनुसार भगवान	... श्री प्यारेलाल शर्मा एम० ए०	११
रामायण चरित्र चित्रण	... श्री स्वामी तीर्थानन्द जी	१४
घोड़ा — मन की लगाम	... श्री हरिकिशनदास जी अग्रवाल	१५
समर्पण	... पं० श्री भजनानन्द जी महाराज	१६
पंचशील	... सर्वपल्ली डा० राधाकृष्णन्	१९
उपकार	... श्री स्वामी विज्ञानानन्द जी	२०
फार्म ४	... ...	२१
लगन ऐसी होनी चाहिये	... एक संस्कृत प्रेमी	२२
आश्रम समाचार	... सम्पादक	२४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ॐ

'राष्ट्र के हित के लिए प्रयत्न करना ही विश्व की शक्तियों अर्थात् देवताओं की आराधना है'–स्वामी राम

वेदान्त, अध्यात्म, संस्कृति, धर्म एवं भक्ति का सजग सन्देशवाहक तथा
स्वामी राम के आदर्शों का एकमात्र लोकप्रिय मासिक—

राम सन्देश

वेदोपनिषदां तत्त्वम् सत्यं नित्यं सनातनम् ।
तत्सर्वं "रामसन्देशे" पत्रेऽस्मिन्नवलोक्यताम् ॥

वर्ष २८ | अंक ३ | राजपुर– देहरादून— मार्च १९७९. | वार्षिक भेंट १०) | एक प्रति ८५ पैसे

कुरुक्षेत्र

हाय रे मानव, नियति का दास !
हाय रे मनुपुत्र, अपना आप ही उपहास ?
प्रकृति की प्रच्छन्नता को जीत,
सिन्धु से आकाश तक सबको किये भयभीत,
सृष्टि को निज बुद्धि से करता हुआ परिमेय,
चीह्नता परमाणु की सत्ता असीम अजेय,
बुद्धि के पवमान में उड़ता हुआ असहाय,
जा रहा तू किस दिशा की ओर को निरुपाय ?
लक्ष्य क्या ? उद्देश्य क्या ? क्या अर्थ ?
यह नहीं यदि ज्ञात तो विज्ञान का श्रम व्यर्थ ।

—'दिनकर'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीता भवन अमृतसर में ब्रह्मलीन स्वामी हरि ॐ जी महाराज द्वारा दिया गया —

प्रवचन

माताओ, देवियो व सज्जनो !

हम सबको दृढ़ प्रतिज्ञा और निश्चय के आधार पर किसी स्तर पर स्थित होना है। और अपने इसी जीवन में उस परम लक्ष्य की प्राप्ति करनी है। स्वामी राम कहते हैं— "तुम सोचो, तुम समझो, तुम करो और अवश्य तुम फिर भी गिरोगे। प्रति वाधाओं से घबराने की आवश्यकता नहीं। फिर उठो फिर चलो। गिरा बच्चा उठकर इधर-उधर देखता है मुझे गिरे किसी ने देखा तो नहीं। हम अपनी भावनाओं से गिर जाते हैं। कोई हमारे इस पतन भाव को समझे ही न। इस तरह उठकर आगे बढ़े। यह नहीं कि सालों भर गिरे रहें। उठे ही न, जागे ही न।

स्वामी राम आनन्द का कुछ भावार्थ बताते हैं कि आनन्द क्या है। छोटा बच्चा शिशु है। उसका सारा आनन्द गोदी में गड़ा पड़ा है। दुनिया की जायदाद से उसे किसी प्रकार की आसक्ति नहीं। धीरे-धीरे उसका आनन्द गुड्डियों-पटोलों में चला जाता है। फिर स्कूल में, फिर कॉलेज में, परन्तु उच्च डिग्री लेने पर भी अच्छे आनन्द का रूप धारण न कर सका; विद्याग्रहण कर नौकरी की तलाश करता है। आनन्द का केन्द्र अब धन बन जाता है। परन्तु आनन्द की छठीं भूमिका में वह स्त्री में लौट जाता है। और फिर स्त्री सुख विषय चिन्तन में लग जाता है। उस विषय के सुख झकोले थोड़े दिन लेता है। फिर आनन्द का केन्द्र बच्चा बनाता है। यात्रा ही यात्रा करता चला जाता है। हैनरी, अरविन, पूरोपियन फिलासफर लिखते हैं— कि दुनिया के आधे लोग सुख की तलाश सांसारिक पदार्थों के अपनाने में, धन (जायदाद) में, मान में करके आनन्दित होना चाहते हैं। परन्तु आनन्द यहाँ नहीं है।

"दे-दे हर बार दे, हर श्वास दे !" आनन्द दूसरों के देने, सेवा करने में है। यह वेदान्त का रहस्य है। संसार के धर्मों को स्वामी राम ने Win किया, जीता।

प्रार्थना क्या है ? धर्म के लिए पर अर्थ होते चले जाना ही प्रार्थना का स्वरूप है। और कोई स्वरूप नहीं। यह पराकाष्ठा की प्रार्थना है। हमारी प्रार्थना पूर्ण क्यों नहीं होती ? श्रुति माता तो पुकार-पुकार कर कह रही है कि वह तेरे अन्दर है। वायरलेस ने सिद्ध किया कि यह मेरी आवाज कोने-कोने में जाती है। तो परमात्मा ही इतना बहरा है जो न सुने ? बल्कि भावना की गति और भी तीव्र है। शब्द सूक्ष्म है। हमारी प्रार्थना का तरीका ही गलत है। प्रार्थना का अर्थ है देना समर्पण होना।

जो वस्तु जहाँ से उत्पन्न होती है, वहीं समाप्त होती है। जो भावना जहाँ से उठती है, वहीं आकर समाप्त होती है। जल की बूँद पृथ्वी से उठती है। ऐवरेस्ट पर भी जाकर उसे फिर पृथ्वी पर बरसना ही है। इसी प्रकार हमारी इन्द्रियों द्वारा जो भी बाहिर जा रहा है, प्राणियों के साथ जैसा भी व्यवहार हम कर रहे हैं, लौट कर फिर हमारे पर ही वापिस आता है। इसी आधार पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्म-चिन्तन और प्रभु-भक्ति को रखा गया है। चिन्तन करने वाला परब्रह्म स्वरूप होता चला जाता है। "ध्याने-ध्याने तद्रूपता" जौन सैलन फिलासफर और रिसर्चर सफल हुआ था। महापुरुष जो वस्तु प्रयोग में लाते हैं। सिद्ध करके दुनिया में ठिठोरा कर देते हैं। सत्संग का महातम क्यों लिखा है ? घड़ी दो घड़ी ध्यान उधर बनता चला जाता है। मनुष्य की धन, दारा तो चलती आ रही है। परन्तु एक अज्ञान वृत्ति भी रख दी गयी है। ताश खेलते हैं, हार-जीत लगी रहती है। टीमें इंग्लैण्ड खेलने जाती हैं। यदि विरोधी पार्टी न होती तो खेल का कोई मजा ही न था। एक मिनट में (बाल) गेन्द परे चला जाता है। यद्यपि अज्ञान है नहीं, परन्तु अज्ञान अज्ञान न होता तो ज्ञान कोई चीज न थी। जैसे ताश में न हार है, न जीत। झूठा बादशाह, झूठी मेम इत्यादि होते हैं। अज्ञान न होता तो ज्ञान कोई वस्तु न थी, रात को दिन आच्छादन करता है। जवानी को जरा, जरा को मृत्यु, मृत्यु को भय, इसी प्रकार ज्ञान और अज्ञान भी दो चीजें हैं। लेकिन तुम्हारा चित्त दुःखी क्यों होता है ? तुम तो धन के जुवारिये से भी कमजोर ही हो। एक जुवारिये के अन्दर साहस होता है। इसी तरह भगत को बनाना है। जितने दुःख अधिक आते हैं, शोक अधिकाधिक बढ़ता जाता है। ताश वाले को ताश खेलने दो, जुये वाले को जुआ, लेकिन तुम को तो भगवान का दाव लगाना है। न जाने किस आत्म समर्पण का दाव लग जाए कि ... ...।

स्वामी राम इन्द्रियों के विषय में लिप्त हो परमात्मा को नहीं भूलते थे। वह जब गुलजार में से गुजरते तो नाक नहीं सिकोड़ लेते थे। योग वशिष्ठ कैसे बना है ? सप्त लोकों में होते हुए भी वशिष्ठ भगवान मृत्युलोक में वास करने क्यों आये ? राजा रघु को वरदान देते हैं। तू दशरथ के रूप में मृत्युलोक में आ और राम रूप में मैं आऊँगा। वहाँ मुझे और भी एक-दो काम करने हैं। रावण का भी उद्धार करना है और राक्षसों का हनन भी। वशिष्ठ जी को कहा आप सूर्य कुल में पुरोहित बन कर आवें ! वे कहने लगे बड़ी मुश्किल से मैंने संसार से पल्ला छुड़ाया। परन्तु भगवान कहते हैं— "मम माया दुस्तर्या।" आप बचपन में मुझे बता देना मैं आत्मा हूँ। हम तो जब सूर्य आता है। धूप को पकड़ते हैं। प्रकाश स्वरूप हम धरती को समझते हैं। और हे सूर्य्य। अन्धकारमयी पृथ्वी का भाग प्रकाशवान हो जाता है। और प्रकाशित भाग अन्धकारमय हो जाता है। इसी तरह जैसे कि पहले बताया आनन्द सफर करता है। जीव आनन्द को वस्तुओं में तलाश कर रहा है। आत्मा आनन्द को चीजों में तलाश करता है और राम के लिए सेवा का टाईम आता है। तो संशय विपर्यय में पीछे हट जाता है।

लड़के, लड़कियाँ और दामाद क्यों प्रिय हैं ? एकाग्रता कर आत्म आनन्द उन पर आच्छादित कर लेता है। जिस पर एकाग्रतापूर्वक ध्यान देता है, वही चीज प्रिय हो जाती है। तूने ही इनको प्रेम दृष्टि डाल कर प्रिय बना रखा है। तेरा आत्मरूपी सूर्य उन पर चमक रहा है। चप्पे-जमीन पर फूले नष्ट हो जाता है। आनन्द का केन्द्र किसे बनाना है। धन्य है वह जिसने आत्म आनन्द की शक्ति कृष्ण व सन्त व गुरु पर छोड़ रखी है। जिसने अपनी शक्ति की झलक दुनिया के पदार्थों पर छोड़ रखी है। उससे बढ़कर कौन भाग्यहीन है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जगत में कुछ भी बुरा नहीं है

श्री जे० पी० वासवानी

(अनु०— भारत बन्धु शर्मा, दिल्ली)

पूर्णत्व पहले से विद्यमान है और हमें इसे अनुभव करना है। संसार में कुछ भी बुरा नहीं है। यदि इसमें कुछ अटपटा दिखायी देता है, तो यह मेरी अपनी दृष्टि का दोष है। अतः मुझे भगवान से यह प्रार्थना नहीं करनी है कि इस संसार में परिवर्तन हो वरन् मुझे यह कामना करनी है कि मेरी दृष्टि का दोष दूर हो।

एक माली था, उसको अपने उद्यान के प्रत्येक वृक्ष, पौधे और झाड़ी से प्रेम था, इस कारण वह बाग की किसी भी वस्तु को बाहर नहीं फेंकता था। सूखे पत्ते, मुरझायी हुई शाखा और सूखे हुए फूलों को भी वहाँ रखता जाता, धीरे धीरे उद्यान में इनका ढेर लग गया और वह एक मरुस्थल की भाँति दिखायी देने लगा।

क्या हममें से अधिकांश उस माली की तरह नहीं हैं ? हम अपने आप में चिन्ताओं, मानसिक-व्यथाओं एवं अवरोधों, असन्तोष और निराशाओं के ढेर के ढेर लगाते जाते हैं, इनको फेंक कर भूल जाना कहीं श्रेयस था। इस तरह हमारे जीवन की सुन्दर वाटिका एक मरुस्थल का रूप ले रही है। इस भार को वहन करने के स्थान में हमें परमात्मा की ओर मुख करके उससे प्रार्थना के द्वारा सम्पर्क स्थापित करना चाहिए।

प्रार्थना से शान्ति (भीतरी तथा हमारे चारों ओर की) प्रवाहित होती है। प्रार्थनाशील व्यक्ति सभी परिस्थितियों में सबके मध्य शान्ति से विचरता है, क्योंकि उसका हृदय एकमात्र परमात्म-सत्ता से एकात्मकता प्राप्त किये हुए है। तूफान से उद्वेलित नौकाओं के सदृश हम कभी दूसरों के प्रति और सब जगह शान्ति अनुभव नहीं करते हैं। हमने तो अवरोध का मार्ग अपनाया हुआ है। हम व्यक्तियों तथा परिस्थितियों के साथ जूझते और उनमें दोषारोपण करते रहते हैं। हम अपनी समूची शक्ति का परिस्थितियों में सुधार लाने तथा दूसरों के हृदय में परिवर्तन लाने में अपव्यय करते रहते हैं। इस सम्बन्ध में अपने आप में सुधार लाने की नितान्त आवश्यकता है और यह परमात्मा से सम्पर्क स्थापित करने से ही सम्भव हो सकता है।

प्रार्थना में आस्था रखने वाला व्यक्ति अपने जीवन की सभी परिस्थितियों में शान्त रहता है। उसके लिए सभी कार्यों में पवित्रता की झलक होती है। वह कभी 'बढ़िया' अथवा 'घटिया' कार्य का वर्गीकरण नहीं करता। वह इस सत्य को जानता है कि कार्य के क्षेत्र की अपेक्षा उसको करने की विधि कहीं अधिक महत्व रखती है। उसका कार्य, भले ही वह अटपटा दिखायी देता हो, भगवान के अर्पण होता ह। ऐसा व्यक्ति किसी कारखाने में हो रहे शोर में हो अथवा किसी एकान्त खेत में, उसके मन का सन्तुलन बिगड़ने नहीं पाता। वह किसी मन्दिर में अकेले बैठ कर प्रार्थना करे या आने-जाने वालों की भीड़ में पत्थर तोड़ने में लगा रहे, उसका मन सर्वदा शान्त रहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसका मन पूर्ण रूप से सभी परिस्थितियों में तथा सभी प्रकार के व्यक्तियों के साथ रह कर निश्चल एवं शान्त रहता है, क्योंकि वह परमसत्ता में केन्द्रित हो चुका है। वह जहाँ कहीं जाता है, भगवान के चरणारविन्द में अपने ध्यान को केन्द्रित रखता है। उसके हृदय का प्रेम सभी में सर्वत्र प्रतिबिम्बित होता रहता है, वह अपने चारों ओर व्यापक 'प्रेम' के दर्शन करता है जो परमात्मा के सिवाय और कोई नहीं है। जो महापुरुष सभी पदार्थों तथा व्यक्तियों में परमात्मा के दर्शन करता है, एकमात्र वही शक्ति प्राप्त करता है।

हम सबके भीतर आनन्द तथा शान्ति का सरोवर हिलोरें लेता रहता है। हम प्रार्थना के माध्यम से इस सरोवर तक पहुँचते हैं और अपनी पिपासा को शान्त करके नवजीवन, नवोत्साह और नवशक्ति की अनुभूति करते हैं। लेकिन यह देखने में आता है कि हममें से अधिकांश को इस भीतरी सरोवर के लिए मार्ग प्रशस्त करने के बजाय प्रार्थना भाररूप सिद्ध होती है।

मुझे भी इस प्रकार की अनुभूति हुई। कई वर्ष हुए अपनी परिस्थितियों से सन्तुष्ट तथा प्रसन्न न रहते हुए मैं उनको बदलने की कामना करने लगा। मैंने इस दृष्टि से जितनी अधिक प्रार्थना की, उतनी ही निराशा मुझे प्राप्त हुई और उन परिस्थितियों में रंचमात्र अन्तर न पाया।

मैंने निरन्तर प्रार्थना की, किन्तु निराशा ने मेरा पीछा न छोड़ा और परिस्थिति ज्यों की त्यों बनी रही। तब भी मैंने अधिक बल से प्रार्थना की शरण ली, किन्तु कोई परिवर्तन न हुआ। प्रार्थना ने मेरे मस्तिष्क पर इतना गहरा प्रभाव डाला कि प्रतिक्रिया के रूप में मैंने प्रार्थना करनी ही बन्द कर दी। तदनन्तर सहसा एक विचार आया कि उसके लिए बाह्य परिस्थितियों से परिवर्तन लाने की आवश्यकता नहीं है? अपितु मुझे अपने भीतर ऐसे दृष्टिकोण को अपनाना है जिससे मैं बाह्य जगत के पदार्थों के वास्तविक रूप को समझ सकूँ।

वस्तुतः प्रत्येक पदार्थ ऐसा है जैसा उसे होना चाहिए; हर वस्तु क्रमबद्ध है। विश्व में जो भी है वह सही है और प्रारम्भ से सही चला आ रहा है। भविष्य में भी इसका अस्तित्व इस प्रकार बना रहेगा। यदि कोई कमी है तो वह हमारी उसे देखने की गलत विधि है। मानव के प्रयास से संसार में पूर्णता लाना सम्भव नहीं है। पूर्णता तो पहले ही है, किन्तु उसे ठीक तरह से समझने की हममें कमी है।

तो फिर क्या कारण है कि हमें संसार में दिखायी दे रहे धूर्तता, निर्दयता, पाप, अत्याचार और अपराधों में प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है? इसका उत्तर है हमारी अपनी दृष्टि में दोष का होना। हमें जगत में सब कुछ विकृत एवं अशोभनीय दिखायी दे रहा है। इन पंक्तियों को लिखते हुए मेरी दृष्टि खिड़की के शीशों में से नीचे सड़क पर पड़ती है। शीशों की सतह उभरी हुई होने से मुझे नीचे के वृक्ष, भाग रही मोटर गाड़ियाँ आदि टेढ़ी-मेढ़ी तथा हास्यास्पद आकार की दीख रही हैं। वस्तुतः इनके आकार में कोई भी विकार नहीं है; केवल खिड़की के शीशे के कारण वे ऐसी दीख रही हैं।

संसार में कुछ भी अनुचित नहीं है, पदार्थ को उनके यथार्थ रूप में न देख पाने के लिए मेरी अपनी दृष्टि का दोष है। अतः मुझे संसार में कोई परिवर्तन लाने की अपेक्षा अपने दृष्टिकोण में समुचित सुधार लाने के लिए प्रार्थना की शरण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेनी होगी। तभी मुझे इस सत्य का अनुभव होगा कि संसार अनादिकाल से अपने सही रूप में गतिमान हो रहा है।

बाहर दिखायी देने वाले दोष वस्तुतः हमारे अपने भीतर हैं। हमारी चेतन-शक्ति निम्न वर्ग के चक्रों में फँसी रहती है, इसको सन्तुलन करने से ही इसके विकसित होने पर यह सकल ब्रह्माण्ड के साथ तादात्म्य कर पायेगी। तभी हमारे ज्ञान-चक्षु खुलेंगे और हम अपने चारों ओर सब कुछ यथार्थ रूप में देख सकेंगे। प्रार्थना का मुख्य उद्देश्य इस तथ्य को हृदयंगम करना है।

प्रार्थना करते समय हम अपने समूचे मानसिक भार तथा चिन्ताओं को तिलाञ्जलि देकर अपने हृदय को उन्नत करके भगवान के साथ मौन रूप से तादात्म्य करते हैं। प्रार्थना करते हुए हमारा डाँवाडोल मन भगवान के प्रेम में सराबोर होकर शान्त हो जाता है। इस प्रकार प्रार्थना करते हुए हमारा सम्बन्ध उस भगवान से जुड़ जाता है जो स्वास्थ्य एवं शक्ति, प्रसन्नता एवं सामंजस्य, सौन्दर्य एवं बुद्धिमत्ता, हर्ष एवं शान्ति का आदि-स्रोत है। इस सम्पर्क से हममें असंख्य विभूतियों का प्रवेश होकर उन सभी में संचार होता है जो हमारे सम्पर्क में आते हैं। फिर हम शुष्क मरुस्थल में विचरें अथवा ऊँचे पर्वतों में, हम कभी लड़खड़ाते या घबराते नहीं।

इस कोटि के जीवन का रहस्य उस परमसत्ता के सम्पर्क में निरन्तर रहता है जिससे वे जीवन-धाराएँ प्रवाहित होती रहती हैं जो हमारे शरीर, मन और अन्तरात्मा को मल-मुक्त, आधि-व्याधि रहित और नवोत्साह से विभूषित करती हैं। धन्य है वह महापुरुष, जिसने परमात्मा में अपने समूचे जीवन को केन्द्रित कर दिया है और जो उस सनातन सत्ता को सर्वत्र विद्यमान मान कर उसकी शरण लेता है; ऐसे महात्मा प्रार्थना में अपना अधिकतर समय व्यतीत करते हैं और प्रार्थना से प्राप्त बल से वे ऐसे चमत्कार दिखलाते हैं जो उनके घनिष्ठ मित्रों को भी ज्ञात नहीं होते।

इस उत्कृष्ट कोटि के सन्त कार्य करने के स्थान में उसमें सफल होते हैं और उनकी प्रार्थना समय-समय पर विभिन्न रूप धारण करती है, कभी वे उल्लास की दृष्टि से देखते हैं तथा कभी प्रेम-पूर्ण शब्दों में रहने लगते हैं— तू ही तू है। किसी समय वे आस्था एवं विश्वास से पूर्ण आश्वासन देते हैं अर्थात् विश्वास तथा साहस की अभिव्यक्ति करते हैं। वे कभी आत्म-ग्लानि को स्थान नहीं देते, क्योंकि उन्हें पूर्ण विश्वास है कि परमात्मा हमसे कहीं अधिक अपने सेवकों की आवश्यकताओं को समझते हैं और उनकी पूर्ति में कोई कमी नहीं रखते, यदि इस पूर्ति में कोई विलम्ब होता है तो दूसरा अभिप्राय अपने सेवक को उससे वंचित रखना नहीं, जो कुछ भी परम शक्ति करती है उसमें "दया" का समावेश रहता है।

प्रार्थना करने वाला व्यक्ति अपने परिवार, समुदाय, नगर, अपने देश— वरन् समूचे विश्व ब्रह्माण्ड के लिए वरदान सिद्ध होता है। वह तो परमात्मा का सजीव चलता-फिरता मन्दिर है। वह परमात्मा में रहता है तथा परमेश्वर उसमें व्याप्त है और दोनों एक रूप होते हैं। उसके सभी अंग तथा उसका समूचा बल (अर्थात् उसके नेत्र, हाथ-पाँव, मुख-जिह्वा, नाक-नख आदि) परमात्म-सत्ता से जुड़े रहते हैं। उनकी वाणी के माध्यम से भगवान हमें सम्बोधित करते हैं, उनके नेत्रों में से हमें देखते हैं और उनके हाथों के माध्यम से प्रभु हम पर अपनी कृपा की वर्षा करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न जानें किन उमीदों पर....!

श्री गुणानन्द जी थपलियाल

नहीं उपचार कुछ बाकी, नहीं कुछ साधना रहती।
न जानें किन उमीदों पर, अभी भी जिन्दगी कटती॥

सहारा जब लिया जिसका,
वही तो दूर हो जाता।
किनारा जब जिसे समझो,
वही मँझधार बन जाता।
वही नैया, वही नाविक,
सदा दुश्वार हो जाता।
अचम्भा हाथ से फिर भी, वही पतवार क्यों हिलती ?

वही सपने अधूरे हैं,
हमें जो बहुत भाये थे।
वही स्वर बेसुरे लगते,
मधुरतम जो बताये थे।
वही अब शूल से चुभते,
यहाँ जो गीत गाये थे।
अभी भी बेसुरे स्वर से, वही सरगम बजा करती।

शिथिल है तन-बदन सारा,
न आँखें देख सकती हैं।
चला उड़ प्राण का पंछी,
न बुद्धि सोच सकती है।
नहीं अब कान सुन सकते,
न जिह्वा बोल सकती है।
अभी भी साँस आता है, अभी भी धड़कनें चलतीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी-सन्त-साहित्य का अमर विभूति : स्वामी रामतीर्थ

श्री विद्यानन्द जी "ब्रह्मचारी" (राँची) बिहार

मैंने अपने शोध-प्रबन्ध "हिन्दी-सन्त-साहित्य के विकास में स्वामी रामतीर्थ का योगदान" में नवयुवक संन्यासी स्वामी रामतीर्थ के सम्बन्ध में अनेक मुख्य तथ्यों पर विचार किया है। इस सम्बन्ध में हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि स्वामी रामतीर्थ सर्व सम्मति से विश्व के महानतम पुरुष के रूप में हमारे समक्ष उपस्थित होते हैं। अपने अल्प कालीन जीवन काल में आत्मत्याग और सत्यप्रेम के जो आदर्श उन्होंने संसार के समक्ष ला रखें हैं, वे स्तुत्य हैं। उनके सत्य सन्देश ने भारत की सुप्त जनता को जगा दिया है। उनका परोपकार व्रत मनुष्य जाति के इतिहास में दृष्टान्त स्वरूप है। कोई आश्चर्य नहीं, यदि भावी सन्तान उन्हें साक्षात् ईश्वर का अवतार ही समझने लगे। हालांकि मैंने एक प्रकाशित लेख में उन्हें "आधुनिक ईसा मसीह" कहकर सम्बोधित किया है। उनके अनेक चमत्कारी तथ्यों के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे, जिससे उन्हें "आधुनिक ईसा मसीह" कहा गया है। यह कथन अमेरिका के किसी पत्र में भी छपा था कि—

"A living chriest has came to America."

इस सन्देश में विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न स्वामी रामतीर्थ ने जन मानस के हृदय पटल पर एक अत्यन्त प्रज्ञा चक्षु सन्त के रूप में विश्व ख्याति अर्जित की। जिस प्रकार विक्रमादित्य के दरबार में अनेक नवरत्नों में महा कवि कालिदास अग्रगण्य थे, उसी प्रकार आधुनिक सन्त साहित्य के इतिहास में उनका नाम अमर है। सच कहा जाय तो वे आधुनिक युगीन सन्त-साहित्य के सिरमौर हैं। उनकी विलक्षण प्रतिभा, प्रकाण्ड विद्वत्ता, आत्मत्याग की बहुलता चरम सीमा पर थी। शायद इसी कारण से तत्कालीन भारतीय और पाश्चात्य विद्वानों ने मुक्तकण्ठ से स्वामी जी के काव्यों और व्यावहारिक वेदान्त परक व्याख्यानों की प्रशंसा की है।

स्वामी जी में शैशव काल से ही अद्भुत प्रतिभा के लक्षण प्रकट होने लगे थे। उनकी बुद्धि बड़ी प्रखर थी। सन् १८९५ में पंजाब युनिवर्सिटी से एम० ए० (गणितशास्त्र) परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण करने के साथ नया कीर्तिमान स्तम्भ स्थापित किया। स्वामी जी को विभिन्न विषयों के अध्ययन का बड़ा चाव था। उन्होंने गणितशास्त्र, दर्शनशास्त्र, भौतिकविज्ञान, रसायनशास्त्र, संस्कृत, उर्दू, फारसी, इतिहास, भूगोल आदि विषयों को लेकर एट्रेंस, एफ० ए० और बी० ए० की परीक्षा भी प्रथम श्रेणी में पास की। सन् १८९५ ई० के अप्रैल में लाहौर के मिशन कॉलेज में गणितशास्त्र के सीनियर प्रोफेसर के पद पर प्रतिष्ठित हुए। उस समय उनकी उम्र लगभग बाइस साल की थी। यहीं से उनका कार्य क्षेत्र प्रारम्भ होता है। वे एक साथ कुशल गणित वेत्ता, शिक्षक, सहृदयमित्र, विनम्र सेवक और महान सहयोगी थे, जिसके कारण उन्हें कॉलेज के सभी वर्गों से सहानुभूति और सम्मान मिला। सभी लोग उनका आदर किया करते थे। स्वामी जी के शिष्य उनके प्रति श्रद्धा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवं आदर-भाव रखते थे। कुछ काल तक लाहौर ओरियन्टल कॉलेज में "रीडर" पद पर कार्य किये। उनकी विद्वत्ता से प्रभावित होकर सन् १९०३ ई० में अमेरिका की बारह युनिवर्सिटियों ने मिलकर उन्हें "डॉक्टर आफ लॉज" की उपाधि से अलंकृत करना चाहा, लेकिन स्वामी जी ने स्पष्ट रूप से कहा—"मैं अपना अहं" बढ़ाना नहीं चाहता, चूंकि मेरे नाम के आगे और पीछे "स्वामी" और "एम० ए०" की उपाधि स्वयं है।

स्वामी जी का आत्मत्याग अत्यन्त ही प्रेरणाप्रद है। उन्होंने जुलाई १९०० ई० "रीडर" पद से इस्तीफा दे दिया और स्पष्ट शब्दों में अपने त्याग-पत्र में लिख दिया—"राम बादशाह अब किसी का नौकर नहीं रह सकता केवल उस परमात्मा के सिवा।" तत्पश्चात् स्वामी जी अपनी पत्नी, दो पुत्र, एक पुत्री और कुछ शिष्यों सहित टिहरी के समीप सेठ मुरलीधर की कुटिया में ठहरे और कुछ दिनों के बाद वहीं सन्यास ग्रहण कर "तीर्थराम" से "स्वामी रामतीर्थ" के नाम से ख्याति प्राप्त की। इनके संन्यास धारण करने पर काशी के "सुदर्शन" नामक पत्रिका में "युवासंन्यासी" के शीर्षक से एक लम्बी कविता प्रकाशित हुई थी, जिसमें उनके "व्यंगमय जीवन" का सही चित्रण प्रस्तुत किया गया था, जिसका कुछ अंश इस प्रकार है—

"गुण निधान मतिमान सुखी सब भाँति एक लवपुरवासी,
युवा अवस्था बीच विप्रकुल केतु हुआ है संन्यासी।
वृद्ध पिता-माता की आशा बिन ब्याही कन्या का भार,
शिक्षाहीन पुत्रों की ममता पतिव्रता नारी का भार।
चिर सहचरी क्रियाओं छोड़ी रम्य तटी रावी छोड़ी,
शिखा सूत्र के साथ हाय उन बोली पंजाबी छोड़ी।
धन्य पंचनद भूमि जहाँ इस बड़भागी ने जन्म लिया,
धन्य जनक जननी जिनके घर इस त्यागी ने जन्म लिया।"

गत ३ फ़रवरी १९७८ ई० को जयपुर में स्वामी जी के अनुज पुत्र गोस्वामी ब्रह्मानन्द का शरीर त्याग हुआ। स्वामी जी ने अपने उत्कट त्याग के कारण भारतीय संस्कृति की रक्षा की, साथ ही साथ दधीचि की कोटि में आये। उनकी कीर्ति गाथा देश में ही नहीं; वरन् जापान, अमेरिका और मिश्र की गलियों में गूँज रही है। स्वामी जी ने हिन्दी की महान् सेवा की। सन् १९०५ में अपने शिष्य लिखित "उपासना" पुस्तक की भूमिका में एक अत्यन्त मूल्यवान हिन्दी में भूमिका लिखी, जो सम्प्रति "उपासना" शीर्षक से श्री रामतीर्थ प्रतिष्ठान" ने प्रकाशित की है। इस पुस्तक का परायण करने से सहज ही ज्ञान हो जाता है कि उनकी प्रतिभा और विद्वत्ता का क्या कहना? संन्यास से पूर्व उन्होंने उर्दू भाषा में "अलिफ" नामक एक मासिक पत्रिका का सम्पादन भी किया। अपनी सहज ज्ञान गरिमा के कारण उर्दू, अंग्रेजी और हिन्दी (भारती) भाषा में प्रेम, त्याग, ईश्वर भक्ति, राष्ट्रीयता और वेदान्त से पूर्ण अत्यन्त मनोरंजक भाव की अभिव्यक्ति प्रदान की जो, अत्यन्त दुर्लभ है। ऐसा कोई विरला ही सन्त-साहित्यकार होगा जो मात्र हिन्दी में एक निबन्ध लिख कर हिन्दी-सन्त-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य के इतिहास में अमर हो गया हो। उनके अल्प-जीवन काल में ही उन्हें प्रसिद्धि और यश प्राप्त हुआ। यही कारण है कि स्वामी जी को आज जल समाधि लिए तिहत्तर वर्ष हुए, तथापि उनकी धवल कीर्ति आज भी देदीप्यमान है।

यह सच है कि ऐसे महापुरुषों के जीवन चरित्र अत्यन्त ही शिक्षाप्रद एवं उपयोगी होते हैं। वे दूसरे के लिए सहायक, पथ प्रदर्शक एवं प्रोत्साहक होते हैं। इसी संदर्भ में आधुनिक युगीय हिन्दी-सन्त-साहित्य के स्वर्ण पृष्ठों पर स्वामी जी का त्यागमय जीवन, उच्च विचार और विश्व व्यापी प्रेम संसार के उपकार के लिए उत्साह पूर्ण कर्म की शिक्षा से प्रेरित कर रहा है।

यह प्रसन्नता की बात है कि स्वामी जी की अनुपम कृति, प्रेरणाप्रद जीवन वृत और जीवनोपयोगी दर्शन से प्रभावित होकर कुछ सुधी विद्वानों ने शोध प्रबन्ध लिखा, जिससे जन मानस में उनके पवित्र जीवन वृत, साहित्य और व्यावहारिक वेदान्त दर्शन से अधिकाधिक लाभ उठा सके। सुधी पाठकों के सूचनार्थ हम यह उल्लेख करना चाहेंगे कि स्वामी जी के बारे में आज से अट्ठाइस वर्ष पूर्व हिन्दू युनिवर्सिटी बनारस से अंग्रेजी भाषा में "दी फिलासफी ऑफ स्वामी रामतीर्थ" विषय पर शोध प्रबन्ध लिखकर इन्स्टीच्यूट ऑफ ओरियन्टल फिलासफी, वृन्दावन के प्रिंसिपल श्री एच० माहेश्वरी ने पी० एच० डी० की उपाधि प्राप्त की है, जो सन् १९६९ में शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी आगरा-३ ने शोध प्रबन्ध को प्रकाशित किया। और सम्प्रति बिहार निवासी विद्यानन्द ब्रह्मचारी ने राँची युनिवर्सिटी से सन् १९७८ में "हिन्दी सन्त साहित्य से विकास में स्वामी रामतीथ का योग दान" विषय पर शोध प्रबन्ध लिखकर पी० एच० डी० की उपाधि प्राप्त की है, जो अप्रकाशित है। ज्ञात हुआ है कि कुछ विद्वान पुनः उनके अन्य पहलू पर शोध कार्य में संलग्न हैं।

अस्तु, हमें यह कहने में तनिक भी संकोच नहीं है कि स्वामी जी ने भारतीय संस्कृति की महत्ता को नये रूप में स्थापना की। उनके जीवन दर्शन से मानव समाज को एक नयी दिशा मिलती है और यही उनका अभूतपूव योगदान है।

— ❀ • ❀ —

❀ एक भक्त की अभिलाषा ❀

प्रभो ! आपने हमें बहुत कुछ प्रदान किया है। कृपया एक वस्तु और प्रदान कोजिए— वह है एक कृतज्ञतापूर्ण हृदय।

— जॉर्ज हरबर्ट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वेदान्त के भिन्न-भिन्न सिद्धान्तों के अनुसार भगवान

श्री प्यारेलाल शर्मा, एम० ए० (गोल्डमेड०)

भारतीय दर्शन में वेदान्त सर्वाधिक सशक्त एवं प्रमुख दर्शन के रूप में हमारे सामने आता है। वेदान्त का सरल और सीधा अर्थ उपनिषद है उपनिषदों का मूल प्रतिपाद्य ब्रह्म को परमतत्व मानते हुए द्वैत का निरसन एवं अद्वैत की स्थापना है। अतः वेदान्त का तात्पर्य उस अद्वैतवाद से हो गया जिसका प्रतिपादन उपनिषद्, गीता और ब्रह्म सूत्र द्वारा किया गया। अद्वैतवाद के स्वरूप निर्धारण करने के लिए प्रस्थानत्रयी की विभिन्न व्याख्याएँ की गयीं जिसके आधार पर विभिन्न सिद्धान्तों की रचना हुई। इन सिद्धान्तों में शंकर का अद्वैतवाद, रामानुज का विशिष्टाद्वैतवाद निम्बार्क का द्वैताद्वैत-वाद, माध्व का द्वैतवाद और बल्लभाचार्य का शुद्धाद्वैतवाद प्रमुख हैं। वेदान्त के उपरिलिखित ५ सिद्धान्तों में ब्रह्म या भगवान के स्वरूप में भिन्नता है।

शंकर का अद्वैतवाद वेदान्त दशन का सर्वाधिक विख्यात सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त का मूल मन्तव्य है ब्रह्म सत्यं जगान्मिथ्या। जोवोब्रह्मव नापरः अर्थात् ब्रह्मसत्य है। जगत मिथ्या है। जीवब्रह्म ही है उससे पृथक नहीं। इस सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्म वह है जिससे यह जगत उत्पन्न होता है उत्पन्न होकर जीवित रहता है और अन्त में उसी में विलीन हो जाता है। वह "सत्" 'चित्' और 'आनन्द' स्वरूप है। ब्रह्म "सत" है। उसका भूत, वर्तमान और भविष्य में कभी भी अभाव नहीं होता। सत्य का तात्पर्य है कि वह सदा अवाधित स्वरूप होता है। ब्रह्म चित है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि वह चरम प्रकाशवान है। और अन्य सभी पदार्थ उससे प्रकाशित होते हैं। उसे स्वयं को प्रकाशवान रखने के लिए अन्य किसी प्रकार के प्रकाश की आवश्यकता नहीं होती। ब्रह्म के "चित" रूप को आलेखित करता हुआ कठोपनिषद् लिखता है।

न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकम्,
नेमा विद्युतो भाँति कुतोऽयमाग्निः।
तमेव भान्तमनुभाँति सर्वं,
तस्य भासा सर्वमिदं विभाति॥
(कठ० । २ वल्ली)

ब्रह्म 'आनन्द' रूप है। इसका तात्पर्य यह है कि यह सर्वोपरि प्रिय वस्तु है। विश्व के कण-कण में ब्रह्म की सत्ता विद्यमान है ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार नमक मिश्रित अम्बु के प्रत्येक बिन्दु में नमक विद्यमान रहता है। श्वेताश्वतर उपनिषद् में ब्रह्म की सर्व व्यापकता के सम्बन्ध में कहा गया है "एको देवः सर्व भूतेषु गूढः सर्व व्यापी सर्व भूतान्तरात्मा"। शंकर के अद्वैत सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्म निर्गुण, निर्विशेष, निर्लक्षण, अद्वितीय, एक एवं भेदरहित है इसलिए नेति-नेति कहकर उसके निषेध रूप से ही उसे रूपापित करने की चेष्टा की गयी है। वह सजातीय (जैसा कि गाय का दूसरी गाय के साथ), विजातीय (जैसा कि गाय का घोड़े के साथ) एवं स्वगत भेद (जैसा कि वृक्ष का शाखा के साथ से) रहित है। वस्तुतः ब्रह्म न उपादान कारण है और न निमित्त कारण। वह न कारण है, न अकारण है और न दोनों से भिन्न है।

शांकर वेदान्त में ईश्वर भी ब्रह्म से भिन्न सत्यभूत पदार्थ नहीं है। उसमें सत्यप्रधान माया रूप त्रिगुणात्मक अविद्या से विशिष्ट ब्रह्म को ही ईश्वर की संज्ञा से अभिहित किया गया है। यह ईश्वर जीवों का नियन्ता है। माया से सम्बद्ध होने की दशा में ईश्वर की तीन अवस्थाएँ मानी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गई हैं— जाग्रत, स्वप्न एवं सुषुप्ति। जब वह इन तीनों अवस्थाओं को पार कर लेता है, तब ब्रह्मरूप धारण कर लेता है।

श्री रामानुजाचार्य ने शंकर के अद्वैतवाद का खंडन कर विशिष्टाद्वैत की स्थापना की। इस मत में ब्रह्म को चिद्चित से विशिष्ट माना गया है तथा सविशेष ब्रह्म की स्थापना की गई है। इसमें चित्, अचित् और ईश्वर को ही मूल तत्व माना गया है, जिसमें भी प्रधानता ईश्वर की ही है। विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त के उद्भट विद्वानों एवं व्याख्याकारों में सुदर्शन सूरि, रामभिश्र देशिक, वेदान्त देशिक तथा श्रीनिवास को परिगणित किया जा सकता है। श्री रामानुज ने अद्वैतवाद के निर्गुण एवं निर्विशेष ब्रह्म का खण्डन कर सगुण एवं सविशेष ब्रह्म की प्रतिस्थापना की है। यहाँ ब्रह्म सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक एवं अनन्त गुणों का भण्डार है। शंकर के निर्गुण ब्रह्म का खंडन करने के लिए रामानुज यह तर्क प्रस्तुत करते हैं कि किसी भी पदार्थ को समूचे भेदों एवं गुणों से रहित स्वीकार नहीं किया जा सकता, क्योंकि सभी प्रमाणों एवं अनुभवों का विषय सविशेष पदार्थ ही हो सकता है। सविशेष का तात्पर्य है कि ब्रह्मचित् अर्थात् जीव और अचित् अर्थात् प्रकृति से संयुक्त है। ब्रह्म विशेष एवं चिद्चित विशेषण है। अद्वैतवाद में ब्रह्म को सजातीय, विजातीय एवं स्वगत भेदों से रहित माना गया है। परन्तु विशिष्टाद्वैत में ब्रह्म को सजातीय एवं विजातीय भेदों से रहित माना गया है, स्वगत भेद से नहीं। रामानुज ने ब्रह्म का तादात्म्य विष्णु एवं नारायण से किया है।

विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त में ईश्वर अनन्त ज्ञानवान, आनन्द रूप, सर्वगुणसम्पृक्त, विश्वनिर्माता, स्थापक और संहारक है। अर्थ, धर्म, काम तथा मोक्ष का प्रदाता एवं इच्छा रूप धारण करने वाला है। उसके 'पर', 'व्यूह', 'विभव', अन्तर्यामी तथा 'अर्चावतार' नामक पाँच भेद हैं। अनवरत आनन्द से मंडित वासुदेव रूप "पर" विश्व की लीला के लिये धारण किया गया रूप 'व्यूह' विभूति सम्पन्न स्वरूप 'विभव' जीवों के हृदय में प्रवेश कर उनकी समस्त प्रवृत्तियों को नियमित करने वाला रूप अन्तर्यामी तथा भक्त की भावनानुरूप मूर्तियों में अधिष्ठित उपास्य रूप को अर्चावतार की संज्ञा से अभिहित किया गया है। वेदान्त के भिन्न-भिन्न सिद्धान्तों में निम्बकाचार्य के द्वैताद्वैत सिद्धान्त का भी अपना पृथक् अस्तित्व एवं महत्व है। इस सिद्धान्त के अनुसार जगत का मूल कारण परब्रह्म है, पर ब्रह्म के यहाँ दो रूप हैं। अपने पहले रूप में वह समस्त उपाधियों से रहित, सर्वव्यापक, पूर्ण, अद्वैत तथा निर्विकार है तथा दूसरे रूप में सर्वद्रष्टा, सर्वशक्तिमान, विश्व-निर्माता एवं विश्व-संहारक है।

द्वैताद्वैत सिद्धान्त में भगवान को ब्रह्म, ईश्वर, परमात्मा, वैश्वानर, पुरुषोत्तम आदि नामों से संबोधित किया गया है। अपने ग्रन्थ— 'वेदान्त-पारिजात-सौरभ में ब्रह्म के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए श्री निम्बकाचार्य लिखते हैं—

"अचिन्त्य विचित्र संस्थानसम्पाद्यस्यासंख्येय,
नामरूपादिविशेषाश्रयस्य चिद्चिद्वयस्य।
विश्वस्य सृष्टि स्थितिलया यस्मात् भवन्ति,
तदेव अनिर्वचनीय विषय ब्रह्मेति।।"

अर्थात्— अचिन्त्य, विचित्र, असंख्य, विस्तृत, नाम रूपात्मक विश्व की उत्पत्ति, स्थिति एवं प्रलय जिससे होता है, वही सर्वज्ञ, अनन्त गुणों का आश्रय, अनिर्वचनीय ब्रह्म है, ऐसा ब्रह्म प्राकृतिक दोषों (अविद्या, अस्मिता आदि), प्राकृतिक विकारों (जन्म अस्तित्व- बुद्ध-परिणाम आदि) एवं गुणों (सत्, तम आदि) से रहित है। वह अशेष कल्याण गुणों से सम्पृक्त है। वह क्षराक्षर से श्रेष्ठ, सर्वज्ञ, अनन्त, शक्तिमान, सबसे भिन्न और सबसे अभिन्न, आनन्द-पाप-पुण्य आदि से परे तथा अमृतत्व एवं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अक्षयत्व से समादित है। निम्बकाचार्य ने ब्रह्म का तादात्म्य श्रीकृष्ण से स्थापित किया है एवं राधा को ब्रह्म की स्वरूप शक्ति एवं गुण-शक्ति से संयुक्त पराशक्ति के रूप में परिकल्पित कर उन्हें कृष्ण के वामांग में बिठा कर शाश्वत सम्बन्धों की नियोजना की है।

द्वैतवाद सिद्धान्त के प्रस्थापक रूप में श्री मध्वाचार्य को स्वीकृत किया जा चुका है। डाक्टर बी० एन० के० शर्मा के शब्दों में—

"Madhya himself is the first historical founder and exponat of the system of philosophy associated with his name." (History of the Dvaita school of Vedanta and its literature page 98.)

मध्वाचार्य ने मायावाद एवं अभेदवाद का साहसपूर्वक खण्डन कर द्वैतवाद की प्रतिस्थापना कर दार्शनिक चिन्तन को नूतन मोड़ एवं सन्दर्भ दे दिये। रामानुज के समान ये भी ब्रह्म के सगुण रूप को स्वीकार कर उनका विष्णु नारायण एवं वासुदेव से तादात्म्य स्थापित करते हैं। ब्रह्म के लक्षणों को स्पष्ट करते हुए मध्व कहते हैं कि जिससे उत्पत्ति, स्थिति, संहार, नियमन, ज्ञान, आवरण, बन्ध और मोक्ष होते हैं, वह ब्रह्म है; जो सच्चिदानन्द स्वरूप, सर्वगुण सम्पन्न, सर्व दोष-विहीन, सब शक्तिमान, अचिन्त्य, शक्तियों से युक्त एवं अघटित घटनाओं को भी घटित करा देने वाला है।

वेदान्त दर्शन का अन्तिम सिद्धान्त वल्लभाचार्य द्वारा प्रवर्तित शुद्धाद्वैत मत है। श्री वल्लभाचार्य ने अद्वैतवाद का खण्डन कर शुद्धाद्वैतवाद का प्रवर्तन किया। इस सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्म सर्वज्ञ, सर्व शक्तिमान, अनंत, एक एवं सच्चिदानन्द स्वरूप वाला है। वही जगत का निमित्त एवं समवायिकरण है। वल्लभ मत में ब्रह्म को आधिदैविक, आधिभौतिक एवं आध्यात्मिक इन तीन प्रकार का माना गया है। ब्रह्म के इन तीन प्रकारों में कोई भेद नहीं है। क्योंकि वह सजातीय, विजातीय एवं स्वगत भेदों से रहित है। भगवान अनन्त, अपार, शक्ति सम्पन्न हैं; किन्तु उनमें स्वरूप शक्ति, तटस्थ शक्ति एवं माया शक्ति का विशेष महत्व है।

स्वरूप शक्ति का दूसरा नाम 'चित्' शक्ति भी है जिसकी अभिव्यक्ति सन्धिनी, संवित् और आह्लादिनी नामक त्रिविध रूपों में होती है।

तटस्थ या जीवशक्ति उस शक्ति को कहते हैं जिससे अणुत्व विशिष्ट परिछिन्न स्वभाव वाले जीवों का जन्म होता है।

माया शक्ति वह शक्ति है जिससे प्रकृति तथा जगत का आविर्भाव होता है। इन तीनों शक्तियों के गुच्छ को "पराशक्ति" कहा जाता है।

जब जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है, तब तब भगवान भक्तों की रक्षा के अनुरूप अवतार लेते हैं। गीता में भी यही कहा गया है। इस सिद्धान्त में भगवान के चौबीस अवतारों में से तेईस अवतारों को अंश और श्रीकृष्ण को अंशी कहा गया है। श्रीकृष्ण ही यहाँ उपास्य हैं, उनके अतिरिक्त कोई भी परातत्व नहीं है—

"कृष्णात् परं तत्वमहं न जाने।"

('मानसमणि' से साभार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामायण चरित्र चित्रण

रामकालीन समाज व्यवस्था

श्री स्वामी तीर्थानन्द जी

[गतांक से आगे]

समाज का अर्थ है एक ही संस्कृति, एक ही विचार और एक ही आचार के व्यक्तियों का समूह। समाज व्यवस्था अर्थप्रधान अथवा काम प्रधान नहीं होनी चाहिए। बल्कि वह धर्म पर आधारित धर्मप्रधान होनी चाहिए। समाज रचना पर राजसत्ता का या धर्मसत्ता का प्रभुत्व होना चाहिए ? इस प्रश्न का उत्तर है धर्मसत्ता का। क्योंकि राजसत्ता कभी स्थिर नहीं रहती। इतिहास के पन्ने पलटो तो एक से एक बढ़कर उदाहरण नजर आयेंगे और एक तरफ धर्मसत्ता जीर्ण-शीर्ण अवस्था में क्यों न हो अभी भी मानवीय मन पर राज्य करती है। लौकिक सत्ता शाश्वत काल की दृष्टि से क्षणजीवी होती है और इसलिए वह सामाजिक नियंत्रण नहीं कर सकती। धर्मप्रधान समाज व्यवस्था में वर्णाश्रम का पूर्ण विचार होना चाहिए। वर्णाश्रम व्यवस्था के बिना समाज स्थिर रह नहीं सकता। प्रत्येक वासना विकार का योग्य नियंत्रण एवं भूख का विचारपूर्ण हल समाज व्यवस्था में होना चाहिए। राम काल में प्रत्येक व्यक्ति अपना-अपना धंधा करता था। चाहे जितना अधिक लाभ होता हो। कोई भी व्यक्ति अपना धंधा छोड़कर दूसरा धंधा नहीं कर सकता था। ऐसा करने वालों को भारी दंड दिया जाता था। राम काल में मुक्त प्रणय को स्थान नहीं था। न ही लोग मोह में फँसकर विवाह करते थे।

मानवीय व्यवस्था का मूल्यांकन निम्नलिखित चार बातों से किया जा सकता है :—

(1) Mandel's Factorial Analysis.
(2) Statistical Method.
(3) Cell's Method.
(4) Embryological Method.

इन चारों पद्धतियों की कसौटी के पत्थर की नींव पर रामायण की समाज व्यवस्था टिकी हुई थी। (Will to power and will to live.)

इस वृत्ति का विकास होना चाहिए। तभी तो समाज व्यवस्था पूर्ण कहलायेगी। समाज "धृत्युत्साह समान्वितः" होना चाहिए। आज के नवयुवकों में (Will to die) की वृत्ति बढ़ती ही जाती है। इसलिए दुःख के साथ कहना पड़ता है कि वर्तमान समाज व्यवस्था दुर्बल है। उस समय मन्दिरों में नैतिक विचारों की चर्चा हुआ करती थी। (Discussion on ethical problems) (They were the popular National Schools of the Society.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आजकल तो मन्दिर और विवाह समारम्भ मुक्त प्रणय और गप मारने का स्थान बन गए हैं।

"युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा॥
यतो अभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः सः धर्मः।"

यह उस काल के लोगों के धर्म की व्याख्या थी। रामकालीन समाज इतनी उच्च कोटि पर प्रतिष्ठित था।

घोड़ा—मन की लगाम

मन को भी घोड़े के समान अभ्यास और वैराग्य की लगाम चाहिए। शिक्षित घोड़ा मनुष्य की बड़ी सेवा करता है। सारा दिन सवारी देता है व रात भर खड़ा रहता है, ताकि दूसरे दिन फिर मालिक की सेवा कर सके। घोड़े पर सवार हो कर कोई जा रहा हो तो क्या घोड़ा सवार को ले जाता है? या सवार घोड़े को ले जाता है? इसका उत्तर यही है कि यदि सवार के हाथ घोड़े की लगाम है व उसके अनुसार घोड़ा चलता है तब तो सवार घोड़े को ले जा रहा या चला रहा है। यदि सवार के हाथ घोड़े की लगाम नहीं, तब तो घोड़ा ही सवार को ले जाता है। इसी प्रकार मानव के अधीन यदि मन है तो मानव मन को चला रहा है और यदि मानव मन के अधीन है तो मन मानव को चला रहा है। घोड़े को सिखाया व लगाम से साधा जाता है, तभी वह वश में रहता है। इसी प्रकार वैराग्य एवं अभ्यास द्वारा मन को साधने से मन घोड़े की तरह वशीभूत हो जाता है व जैसे उसका स्वामी उसे चलाता है, वैसा ही वह चलता है। अभ्यास और वैराग्य से मन वश में हो जाता है। वशीकृत मन से इन्द्रियों का निग्रह किया जा सकता है। यही अनुभूत और गीतादिक शास्त्रों का कथन है।

—हरिकिशनदास अग्रवाल

—•—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समर्पण

पं० श्री भजनानन्द जी महाराज

ससार का प्रत्येक प्राणी लाभ के लिए ही कार्य करता है, उसके प्रत्येक कार्य में कुछ न कुछ प्रयोजन, स्वार्थ छिपा ही रहता है। किसी से भी आप पूछें कि अमुक कार्य आप किस लिए कर रहे हैं तो उत्तर यही होगा कि लाभ के लिए। दुकान खोलना, मकान बनाना, पढ़ना-लिखना, नौकरी-चाकरी; झूठ, दगाबाजी, खुशामद-दरामद, मान-बड़ाई के लिए नयी युक्तियों को क्रियान्वित करना इत्यादि सभी कार्य लाभ के लिए ही होते हैं; परन्तु क्या इन सबसे हमारे इच्छित लाभ की पूर्ति हुई ? कभी लाभ प्राप्ति की कामना शान्त हुई ? नहीं, इन सभी क्रियाओं से तो "आगे अवश्य लाभ होगा" इस प्रकार की भावना जागरूक होती हैं और मृग-मरीचिका की भाँति मानव को भ्रम में डालकर विनाश की ओर बढ़ती जाती है। उदाहरणार्थ व्यापारी मण्डल से पूछिए कि तुम्हें कितना लाभ हुआ और इस लाभ से तुम्हारी तृप्ति हुई या नहीं ? तो उत्तर मिलेगा नहीं। सन् ४७ में कुछ लाभ हुआ भी; परन्तु ५१, ५२ में कुछ लाभ नहीं हुआ अब तो बिल्कुल ही ढीला कार्य चल रहा है। भाव यह है कि सांसारिक लाभ केवल धोखे में डालने के लिए ही होता है। अपनी परछाई की भाँति दिखावा मात्र है, मेघाच्छन्न चन्द्रमा की तरह लुकता-छिपता और निकलता रहता है। इसी लाभ की ऊहापोह में मानव, आजीवन पड़ा रहता है, कोल्हू के बैल की बाहर नहीं आपाता अतएव उसका समस्त परिश्रम बन्धन का कारण बन जाता है।

कारण कि जाग्रत एक दीर्घ-स्वप्न है, स्वप्न के लाभ के समान ही इसका भी लाभ है, जैसे स्वप्न की सम्पत्ति निरर्थक तथा दुःखप्रद होती है इसी प्रकार इस संसार की भी। एक व्यक्ति स्वप्न देखता है कि मैं एक सेठ बन गया, लाखों रुपयों का लाभ होने लगा कुछ वर्षों में ही करोड़पती बन गया, उक दिन अपने रुपयों को गिनने बैठता है कि डाकू आ जाते हैं और उसकी गर्दन दबाते हैं तब तक आँख खुल जाती है, सब समाप्त, न रुपये, न डाकू न आलीशान कोठी। इसी प्रकार जाग्रत में भी आँख बन्द होने पर सब समाप्त। अतः स्वप्न और जाग्रत दोनों समान अवस्थाएँ हैं। वेदान्त ग्रन्थ कहते हैं कि—

संसार स्वप्नतुल्यो हि रागद्वेषादि संकुलः।
स्वकाले सद्वद् भाति प्रबोधेऽसद्वद् भवेत्॥

अर्थात्— संसार स्वप्न के समान है, इसमें रागद्वेषादि भरे पड़े हैं। अपने समय में अर्थात् सांसारिक भावनाओं में लिप्त रहने से यह संसार सत्य प्रतीत होता है; परन्तु जब ज्ञान हो जाता है तब यह मिथ्या हो जाता है। स्वप्न में जाग्रत असत्य और जाग्रत में स्वप्न असत्य मालूम होता है। सुषुप्ति में दोनों ही असत्य हो जाते हैं। कारण यह कि मन ही सृष्टि बनाता है, जब वह स्वप्न की सृष्टि बनाता है तब जाग्रत को भूल जाता है, और नींद से उठकर जाग्रत की सृष्टि बनाता है तब स्वप्न को भूल जाता है, तात्पर्य यह कि स्वप्न तथा जाग्रत दोनों का संसार कुछ नहीं। केवल मन की कल्पना है, मनीराम का खेल है, अतः यह संसार स्वप्न ही सिद्ध हुआ।

शंकालु सज्जन प्रश्न करते हैं कि संसार अनादि है, दीर्घकाल तक हम उसका आनन्द भोग सकते हैं; परन्तु स्वप्न तो क्षणभंगुर है, फिर स्वप्न की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाँति संसार को कैसे समझा जाय ? विचार कीजिए जिस प्रकार संसार को आप अनादि और दीर्घकाल तक भोग देने वाला समझते हैं, उसी प्रकार स्वप्न भी हैं। क्या स्वप्न में आपने यह भी कभी समझा कि यह क्षणभंगुर है। स्वप्न में आप सेठ बन गये, स्त्री बच्चों वाले बन गये, धन एकत्रित किया, क्या आपने यह सब क्षण भर में ही किया ? नहीं क्षण भर में तो हो ही नहीं सकता, फिर वहाँ यह कैसे हुआ ? आप वहाँ उस क्षण को क्षण नहीं मान रहे थे वरन् अपने जीवन के सौ वर्ष मान रहे थे। विवाह होता है और विवाह के कई वर्षों बाद बच्चा होता है, दुकान खोलते हैं, व्यापार करते हैं, मुकदमा लड़ते हैं, यह सब क्षण भर में कैसे होता है ? सब कार्यों में आपके पचासों वर्ष लगते हैं, फिर आप स्वप्न को क्षणिक कैसे कहते हैं ? परन्तु आप कहेंगे जाग्रत में तो स्वप्न क्षणिक ही प्रतीत होता है। ठीक है, इसी प्रकार जाग्रत काल में हम अपने जीवनक्षण को सौ वर्ष या नब्बे वर्ष की संज्ञा देते हैं; परन्तु मृत्यु के उपरान्त इन वर्षों को एक क्षण ही कहेंगे, अथवा ज्ञानी बनकर हमें इस क्षणिक जीवन का रहस्य मालूम हो जावेगा। इस प्रकार यह संसार स्वप्नवत् हो जाता है। इसका स्पष्ट प्रमाण तो यही है कि इसका कोई भी पदार्थ अपने साथ नहीं जाता।

लाया था क्या सिकन्दर, दुनिया से ले चला क्या ?
थे दोनों हाथ खाली, निकले कफन के बाहर ॥

इस प्रकार यह नश्वर संसार क्या लाभ दे सकता है ? वास्तव में लाभ की अपेक्षा यह हानि अधिक करता है, इससे तो और अशान्ति बढ़ती है।

अग्नि कभी घी से शान्त नहीं की जा सकती। उसके लिए तो जल ही की आवश्यकता पड़ती है, इसी प्रकार लाभ की प्राप्ति संसार कदापि न करा सकेगा, अस्थिर वस्तु स्थाई पदार्थ को कैसे दे सकती है ? जिन्हें असली लाभ प्राप्त हुआ, उन्होंने मानव को सुखद सन्देश दिया कि—

लाभ कौन बड़ि भगति-हमारी।
हानि न भज्यो मोहि तनुधारी ॥

वस्तुतः भगवान् की भक्ति ही परम लाभ है तथा मानव शरीर को पाकर भी भगवान् का भजन न करना सबसे बड़ी हानि है। अपने स्वरूप से अभिन्न हो जाना ही पूर्ण भक्ति है। ईश्वर प्राप्ति रूप ही ऐसा लाभ है कि इसके बाद फिर कुछ प्राप्त करना शेष नहीं रह जाता है, कविवर मैथिलीशरण जी कहते हैं—

पाकर तुम्हें फिर और कुछ,
पाना न रहता शेष है।
पाता न जब तक जीव तुमको,
भटकता सविशेष है ॥

सबसे बड़ा लाभ यही है कि परमपिता परमात्मा को प्राप्त कर लेना। परमात्मा की प्राप्ति के लिए आत्मज्ञान होना चाहिए। जब तक हम अपने को नहीं पहचान सकते तब तक ईश्वर-प्राप्ति से दूर हैं, आत्मज्ञान ही महा लाभ का मूल्य है। पूज्यपाद गुरु शंकराचार्य भी यही कहते हैं कि—

"को लाभ आत्मावगमो हि यो वै।"

अर्थात्— आत्मस्थिति प्राप्त कर लेना ही परम लाभ है और इसी परम लाभ को प्राप्त करने में मानव-जीवन की सफलता है। अनेक युगों से भटक कर इस लाभ का परमात्मा ने अवसर दिया। यदि यह अवसर चूक गये और इन क्षुद्र लाभों में ही फँसे रहे तो पाया हुआ रत्न खो दिया। अतः इस लाभ प्राप्ति के लिए इसी क्षण से प्रयत्न करना प्रारम्भ कर दो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस लाभ के प्राप्त करने के लिये कुशल व्यापारी की भाँति अनुभव होने की आवश्यकता है, जब अपनी भावना द्वारा स्थूल शरीर श्मशान तक पहुँचा कर भस्म कर दिया जाय, इन्द्रियाँ नष्ट हो जायँ, मन अपने स्थान पर लय हो जावे, बुद्धि अपने स्वामी के पास पहुँच जाय, उस निस्तब्ध अवस्था में जहाँ 'हम न तुम दफ्तर गुम' की प्रतीति हो, भास हो उसे अनुभव कहते हैं। उस अनुभव से सत्-असत् का ज्ञान होता है, और तभी आत्मस्थिति होती है, आत्मस्थिति का यह सुख वर्णनातीत है। वहाँ समस्त कामनाओं की पूर्ति हो जाती है। करोड़ों इन्द्रियों का राज्य-सुख उस सुख के कण मात्र की समता नहीं कर सकता, सहस्रों सूर्य का प्रकाश उसके सामने कुछ नहीं, उसमें अद्भुत माधुरी, परमशीलता, अपार शान्ति एवं अखण्ड आनन्द की प्राप्ति होती है।

न सुखं देवराजस्य, न सुखं चक्रवर्तिनः।
यत्सुखं वीतरागस्य, मुनेरेकांतशीलिनः॥

अर्थात्— जो सुख एकान्तवासी वीतराग आत्मनिष्ठ पुरुष को होता है, वह सुख देवराज इन्द्र को भी नहीं मिल पाता; अपार वैभव चक्रवर्ती सम्राट् भी उसे प्राप्त नहीं कर सकते। उसी महालाभ के लिये परम कारुणिक प्रभु ने यह मानव शरीर दिया है। इस देह से ही जन्म-मृत्यु, जरा-व्याधि के समस्त दुःखों की आत्यन्तिक निवृत्ति करके अनन्तकाल का परम लाभ प्राप्त किया जा सकता है। गीता कहती है —

यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः।
यस्मिन्स्थिते न दुःखेन गुरुणाऽपि विचाल्यते॥

अर्थात्— जिस लाभ को प्राप्त होकर दूसरा कोई भी उससे बड़ा लाभ नहीं माना जाता, जिसमें स्थित हुआ पुरुष बहुत दुखों से भी विचलित नहीं होता।

खुदा को पाया तो क्या न पाया,
खुदा मिला तो सभी मिला है।
जरा तो सोचो मिला जो खालिक,
तो उससे खलकत कभी जुदा है॥

यदि वृक्ष को प्राप्त कर लिया, तो फल मिल ही जायँगे। क्षणिक लाभों को छोड़कर सबसे बड़े लाभ की प्राप्ति करने पर सभी लाभ अपने आप पीछे दौड़े आयेंगे।

भागती फिरती थी दुनिया,
जब तलब करते थे हम।
जब से नफरत हमने की,
वह बेकरार आने को है॥

अतः लाभाभिलाषियो! आज से ही उस लाभ के लिये जुट जाओ। जप, तप, भजन, सत्संग, ज्ञान, भक्ति आदि को प्रारम्भ करो, अपना सब कुछ प्रभु को अर्पण कर दो तथा अपने को भी उनकी सत्ता में लय कर दो। बस, सबसे बड़ा लाभ पा जाओगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंचशील

सर्वपल्ली डा० राधाकृष्णन्

वर्तमान समय मानव जाति के इतिहास में निर्णायक महत्त्व का है। हम एक नूतन युग के आरम्भ में हैं। निराशा की आवश्यकता नहीं है। यह आशा और कठिन कार्य का समय है। हममें से प्रत्येक को देखना चाहिए कि उसका प्रभाव भले के लिए पड़ता है। यह तभी सम्भव है जब हम अपनी पुनर्रचना करें। हमने पंचशील के विषय में बहुत कुछ सुना है। मूल पंचशील आत्म-परिष्कार एवं आत्म-परिवर्तन का उल्लेख करता है—

(१) प्रथम है— अहिंसा अथवा जीवन के प्रति श्रद्धा और साथी मानवों के प्रति सम्मान। हमें जान-बूझ कर शोक और वेदना नहीं लादनी चाहिये। हमें अनावश्यक रूप से किसी जीवित प्राणी के प्राण नहीं लेने चाहिए।

(२) दूसरा है— अलोभ। हमें दूसरों की सम्पत्ति के प्रति लोभी नहीं होना चाहिए। हमें सत्ता के प्रेम की ओर आकर्षित नहीं होना चाहिए। इंजील लेखक हमें बताता है कि किस प्रकार शैतान उसे एक बहुत ही ऊँचे पर्वत-शृङ्ग पर ले जाता है और विश्व के सभी राज्य दिखाता तथा उनकी समृद्धि और महिमा पर प्रकाश डालता है। इसके बाद उससे कहता है— "ये सब वस्तुएँ मैं तुझे दूंगा। यदि तू झुककर मेरी पूजा करेगा।" तब जीसस उससे कहता है— "यहाँ से भाग जाओ शैतान! क्योंकि हमारे यहाँ लिखा है— तू अपने ईश्वर प्रभु की उपासना करेगा और केवल उसी की सेवा करेगा।"

(३) तीसरा— ब्रह्मचर्य या आत्मनियन्त्रण है। हम दूसरों पर तब तक शासन नहीं कर सकते, जब तक हम अपने पर शासन करना न सीख लें। ब्रह्मचर्य सन्तुलित दृष्टि प्राप्त करना है। इस संकट-काल में एक खतरा है। न जाने क्या हो इसके वातोन्मादक भय से आच्छादित हो जाना, उसकी पकड़ में आ जाना। पुरातन सम्मति है— "देख कि तू परेशान न हो, अनावश्यक रूप से उत्तेजित न हो।" हमें शान्ति का उपार्जन करने को कहा जाता है। सौम्य, शान्त और सन्तुलित मानस वाले मानव की शान्ति।

(४) चौथा है— सत्यवचन। हमें सत्ता-धारियों को खुश करने के लिए भी सत्य से नहीं हटना चाहिए। हमें भय-रहित होकर, द्वेषहीन होकर सत्य बोलना चाहिए और उन लोगों के सामने भी कहना चाहिए जो उसे सुनना नहीं चाहते। यदि हमारी सरकार कुछ गलती करती है, तो हमें उसे अस्वीकार करने को तैयार रहना चाहिए। विज्ञान सत्य का अनासक्त अन्वेषण है। दुर्भाग्य की बात है कि विज्ञान का अन्वेषण, आज जिस दुनिया में हम रहते हैं, उसके ढाँचे के विषय में ज्यादा जानने की आकांक्षा का परिणाम नहीं है। बल्कि इस भय की उपज है कि अन्य देश हमसे आगे बढ़ जायेंगे। वैज्ञानिक आविष्कारों को सैनिक महत्व की सामग्री के रूप में देखा जाता है और विश्व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यापकता की वैज्ञानिक परम्परा राष्ट्रीय सुरक्षा के हित के नीचे डाल दी जाती है। थुसीडाइड्स के अनुसार पेरीक्लीज ने मृत्यु-समय की वक्तृता में कहा था— "हम अपना नगर संसार के लिए खोलते हैं और किसी विदेशी कार्य के कारण विदेशियों को शिक्षण एवं निरीक्षण की सुविधा से वंचित नहीं किया जायगा। यद्यपि हमारे नागरिकों को स्वदेशी भावना की अपेक्षा हमारी प्रणाली एवं नीति में कम विश्वास होने के कारण, किसी शत्रु की आँखें हमारी उदारता से जब तब लाभान्वित होती रहेंगी।" इसी प्राण भावना से एक महान् अमरीकी राष्ट्रपति ने घोषित किया था कि तब तक भूल का दलन करने की आवश्यकता नहीं है जब तक सत्य उसका प्रतिरोध करने के लिए स्वतन्त्र है।

(५) अन्तिम है— सुरापान-निषेध। इस सलाह में मतवादों और सिद्धान्तों से जो भीषण विष हैं, मुक्ति की बात भी निहित है। वे हमारे मानस को शृङ्खलाबद्ध करते हैं और हमें अस्वस्थ तथा असन्तुलित कर देते हैं। जैसे हम बच्चों को अफीम नहीं देते, उसी प्रकार हमें तरुणों को पक्षपात पूर्ण संकीर्ण और प्रान्तीय पन्थों में शिक्षित नहीं करना चाहिए।

ये पंच सिद्धान्त हम में विवेक, विनम्रता और आत्मोत्सर्ग की भावना विकसित करने के उद्देश्य से रखे गये हैं। जीवन आशीर्वाद बनेगा या अभिशाप ? वह क्या बनेगा, यह हम पर निर्भर करता है।

❀ उपकार ❀

सतगुरु ने देके ज्ञान मन, आजाद कर दिया।
सारे विषाद मिट गये, आह्लाद कर दिया ॥ टेक ॥

आरोप था दिनों से जो, संसार बन्ध का।
दिखला के ब्रह्म रूप को, अपवाद कर दिया ॥ सतगुरु०

खालो पड़ा था शान्ति-पुर, उजड़ा था दिनों से।
साधन बना करके उसे, आबाद कर दिया ॥ सतगुरु०

अज्ञान जादूगर ने था, यह खेल बनाया।
थोड़ा सा जादू कर उसे, बरबाद कर दिया ॥ सतगुरु०

"विज्ञान" बिना म्याद का, था दुःख भासता।
प्रारब्ध तक मिथ्या दिखे, तादाद कर दिया ॥ सतगुरु०

— स्वामी विज्ञानानन्द अवधूत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'रामसन्देश' नामक हिन्दी मासिक पत्र के सम्बन्ध में विवरण—

फार्म ४

(नियम ८ देखिये)

१.	प्रकाशन स्थान	... शहन्शाही सर्वहितकारी प्रेस, राजपुर, देहरादून।
२.	प्रकाशन अवधि	... मासिक
३.	मुद्रक का नाम	... स्वामी गोविन्दानन्द
	(क्या भारत का नागरिक है ?)	... भारतीय
	(यदि विदेशी है तो मूल देश)	... नहीं
	पता	... शहन्शाह आश्रम ट्रस्ट-राजपुर, देहरादून।
४.	प्रकाशक का नाम	... स्वामी अमरमुनि
	(क्या भारत का नागरिक है ?)	... भारतीय
	(यदि विदेशी है तो मूल देश)	... नहीं
	पता	... स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर, देहरादून
५.	सम्पादक का नाम	... काका हरिॐ 'निर्द्वन्द्व'
	(क्या भारत का नागरिक है ?)	... भारतीय
	(यदि विदेशी है तो मूल देश)	... नहीं
	पता	... स्वामी रामतीर्थ मिशन राजपुर, देहरादून (उ. प्र.)
६.	स्वामित्व	... स्वामी रामतीर्थ मिशन राजपुर, देहरादून।

मैं, स्वामी अमरमुनि, एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सत्य हैं।

ता० १२-२-७९.

प्रकाशक के हस्ताक्षर—
अमरमुनि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगन ऐसी होनी चाहिये

एक संस्कृत प्रेमी

अट्ठारहवीं शताब्दी का चतुर्थ चरण था। उन दिनों कलकत्ता भारतवर्ष की राजधानी थी। सर विलियम जोन्स हाईकोर्ट के मुख्य न्यायाधीश बन कर इङ्गलैंड से भारतवर्ष आये। अपने क्षेत्र की जनता के विचार, जीवन, साहित्य, परम्परा आदि का परिचय रखना एक न्यायाधीश के लिये आवश्यक होता है। श्री जोन्स ने इस योग्यता-प्राप्ति का निश्चय किया। अपने साथियों से इस विषय में विचार-विमर्श करने पर उन्हें ज्ञात हुआ कि 'भारतवर्ष का सम्पूर्ण ज्ञान देवभाषा संस्कृत में है, अत एव उन्हें संस्कृत ज्ञान अर्जन करना चाहिए।' श्री जोन्स ने सङ्कल्प किया कि वे संस्कृत का ज्ञान शीघ्र से शीघ्र प्राप्त करेंगे।

श्री जोन्स ने संस्कृत पढ़ाने वाले अध्यापक की खोज की, किंतु एक भी अध्यापक नहीं मिला। उस समय पण्डित लोग किसी भी विदेशीको संस्कृत भाषा पढ़ाने के लिये तैयार न थे। कृष्णनगर के महाराजा श्री शिवचन्द्र जी से श्री जोन्स की मैत्री हो गई थी। श्री जोन्स ने अध्यापक की व्यवस्था करने के लिये उन से कहा। महाराजा साहब ने बहुत प्रयत्न किया, किन्तु वे भी अध्यापक की व्यवस्था करने में समर्थ न हो सके। अधिक शुल्क देने का प्रलोभन दिय गया, पर इससे भी सफलता नहीं मिली। बहुत ही प्रयत्न करने पर एक-दो पंडित श्री जोन्स को पढ़ाने के लिये आये; किन्तु उनके समुदाय के पंडितों ने उनकी भर्त्सना करते हुए कहा — "कुछ चाँदी के टुकड़ों के लिये अपनी भाषा देववाणी को म्लेच्छ के हाथों वेचते हुए तुम्हें लज्जा नहीं आती ? तुम्हारा आज से हमारी बिरादरी से वहिष्कार है। आज से तुम्हारे साथ खान-पान, विवाह-शादी के सब सम्बन्ध समाप्त हैं।" अपने जाति-भाइयों को इस धमकी से उन पंडितों ने श्री जोन्स को पढ़ाना बन्द कर दिया।

इस घटना से श्री जोन्स को बड़ी निराशा हुई। उनके मन में विचार उदय हुआ कि यह देश कैसा है, जहाँ शिक्षा-दान के लिये अध्यापक नहीं मिलते। परन्तु श्री जोन्स अपनी धुन के पक्के थे। अन्त में उन्हें कोई ब्राह्मण अध्यापक तो नहीं मिल सका, परंतु संस्कृतभाषा के जानकार श्रीरामलोचन कविभूषण नामक ब्राह्मणेतर जाति के एक वैद्य मिले। वे पूरे फक्कड़ थे— परिवार में न स्त्री, न बाल-बच्चा। हवड़ा के समीप उनका घर था। वे समाज के वहिष्कार से भयभीय होने वाले व्यक्ति नहीं थे। उन्होंने पारिश्रमिक के रूप में सौ रुपये प्रतिमास तै किये और घर से श्री जोन्स की कोठी तक आने-जाने के लिये पालकी की व्यवस्था की माँग की। इतना ही नहीं, उन्होंने श्री जोन्स के सामने कई शर्तें रखीं और कहा कि इनका अक्षरशः पालन होने पर ही वे पढ़ाना आरम्भ कर सकते हैं। शर्तें ये थीं कि—

(१) अध्यापन का कार्य कोठी के निचले तल्ले के एक कमरे में होगा।

(२) उस कमरे का फर्श संगमरमर का बनाया जाय।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) एक हिन्दू नौकर की नियुक्ति की जाय, जो प्रतिदिन गंगा जी (हुगली) से जल लाकर कमरे का फर्श एवं सब दीवालों को धोयेगा।

(४) कुर्सी-मेज आदि कमरे की हर चीज गंगा जल से धोयी जानी चाहिये।

(५) अध्यापन के पूर्व श्री जोन्स केवल चाय के एक प्याले के अतिरिक्त कुछ भी ग्रहण नहीं कर सकेंगे।

(६) उस समूची कोठी में मांस बनाना-खाना निषिद्ध होगा।

श्री जोन्स ने बड़ी प्रसन्नता के साथ इन शर्तों को स्वीकार कर लिया और अध्यापन का कार्य प्रारम्भ हुआ। परन्तु एक कठिनाई अनुभव होने लगी—कविभूषण जी अंग्रेजी नहीं जानते थे और श्री जोन्स ने संस्कृत पढ़ना आरम्भ ही किया था। दोनों का निर्वाह कैसे हो ? श्री जोन्स ने भारतवर्ष आने के पश्चात् हिन्दी के जो थोड़े-बहुत शब्द सीखे थे, उन्हीं के सहारे पढ़ाई चालू हुई। भाषा की अपेक्षा शब्दों का अर्थ हाथ, पाँव और सिर के संकेतों से ही व्यक्त किया और समझा जाता था। श्री जोन्स बड़े ही कुशाग्रबुद्धि, धैर्यशाली एवं अध्यवसायी थे। भारतवर्ष आने के पूर्व उन्होंने पारसी और अरबी का ज्ञान प्राप्त किया था। योरप की दस भाषाएँ उन्हें आती थीं। वे ग्रीक और लैटिन भाषाओं के भी पंडित थे। अतएव उन्हें संस्कृत का ज्ञान प्राप्त करने में विशेष कठिनाई अनुभव नहीं हुई। एक वर्ष के परिश्रम से उन्होंने संस्कृत का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया। फिर तो क्या था, गाड़ी सपाटे से चल पड़ी।

आरम्भ में कविभूषण ने श्री जोन्स को प्रतिदिन काम में आने वाले संस्कृत के शब्दों का ज्ञान कराया। एक दिन प्रसङ्गवश उन्होंने संस्कृत-नाटकों की चर्चा की। इसी चर्चा में कालीदास के "अभिज्ञानशाकुन्तल" नाटक की भी चर्चा आई। श्री जोन्स उस नाटक के प्रति बड़े आकर्षित हुए और उन्होंने उसके अध्ययन की इच्छा व्यक्त की। यद्यपि उनका ज्ञान इतना नहीं था कि वे उस नाटक को ठीक से समझ सकते, फिर भी इन्होंने उसे पढ़ना आरम्भ कर दिया।

कुछ दिनों में वे नाटक के भावों को ठीक से ग्रहण करने लगे। पीछे उन्होंने उस नाटक का अंग्रेजी भाषा में रूपान्तर किया। इसके पश्चात् उन्होंने संस्कृत के कई अमूल्य ग्रन्थों का भी अंग्रेजी में अनुवाद किया तथा संस्कृत के प्रचार-प्रसार के लिये नानाविध प्रयत्न किये। संस्कृत के सेवकों में श्री जोन्स का नाम विशेष आदर से लिया जाता है।

— ❀ ० ❀ —

पागल— पागल व दीवाने सन्त दोनों ही एक जैसे दिखाई पड़ते हैं। दोनों ने ही अपने अपने कपड़े फाड़े होते हैं। परन्तु एक को पत्थर तो एक को फूल मिलते हैं। एक दुनिया को देख कर पागल तो दूसरा दुनिया के मालिक को देख कर पागल होता है। एक को धुत्कार तो एक को चरणों में प्रणाम मिलता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आश्रम समाचार

गीता के पहले अध्याय में अर्जुन की स्थिति विषाद की है, दुःख की है। परन्तु वह तब भी विवेक का, बुद्धि का परित्याग करके भ्रमित नहीं होता। जिसे विषाद कहा गया, वह विषाद अपने अन्तर में विवेक दीप को लिए है। ये सारगर्भित वाक्य थे महाराज श्री के। गीता के विषादयोग नामक पहले अध्याय पर विचार करते हुए दिनांक ४ फरवरी के प्रथम रविवार को आश्रम पर हुए साप्ताहिक सत्संग के अवसर पर।

क्योंकि अर्जुन प्रतीक है जीवात्मा का भी, इसीलिए हमें यह भी संकेत मिलता है कि हमें कठिन से कठिन बुद्धि को भ्रमित कर देने वाली स्थिति में भी विवेक का परित्याग नहीं करना चाहिये। इस प्रकार उपस्थित रामप्रेमियों को सम्बोधित करने के बाद श्री अनिल जी सभ्रवाल व श्रीमती अनीता सभ्रवाल को उनके शुभविवाह पर नव जीवन की सफलता के लिए आशीष व शुभ कामना देते हुए दिनांक ५ फरवरी को प्रातः आप दिल्ली पहुँचे, यहाँ पर आपने श्री हरवंशलाल जी जौली के सुपुत्र श्री विजय कुमार जी जौली कुवैत निवासी के पाणिग्रहण संस्कार पर उपस्थित होकर नवदम्पति को आशीष दी। इसी दिन आपने श्रीमती कृष्णादेवी जी की सुपुत्री विनोद के भावी नवजीवन के लिए भी शुभ कामना समर्पित की।

दिनांक ७ फरवरी तक दिल्ली निवास करने के बाद दिनांक ८ की प्रातः आपका पदार्पण देहरादून आश्रम पर हुआ। दिनांक ९–१० और ११ फरवरी को काली कमली, ऋषिकेश में आयोजित सम्मेलन में आपने अपने विचार अध्यात्म-जिज्ञासुओं को स्वामी राम की ज्ञान-भक्तिमयी धारा से तृप्त किया।

रविवारीय सत्संग में आत्मदर्शन सम्बन्धी अपने विचारों को स्पष्ट करते हुए आपने बतलाया कि मनुष्य का स्वभाव अन्तर्दर्शन करना है और स्वाभाविक होने के फलस्वरूप वह करता भी है। लेकिन त्रुटि करता है। वह इस प्रक्रिया का भाग शरीर तक सीमित करके अध्यात्म का कार्य केवल उस स्वाभाविकता पर रुकी हुई प्रक्रिया को आगे बढ़ाने का है। हम अन्तर्दर्शन करें तथा जीवन की वास्तविकताओं को समझने का प्रयास करें, तभी हमें व्यष्टि से समष्टि का, पिण्ड से ब्रह्माण्ड का ज्ञान हो सकेगा और वेदान्त शास्त्रकार जिसे परमपुरुषार्थ के नाम से कहते हैं, उसकी अनुभूति भी तभी सम्भव होगी। इस प्रकार दून वासी प्रेमियों की आत्मजागृति की ओर संकेत कर श्री फकीरचन्द्र जी आहूजा की सुपुत्री सरोज के शुभविवाह हेतु रखे गये "अखण्ड रामायण पाठ" की पूर्णाहुति में आपने भाग लिया व वर्तमान पारिवारिक जीवन में घट रही घटनाओं का विश्लेषण कर आशीर्वाद दिया कि वह सुपुत्री अपने दोनों कुलों की मर्यादाओं का संरक्षण करती हुई जीवन के उद्देश्यों की प्राप्ति करे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देहरादून से दिल्ली तथा दिल्ली से पुनः दिनांक १८ फरवरी की सुबह आपने नारायण भगत द्वारा रखे गये — "भागवत् सप्ताह" की पूर्णाहुति में भाग लिया।

दिनांक १९ फरवरी को दिल्ली से झज्जर श्री रामस्वरूप जी के समधी की तेरहवीं में आपने भाग लिया।

दिनांक २० से २५ फरवरी तक रानी बाग शाखा, दिल्ली में सम्पन्न हुए सम्मेलन में आपने उपस्थित होकर वर्तमान सन्दर्भ में स्वामी राम के "नकदधर्म, व्यावहारिक वेदान्त की उपयोगिता" को श्रोताओं के समक्ष रखा।

महाशिवरात्रि के पावन व शुभ अवसर पर श्री धर्मपाल जी नन्दा के साथ आप आश्रम पर पधारे। वैदिक मन्त्रों के साथ भगवान् शिव का साङ्गोपाङ्ग विधियों से विशेष पूजन व अभिषेक हुआ। इस पर्व में दून वासी राम-प्रेमियों ने भी रात्रि जागरण कर शिवाराधन व शिवपूजन में भाग लिया।

दिनांक २६ फरवरी की प्रातः समष्टि भोज के अनन्तर स्वामी जी महाराज ने उपस्थित राम-प्रेमियों को शिवरात्रि के महत्व को पौराणिक व वैदिक दोनों सन्दर्भों में समझाया तथा बताया कि विग्रहयुक्त शिव ही शिवतत्व के रूप में, जो कारण, सूक्ष्म और स्थूल शरीर आदि उपाधियों से अलग-अलग निर्गुण पर ज्ञान द्वारा भस्मीभूत अवशेषों को धारण करने वाला है व दार्शनिकों के ध्यान व चिन्तन का विषय है। यही वह विग्रह है जो शिवपुराण में स्तम्भ रूप में वर्णित है, जो उत्पत्ति आदि से रहित है।

दिनांक २७ फरवरी की सायं महाराज श्री ने इलाहाबाद की ओर मानस रामायण सत्सङ्ग में सम्मिलित होने हेतु प्रस्थान किया। दिनांक २८ फरवरी तक वहीं रहने के बाद आप अलीगढ़ पहुँचे, जहाँ दिनांक १ मार्च तक आपका कार्यक्रम रहा।

आश्रम का वातावरण शान्त व वर्षायुक्त है। परितः प्रकृति स्वच्छ-हरित-परिधाना सी प्रतीत होती है।

— सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्याग

दैवी विधान का चक्र निर्दयतापूर्वक घूमता रहता है। जो इस विधान के अनुकूल चलता है, वह इस पर सवारी करता है; परन्तु जो अपनी इच्छा को ईश्वर - इच्छा, दैवी विधान के विरोध में अड़ाता है, वह अवश्य ही कुचला जायगा और उसे (यूनानी साहित्य में वर्णित स्वर्ग से आग लाने वाले) प्रोमिथियस के समान पीड़ा भोगनी पड़ेगी (जिसका मांस गिद्धों से नुचवाया गया था).

* * *

त्याग आपके स्थान, पद और शारीरिक काम-काज से कोई सम्बन्ध नहीं रखता; त्याग का इन बातों से कोई सरोकार नहीं।

* * *

त्याग तो आपको सर्वोत्तम स्थिति में रखता है; आपको उत्कर्ष की स्थिति में पहुँचा देता है।

* * *

त्याग का अर्थ तपश्चर्या नहीं है।

* * *

त्याग का अर्थ है प्रत्येक पदार्थ को पवित्र बना देना।

— स्वामी राम

बुक पोस्ट

ग्राहक संख्या 534

श्री/श्रीमती ..... इस्कूल पुस्तकालय

स्थान ..... इस्कूल गोंडा डी. वि. प्रतिनिधि

डाकख़ाना ....

जिला .... हरिद्वार

मासिक पत्र—

"राम–सन्देश"

स्वामी रामतीर्थ मिशन

राजपुर, देहरादून (उ. प्र.)

Pin– 248009 भारत.

स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून (उ० प्र०) के लिए प्रकाशक स्वामी अमर मुनि द्वारा शहन्शाही सर्वहितकारी प्रेस, राजपुर (देहरादून) में, मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम - सन्देश

16/4/79

अ प्रै ल १ ९ ८ ७ ९

संस्थापक—
ब्रह्मलीन स्वामी हरिॐ जी महाराज

संवर्धक—
ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्दप्रकाश जी महाराज

व्यवस्थापक—
स्वामी अमर मुनि जी महाराज

सम्पादक—
काका हरिॐ "निर्द्वन्द्व"

आजीवन सदस्यता शुल्क—

भारत में	—	१०० रु०
विदेश में	—	५०० रु०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* विषय-विज्ञान *

विषय	लेखक	पृष्ठ
अभयता	... श्री पूर्णसिंह जी	१
गृहस्थाश्रम और आत्मानुभव	... स्वामी राम	२
सदाचार की प्रेरणाभूमि — सत्संग	... श्री बल्लभदास जी बिन्नानी 'ब्रजेश'	६
मन पछताता रह जाता है !	... श्री गुणानन्द जी थपलियाल	८
प्रवचन	... ब्रह्मलीन स्वामी हरिॐ जी महाराज	९
उत्तम शिक्षा !	... श्री व्याघ्र सन्त जी	११
रामायण चरित्र चित्रण	... श्री स्वामी तीर्थानन्द जी	१२
ज्ञानी का अनुभव !	... श्री स्वामी विज्ञानानन्द जी	१३
हिन्दू और ईसाई	... स्वामी विवेकानन्द	१४
जीवन धारा	... अनु०— श्री भारतबन्धु जी शर्मा	१८
आज मैं क्या पा गया हूँ !	... श्री हरिकृष्णदास जी गुप्त 'हरि'	१९
परमात्मा के नाम की दार्शनिक तथा वैज्ञानिक मीमांसा	... डा० श्रीकृपाशङ्कर जी मिश्र	२०
ध्यान का लक्ष्य !	... श्री जेम्स एलेन जी	२३
शुभ सूचना	... सम्पादक	२४
"आश्रम समाचार"	... "	२५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

❀ ॐ ❀

'राष्ट्र के हित के लिए प्रयत्न करना ही विश्व की शक्तियों अर्थात् देवताओं की आराधना है'–स्वामी राम

वेदान्त, अध्यात्म, संस्कृति, धर्म एवं भक्ति का सजग सन्देशवाहक तथा
स्वामी राम के आदर्शों का एकमात्र लोकप्रिय मासिक—

राम सन्देश

वेदोपनिषदां तत्त्वम् सत्यं नित्यं सनातनम् ।
तत्सर्वं "रामसन्देशे" पत्रेऽस्मिन्नवलोक्यताम् ॥

वर्ष २८ | अंक ४ | राजपुर– देहरादून— अप्रैल १९७९. | वार्षिक भेंट १०) | एक प्रति ८५ पैसे

❀ अभयता ❀

मृत्यु बहु बार भी बाना बने, ताना मम में नित्य ही ।
हमें तथापि न मार सकती, बात यह है सत्य ही ॥
जन्म हमारा कभी हुआ नहिं, पुनि संख्या-श्वाँस जन्म की ।
वैसे ही अगणित है जैसे, अनिद्र सिन्धु की नवलहरी ॥
फेंक दो मृत देह को, पर कुछ बिगड़ता क्या कभी ।
फूँक दो चाहे इसे, पर नष्ट होता क्या कभी ॥
है अनन्तता मन्दिर मेरा, सान्त होता नहिं कभी ।
ज्योति हूँ उस अग्नि की, जो बुझ नहीं सकती कभी ॥
सब नेत्र मेरे नेत्र हैं, हैं कान भी मेरे सभी ।
विश्व में जितने हैं मन, क्या पृथक हो सकते कभी ॥
यमराज से डरता नहीं मैं, काल मेरा ग्रास है ।
लोक की बहुरूपता, मम प्यास की नित पूर्ति है ॥

—पूर्णसिंह

—❀—❀—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गृहस्थाश्रम और आत्मानुभव

(ता० १ फरवरी १९०३, रविवार, सन्ध्या-समय)

— स्वामी राम

महिलाओं और भद्रपुरुषों के वेश में मेरे ही आत्मन् !

"क्या कोई विवाहित मनुष्य (गृहस्थ) आत्म-साक्षात्कार की अभिलाषा कर सकता है ?" यह प्रश्न कुछ समय पहले राम से पूँछा गया था और उसका पूर्ण उत्तर भी उस समय दिया गया था।

राम आज उस विषय को नहीं छेड़ेगा, किन्तु उसी के समान एक अन्य विषय पर बोलेगा। उस प्रश्न के उत्तर में कामनाओं के स्वरूप का निरूपण किया गया था। अर्थात् "कामना क्या वस्तु है; और मनोरथ मनुष्य के स्वभाव पर क्या प्रभाव डालते हैं ? कामनाओं की पूर्ति से क्योंकर सुख और अपूर्ति से क्योंकर दुःख होता है ?" आदि प्रश्नों का विचार किया गया था। यह प्रश्न बहुत बड़ा और जटिल है और इस पर राम ने बहुत गम्भीरतापूर्वक विचार किया है। राम के अनुसन्धानों का फल "मनोवेग शास्त्र" नामक ग्रन्थ में प्रस्तुत किया जावेगा।

"क्या अपने पुत्र, कलत्र और सगे सम्बन्धियों में रहने वाला गृहस्थ अथवा दूसरे शब्दों में एक साधारण सांसारिक मनुष्य तत्त्व या आत्मा का साक्षात्कार कर सकता है ?" यह प्रश्न है।

हम इस प्रश्न के एक अंग पर विचार करेंगे। वेदान्त केवल इतना पूँछता है "क्या तलवार आपके शत्रुओं का नाश कर सकती है ?"

यदि इस प्रश्न के उत्तर में 'हाँ' कहा जा सकता है, तो "क्या कोई सांसारिक गृहस्थ तत्त्व का साक्षात्कार कर सकता है ?"

इस प्रश्न के उत्तर में भी 'हाँ' कहा जा सकता है। यह सब केवल उस तलवार अथवा गृहस्थी के बन्धन के उपयोग पर निर्भर है। उसी एक तलवार से हम अपना नाश कर सकते हैं और उसी से हम बाहरी आक्रमणों से अपने को बचा सकते हैं। इसी प्रकार मनुष्य अपनी गृहस्थी के बन्धनों और सम्बन्धों के दुरुपयोग से अपना विनाश कर सकता है या अपनी आध्यात्मिक उन्नति कर सकता है और अपने भीतर परमात्मा का साक्षात्कार कर सकता है। अतः यह प्रश्न भी उसी प्रकार हल होता है।

हमारा टहलना, घूमना, हमारे स्वास्थ्य-सम्बन्धी दैनिक नित्य-कर्म हमारे सुख और आनन्द का कारण हो सकते हैं— वे हमारे लाभ तथा सुधार का कारण बन सकते हैं, यदि उचित रूप से हम उनका पालन करें। परन्तु उनके दुरुपयोग से वही सैर-सपाटे, क्लेश, अशान्ति एवं व्याधि का कारण बन सकते हैं।

इसी तरह हमारे पारिवारिक सम्बन्ध भी हमें उन्नत और निरोग बना सकते हैं, वही हमारा समूल नाश भी कर सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक बड़ा सज्जन पुरुष था। उसके पास एक बहुत लुच्चा और बदमाश नौकर था। वह प्रत्येक काम को उल्टा ही किया करता था। अपने मालिक की आज्ञाओं के पालन करने का उसका ढंग बड़ा निराला था। वस्तुतः उसके कार्य करने की शैली ऐसी थी कि गम्भीर-से-गम्भीर मनुष्य भी उससे झल्ला उठता। पर वह धर्मात्मा मालिक उस नौकर पर कभी क्रुद्ध न होता, उलटे वह उस दुष्ट के साथ बड़े प्रेम का बर्ताव करता। एक समय उसके अतिथि ने उस नौकर के विरुद्ध बहुत सी शिकायतें कीं। वह उसके कामों से बहुत खिन्न और क्रुद्ध हुआ था, उसने उसके मालिक से उसे निकाल देने को कहा। पर मालिक ने उत्तर दिया—"आपकी सम्मति अत्युत्तम है, और आपने शुभेच्छापूर्वक यह सम्मति दी है। मैं जानता हूँ कि आप मेरे शुभचिन्तक हैं और मेरे कार्यों की वृद्धि चाहते हैं, इसीसे मुझे यह सम्मति देते हैं। पर मैं इस बात को अधिक जानता हूँ। मैं जानता हूँ कि मेरा कामकाज खराब हो रहा है। इससे मेरे व्यापार को हानि पहुँच रही है। किन्तु मैं उसे इसीलिए रखता हूँ कि वह इतना अवज्ञाकारी और अविश्वासी है। यह उसका दुष्ट आचरण और खराब स्वभाव है, जिससे वह मुझे इतना प्रिय हो रहा है। वह पापी, दुष्ट और नमकहराम है, इसीसे मैं उसे अधिक प्यार करता हूँ।" उसका ऐसा कहना सचमुच बड़ा ही आश्चर्यजनक था।

वह मालिक बोला—"दुनिया में जितने लोगों से मेरा वास्ता पड़ा है, उन सब में से एक यही मनुष्य ऐसा है, जो मेरी आज्ञाओं का उल्लंघन करता है, जो मेरे लिए अप्रिय, अकीर्तिकर और हानिकर काम करता है; और जितनों से मेरा वास्ता पड़ा, वे सबके सब इतने कोमल स्वभाव, इतने अच्छे और इतने प्रेमी हैं, वे कभी मुझे रुष्ट करने का साहस नहीं करते। इसलिए यह नौकर असाधारण है। यह एक तरह का मुगदर है, जो मेरी आध्यात्मिक शिक्षा का उत्तम साधन बन रहा है। जिस प्रकार बहुत से लोग अपना शारीरिक बल बढ़ाने के लिए मुगदर आदि फेरते हैं, उसी प्रकार यह नौकर मेरे आत्मिक बल की वृद्धि-निमित्त मुगदर का काम देता है और इससे मेरा आध्यात्मिक शरीर पुष्टि पाता है। इस नौकर द्वारा मुझे आध्यात्मिक बल प्राप्त होता है। संक्षेप में इस नौकर के साथ मुझे एक प्रकार की कुश्ती लड़नी पड़ती है, जिससे मुझे शक्ति प्राप्त होती है।"

अतः राम इस तथ्य को आपके सामने उपस्थित करता है और इसकी ओर आपका ध्यान इसलिए दिलाता है कि यदि आपको गृहस्थी-बन्धन आपकी उन्नति के मार्ग में विघ्न रूप अथवा अड़चन-पत्थर मालूम पड़ें, तो भी आपको खिन्न होने की आवश्यकता नहीं। ठीक उसी धर्मात्मा मालिक का अनुकरण करो। भेद-भावों और कठिनाइयों को शक्ति और बल का नवीन स्रोत बना लो।

ग्रीस देश में सुकरात नाम का एक महान् तत्ववेत्ता हुआ है। उसकी स्त्री दुनिया भर में बड़ी कलहकारिणी थी। एक दिन सुकरात बड़ी गम्भीर वृत्ति से किसी तत्व का चिन्तन कर रहा था। उसी समय उसकी स्त्री अपनी आदत के अनुसार उसके पास आयी और अपशब्द बोलने लगी। उसने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुकरात को लानतान की और उसका अपमान किया, अनेक नामों से उसे पुकारा। उसकी वृत्ति अपनी ओर खींचने का आग्रह किया। अपनी टहल उससे करवाना चाही और 'यह कर', 'वह कर' की आज्ञा उसे देने लगी। पर सुकरात अपने तत्व-चिन्तन में ही लगा रहा। किसी भी समस्या को वह तब तक नहीं छोड़ता था, जब तक वह हल न हो ले। यही उसकी परिपाटी थी।

स्त्री ने गरज-गरज कर तूफान मचा दिया, परन्तु सुकरात ने जब भी न सुना, तब गुस्से में भरकर स्त्री ने गन्दे पानी से भरा बरतन बेचारे के सर पर उलट दिया। पर क्या सुकरात उस समय क्षुब्ध या क्रुद्ध हुआ ? किञ्चनमात्र भी नहीं। वह मुस्कराया और हँसते हुए बोला— "आज यह समस्या, लोकोक्ति ठीक सिद्ध हुई कि प्रायः मेघ जब गरजता है, तब बरसता है।"

पहले जब कभी वह गरजी, वर्षा नहीं हुई। किन्तु आज जब उसने गरज-गरज कर तूफान मचाया, तो पानी भी बरस पड़ा। उपर्युक्त व्यंग्य वचन के बाद सुकरात फिर अपने तत्व-चिन्तन में मग्न हो गया।

इससे स्पष्ट है कि अपने स्वभाव को वश में करने की शक्ति से मनुष्य को कभी निराश न होना चाहिए। यदि एक मनुष्य (सुकरात) ने अपने स्वभाव को इतना वश में कर लिया, तो फिर सब कोई कर सकता है। आज भी क्या दुनिया में ऐसे लोग नहीं हैं जिनकी आदत और स्वभाव उनके अपने अधीन हों ? अवश्य ऐसे मनुष्य हैं, और अभ्यास से आप भी ऐसा कर सकते हैं।

यदि आप चाहो तो तत्व साक्षात्कार और परमात्मा से एकता, अथवा सबके साथ अभेदता, समस्त विश्व के साथ अपनी समता एवं इस आत्म-साक्षात्कार का मार्ग आपके गृहस्थी के सम्बन्धों के द्वारा ही विशेष सुगम बनाये जा सकते हैं।

जगत् के प्रत्येक मनुष्य का उद्देश्य तथा लक्ष्य, उसके आध्यात्मिक विकास का परिणाम यही है कि प्रत्येक प्राणी अपने अन्तरात्मा का अनुभव करे, और यह परिच्छिन्न आत्मा जब तक ईश्वर के साथ अभेदता या परमात्मा से एकता का साक्षात्कार न कर ले, तब तक निजी अनुभवों का उपार्जन करता रहे; अन्यथा तलवार की धार पर तो सबको उसका अनुभव करना ही होगा, यही उद्देश्य है। यदि साधारण मनुष्य को गृहस्थी के सम्बन्ध विघ्नरूप पड़ते हैं, तो इसके विपरीत राम कहता है कि पुत्र और कलत्र आपके सहायक बन सकते हैं।

पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है। पृथ्वी को अवश्य परिक्रमा करना है। चन्द्रमा पृथ्वी से चिमटना चाहता है। अब बताओ, पृथ्वी बेचारी क्या करे ? चन्द्रमा और उपग्रहों को साथ लेकर पृथ्वी सूर्य की प्रदक्षिणा कर सकती है।

इसी प्रकार से, हे पुरुषो व स्त्रियो ! यदि आपने सूर्यों के सूर्य की ओर खिच जाना निश्चय किया है, तो जिस प्रकार पृथ्वी चन्द्रमा को साथ-साथ रखती है, उसी प्रकार आप भी अपने साथी को साथ रक्खो, और तब अपने साथी को लेकर सूर्यों के सूर्य तथा प्रकाशों के प्रकाश के इर्द-गिर्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पृथ्वीवत् परिक्रमा करते जाओ। ऐसा करने से अकेले अपने इस तुच्छ शरीर को ही उस 'सूर्यों के सूर्य' की प्रभा, कान्ति एवं शोभा का भागी बनाने की जगह आप अपने साथ अपने साथियों (पत्नी इत्यादि) को भी उसी सूर्य की प्रभा, कान्ति और शोभा का उपभोग करा सकते हो। इस प्रकार अकेले एक व्यक्ति की जगह आप अनेक जीवों को अपने साथ खींच ले जा सकते हो। केवल एक शरीरा द्वारा काम करने के बदले आप अनेक शरीरों द्वारा कार्य कर सकते हो। ये सभी आपके शरीर हैं। जिस प्रकार एक शरीर आपका है, उसी प्रकार ये सब शरीर ईश्वर के हो सकते हैं, और उसका गुणानुवाद कर सकते हैं। जैसे जब कोई मनुष्य किसी स्थान पर जाता है और अपने साथ एक अपनी देह ही ले जाता है, तो क्या वह अपने हाथ, पैर, आँख, नाक, कान आदि को पीछे छोड़ जाता है, ये सब उसके साथ ही जाते हैं; उसी प्रकार वेदान्त कहता है कि जब आप स्वर्गीय ज्ञान प्राप्त करने जाते हो, जब आप सत्य का अनुभव करने जाते हो, तब आप अपने आधे शरीर मात्र (अर्द्धाङ्ग) को स्वर्गीय ज्ञान की ओर ले जाने के स्थान पर सम्पूर्ण शरीर को अपने साथ ले जा सकते हो, आप अपने पुत्र-कलत्र को, मानो अपने दिल-दिमाग और हाथ-पैरों को साथ ले जा सकते हो।

इस तरह परमात्मा के साथ अभेदता और एकता अनुभव करने के पूर्व आप अपनी स्त्री और पुत्रों के साथ एकता अनुभव करो। जिस मनुष्य ने अपनी अर्द्धाङ्गिनी और पुत्र-कलत्र के साथ एकता अनुभव नहीं की, वह सबके साथ अपनी एकता का अनुभव कैसे कर सकता है ?

(क्रमशः)

जीवनरूपी खेती की मेंड़—स्वाध्याय

जिस प्रकार खेती की रक्षा के लिए उसमें मेंड़ लगा दी जाती है, ताकि उसे बाहर का कोई भी पशु खराब न कर सके। इसी प्रकार साधक के जीवन में स्वाध्याय एक प्रकार की मेंड़ है, जिससे बाहर के पशुरूपी दुर्गुण अन्दर आने से रुके रहते हैं। क्योंकि काम, क्रोध, राग, द्वेषादियों से बचना साधक के लिए परमावश्यक है; नहीं तो यह आत्मारूपी खेती के चौपट हो जाने का भय है। नित्यप्रति के स्वाध्याय से बुद्धि निश्चयात्मिका हो जाती है तथा बाहर के आए हुए दोषों को बाहर निकालने में सहायता प्राप्त करती है। स्वाध्याय से संशय-विपर्यय आदिक नहीं रहते। अपना पथ साफ दीखने लग जाता है। स्वाध्याय द्वारा मन की बाढ़ बाँधनी चाहिए।

—हरिकिशनदास अग्रवाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सदाचार की प्रेरणाभूमि—सत्संग

श्री बल्लभदास जी बिन्नानी 'ब्रजेश', साहित्यरत्न, वाग्वाचस्पतित डी० डी०

महात्माओं की बाल-क्रियाओं पर ध्यान न देकर उनकी अन्तरंग धारणा देखनी चाहिए।

मुनि वही है जो निन्दा-स्तुति नहीं करता अर्थात् जिसकी गुण-दोष पर दृष्टि नहीं होती। निन्दा-स्तुति तो गुण-दोष-दृष्टि हुए बिना हो नहीं सकती।

गुणों पर दृष्टि होने से स्तुति होती है और दोषों पर दृष्टि होने से निन्दा। ये दोनों त्याज्य हैं। अतः इनके त्यागी का नाम ही मुनि है।

सत्पुरुष या सत् अर्थात् "परमात्मा के संग को सत्संग कहते हैं। सत् परमात्मा का संग होने के लिये हमें उनका संग करने की आवश्यकता है जो कि परमात्मा के मार्ग में तत्परायण है, जिसने परमात्मा की प्राप्ति कर ली है या जो उसे पाने के लिये प्रयत्नशील है।" ऐसे सिद्ध या साधकों के संग को सत्संग कहते हैं।

सत्संग करने से भगवान् में हमारी आसक्ति दिनोंदिन बढ़ती है। जिससे शील-सदाचार की वृद्धि होती है। जिस वस्तु का निरन्तर चिन्तन होगा उसमें आसक्ति बढ़ेगी ही, इसलिए निरन्तर सत्संग करना चाहिए।

भजन तो एकान्त में भी कर सकते हैं, परन्तु काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि दोष सत्संग किये बिना दूर नहीं हो सकते। सत्संग में इन्हीं को नाश करने की बातें होती हैं। इसलिए सत्संग में जाने से अवगुण छोड़ने की इच्छा होती है और फिर प्रयत्न करने का अवगुण छूटता है। बिना सत्संग किये, प्रायः बहुत भजन करने वालों के भी दोष नहीं छूटते और जो सत्संग करेगा, वह भजन अवश्य करेगा। जो सत्संग करेगा उसके पाप न छूटें, यह असम्भव है। सत्संग में एक बिजली है, उस वायुमण्डल में बैठ जाने मात्र से ही अन्तःकरण पवित्र हो जाता है, क्योंकि वहाँ का वायुमंडल ही पवित्र है, इसलिए सत्संग की निन्दा करने वाले भी वहाँ जाने लगने पर पवित्र हो जाते हैं और धीरे-धीरे वे भी भगवत्परायण होने लगते हैं। सत्संग की महिमा का कोई वर्णन ही नहीं कर सकता। सत्संग मे महापुरुषों में प्रीति होगी। कुछ भी न करके यदि सत्संग में जाकर केवल बैठ ही जाय, तो भी लाभ होता ही है।

भक्तों का सिद्धान्त है कि सत्संग भगवत्कृपा से मिलता है। पुरुषार्थवादी कहते हैं कि वह पुरुषार्थ से मिलता है, किन्तु मेरे विचार से तो इसमें भगवत्कृपा ही प्रधान है।

जो पुरुष भगवान् के गुणानुवाद तो करता है, किन्तु स्वयं कामी, क्रोधी अथवा लोभी है, उसके विषय में पहले मेरा ऐसा विचार था कि उसका संग न करें किन्तु एक महात्मा ने मुझ से कहा—"हलवाई की मिठाई खाने वाला उस हलवाई के गुण-दोष नहीं देखता। परन्तु यह बात उच्चकोटि के लिए है, साधारण साधक के लिए तो सर्वसद्गुण सम्पन्न भगवद्भक्त का ही संग करना लाभप्रद है, नहीं तो दोष देख करके उसको सत्संग से अरुचि हो जायेगी या वह दोषों का अनुकरण करने लगेगा।"

सब साधनों का सर्वोच्च मूल कारण सत्संग है। यह बीज रूप है और सब शाखा-प्रशाखा है। सत्संग ही सबसे सुलभ साधन है।

जो सद्शास्त्र का विचार कर लेगा, वही सत्संग से अधिक लाभ उठायेगा। यद्यपि सत्शास्त्र विचार की अपेक्षा सत्संग-महत्त्व बहुत बड़ा है, किन्तु सत्संग के साथ-साथ शास्त्र-विचार भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करना अवश्य चाहिए, जो अद्वैतवादी हैं उनके लिए भी उपनिषदों में श्रीमद्भागवत् में सब सामग्री मिल सकती है।

बिना सत्संग के भगवत्प्राप्ति नहीं हो सकती है। जो एकान्त में रहकर भजन-साधन तो करता है, किन्तु सत्संग नहीं करता; उसके आचरण में यदि कोई त्रुटि होगी, तो वह निवृत्त नहीं हो सकेगी। अतः सत्संग में चुपचाप बैठकर सत्पुरुषों के वचन सुनते रहना, यह उत्तम पुरुषों का उदाहरण है, सत्संग में प्रश्न करना मध्यकोटि के सत्संगियों का उदाहरण है तथा तर्क या वाद-विवाद करना निकृष्ट पुरुषों का स्वभाव है। जो बिल्कुल मूर्ख हैं उन्हें सत्संग से और कोई लाभ न होगा तो सत्पुरुषों में प्रीति तो होगी ही और फिर प्रेमवश उनसे तद्रूपता भी प्राप्त होयेगी।

अधिक लाभ उन्हीं लोगों के सत्सङ्ग से होता है जिनसे अपने इष्ट-साधन-क्रम और मन का मेल होता है। दूसरी निष्ठा के साधकों का सङ्ग करने से कई बार अपने साधनों में सन्देह उत्पन्न हो जाता है। अतः उन्हीं पुरुषों का सङ्ग करना चाहिए जिनसे अपना इष्ट मेल, क्रिया मिले और मन मिले।

जिस प्रकार के पुरुषों का सङ्ग होता है, उनमें वैसी ही बातें हुआ करती हैं, जैसे व्यापारियों में—व्यापार की, साधुओं में—परमार्थ की तथा भक्तों में—भगवान् की चर्चा होती है। अतः ऐसे लोगों का ही सङ्ग करना चाहिए, जिनसे अपने पक्ष की विशेष पुष्टि हो।

जिस पुरुष का भजन में प्रेम हो और जो शान्ति चाहता हो, उसे लौकिक समस्याओं पर विशेष दृष्टि नहीं देनी चाहिए। भगवान् जिनसे जसा करा रहे हैं वैसा ठीक ही है। जिनकी स्थूल दृष्टि है उन्हें श्रद्धालुओं की बातें अविश्वसनीय जान पड़ती हैं और तत्वदर्शियों की स्थूल जगत् में आस्था नहीं होती। अतः भजनानन्दियों को किसी प्रकार के गुण-दोषों का चिन्तन न करते हुए अपने काम से काम रखना चाहिए।

वास्तव में श्रीमद्भागवत् और रामायण दोनों ही बड़े अमूल्य सदाचार का आदर्श बताने वाले ग्रन्थ हैं। इनका प्रत्येक शब्द मननीय है। हमारे महर्षियों ने जितने ग्रन्थ रचे हैं, उनमें से किसी में भी श्रद्धा हो जाने से जीवन का अवश्य कल्याण हो जायेगा। बाइबिल और कुरान भी जीव का कल्याण करने में समर्थ हैं। उनके कथनानुसार वह खुदा चौथे या सातवें आसमान पर बैठा है और हमारे शास्त्रों के अनुसार वह वैकुण्ठ, गौलोक या कैलाश में है, तो तत्वतः कोई भेद नहीं है, क्योंकि वे भी उसे सच्चिदानन्दघन तो मानते ही हैं। उस सच्चिदानन्दघन का चिन्तन हम विष्णु या शिव के रूप में करते हैं। इसलिए हमें वह उन्हीं रूपों में दिखाई देता है।

इसी प्रकार ईसाई या मुसलमान भी अपनी भावना के अनुसार उसका अपने अभीष्ट रूपों में दर्शन कर सकते हैं, वह तो सर्व समर्थ हैं, इसलिए सभी रूपों में प्रकट हो सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन पछताता रह जाता है !

श्री गुणानन्द जी थपलियाल

हर प्रात मुझे बहकाता है,
कुछ प्रलोभन दे जाता है।
दिन भर उड़ता प्राण-पखेरू,
सन्ध्या को फिर थक जाता है।
मन पछताता रह जाता है॥

हर रात मुझे भरमाती है,
नींद न नयनों में लाती है।
मैं जब किरणें ढूँढ़ा करता,
घना अन्धेरा छा जाता है।
मन पछताता रह जाता है॥

मधु मास मुझे बहलाता है,
चिर-सुख सा सहलाता है।
मैं जब तक इसको दुलराऊँ,
यह ऋतु-पट में खो जाता है।
मन पछताता रह जाता है॥

हर बात मुझे उकसाती है,
दिन-रात मुझे हुलसाती है।
मैं जब तक कुछ पाने बैठूँ,
तब तक जीवन ढल जाता है।
मन पछताता रह जाता है॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्मलीन स्वामी हरिॐ जी द्वारा गीताभवन अमृतसर में दिया गया—

❀ प्रवचन ❀

माताओ, देवियो व सज्जनो !

हमको अपने जीवन की समस्याओं को हल करना है। कोई ज्ञान का आश्रय लेकर कर रहा है और कोई भक्ति का। अनेक प्रकारों से हम इस जीवन में सफल होना चाहते हैं। माली पौधे को लगाता है, पर उसका अन्तिम ध्येय क्या है ? शीघ्र पक कर मीठा मीठा फल आये। इसी तरह जितने ज्ञान भक्ति भरे सत्सङ्ग होते हैं, जीवन को सफल बनाने के लिये किये जाते हैं। अकर्मण्यता एक बड़ा भारी अवगुण है। शास्त्रों ने प्रारब्ध का अर्थ यह नहीं कहा "कुछ न करो, व्यर्थ की चेष्टाओं-कामनाओं को न करो।" सभी का फल प्रारब्ध रूप से निश्चित है। हर मनुष्य सम्पूर्ण विश्व को अपना करने का बीड़ा रखता है। तो क्यों कोई किसी का मोहताज बने ? क्यों किसी के धन की ओर ललचाती नजरों से देखे ? विश्वपति इसके हृदय में विद्यमान है। आत्मज्ञान सिखाता है। हरेक के अन्दर विश्वपति है। आत्म रूप से, दूसरों के अधिकारों से वृत्ति उठा कर खोज करनी है।

जीवन-यात्रा को कैसे शोभायमान बना सकते हैं। स्वामी राम कहा करते थे— एक ईश्वर सृष्टि है, एक जीव सृष्टि। सत्युग के पश्चात् कोई सूर्य या चाँद दूसरे नहीं हो गये। दुःखदायी या सुखदायी जीव की रची सृष्टि है। मृतिका एक ही है। अपने अपने आर्ट के अनुसार, ट्रेनिंग के अनुसार भिन्न भिन्न खिलौने तैयार कर रहे हैं। इसी तरह अपनी अपनी ट्रेनिंग ज्ञान के अनुसार, अपनी अपनी बुद्धि के अनुसार जीव विचर रहा है। यह छोटा है या महान्, अपनी ही रचना से बना है। जहाँ वेदान्त के शब्दों में यह बताया जाता है। "ॐ तत्वमसि" इसका तात्पर्य प्रयोग में लाइये। जो कुछ भी तू बना है, अपने संकल्पों के बल पर बना है। दूसरा तुझे बनाने वाला कोई नहीं। थोड़ा बहुत पढ़ना तो (थ्यौरैटिकल) है। प्रैक्टिकल तो यह है— मैं अपने संकल्पों के बल पर ही सब कुछ बन सकता हूँ।

योग-वशिष्ठ जर्मनी में ले जाया गया। जब खूब प्रशंसा की, तो राम से कहने लगे— यह मूर्खों सी बातें कहाँ सीखी ? बशिष्ठ जी बोले— जैसी योग्यता पाई, वैसा कह रहा हूँ। मेरी शिक्षा, मेरे उपदेश का यह तात्पर्य है कि हे राम ! तेरी योग्यता बशिष्ठ रूप धारण कर सामने बैठी है। मेरा दृढ़, पक्का अनुभव है कि तीसरी क्लास के टिकट लेते हैं और प्रथम में जा बैठते हैं। तो बुरी तरह से उतारे जाते हैं। आपके गृह के अन्दर सत्सङ्ग होने लगता है। कुछ दिनों के बाद सिलसिला खत्म हो जाता है। "तैयो राज्य", "रौजो नरक" शेख अब्दुल्ला का उदाहरण लीजिये— जेल में रह कर अति शुद्ध हो गया था। पत्ते पत्ते के अन्दर प्यार करने लगा, उसने यही उद्देश्य बना लिया, पंडित नेहरू की शक्ति मिल गई। कश्मीर पर राज्य करने लगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जफ़र बादशाह फकीर हो गये, यह ताज रख लो, यह ताज जिस सिर पर चला जावे, जहाँ तक सूर्य की किरणों की दौड़ है, वहाँ तक उसका राज्य रहेगा।

मैंने इस ताज को बहुत देर तक रखा, पर पीड़ा रखने से जो उत्पन्न होती है, न पूछो। शेख अब्दुल्ला ताज पहनता है, तो अभिमान की पीड़ा आ जाती है। विचार शक्ति निकल जाती है। पाप का प्याला लबरेज हो जाता है, फिर छः साल बाद उसी कैद में।

तुम निर्धन क्यों हो ? तुम्हारा अन्दर से पतन हो चुका है। जैसी ऐनक लगाते हैं, वैसा वातावरण बन जाता है। मन के सङ्कल्प-अनुसार पिक्चर बना लेता है। ईश्वर की तरह पञ्च रस भी एक तत्व है। भावना के अनुसार जीव खिलाड़ी है। खेल कर रहा है।

मनुष्य जो किसी तथ्य पर पहुँचना चाहते हैं, "आत्म विस्मृति" यानी अपने को भूल जायें।

एक सराको बादशाह था। उसके राज्य में अर्श भेदन हकीम बड़ा अच्छा था। उस पर उसे बहुत विश्वास था। बादशाह ने एक दिन उसे बुला कर कहा ताज के अन्दर खोट है, तोड़ना भी नहीं, खोट को किसी युक्ति से निकाल, तू किसी दलील से बता कितना खोट है ? दस पन्द्रह दिन टाईम रख दिया जाता है। वृत्ति को तदाकार करता है। एक दिन टब में बैठा नहा रहा था। चूँकि चौबीस घंटे खोट निकालने का ध्यान रहता था। नहाते नहाते अलफनंगा महल की ओर भाग गया। (पा लिया पा लिया) सारे कहने लगे, इसकी अक्ल को क्या हो गया। राजा ने अर्श भेदन का शरीर पोंछा, कपड़े पहनाये, जब तक साइन्स का जमाना रहेगा, उसका नाम रहेगा।

मैंने तो आत्मविस्मृति से अपना ध्येय पा लिया। अर्श भेदन ने तो खोट ही निकाला था और आपको परमात्मा की प्राप्ति करनी है। पग-पग पर मान-अपमान, हानि-लाभ के झोंके लग रहे हैं। जो इन झोकों से डोलता है— उसका न यह लोक, न ही परलोक सुधरता है। काम में लग्न होनी चाहिये।

ॐ शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!

❀ विश्वास ❀

पापी लोगों के हृदय में शीघ्र विश्वास नहीं होता है। जिनके पुण्य थोड़े हैं उनके हृदय में विश्वास नहीं होता। विश्वास माने होता है— श्वास रहित हो जाना अर्थात् किसी पर विश्वास करके हम बिल्कुल निर्भर हो गये। दृढ़ विश्वास से ही भगवान् का भजन होता है।

— स्वामी अखण्डानन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तम शिक्षा !

आरम्भो न्याययुक्तो यः स हि धर्म इति स्मृतः ।
अनाचारस्त्वधर्मेति एतच्छिष्टानुशासनम् ॥
(२०७ । ७७)

जो कार्य न्याययुक्त होता है, वही धर्म माना गया है। अनाचार का नाम ही अधर्म है— यह शिष्ट पुरुषों का उपदेश है।

यत्करोत्यशुभं कर्म शुभं वा यदि सत्तम ।
अवश्यं तत् समाप्नोति पुरुषो नात्र संशयः ॥
(२०९ । ५)

साधु श्रेष्ठ ! जो पुरुष जैसा भी शुभ या अशुभ कर्म करता है, अवश्य ही उसका फल भोगता है— इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है।

सतां धर्मेण वर्तेत क्रियां शिष्टवदाचरेत् ।
असंक्लेशेन लोकस्य वृत्तिं लिप्सेत वै द्विज ॥
(२०९ । ४४)

ब्रह्मन् ! सत्पुरुषों द्वारा पालित धर्म के अनुसार बर्ताव करे, शिष्ट पुरुषों की भाँति श्रेष्ठ आचरण करे। दूसरे लोगों को क्लेश पहुँचाये बिना ही जिससे जीवन-निर्वाह हो जाय, ऐसी ही वृत्ति अपनाने की अभिलाषा करे।

रथः शरीरं पुरुषस्य दुष्टमात्मा नियन्तेन्द्रियाण्याहुरश्वान् ।
तैरप्रमत्तः कुशली सदश्वैर्दान्तैः सुखं याति रथीव धीरः ॥
(२११ । २३)

मनुष्य का यह दोषयुक्त शरीर मानो एक रथ है, आत्मा इसका सारथि है, इन्द्रियों को अश्व कहते हैं। इन सबके द्वारा इन्द्रियरूपी श्रेष्ठ अश्वों को वश में करके सदा सावधान रहने वाले रथी की भाँति धीर पुरुष कुशल रहकर सुखपूर्वक यात्रा करता है।

— व्याध सन्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामायण चरित्र चित्रण

रामकालीन कुटुम्ब व्यवस्था

श्री स्वामी तीर्थानन्द जी

[गतांक से आगे]

"सानन्दं सदनं सुताश्च सुधियः कान्ता न दुर्भाषिणी,
सन्मित्रं सधनं स्वयोषिति रतिश्चाज्ञा पराः सेवकाः।
आतिथ्यं शिवपूजनं प्रतिदिनं मिष्ठान्नपानं गृहे,
साधोः संगमुपासते हि सततं धन्यो गृहस्थाश्रमः ॥"

रामकालीन गृहस्थाश्रम की आदर्शता का कारण तत्कालीन लोगों की पारस्परिक अव्यभिचारी निष्ठा थी। अव्यभिचारी निष्ठा ही सुख का मूल कारण है। यह निष्ठा कम हुई कि सुख भी कम हुआ। आज की भाँति केवल रुपये पैसे का सम्बन्ध नहीं था। विवाह संस्था के मूलभूत हेतुओं का पालन होता था। अनियमित कामोपभोग पर किस प्रकार से नियन्त्रण करना चाहिए, इसका पूर्ण विचार रामायण में किया गया है।

स्त्री-पुरुष-सम्बन्ध निसर्ग के नियमानुसार चलते थे, चलते हैं और चलते रहेंगे। विवाह पूर्व स्त्री-पुरुष-सम्बन्ध के परिणाम स्त्री को ही भोगने पड़ते थे। पुरुष छूट जाते थे। इसलिये पुरुषों को बन्धन में रखने के लिए विवाह संस्था का निर्माण हुआ। ताकि शुद्ध अन्तःकरण से बालक और स्त्री का भरण-पोषण हो सके।

(It is the faudamental nature of craking not to be fully Satisfied.)

"उपभोग से तृप्ति न मिलना, यह उपासना का नैसर्गिक स्वभाव है।" रामकालीन स्त्री को एक विशिष्ट संज्ञा दी हुई थी। उस समय के विद्वान लोगों ने कहा है कि :— स्त्री के पास प्रेम करने की और जिस पर प्रेम करेगी उसके लिए सर्वस्व अर्पण करने की शक्ति है। स्त्री डाक्टर न होगी तो चलेगा, वकील न बनेगी तो कोई बात नहीं, टाईपिस्ट तो बिल्कुल न बनें, परन्तु स्त्री माता, सखी और सहचरी अवश्य बने। सुख-दुख में भाग लेने वाली, आँसू पोंछने वाली स्त्री संसार में न हो, तो पुरुष का काम क्या होगा ? इस प्रकार की स्त्रियों से ही संसार उत्कृष्ट ढग से चलता है। आज का पुरुषवर्ग अति स्थार्थी है। अपना स्वार्थ बिना प्रयास सिद्ध करने की दृष्टि से वह नारी को स्वावलंबी बनने को कहता है और सदियों से इनके हाथों जो ठगी जा रही हैं, ऐसी माँ-बहनें इनकी बातों में आ जाती हैं। समस्त नारी जाति की वकालत करने का अगर कभी समय मिला तो हम कहेंगे कि— "आर्थिक क्षेत्र में स्त्री का दौड़ना हमें मंजूर है। परन्तु गृह और भोजनादि की व्यवस्था कीजिये।"

संक्षेप में यही कहना पड़ेगा कि रामायण काल में विकृत आध्यात्मिक कल्पना नहीं थी। उसी प्रकार अनियमित सुखोपभोग की सत्ता भी नहीं थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देह विवाह

सिर्फ सुन्दर शरीर से मतलब रखकर जो विवाह होते हैं, उन्हें देह विवाह कहते हैं। देह से किया जाने वाला प्रेम सच्चा प्रेम नहीं हो सकता। देह आज सुन्दर है, न जाने कल क्या होगा इस देह का ? देह के अन्दर रहने वाली आत्मा की पहचान होनी चाहिये। पति अगर पत्नी के देह की पूजा करता है, तो वह उसका अपमान है। पति को अपनी पत्नी देवी लगनी चाहिये। तथा पत्नी को पति की दिव्यता का साक्षात्कार होना चाहिये। विवाह को भोग का साधन मानना जब तक मनुष्य छोड़ेगा नहीं, तब तक दुःखों के बादल मँडराते रहेंगे।

विवाह का वास्तविक अर्थ है प्रेम और कर्तव्य के लिये संसार के रणाङ्गण में सक्रिय खड़ा रहना। जिस घर में सब के भिन्न-भिन्न मत होंगे, वह घर नहीं; सराय कहलायेगी। सराय में प्रत्येक के मत, स्तर अलग-अलग होते हैं। परिणाम यह होता है कि एक तवेले में बँधे हुए दो पशुओं की भाँति स्त्री-पुरुष रहते हैं। रामायण काल में :—

"यत्र नार्यस्तु पुज्यन्ते रमन्ते तत्र देवतः।"

इसी सिद्धान्त पर समस्त कुटुम्ब-पद्धति आधारित थी। जिस कारण सभी प्रजा सुखी थी।

(क्रमशः)

ज्ञानी का अनुभव !

कहाँ कोई है न्यारा — पूरण परमानन्द।

जिसे समझते थे हम दूर, उसका घट घट झलके नूर;
नर - नारी सज्जन या कूर, सब में एक रस है भरपूर।
मिला प्रीतम प्यारा — पूरण परमानन्द ॥ कहाँ०

जिसकी करते भिन्न तलास, उसको पाया अपने पास;
पास कहो या खुद ही खास, मिटा भेद स्वामो अरु दास।
लगा सोऽहम् नारा — पूरण परमानन्द ॥ कहाँ०

स्वप्ने सम देखा संसार, जन्म - मरण दुख दिये बिसार;
कर्म शुभाशुभ हुए असार, आवागमन का उतरा भार।
मिटा अब भ्रम सारा — पूरण परमानन्द ॥ कहाँ०

चहुँ दिशि में छाया आनन्द, गये हृदय से सारे द्वन्द्व;
स्वामी कहें अखण्डानन्द, सुनो गुनो "विज्ञानानन्द"।
गिनो क्या दस ग्यारा — पूरण परमानन्द ॥ कहाँ०

—स्वामी विज्ञानानन्द अवधूत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दू और ईसाई

स्वामी विवेकानन्द

हिन्दू की प्रवृत्ति विभिन्न दर्शकों को नष्ट करने की नहीं होती. अपितु सभी का समन्वय करने की होती है। यदि भारत में कोई नया विचार आता है, तो हम उसका विरोध नहीं करते, केवल उसे ग्रहण करने, उसका समन्वय करने की चेष्टा करते हैं। क्योंकि यह विधि सर्वप्रथम हमारे पैगम्बर, पृथ्वी पर भगवान् के अवतार श्रीकृष्ण ने सिखाई थी। ईश्वर के इस अवतार ने स्वयं ही पहले यह उपदेश दिया— मैं ईश्वर का अवतार हूँ, मैं सभी ग्रन्थों का प्रेरक हूँ, अतः हम किसी धर्म को अस्वीकार नहीं करते।

हममें और ईसाइयों में एक बात बहुत ही भिन्न है। ऐसी बात, जो हमने कभी नहीं सिखाई, वह बात है— ईसा मसीह के रक्त द्वारा मोक्ष अथवा किसी मनुष्य के रक्त द्वारा प्रक्षालन। यहूदियों की भाँति हमारे यहाँ भी बलिदान था। हमारे बलिदान का सीधा अर्थ यह है— जैसे हम कुछ खाने जा रहे हैं और जब तक उसका कुछ भाग भगवान् को समर्पित नहीं करते, उस पदार्थ को खाना बुरा है. इसलिए मैं खाद्य पदार्थ का समर्पण करता हूँ. यही शुद्ध और सरल भाव है। किन्तु यहूदियों में भाव यह होता है कि उसका पाप मेमने पर चला जाये और मेमने का बलिदान कर दिया जाय तथा स्वयं उसे सुरक्षित निकल जाने दिया जाय। हमने इस सुन्दर भाव का विकास भारत में कभी नहीं किया और मुझे प्रसन्नता है कि हमने ऐसा नहीं किया। ऐसे किसी सिद्धान्त से अपना उद्धार कराने के लिए कम से कम मैं तो कभी न आऊँ। यदि कोई आये और कहे कि मेरे रक्त से अपनी रक्षा करो, तो मैं उससे कहूँगा— "मेरे भाई ! तुम जाओ, मैं नरक में जाऊँगा। मैं ऐसा भीरु नहीं हूँ कि स्वर्ग जाने के लिए निर्दोष रक्त लूँ। मैं नरक के लिए प्रस्तुत हूँ। इस प्रकार यह सिद्धान्त हमारे बीच कभी नहीं पनपा और हमारे पैगम्बर कहते हैं कि जब कभी पृथ्वी पर अधर्म और अनैकतिकता फैलेगी, वह (ईश्वर) समय समय पर और स्थान पर यही करता रहा है और जहाँ कहीं भी तुम किसी असाधारण पवित्र व्यक्ति को देखो, तो जान लो कि वह ईश्वर उसमें है।

इस प्रकार तुम समझ लो कि यही कारण है, जो हम किसी धर्म से नहीं लड़ते। हम नहीं कहते कि केवल हमारा ही मार्ग मुक्ति का मार्ग है। पूर्णता हर कोई प्राप्त कर सकता है और इसका प्रमाण क्या है ? क्योंकि हम हर देश में पवित्रतम मनुष्य, भले पुरुष और स्त्रियाँ देखते हैं, चाहे वे हमारे धर्म में उत्पन्न हुए हों या नहीं। इसलिए यह नहीं माना जा सकता कि केवल हमारा ही मार्ग मुक्ति का मार्ग है। जैसे विभिन्न पर्वतों से निःसृत होकर इतनी नदियाँ आती हैं और अपना जल समुद्र में मिला देती हैं, वैसे ही भिन्न भिन्न धर्म सत्य के विभिन्न सिद्धान्तों से जन्म पाकर तुम ईश्वर में आते हो। यह बालक ही दैनिक प्रार्थना का एक अंश है। इस प्रकार की दैनिक प्रार्थना से निश्चय ही धर्म की भिन्नता के कारण युद्ध का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाव उत्पन्न होना नितान्त असम्भव है। इतना भारत के दार्शनिकों के विषय में पर्याप्त है। इन सभी महापुरुषों के प्रति और विशेष कर इस अवतार— कृष्ण के प्रति, पूर्वगामी श्रुतियों का समन्वय करने में उनकी अद्भुत उदारता के कारण हमारे हृदय में बड़ी श्रद्धा है।

अब उस व्यक्ति की बात आती है, जो मूर्ति के समक्ष सिर झुकाता है। यह उसी भाव से नहीं है; जैसा कि तुमने बेबिलोन और रोम की मूर्ति पूजा के विषय में सुना होगा। यह हिन्दुओं की ही विशेषता है। मनुष्य मूर्ति के समक्ष है, वह आँखें बन्द कर लेता है और यह सोचने का प्रयत्न करता है— मैं वह हूँ। न मेरा जन्म है, न मृत्यु, न मेरे पिता हैं, न माता, मैं समय या आकाश की सीमाओं से बद्ध नहीं हूँ, मैं निःसीम अस्तित्व, निःसीम आनन्द और निःसीम ज्ञान हूँ, मैं वह हूँ, मैं वह हूँ। मैं ग्रन्थों, पवित्र स्थानों या तीर्थों या किसी से भी बद्ध नहीं हूँ। मैं पूर्ण अस्तित्व, पूर्ण आनन्द हूँ, मैं वह हूँ, मैं वह हूँ। वह इसे जपता है और तब कहता है— "हे प्रभु ! मैं अपने में तेरी कल्पना नहीं कर पाता, मैं एक क्षुद्र मनुष्य हूँ।" धर्म ज्ञान पर निर्भर नहीं होता। वह तो स्वयं आत्मा है, वह तो ईश्वर है और वह सामान्य पुस्तकीय ज्ञान या वाग्मिता से प्राप्त नहीं किया जा सकता। तुम्हारे पास जो सर्वाधिक विज्ञान हो, उसे लो और उससे कहो — वह आत्मा का आत्मा के रूप में ध्यान करें, वह नहीं कर सकता, तुम आत्मा की कल्पना कर सकते हो, वह आत्मा की कल्पना कर सकता है। बिना अभ्यास के आत्मा का ध्यान करना असम्भव है। इसलिए चाहे जितना धर्मशास्त्र तुम पढ़ो, तुम एक बड़े दार्शनिक या उससे भी बड़े धर्मशास्त्री भी हो जाओ, एक हिन्दू बालक यही कहेगा कि इससे धर्म से कोई प्रयोजन नहीं। क्या तुम आत्मा से आत्मा के रूप में ध्यान कर सकते हो ? केवल तभी सब सन्देह हटते हैं और हृदय की समस्त कुटिलता ऋजु होती है, केवल तभी सब भय नष्ट होता है और सभी सन्देह सदैव के लिए शान्त होते हैं जब मनुष्य की आत्मा और ईश्वर आमने-सामने आ जाते हैं। कोई व्यक्ति पाश्चात्य अर्थ में अद्भुत विद्वान हो सकता है, पर यह सम्भव है कि वह धर्म का क, ख, ग भी न जानता हो। मैं उससे कहूँगा, उससे प्रश्न करूँगा — "क्या तुम जैसी वह है ? उस रूप में आत्मा का ध्यान कर सकते हो ? क्या तुम आत्मा के विज्ञान में आगे बढ़े हो ? क्या तुमने अपनी आत्मा को भौतिक तत्व से परे व्यक्त किया है ? यदि उसने नहीं किया है, तो मैं उससे कहूँगा — "धर्म तुम्हारे हाथ नहीं लगा है, यह सब केवल बकबास, पुस्तकीय दर्प और मिथ्याभिमान है। पर यह बेचारा हिन्दू, मूर्ति के समक्ष बैठता है और सोचने की चेष्टा करता है कि वह ईश्वर है और तब कहता है — "हे प्रभु ! मैं तुम्हारी आत्मा के रूप में कल्पना नहीं कर सकता। अत एव मुझे इस रूप में अपनी कल्पना करने दो।" और तब वह अपनी आंखें खोल देता है और इस रूप को देखता है और दण्डवत्-प्रणाम करते हुए वह अपनी प्रार्थना दोहराता है और जब उसकी प्रार्थना समाप्त हो जाती है, तो वह कहता है— "हे प्रभु ! अपनी इस अपूर्ण अर्चना के लिए मुझे क्षमा करो।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुमसे सदैव यह कहा जाता है कि हिन्दू पत्थर की पूजा करता है। अब इन लोगों की आत्माओं के आतुर स्वभाव के सम्बन्ध में तुम क्या समझते हो ? इन पाश्चात्य देशों को आने वाला मैं पहला संन्यासी हूँ। संसार के इतिहास में यह प्रथम अवसर है। जब एक हिन्दू संन्यासी ने समुद्र पार किया है। किन्तु हम ऐसी आलोचनाएँ सुनते रहते हैं और इन बातों के विषय में सुनते भी हैं और मेरे राष्ट्र वालों का तुम्हारे प्रति साधारण दृष्टिकोण क्या है ? वे हँसते हैं और कहते हैं— वे शिशु हैं, वे भौतिक-विज्ञान में महान् हो सकते हैं। वे बड़ी बड़ी चीजें बना सकते हैं। पर धर्म में वह केवल शिशु हैं। मेरे देश वालों का यही दृष्टिकोण है।

एक बात मैं तुमसे कहूँगा और मेरा आशय अप्रिय आलोचना नहीं है। तुम क्या करने के लिए मनुष्य को सिखाते हो, शिक्षा देते, वस्त्र देते और द्रव्य देते हो इसी के लिए न कि वे मेरे देश में जाकर मेरे सभी पूर्वजों को, मेरे धर्म को और सभी बातों को कोसें और गालियाँ दें। वे एक मन्दिर के निकट जाते हैं और कहते हैं — "हे मूर्तिपूजको ! तुम नरक में गिरोगे। पर वे भारत के मुसलमानों के प्रति ऐसा कहने का साहस नहीं करते, क्योंकि वहाँ तलवार निकल पड़ेगी। किन्तु हिन्दू बहुत नम्र होता है। वह मुस्करा कर चल देता है और कहता है — "मूर्ख को बकने दो।" उनका यही दृष्टिकोण है और तब यदि तुमको जो अपने आदमियों को गालियाँ देना और आलोचना करना सिखाते हैं। नितान्त सदुद्देश्य से भी तनिक सी आलोचना से छूता भी हूँ। तो तुम सिहर उठते हो और चिल्लाते हो — "हमें न छुओ, हम अमेरिकन हैं। हम संसार के सब लोगों की आलोचना करते हैं, उन्हें कोसते हैं, उन्हें गालियाँ देते हैं, उनसे कुछ भी कहते हैं। पर हमें न छुओ, हम छुईमुई हैं। तुम जो चाहो सो करो, पर साथ ही मैं तुमसे बताने जा रहा हूँ कि हम जैसे हैं, वैसे रहते हुए सन्तुष्ट हैं और एक बात में हम अच्छे भी हैं। हम अपने बालकों को ऐसी भयानक चीजें निगलना नहीं सिखाते, जहाँ हर वस्तु को प्रसन्नता देने वाली है। केवल मनुष्य ही नीच है और जब कभी भी तुम्हारे पुरोहित हमारी आलोचना करें, वे यह याद रखें कि यदि सम्पूर्ण भारत उठ खड़ा हो और हिन्द महासागर के तल का सम्पूर्ण कीचड़ उठा ले और उसे पाश्चात्य देशों की ओर फेंके तो भी यह उसका अति सूक्ष्मांश भी न होगा, जो तुम हमारे साथ कर रहे हो और यह किस लिए ? क्या हमने कभी एक भी धर्म प्रचारक संसार में किसी का धर्म परिवर्तन करने के लिए भेजा ? हम तो तुमसे कहते हैं— "तुमको तुम्हारा धर्म कल्याणकारी हो। पर मुझे अपना धर्म रखने दो।" तुम अपने धर्म को आक्रामक धर्म कहते हो। तुम आक्रामक हो। पर तुमने कितने को पाया है ? संसार में हर छठवाँ व्यक्ति चीनी प्रजा है अर्थात् बौद्ध है और तब जापान, तिब्बत, रूस और साइबेरिया और बर्मा और श्याम है और यह चाहे अच्छा न लगे, किन्तु यह ईसाई नैतिकता, यह कैथोलिक सम्प्रदाय सब उन्हीं से निःसृत है। अच्छा तो यह कैसे किया गया ? बिना रक्त की एक बूंद भी बहाये हुए अपने दम्भ और आत्मश्लाघा के बावजूद बिना तलवार के ईसाइयत कहाँ सफल हुई ? सम्पूर्ण विश्व में मुझे एक भी स्थान दिखाओ,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केवल एक मैं कहता हूँ, ईसाई धर्म के सम्पूर्ण इतिहास में एक मुझे दिखलाओ, केवल एक, मैं दो नहीं चाहता। मैं जानता हूँ, तुम्हारे पूर्वजों का किस प्रकार धर्म-परिवतन किया गया। उसके सामने दो मार्ग थे— धर्म-परिवर्तन करें या मारे जायें। बस यही। तुम अपने समस्त दम्भ के बावजूद इस्लाम धर्म से क्या अच्छा कर सकते हो, बस हमीं हैं और क्यों ? क्योंकि हम दूसरे को मार सकते हैं। अरबों ने यह कहा और उन्होंने दम्भ किया। पर आज अरब कहाँ है ? वे गृहहीन हैं। रोमन ऐसा कहा करते थे और वे आज कहाँ हैं ? शान्ति लाने वाले ही धन्य हैं। पृथ्वी उन्हीं की होगी। ऐसी वस्तुएँ भूमिसात् हो जाती हैं। वे रेत से बनी होती हैं। वे बहुत समय तक नहीं टिक सकतीं। हर ऐसी वस्तु, जो स्वाथ पर आधारित हो, प्रतियोगता जिसका दाहिना हाथ हो और भोग जिसका लक्ष्य हो, शीघ्र या कुछ विलम्ब से अवश्य नष्ट होगी। एसी वस्तुएँ अवश्य नष्ट होंगी।

भाइयो ! मैं तुमको बताऊँ। यदि तुम जीवित रहना चाहते हो, यदि वास्तव में चाहते हो कि तुम्हारा राष्ट्र जीवित रहे, तो ईसा के पास लौट चलो। तुम ईसाई नहीं हो। नहीं एक राष्ट्र के रूप में हो, ईसा के पास लौट चलो, जिसके पास कहीं सिर टेकने का स्थान नहीं था, चिड़ियों के घोंसले हैं और पशुओं की माँद है। पर मनुष्य के इस पुत्र के पास अपना सिर टेकने को कोई स्थान नहीं है। तुम्हारा धर्म ऐसा धर्म है, जो विलास के नाम पर प्रचारित होता है। भाग्य का यह कैसा व्यंग है। यदि तुम जीवित रहना चाहते हो, तो उसे उलट दो। जो कुछ मैंने इसे देश में सुना है, वह सब छल और पाखण्ड है। यदि इस राष्ट्र को जीवित रखना है, तो उसके (ईसा) के पास लौटने दो। तुम ईश्वर और कुबेर की सेवा एक साथ नहीं कर सकते। यह सब समृद्धि, यह सब ईसा से आई है। ईसा इस प्रकार की नास्तिकता को अस्वीकार कर देते। कुबेर के साथ आने वाली सारी समृद्धि है। केवल क्षणिक-वास्तविक स्थिरता उसमें ईश्वर में है। यदि तुम इन दोनों को, इस आश्चर्यजनक समृद्धि को ईसा के सिद्धान्त से मिला सको तो ठीक है। यदि तुम ऐसा न कर सको, तो अधिक अच्छा होगा कि तुम उसके (ईसा के) पास जाओ और उसका त्याग कर दो। अधिक अच्छा होगा कि तुम चिथड़ पहनकर ईसा के साथ रहो, इसकी अपेक्षा कि तुम उससे रहित होकर महलों में रहो।

—•—

द्वेष— द्वेष वह आग है जो जिसमें उत्पन्न होती है, उसी को जलाती है और अपने आस-पास वालों को जलाकर समाप्त करने के लिए लालायित होकर लम्बी-लम्बी जीभें फैलाती रहती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन धारा

(श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी)

[आजकल श्रद्धेय राजा जी की जन्म-शताब्दी का वर्ष देश-विदेश में मनाया जा रहा है। उनके मूल अंग्रेजी लेख का हिन्दी अनुवाद कदाचित् पाठकों को रुचिकर हो।]

एक बुढ़िया की भाँति विलाप करती हुई एक नदी ने कहा — बड़े दुःख की बात है कि मेरा अन्त बहुत निकट आ पहुँचा है। जहाँ मेरा जन्म हुआ और जिन जिन क्षेत्रों में आकार में मेरा रूप बढ़ता जा रहा वहाँ मुझे बड़ा हर्ष हुआ। पर्वत की ऊँचाई से नीचे उतर मैंने सैकड़ों मील की दौड़ लगायी और मैं निरन्तर बड़ी होती गयी। अब मेरा अन्त होने को है। इस प्रकार अश्रुपात कर रही नदी का रूप और भी बढ़ गया। समुद्र के तट के समीप पहुँच कर उसने सोचा कि मेरा अस्तित्व समाप्त हो जायेगा ज्योंही मैं समुद्र में जा गिरूँगी।

नदी प्रतिक्षण बदलती रहती है। जब उसमें कोई प्रवेश करता है तो उसे स्पष्ट रूप से उसमें परिवर्तन होता दिखायी देती है और इस पर भी हम उसको स्थायी मान कर उसका नामकरण (नदी) कर देते हैं। वह वस्तुतः आकाश से गिरने वाली बूँदों से भिन्न नहीं है। वर्षा का हम कोई नाम नहीं रखते क्योंकि वह भूमि पर गिर कर हमारी निगाह से ओझल हो जाती है। नदी भी प्रवाहित होकर हमारी दृष्टि से दूर होती जाती है। जो जल इस समय यहाँ बह रहा है वह प्रतिक्षण आगे बढ़ता जा रहा है। हम नदी के दोनों तटों, रेत और दोनों ओर खड़े वृक्षों को देखकर यह मानने लगते हैं कि वह स्थायी है। समुद्र के निकट पहुँच रही नदी ने कदाचित् इस धारणा से भी रोना-धोना प्रारम्भ कर दिया कि उसकी जीवन-लीला समाप्तप्राय है।

हमारा शरीर तथा हमारा जीवन भी नदी के समान है। जो कल था वह आज नहीं है; जो आज है वह कल नहीं रहेगा, इस पर भी हम अपने शरीर को सनातन मानते हैं। यह एक महान रहस्य है। आइए, विलाप कर रही नदी को देखें।

अब वह समुद्र में मिल गयी है और उसका जल समुद्र के पानी में घुलमिल गया है, किन्तु उसकी एक भी बूँद नष्ट नहीं हुई है। जो कुछ नष्ट हुआ प्रतीत होता है वह केवलमात्र कल्पना पर आधारित है। नदी की धारा ने यह कल्पना की कि उसके नाम तथा भिन्न रूप की समाप्ति हो गयी है। इससे अधिक कुछ भी नहीं घटा है। वहाँ पहुँच कर उसकी भ्रान्ति समाप्त हो गयी, समुद्र की ओर प्रवाहित हो रही प्रत्येक बिन्दु का अपने स्रोत से मिलाप हो गया है। कृपालु सूर्यदेव पुनः अपने रश्मि-पाश में जकड़ कर उसे वाष्प (भाप) के रूप में लगाता है और ठण्डक होने से घना होने पर उसे बादल (मेघ) के माध्यम से फिर पृथ्वी पर बरसा देता है। इस प्रकार वह बूँद पुनर्जीवित हो उठती है।

आइए, नदी को यह परामर्श दें कि वह विलाप न करे। हमें भी यह विवेक होना चाहिए कि हम मृत्यु से भयभीत न हों और न इस कारण रोयें-धोयें। संसार का यह महान समुद्र भरता तथा उछलता रहता है और इसका मूल-आधार परमात्मा है। क्या हम उसमें लीन होने से भयभीत हों? क्या यह प्रक्रिया रुदन का विषय है?

(अनु०— भारतबन्धु शर्मा, दिल्ली)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज मैं क्या पा गया हूँ !

हरिकृष्णदास गुप्त 'हरि'

आज मैं क्या पा गया हूँ ।

आँखें जाने किस छवि-दर्शन से छक कर झँपी जा रही हैं। हृदय पता नहीं, किस भाव-वैभव से भरकर कुछ से कुछ हुआ जा रहा है।

सब कुछ एक विशेष विशेषता में डूब-तैर रहा है। डूब-तैरकर डूब-तैर के परे पहुँच रहा है।

कैसा हर्षोल्लास ! ..... कितनी आह्लादमयी प्रसन्नता !!

बिन्दु फूल-फूलकर बताशा बन रहा है; बन-बनकर खिलता जा रहा है।

नदी यौवन की सीमा पर कुलेलें कर रही है; समुद्र बन रही है।

और समुद्र आज अपने में समाना, भूले जा रहा है।

हाँ, आज मैं क्या पा गया हूँ ?

कुबेर के खजाने लुट गये हैं। सूरज की किरणें स्वर्ण बनकर स्थिर रह गई हैं। चाँद की चाँदी से दुनिया पट गई है। नक्षत्रों के नग जगमग-जगमग करते, सब कुछ जगमगा रहे हैं।

सब, सब कुछ आज जाने क्या से क्या हो गया है !

बिन वर्षा मोर नाच रहा है; बिन वसन्त कोयल कुहू-कुहू कर रही है।

दुःख की भी सुखरूपता उजागर हो, सुख-ही-सुख आज मानो मूर्तिमान होकर मुझ पर छा गया है; मेरे भीतर-बाहर लस-बस गया है और ... और मैं ... मैं क्या से क्या हो गया हूँ !

हाँ, अवर्णनीय है सब—क्या खो गया ? ... क्या मिल गया ? ... कैसी आनन्द-भरी मस्ती ! ... कैसी ज्ञानमयी गफलत !! ... कैसी सबकी सर्वमयता ! ... कैसा केवल कैवल्य !!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परमात्मा के नाम की दार्शनिक तथा वैज्ञानिक मीमांसा

डा० श्री कृपाशङ्कर जी मिश्र

व्यक्त परमात्मा का प्रकाश कार्य शक्ति तथा चमत्कार व्यक्त जगत की समझ में तथा प्रयोग में तो आता है परन्तु वस्तुतः शक्ति सर्वत्र अव्यक्त में ही विद्यमान है चाहे वह सगुण परमात्मा का हो चाहे मानवीय सगुण शरीर का परन्तु अव्यक्त प्रयोग का साधन चर्मचक्षु से अदृश्य है इसलिए मात्र ज्ञान चक्षु तथा उस अनुभूत अनुभव जो अनुभूति अप्रकाशमय होते हुए सर्वथा प्रकाश का उपादान कारण है। जिसका प्रयोग समझ में आना असम्भव सा प्रतीत होता है वस्तुतः है नहीं। जैसे बिजली के पावर हाउस में भी बिजली का संकलन अव्यक्त है पर बल्ब के माध्यम से शक्ति और प्रकाश का दर्शन सम्भव है परन्तु बल्ब पर हाथ रखने से आप मर तो नहीं सकते पर अव्यक्त शक्ति संचित अप्रकाशमय तार पर हाथ रखने से आप बच भी नहीं सकते, ठीक जिस तरह मनुष्य के शरीर में शक्ति का आभास कर सकते हैं पर शक्ति देख नहीं सकते, क्योंकि सोये हुए मनुष्य में भी शक्ति उतनी ही है और जगे हुए में भी उतनी ही पर शरीर माध्यम से उसका अनुभव मिल जाता है परन्तु मरे हुए मनुष्य के शरीर की शक्ति जाती नहीं पर माध्यम चला जाता है। माध्यम नष्ट होने से शक्ति घटती ही नहीं, उसमें परिवर्तन सम्भव हो जाता है। जैसे मृत मनुष्य अगर पितृलोक में गया तब भी अधिक शक्तिशाली यदि देवता हुआ तो और भी शक्तिशाली, प्रेत हुआ तब भी मानव से शक्तिशाली, भाग्यवश-कर्मवश अपनी ओर लौट गया तो अनन्त हो गया। ठीक इसी तरह सगुण शरीर तथा सगुण भगवान की शक्ति का प्रकाश उसमें सृष्टि का नियमन अव्यक्त दिव्य अन्धकार तथा शून्यमय महाप्रकाश स्वरूप सगुण परमात्मा तथा संसार के सारे प्रकाश अव्यक्त शून्यतम महाप्रकाश से प्रकाशित हैं जिन्हें लोग समाधि में शान्तमय महाप्रकाश कहते हैं जिससे सूर्य भी प्रकाशित होता है वह स्वयं प्रकाश शान्त एवं दिव्य अन्धकार स्वरूप है जैसे आकाश में अनन्त शब्द तथा सर्वत्र व्याप्त मन्त्र अन्धकार में ही विलीन है माध्यम की प्राप्ति से वे भयंकर प्रलय तथा सृष्टि विनाशी उत्कृष्ट कोटि कर दिखाते हैं पर वस्तुतः तत्वतः वे कहीं भी दिखायी नहीं पड़ते उनका कोई महत्व एवं प्रभाव भी दृष्टिगोचर नहीं होता दृश्य भयकर पहाड़ से भय नहीं, सागर से नहीं, शेर तथा हाथी से नहीं, अदृश्य असीमित सूक्ष्मतम अणु से जितना भय तथा विनाश सम्भव है। यह मूलतः तत्वतः उसका न कोई सर्व जन्य दर्शन उपाय है पर प्रभाव सर्वथा विवशतावश मानना ही पड़ता है।

सगुण परमात्मा अन्धकारमय महाप्रकाश से प्रकाशित प्रकृति में सृष्टि का सृजन नियमन विसर्जन चमत्कार करता है। उसका साक्षात्कार भी सम्भव है पर वह शक्ति जहाँ से परम प्रभु भी लीलाशक्ति ग्रहण करते हैं या उनमें वह शक्ति रहती है उसे वे स्वयं तो जानते हैं पर उनके प्राकृतिक एवं अलौकिक गुणों को जानने वाले भक्त उनके आनन्द से, लीला तथा प्रेम से लाभान्वित तो हो जाते हैं पर शून्यस्वरूप महाप्रकाश से वंचित रह जाते हैं। जो साकेत से अनन्त ब्रह्माण्ड तक एक रस,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक अस्वरूप स्वरूप में सर्वत्र विद्यमान है तथा सबके प्रकाशों में वह अप्रकाशित महाज्योति है जिसका आनन्द योगी समाधि में प्राप्त करता है। तथा वह बिजली का बल्ब न रहकर निगेटिव तार के माध्यम से पावर हाउस में शामिल होकर इन तमाम ब्रह्माण्डों में प्रकाश का माध्यम तथा प्रकाश की अनुभूति करने वाला न रह कर प्रकाश का स्रोत बन जाता है पर उस महाप्रकाश को भी यह पता नहीं कि प्रकाश कहाँ और कितना प्रसारित हो रहा है इसे सिर्फ माध्यम तथा माध्यम के संयोजक ही शायद पूर्णतया जान सकते होंगे। परन्तु पावर हाउस में बिजली का अनन्त सर्वप्रकाशों का अप्रकाश स्वरूप प्रकाश का संकलन असीमित होने पर भी अन्धकार व्याप्त रहता है जब तक एक व्यष्टि आलोक का माध्यम प्राप्त नहीं होता, तब तक उस महाज्योति का तथा उसके प्रकाशमय उदधि का न तो ज्ञान ही सम्भव, फिर आनन्द तो अनुपलब्ध होना स्वाभाविक ही है। फिर भी ऐसी अवस्था में वस्तुत: सत्ता कोष अप्रकाश स्वरूप में अनन्त ब्रह्माण्डों के कण कण में समानरूप से विद्यमान है। चाहे वह सृष्टि का अवसान ही क्यों न हो, पर आत्मा की उस स्थिति में उसके आनन्द में भेद तो असम्भव सा प्रतीत होता है। पर उस आनन्द की अभिव्यक्ति शायद नहीं हो सकती क्योंकि आनन्द की व्याख्या भी शायद इन्द्रियों के एक छोर से शुरू होकर ब्रह्मानन्द के दूसरे छोर का अनुभव कराने का माध्यम वस्तुत: न होते हुए भी माध्यम मानी जा सकती है। आनन्द शब्द ही शायद सृष्टि का कारण भी हो सकता है। क्योंकि असीमित तथा प्रशान्त अव्यक्त स्वरूप में ही अमर आनन्द की पूर्णता मान ली जाय तो आनन्द शब्द ही निरर्थक सा मालूम पड़ेगा क्योंकि छाया में अनन्त काल तक छाया की शीतलता का अनुभव करने वाला व्यक्ति एक दिन उस शीतलता से ऊबता तो नहीं पर शीतलता के आभास का आनन्द सुप्त सा प्रतीत होता है। जिसके निवारण के लिए उसे स्वयं आनन्द की स्थिति को समानरूप से उद्वेलित रखने के लिए धूप पर दृष्टिपात आनन्दरूपी शीतलता की परिपूर्णतम सीमा में आवेष्ठित रहने के लिए ही करता है। इसलिए इसी अनुभूति में भगवान राम तथा प्रभु के अनेक नामों का सबका परम प्रकाश कहने में बड़ी सार्थकता, बड़ा आनन्द है वह यों ही नहीं उसकी एक अपनी सर्वोत्तम विलक्षणता है क्योंकि अनन्त ब्रह्माण्ड में अव्यक्त स्वरूप आनन्दसिन्धु की व्यापकता सर्वमान्य तथा सर्वश्रेष्ठ होने पर भी बिना लीला विभूति शिरोमणि भगवान राम के औपाधिक प्रकाश के बिना वह अप्रकाश स्वरूप प्रकाशित महाज्योति स्वरूप होकर भी सबका परम प्रकाशक होते हुए भी भगवान राम के प्रकाश राम के माध्यम से ही सम्भव है। परम, परम होते हुए भी प्रकाश राम के माध्यम से ही सम्भव है। आनन्द में प्रवेश तथा आनन्द का नृत्य और नृत्य में स्वयं नत्य समाहित होना भी राम के प्रकाश के माध्यम से ही सम्भव है। ऐसा ही है कि वह प्रकाश जो भगवान् राम सबके प्रकाशक होते हुए भी उस स्वयं महाप्रकाशस्वरूप अप्रकाश के भी प्रकाशक माने गये। क्योंकि उसके आनन्द और अप्रकाशित प्रकाशसिन्धु की शान्तज्योति भी राम के माध्यमिक प्रकाश से ही सम्भव है। क्योंकि पावर हाउस भी अन्धकार ही है, जब तक एक बल्ब न हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आनन्द की सम्पन्नता माध्यम सम्पन्न प्रकाश से ही पूर्णतया सम्भव न होते हुए भी आंशिक सम्भावना के आनन्द प्रवाह से पूर्णता शेष नहीं रह सकती। इसलिये राम सबके प्रकाशक कहे गये। क्योंकि उनके माध्यम के बिना आनन्द का कोई उपाय नहीं, उसकी कोई स्थिति नहीं, उसका उपयोग नहीं। क्योंकि प्रकाश में ही आप जी सकते हैं। वह प्रकाश पूर्णतया जीवन आधार तो नहीं, पर स्रोत है। वह माध्यमिक प्रकाश पूर्ण जीवन तो नहीं, पर जीवन को जीने, जानने, जीवन में खिलने, महकने तथा नाचने, आनन्द में डूबने का प्रकाशित मंच है। पर अभिनय का आनन्द ही अभिनय द्रष्टा का पूर्ण आनन्द नहीं है, परन्तु बिना उसके आनन्द भी सम्भव नहीं। इसलिये महाअप्रकाशकस्वरूप प्रकाश स्वयं आनन्द तो है, सबका प्रकाशक तो है, पर उसकी अभिव्यक्ति बिना राम के प्रकाश तथा आनन्द एवं सृष्टि आनन्द लीलाविहारी का उच्छलन सम्भव नहीं प्रतीत होता। क्योंकि एक अन्धेरे में बैठे स्वरूपवान व्यक्ति का अपना स्वरूप अन्धेरे में सर्वथा पूर्णरूपेण विद्यमान है। शक्ति सम्पन्नता तथा उसकी किसी पूर्णता में कोई व्यवधान वस्तु नहीं है और न होना सम्भव ही है। उसे अपने अङ्ग-प्रत्यङ्ग को जानने या उसके आनन्द के अनुभव के लिए उसकी अपनी एक अन्तर दृष्टि है। पर अगर एक प्रकाश उस कमरे में टिमटिमा उठे, तो टिमटिमाहट के साथ ही एक आनन्द की अनुभूति प्रारम्भ हो जाती है, पर वस्तुतः वे सब आनन्द पहले भी थे, तो बदला क्या ? कुछ भी नहीं; पर आनन्द अवश्य ही गहरा हो गया प्रतीत हुआ। इतना ही नहीं उस प्रकाश के माध्य से जब अपने अङ्ग-प्रत्यङ्ग की सुन्दरता को अपनी ही आँखों से निहारता है, तो आनन्द के समुचित मूल्यांकन की किरणें भावुक दिशाओं में फैल जाती है और आनन्द और भी गहरा हो जाता है। ठीक इसी तरह सवत्र अप्रकाश में परमात्मा का पूर्ण आनन्द व्याप्त होते हुए भी भगवान राम, कृष्ण, जीसस तथा अन्य पैगम्बरों या ईश्वर के ऐश्वर्य सम्पन्न प्रकाश के बिना उस परिपूर्णतम की परिपूर्णतापरक आनन्द की छटा का अवलोकन सम्भव नहीं। जैसे प्रकाश भी सम्भव हो सका, पर प्रकाश में सौन्दर्य, लीला-विभूति में लावण्य का प्राकट्य प्रकाश में नवरस विभूषित नवरंग की विकसित रूपिका श्री किशोरी जी तथा सर्वप्रकाश के भी माध्यमिक प्रकाश तथा सबके प्रकाशक श्रीराम जी की सरसता तथा उनकी लीलाविभूति में दिव्य विग्रह स्वरूप का परिवेश-था प्राकट्य हुआ, परन्तु वस्तुतः उस महाप्रकाश-स्वरूप अव्यक्त महाज्योति का अनन्त ब्रह्माण्डों में व्याप्त होते भी उसका सूक्ष्मतम रूप से अव्यक्त सत्ता में अव्यक्त शक्ति का प्लावन तथा उसका प्रकटीकरण स्वरूप से भगवान राम के प्राकट्य एवं प्रकाश से उस बोधस्वरूप का आनन्द तथा किशोरी जी के दिव्य विग्रह स्वरूप से उसमें लावण्यता, सरसता तथा आनन्द की अनुभूति हो सकी। पर उस प्रकाश में सूक्ष्मतम महाशक्ति के रूप में बहती हुई शक्ति ही वस्तुतः उस महाप्रकाश की महत्ता की परिचायिका है। जिसे किशोरी जी का वस्तुतः सूक्ष्मतम रूप समझा जा सकता है। जिसको देखा तो सम्भव नहीं, पर वस्तुतः इन सारे महाप्रकाशों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में प्रकाशक तथा प्रकाश की बहती हुई सारी शक्ति वही है। जैसे पावर हाउस में संचित पावर तथा उससे प्रकाशित बल्ब से प्रकाशित समस्त पावर हाउस स्वयं तथा समस्त संसार प्रकाशित है।

अब प्रश्न है कि प्रकाश बल्ब पावर हाउस तथा क्षेत्र सब जाने गये पर स्वयं बिजली क्या है ?

उस बिजली में स्वयं बिजली, उस बिजली में जो संचारशक्ति है। वही श्री किशोरी जी का शायद सूक्ष्मतमरूप है। जिससे स्वयं राम सबके प्रकाशक होते हुए भी शक्ति का प्रवाह जो महाप्रकाश स्वरूप दिव्य अव्यक्त महाज्योति से बहती हुई भगवान राम के माध्यम से अनन्त ब्रमाण्डों में बह रही है। उसका मूल आधार श्री किशोरी जी की अव्यक्त शक्ति ही माननी पड़ेगी, जो प्रशान्त शून्य स्वरूप अतिचेतन महा विराट् से निकलने का आधार तथा माध्यमिक आधार भी है।

ध्यान का लक्ष्य !

श्री जेम्स एलेन जी

जबकि प्रथमतः वास्तविक ध्यान में लगाया हुआ समय थोड़ा होता है — सम्भवतः प्रातःकाल मात्र आधा घंटा —उस आधे घण्टे में जो स्पष्ट महत्वाकांक्षा और एकाग्र विचार सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त होता है वह अभ्यास के रूप में दिन भर उपस्थित रहता है। इसी तरह ध्यान में मनुष्य का सम्पूण जीवन बझा रहता है; और ज्यों ज्यों वह इसके अभ्यास में प्रगति करता है, त्यों त्यों वह अपने जीवन के कर्तव्यों को चाहे वह जिस किसी अवस्था में पड़ गया हो, पालन करने के लिये अधिक उपयुक्त हो जाता है, क्योंकि वह अपेक्षाकृत अधिक मज़बूत, पवित्र, सुस्थिर एवं विवेकी बन जाता है।

ध्यान का सिद्धान्त दुहरा होता है, जैसे—

१. पवित्र वस्तुओं के ऊपर विचार की पुनरावृत्ति द्वारा हृदय का शुद्धिकरण।

२. ऐसी पवित्रता को व्यावहारिक जीवन में उतार कर ईश्वरीय ज्ञान की प्राप्ति।

प्रतिदिन पुण्य विचारों के साथ रहने में ध्यानशील मनुष्य को पवित्र एवं उदात्त विचार करने की आदत लग जाती है जिससे वह सुसम्पादित कर्तव्यों एवं पवित्र और उत्तम कार्यों की ओर अग्रसर होता है। पवित्र विचारों की निरन्तर पुनरावृत्ति द्वारा अन्त में वह उन विचारों के साथ एकाकार हो जाता है, और अपनी उपलब्धियों को पवित्र कार्यों, उदात्त और विवेकपूर्ण जीवन में परिदर्शित करता हुआ एक पवित्र आत्मा बन जाता है।

अधिकांश मनुष्य प्रतिद्वन्द्वी कामनाओं, लिप्साओं, भावुकताओं और कल्पनाओं की शृङ्खला में अपना जीवन बिताते हैं, और उनके जीवन में अशान्ति, अनिश्चिन्तता, और चिन्ता ही चिन्ता है; लेकिन जब मनुष्य अपने चित्त को ध्यान की दीक्षा देना आरम्भ कर देता है, तो एक केन्द्रीय सिद्धान्त के बीच अपने विचारों को लाकर इस अन्तर्द्वन्द्व पर वह धीरे-धीरे स्वामित्व प्राप्त कर लेता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

❋ शुभ सूचना ❋

समस्त रामप्रेमियों को यह सूचित करते हुए अत्यन्त हर्ष होता है कि गत वर्षों की भाँति इस वर्ष भी वेदान्त के साकाररूप ब्रह्मलीन स्वामी रामतीर्थ जी महाराज की पुण्य स्मृति में ब्रह्मलीन स्वामी हरिओ३म् जो महाराज द्वारा संचालित व ब्रह्मलोन स्वामी गोविन्दप्रकाश जी महाराज द्वारा सम्वर्धित —

४१ वें स्वामी रामतीर्थ आध्यात्मिक विराट् सम्मेलन

का आयोजन परम पूज्य परमाध्यक्ष आचार्य स्वामी अमरमुनि जो महाराज के तत्वाधान में दिनांक २८ मई से ३ जून १९७९ तक हरिओ३म् सत्संग भवन ५९ राजपुर रोड देहरादून पर सायं ६ बजे से रात्रि १० बजे तक किया जा रहा है, जिसमें भारत के विद्वान् सन्त व भारतीय संस्कृति के व्याख्याता सम्मिलित होकर जनमानस को उद्‌बोधित करेंगे।

लघु सम्मेलन, जो राजपुर रोड पर ही प्रत्येक वर्ष सम्पन्न होता है, इस वर्ष २१ मई से २७ मई तक सम्पन्न हो रहा है। इसमें गीता के अद्‌भुत व्याख्याता बालसन्त श्री स्वामी दिव्यानन्द जी महाराज व रामचरित मानस के प्रसिद्ध विद्वान् श्रद्धेय माधवाचार्य जी के पधारने की सम्भावना है।

साधना-सप्ताह, ४ जून ७९ से १० जून ७९ तक राजपुर आश्रम पर ही होगा।

— सम्पादक

विशेष (१) सम्मेलन व साधना-सप्ताह में उपस्थिति के इच्छुक रामप्रेमी अपने सविवरण आगमन के समाचार से कम से कम १५ दिन पूर्व अवश्य विज्ञ करायें, जिससे समुचित सुविधा प्राप्त हो सके।

(२) विस्तृत विवरण के लिए मई ७९ का अङ्क अवश्य देखें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"आश्रम समाचार"

श्रद्धेय स्वामी वेदान्तानन्द जी महाराज के तत्वाधान में गीताभवन, मोगा पर सम्पन्न हुए सम्मेलन में भाग लेने के अनन्तर महाराज श्री का देहरादून आश्रम पर आगमन श्री सत्यप्रकाश जी के साथ दिनांक १९ की प्रातः लगभग १० बजे हुआ। कार्यक्रम की व्यस्तता के कारण आश्रम का निरीक्षण कर कार्यकर्ताओं को उचित व श्रेयस्कर मार्गदर्शन देने के बाद इसी दिन सायं आपने दिल्ली के लिए प्रस्थान किया।

दिनांक २० की प्रातः दिल्ली में विभिन्न कार्यों को सम्पूर्ण कर प्रेम जी के साथ परम श्रद्धेय ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्दप्रकाश जी महाराज की पुण्यस्मृति में संगमरमर के पत्थर लेने मकराना की ओर प्रस्थान किया। दिनांक २२ और २३ मार्च को वहीं मकराने में निवास करने के अनन्तर तलवार साहिब से मिलने आप अजमेर पहुँचे।

आश्रम (देहरादून) पर बन रही समाधि हेतु जिनके कठोर परिश्रम के फलस्वरूप ब्रह्मलीन स्वामी हरिओ३म् जी महाराज द्वारा संस्थापित "मिशन" इतने विशालरूप में विस्तार को प्राप्त कर सका तथा जिनकी अव्यक्त रूप से प्रेरणा आज भी "मिशन" के प्रत्येक कण को स्वामी राम के सिद्धान्तों के प्रचार रूप लक्ष्य को प्राप्त करने में सहायिका हो रही है।

दिनांक २५ को दिल्ली, अलीगढ़ होते हुए दिनांक २८ को आपने नवाँशहर में सम्पन्न हो रहे सम्मेलन में भाग लिया। कोटला (हि० प्र०) में ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्दप्रकाश जी महाराज की प्रेरणा से श्रीमती अयोध्यापाठी द्वारा संस्थापित व संचालित "मिशन" की नव अंकुरित शाखा में राम-सिद्धान्तों से वहाँ के जनमानस को मेल कराने के लिये आपने प्रस्थान किया।

सम्भावना है कि विभिन्न स्थलों पर व्यावहारिक वेदान्त का उद्घोष कर स्वामी राम के "नक़द धर्म" को प्रसारित करने के अनन्तर दूनवासी रामप्रेमियों के दर्शनार्थ ९ अप्रैल को आपका आगमन देहरादून होगा।

— सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूरभाष– ८४२२५ राजपुर, ४२९७ देहरादून, तार का पता–(वेदान्त) देहरादून, रजि. नं. डी. एन. १५

त्याग

त्याग निश्चय ही आपके बल को बढ़ा देता है; आपकी शक्तियों को कई गुना कर देता है; आपके पराक्रम को दृ कर देता है, नहीं; आपको ईश्वर बना देता है। वह आपकी चिन्तायें और भय हर लेता है। आप निर्भय तथा आनन्दमय हो जाते हैं।

* * *

काम केवल तभी होता है, जब हम इस परिच्छिन्न स्वार्थी अहंकार से पल्ला छुड़ा लेते हैं। ज्योंही आप इस स्वार्थी अहंकार को प्रतिपादित करते हैं; त्योंही काम बिगड़ जाता है। सर्वोत्तम काम वह है जो अकर्तृत्व, अव्यक्तित्व भाव से किया जाता है। त्याग का अर्थ है इस क्षुद्र, व्यक्तिगत, स्वार्थी अहंकार को दूर करना अथवा आत्मा की इस झूठी भावना से पल्ला छुडाना।

* * *

बच्चे को त्याग देने का अर्थ बच्चे से सारे सम्बन्धों का तोड़ लेना नहीं है, वरन् पुत्र तथा पौत्र को ईश्वररूप समझ लेना है।

— स्वामी राम

बुक पोस्ट

ग्राहक संख्या 534

श्री/श्रीमती ...

स्थान ...

डाकखाना ... ...

जिला ... ...

मासिक पत्र—

"राम–सन्देश"

स्वामी रामतीर्थ मिशन

राजपुर, देहरादून (उ. प्र.)

Pin– 248009 भारत.

स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून (उ० प्र०) के लिए प्रकाशक स्वामी अमर मुनि द्वारा शहनशाही सर्वहितकारी प्रेस, राजपुर (देहरादून) में, मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम - सन्देश

पुस्तकालय
गुरुकुल काँगड़ी

फ़ 3/3/79

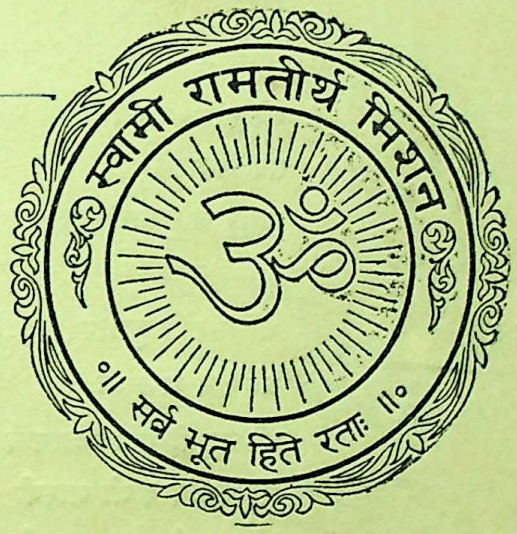

र व री

८ ७ ९

सस्थापक—
ब्रह्मलीन स्वामी हरिॐ जी महाराज

संवर्धक—
ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्दप्रकाश जी महाराज

व्यवस्थापक—
स्वामी अमर मुनि जी महाराज

सम्पादक—
काका हरिॐ "निर्द्वन्द्व"

आजीवन सदस्यता शुल्क—

भारत में	—	१०० रु०
विदेश में	—	५०० रु०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* विषय-विज्ञान *

विषय	लेखक	पृष्ठ
सरस्वती-वन्दना !	... श्री रमेश चन्द्र जी	१
मृत्यु के बाद	... स्वामी रामतीर्थ जी	२
निरासक्त योग	... ब्रह्मलीन श्रीस्वामी गोविन्दप्रकाश जी महाराज	४
मोटर इंजिन — मन	... श्री हरिकिशनदास जी अग्रवाल	६
विश्वास की विजय	... संकलित	७
ज्ञानी भक्त	... महाराज कुमारी बकाया	८
जीने का ढङ्ग	... संकलित	९
भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ताः	... श्री सन्तोष कुमार "विद्यालङ्कार"	१२
काश, तुम मेरी माँ होती !	... श्री खेम राज जी	१४
जगत् की झूठी देखी प्रीति	.... श्री स्वामी सारशब्दानन्द जी	१६
तुम बिन कौन हमारा !	... श्री धर्मानन्द जी शास्त्री	१८
दर्शन एवं फिलसफी	... श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी	१९
रामायण चरित्र चित्रण	... श्री स्वामी तीर्थानन्द जी	२२
सम्पादकीय	... ...	२४
आश्रम समाचार	... सम्पादक	२५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

❀ ॐ ❀

'राष्ट्र के हित के लिए प्रयत्न करना ही विश्व की शक्तियों अर्थात् देवताओं की आराधना है'–स्वामी राम

वेदान्त, अध्यात्म, संस्कृति, धर्म एवं भक्ति का सजग सन्देशवाहक तथा
स्वामी राम के आदर्शों का एकमात्र लोकप्रिय मासिक—

राम सन्देश

वेदोपनिषदां तत्त्वम् सत्यं नित्यं सनातनम् ।
तत्सर्वं "रामसन्देशे" पत्रेऽस्मिन्नवलोक्यताम् ॥

वर्ष २८
अंक २

राजपुर– देहरादून— फ़रवरी १९७९.

वार्षिक भेंट १०)
एक प्रति ८५ पैसे

सरस्वती-वन्दना !

माँ सरस्वती ! जड़ता को चेतनता का वर दो।
मानव मन को पुनः प्रेरणा के नूतन स्वर दो॥

ज्ञानमयी ! तुम सबकी माता
तुम ही दिव्य बोध की दाता
चिर प्रकाश का धवल मूर्ति हो
एक अनादि अनन्त ज्योति हो

सकल मोह-तम हर, विवेक से जगमग जग कर दो।
मानव मन को पुनः प्रेरणा के नूतन स्वर दो॥

वीणावादिनि ! दो ऐसा बल
जिससे होवे जीवन निर्मल
सदा अग्रसर सत्य मार्ग पर
रहें पुनीत कार्य में तत्पर

राग-द्वेष को मिटा, विश्व में अमर प्रेम भर दो।
मानव मन को पुनः प्रेरणा के नूतन स्वर दो॥

—रमेश चन्द्र

—❀—❀—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मृत्यु के बाद

१५ जनवरी, १९०३ को स्वामी रामतीर्थ जी द्वारा अमेरिका में दिया गया प्रवचन

[गताङ्क से आगे]

स्वप्नावस्था में आपको दो स्थितियों का अनुभव होता है— 'द्रष्टा' तथा 'दृश्य'। स्वप्न में आपके चारों ओर दीखने वाले पर्वत, नदी-नाले, जानवर, पशु-पक्षी आदि दृश्य हैं। इन सब को देखने वाला 'द्रष्टा' कहलाता है। स्वप्न में हम जो कुछ देखते हैं उसमें एक 'स्वयं' भी होता है। इस प्रकार 'द्रष्टा' तथा 'दृश्य' दोनों वास्तव में यथार्थ सत्ता की उपज हैं। सुप्रसिद्ध वक्ता-शिरोमणी डा० जॉन्सन को युक्तियों में कोई परास्त नहीं कर सकता था, क्योंकि अन्ततोगत्वा उनकी ही युक्ति की विजय होती है। एक बार स्वप्न में उनको एक दूसरे विद्वान् एडमण्ड बर्क ने तर्क-युद्ध में परास्त कर दिया। वे घबरा कर जाग गये और सोचने लगे कि किस प्रकार बर्क को हराया जा सकता है। 'पराजय' का बदला लेने के लिए डा० जॉन्सन को एक युक्ति ने आश्वस्त कर दिया। उन्होंने सोचा कि मैं बर्क के पास जाकर उससे पूछूँगा कि तुमने किस युक्ति' के द्वारा मुझे परास्त किया है। इस पर वह 'बर्क' युक्ति न बता पायेगा। (क्योंकि जॉन्सन की पराजय 'स्वप्न' में हुई) जब कि मुझे दोनों ओर की युक्तियाँ स्मरण हैं। इस पर वह निरुत्तर होकर परास्त हो जायेगा।

स्वप्न के 'द्रष्टा' तुम दोनों स्थितियों (द्रष्टा एवं दृश्य) से पूरी तरह परिचित हो। तुम्हारा अपना आप ही दृश्य पदार्थों के रूप में दिखाई देता है और उन्हें देखने वाले भी तुम्हीं हो।

जब तुम इस तथ्य को जान लोगे कि मृत्यु के दीर्घकालीन स्वप्न में तुम स्वयं 'स्वग-नरक' के 'भोक्ता' हो तो तुम इन दोनों से मुक्त हो जाओगे।

वेदान्त की साक्षात् मूर्ति एक विदुषी जब बाजार में गुजरती थी तो उसके एक हाथ में अग्नि धरी थी और दूसरे हाथ में शीतल जल। जब उससे एक ईसाई पादरी ने इसका कारण पूछा तो उसने उत्तर दिया कि मैं अग्नि से तुम्हारे स्वर्ग की स्थापना करने तथा शीतल जल से तुम्हारे नरक को ठण्डा करने जा रही हूँ।

जिस व्यक्ति को विदित है कि स्वयं 'स्वर्ग' तथा 'नरक' का स्रष्टा है उसे न तो 'स्वर्ग' के प्रति आकर्षण होगा और न 'नरक' के प्रति भय ही होगा। वह स्वयं इन दोनों से अतीत है, वेदान्त की दृष्टि में तो 'ठोस' दीखने वाला यह जगत भी वास्तविक नहीं है और दूसरी सत्ता भी स्वप्न में दिखाई देनेवाले पर्वतों, नदी-नालों, व्यक्तियों, सूर्य-चन्द्र, युद्ध-शान्ति आदि से भिन्न नहीं है, इस प्रकार 'जाग्रत' एवं 'स्वप्न' में कोई भेद नहीं है। तुम स्वयं एक ओर नगर, उपनगरी, पर्वत, झील के सम न दिखाई देते हो और दूसरी ओर भटके हुए यात्री के समान इन सबको देख रहे हो। तुम्हारी जाग्रतावस्था में एक ही सत्ता (आत्मा) द्रष्टा एवं दृश्य बनकर गतिमान होती रहती है। मृत्यु केवल

CC-0. In Public Dómain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्रष्टा को रूपान्तरित कर देती है न कि दृश्य-पदार्थों को, इससे यह पता चला कि वेदान्त की दृष्टि में यह ससार, कारण, स्थान, काल आदि सभी 'दृश्य' हैं और मैं (क्षुद्र अहम्) इनका द्रष्टा हूँ। जिस सामान्य व्यक्ति का मृत्यु द्वारा रूपान्तरण हो जाता है वह माया अथवा अज्ञान के दीर्घकालिक स्वप्न को नष्ट नहीं कर पाता। वह मृत्यु के बाद दूसरे जन्म में जाग्रत होकर अपने पूर्व-परिचित प्रिय संसार को प्राप्त कर लेता है और इस प्रकार जन्म-मरण के जाल से छूट नहीं सकता। जब तक तुम्हें यह संसार अपने से भिन्न दिखाई देता रहेगा तब तक तुम जन्म-मरण के चक्र में फँसकर थपेड़े खाते रहोगे और शान्ति' तुमसे कोसों दूर रहेगी। दूसरी ओर जिसको 'द्रष्टा' तथा 'दृश्य' में अपने से भिन्न कुछ भी नहीं दिखाई देता है अर्थात् जो सब कुछ अपना ही रूप मानता हो वह जन्म-मरण के बन्धन को तोड़कर 'मुक्त' हो जाता है। भारत में सभी प्राणियों को जन्म से मरण तक इस स्थिति को प्राप्त करने की आकांक्षा बनी रहती है।

सुविख्यात कवि के जीवन में उसकी पत्नी से सम्बन्ध एक सुन्दर आख्यान आता है। कहते हैं कि उसने स्वप्न में अपनी पत्नी को देखा तथा प्रेम विभोर होकर वह उससे आलिंगन करने लगी और बोली, "प्राण-प्रिय मैं पूर्ण रूप से तुम्हारी हूँ।" उसी समय आँख खुलने पर उसने अपने साथ एक कुत्ते को लेटा हुआ पाया जो उसके बाहुपाश से निकलकर फ़र्श पर कूद गया। वास्तव में उस कुत्ते का शरीर ता उसे पतिदेव के आलिंगन का आनन्द दे रहा था, यदि वह कुत्ता उस पर अधिक दबाव डालता तो उसे पर्वत के समान भार महसूस होता, वेदान्त का मत है कि जब तक अज्ञान (माया) का कुत्ता हमें दबाये रखता है तब तक हमारे स्वप्न 'अनुकूल या प्रतिकूल' रूप धारण करते रहते हैं, कभी वे पति के सुख में सुखी कभी पतातार कुत्ते के दबाव से दुखी रखते हैं। इस प्रकार हम दीवालगीर के लटकन (Pendulum) की भाँति अश्रु (दुःख) तथा मुस्कान (सुख) के मध्य घूमते रहते हैं। अतः अज्ञान के इस कुत्ते से अपना पीछा छुड़ाओ और वह अनुभव करो कि तुम स्वयं मुक्त आत्म-स्वरूप हो।

(सं०– भारत बन्धु शर्मा)

— ❀ • ❀ —

नोट — सन्त-सज्जनों के नोटों पर (वचनों पर) धनिक भी न्यौछावर होते हैं। परन्तु धनिकों के नोटों पर कंगाल, चोर, स्वार्थी व कपटी ही न्यौछावर होते हैं। परंतु संत अपने नोटों पर (वचनों पर) न्यौछावर नहीं होते। वे अपने आत्मा में ही मस्त रहते हैं।

दो नेत्र— आपत्तियाँ और सफलताएँ ये दो नेत्र हैं। जिनमें पूर्ण जीवन दर्शन होता है। जीवन चरित्र के दोनों पहलू ये ही दिखाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निरासक्त योग

ब्रह्मलीन श्री स्वामी गोविन्दप्रकाश जी महाराज

जिस पर प्रभु की दयालुता हो जाती है, उसे अनायास सत्संगति प्राप्त हो जाती है। जो सब सिद्धियों का खजाना है। विचारों का काँटा महापुरुषों की संगति से बदल जाता है। परम हितैषी सद्गुरुदेव भगवान् जीवन में जीने की कला सिखाते हैं। प्रस्तुत है, उन्हीं की पावन दिव्यवाणी :—

उपस्थित प्रभु प्रेमियो ! प्रातःकाल की इस सुन्दर वेला में गीता के सुन्दर पाठ का आपने अध्ययन किया। गीता के सुनने के बाद किसी ग्रन्थ को सुनने की आवश्यकता नहीं रह जाती। कल प्रसंग चल रहा था किस तरह मनुष्य त्रिगुणातीत हो सकता है। संसार की परिस्थितियों में रहते हुए कैसे मानसिक जगत् पर प्रभाव न पड़े। जब मेरा विचार उदय होगा, मैं एक (एक्टर) की तरह पार्ट करने जगत की स्टेज पै आया हूँ। डायरेक्टर की आज्ञा से बोर्ड लगा है—रामलीला ग्राउण्ड में "आज भरत चित्रकूट जायेंगे।" अगर भरत व्याकुल हो मूर्छित हो जाता है। चित्रकूट की ओर नहीं बढ़ता तो सब कहेंगे कि डायरेक्टर लायक नहीं। इसी तरह जिस मानव ने विवाह किया भूल जाता है, पर जब कोई मर जाता है तेरह दिन बाद भी मरे को भूलता नहीं जैसे विवाह को भूल जाता है यही कमजोरी है। मिल वर्कर सारा काम करता है, पर स्वयं को कभी मालिक नहीं मानता। यह जगत का कारखाना विश्वम्भर का है। जो ड्यूटी प्रभु ने जिस आश्रम में दी है, अपने मन की बुद्धि नहीं रखता, जो उन्नति होती है तो समझता है, मिल की उन्नति है और यदि मिल को आग लग जाती है तो भी समझता है—परिस्थिति के घाटेपन को छू तो लेगा पर प्रभाव नहीं डालेगा।

मानापमानयो स्तुल्यस्तुल्यो मित्रारि पक्षयोः।
सर्वारम्भपरित्यागी गुणातीतः स उच्यते॥

जाते हुए यात्री को एक ओर गुलाब का फूल मिल गया। उसकी खुशबू ली, पर अटका नहीं। एक ओर मलमूत्र पड़ा देखा— आगे चल दिया। बुराई आई तो सही, पर जीवन में प्रभाव न पड़ा।

युद्ध में करते जो भी हैं, वहाँ के सिपाही करते हैं। मानापमान का तराजू बराबर मिलिट्री कमाण्डर को तोलता है। जो मानव दुःख से घबराकर या खुशी में मस्त होकर प्रभु को भूल जाता है, तो नतीजा यह निकलता है, जीवन को किसी प्रकार स्थिर नहीं रख सकता है। जो विवेक का सुन्दर दीपक सामने रखता है, जीवन को दोनों किनारों के बीच में चलाता हुआ मर्यादा में चला जाता है तो :—

समदुःखसुखः स्वस्थः सम लोष्टाश्मकाञ्चनः।
तुल्य प्रिया प्रियो धीरस्तुल्य निन्दात्म संस्तुतिः॥

जगत में कुछ निन्दा करेंगे, कुछ स्तुति, पर एकान्त में सोचोगे तो निन्दा-स्तुति से अछूते रह सकोगे। आपके पास हीरा है। आप उसका मूल्य जानते हैं। सन्तुलन का ठीक रखना विचार का मूल्यांकन करना है। विचारवान बड़े-बड़े प्रभावों को जीवन में स्थान नहीं देता।

कल रात अभिषेक होगा ··· ···। मस्तक पै तिलक लगेगा सिर पै ताज पहनाया जायगा—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भरत का उत्तराधिकारी राम होगा। ऋषि-महर्षि दावत पै आ गए ... ...

यच्चिन्तनम् ... ... ।

ब्रह्म की करनी को लोग नहीं पहचानते। जिसने ताज पहनना था जटायें बना, वन को जा रहा है। जिसे एम. एल. का मिलना हो, न मिले तो कितना पारा बढ़ जायेगा।

राम को राज्य न मिलता, कोई बात नहीं थी, पर चौदह वर्ष वनवास मिला जिसमें कन्दमूल फल खाना, जगल से जंगल में जाना। राम ने राज्य सुन खुशी नहीं की और वन गवन को सुन शोक नहीं मनाया। ऐक्टर समझता है दोनों हालतों में मैं असंग हूँ। जब मानव को जानकारी हो जायगी तो ऐक्टर की तरह इन्सानियत की राह पर चलने का पार्ट अदा करेगा। तुम किसी की मौत पै जाते हो पार्ट प्लेय करते हो—कपड़े बदलकर जाते हो फिर शाम को एक शादी पै जाते हो, तो—कपड़े बदल कर जाते हो। पर दोनों की गमी, खुशी का तुम पर प्रभाव नहीं—

निन्दन्ति नीति निपुणा: ... ...

कोई निन्दा करे, उसकी निन्दा का प्रभाव मेरे पै क्यों पड़े। हम अपने अन्तःकरण में बैठ सुन्दर चित्रावली देखें। स्वयं की तरफ देख— मैं कैसा हूँ, परिवार के प्रति कैसा हूँ। समाज के लिए कैसा हूँ। अन्तःकरण का सुन्दर निरीक्षण पाँच मिनट भी नित्य कर लोगे तो रोजाना के प्रोग्राम में कोई त्रुटि नहीं आयेगी। यदि आयेगी भी तो भी प्रभाव नहीं पड़ेगा। आज लाखों रुपये आ गये, कल चले गए। जीनन में उतार-चढ़ाव आता ही रहता है। मृत्यु ध्रुव है, अटल है। उसके बारे में मौत का अभाव समझकर यह अन्दर महसूस करके उदास रहता है। तो कमजोरी है इसकी। क्योंकि :—

चिन्ता ताकी कीजिए, जो अनहोनी होय।
यह मार्ग संसार में, नानक स्थिर नहिं कोय॥

एक बार एक आदमी एक महात्मा के पास आया। आकर कहा— महात्मा जी कोई साधन बताइये जिससे मैं अजर-अमर हो जाऊँ। महात्मा ने कहा— जाओ किसी घर में जिस घर में मौत न आई हो, उस घर का कपड़ा ले आओ, जल छिड़क कर पहना दूँगा तो अजर-अमर हो जायगा। भेजा, पर खाली लौट आया। बोला कोई घर मौत से खाली नहीं है। जीना मृत्यु का सन्देश देता है। आने-जाने का सन्देश देता है। मौत एक विकार है। मानव पहले पैदा होता है। पहली अवस्था में धीरे-धीरे बढ़ता है। दूसरी में जवान होता है। तीसरी अवस्था में धीरे-धीरे घटता है और चौथी अवस्था में लय हो जाता है। वे गृहस्थी धैर्यशाली माने जाते हैं। जो अपने मानसिक सन्तुलन को जीवन की परिस्थितियों में ठीक रखते हैं। बद्री नारायण की राह पर आपने देखा होगा गोविन्द चट्टी हेम कुण्ड में कभी जाएँ। फूल कुदरत ने ऐसे दिए क्या ही बताऊँ। लोग देखते हैं। देख के चल देते हैं। गोविन्द की समाधि को लोग दर्शन कर लौट आते हैं, टिकते नहीं। पड़ाव पर घर नहीं कर लेते।

प्रभु ने पुत्र-पुत्री सहयोग के लिए दिए हैं और धन उपयोग के लिए दिया है। दोनों हालतों में मानव बुद्धि कमजोर समझी जाती है। उदाहरणतया—दो बैलगाड़ियाँ चीं चीं करती जा रही हैं। दो पैसे का तेल ले लो, ठीक हो चलने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगेगी। एक ने तेल लेकर दिया पहियों को, ठीक हो चलने लगी। दूसरे ने गेहूँ भी उतार दिया और वहीं रह गया। जो केवल तेल ही इकट्ठा करने लग गया, वह लक्ष्य पर भला कैसे पहुँचेगा। मैं ईश्वर का, तन्दुरुस्ती का, माँ-बाप का सब कर्तव्य छोड़ धन कमाने लग गया। उस किसान और इस धन कमाने वाले को बुद्धि हीन तो कहेंगे मानापमान, लाभ-हानि, मरण-जन्म आते ही रहेंगे। दोनों हालतों में सन्तुलन बनाए रखना है। साँप-बिच्छू से बचने के लिए, काँटों में से पगडण्डी बना लेता है।

जिस दिन यह धारणा पक्की हो जाती है, तो राम की तरह सन्तुलन हो जायगा। तो यह है जीवन की प्रेरणा का स्रोत। ऐसा ही होने से मानव धीरे-धीरे मस्तिष्क के सन्तुलन हृदय की धारणा को ठीक रखता है। जो प्रातः विचार सुने, उन्हें समझो, जीवन में लाने के लिए, लक्ष्य तक पहुँचने के लिए बड़ा सहयोग देंगे।

मोटर इंजिन—मन

मोटर गाड़ी, पैट्रोल से चलती है किन्तु तभी, जब कि इंजिन के द्वारा पैट्रोल जल कर शक्ति का केंद्र बनता है, अन्यथा गाड़ी नहीं चलती है, ठीक इसी प्रकार मनुष्य में आत्मा प्रकाशक है, प्रेरक है किन्तु जब वही आत्मा मन के द्वारा स्फुरित होता और प्रकाशता है तभी मन, जो कि जड़ है, क्रियाशील होकर चेतन सा भासता है और संसार के सभी कार्य करने का हेतु बन जाता है। इंजिन यदि ठीक होगा, तो पैट्रोल की शक्ति को पहियों तक पहुँचाकर उसे चलाने का हेतु बन, लक्ष्य तक पहुँचा देगा, किन्तु यदि वही इंजिन बिगड़ा हुआ होगा, तो पैट्रोल के होते हुए भी पैट्रोल की शक्ति को केंद्रित नहीं कर सकेगा और गाड़ी रास्ते में रह जायगी। इसी प्रकार मन यदि ठीक होगा तो आत्मा की शक्ति का विकसित कर अपने लक्ष्य तक पहुँचा सकेगा और यदि वही मन विपरीत होगा, तो जीवनरूपी गाड़ी को लक्ष्य तक पहुँचने नहीं देगा। जब इंजिन का कोई पुर्जा बिगड़ जाता है, तो इंजिन को किसी मिस्त्री को बताने से वह बिगड़े हुए पुर्जे को ठीक कर सही जगह पर लगा लेता है, जिससे इंजिन का बिगाड़ दूर हो जाता है और रुकी हुई गाड़ी को चलती हुई गाड़ी बना देता है। इसी प्रकार मोहग्रस्त मनुष्य के मस्तिष्क की बिगड़ी हुई स्थिति को सुधार, गुरु उसे लक्ष्य तक पहुँचा देता है।

— हरिकिशनदास अग्रवाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वास की विजय

(श्वेतमुनि पर शंकर की कृपा)

मृत्यु क्या कर सकती है? 'मैंने मृत्युञ्जय शिव की शरण ली है।' श्वेत मुनि ने पर्वत की निर्जन कन्दरा में आत्म विश्वास का प्रकाश फैलाया। चारों ओर सात्विक पवित्रता का ही राज्य था, आश्रम में निराली शान्ति थी। मुनि की तपस्या से वातावरण की दिव्यता बढ़ गई।

श्वेत मुनि की आयु समाप्ति के अन्तिम स्वांस पर थी। वे अभय होकर रूद्राध्याय का पाठ कर रहे थे, भगवान् त्र्यम्बक के स्तवन से उनका रोम-रोम प्रतिध्वनित था। वे सहसा चौंक पड़े। उन्होंने अपने सामने एक विकराल आकृति देखी; उसका समस्त शरीर काला था और उसने अति भयंकर काला वस्त्र धारण कर रखा था।

'ॐ नमः शिवाय।' इस पवित्र मन्त्र का उच्चारण करते हुए श्वेत मुनि ने अत्यन्त करुणा भाव से शिवलिङ्ग की ओर देखा। उन्होंने उसको स्पर्श करके बड़े विश्वास से अपरिचित आकृति से कहा—'तुमने हमारे आश्रम को अपवित्र करने का दुःसाहस किस प्रकार किया? यह तो भगवान् शिव के अनुग्रह से अभय है।' मुनि ने पुनः शिव-लिङ्ग का स्पर्श किया।

'अब आप धरती पर नहीं रह सकते, अवधि पूरी हो गई। आपको यम लोक चलना है।' भयंकर आकृति वाले काल ने अपना परिचय दिया।

'अधम, नीच, तुमने शिव की भक्ति को चुनौती दी है। जानते नहीं, भगवान् शंकर काल के भी काल—महाकाल हैं।' श्वेत मुनि ने शिवलिङ्ग को अंक में (बाहों में) भर कर निर्भयता की सांस ली।

'शिवलिङ्ग निश्चेतन है, शक्ति शून्य है, पाषाण में सर्वेश्वर महादेव की कल्पना करना सर्वथा भूल है, ब्राह्मण!' काल ने श्वेत मुनि को पाश में बांध लिया।

धिक्कार है तुम्हें, परम चिन्मय महेश्वर लिङ्ग की शक्तिमत्ता की निन्दा करने वाले काले। भगवान् उमापति कण-कण में व्याप्त हैं। विश्वासपूर्वक आवाहन करने पर वे भक्त की रक्षा करते हैं।' श्वेतमुनि ने मृत्यु की भर्त्सना की।

... ...

'ठहरो' श्वेत मुनि की बात सच है, हमारा प्राकट्य विश्वास के ही आधीन है।' उमा सहित भगवान् चन्द्र शेखर प्रकट हो गये। उनकी जटा में पतित पाविनी गंगा का मनोरम रमण था, भुजाओं में सर्पवलय और हृदय में सुशोभित सर्पों की माला थी। भगवान् के गौर शरीर पर भस्म का शृंगार ऐसा लगता था मानो हिमालय के धवल शिखर पर श्याम घन का आन्दोलन हो। काल उनके प्रकट होते ही निष्प्राण हो गया। उसकी शक्ति निष्क्रिय हो गई। श्वेत मुनि ने भगवान् के चरणों में प्रणाम किया, वे भोलानाथ की स्तुति करने लगे।

'आपकी उपासना धन्य है, भक्तराज। विश्वास की विजय तो होती ही है।' भगवान् शंकर ने मुनि की पीठ पर वरद हस्त रख दिया।

नन्दी के आग्रह पर काल को प्राण दान देकर भगवान् मृत्युञ्जय अन्तर्ध्यान हो गये।

('कल्याण, से साभार,)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

❀ ज्ञानी भक्त ❀

महाराज कुमारी बकाया, अमृतसर

भक्त भगवान के संकट से घबराया नहीं करते,
सदा प्रसन्न रहते हैं वह चिल्लाया नहीं करते।

उन्हें जो कुछ भी प्राप्त है उन्हें सन्तोष है उस में,
कभी भी मान या दौलत पै इतराया नहीं करते।

प्रभु इच्छा में राज़ी हैं प्रभु के नाम के प्यारे,
अहं का भाव वह दिल में कभी लाया नहीं करते।

वह परवाने हैं मस्ताने हैं आत्म देव के प्रेमी,
शमा पर प्रेम की जलने से कतराया नहीं करते।

वह हर ज़र्रे में आत्म देव का दर्शन ही करते हैं,
प्रभु की खोज में हरगिज़ कहीं जाया नहीं करते।

करें वह याद उसको क्यूँ कि उन से दूर वह कब है,
वह अपनी आत्मा बाहिर कहीं पाया नहीं करते।

उन्हें कुछ भी नहीं पाना, उन्हें वह खुद ही प्राप्त है,
उसे पहिचान लेते हैं तो भरमाया नहीं करते।

स्वरूपानन्द में निशदिन मग्न और शांत रहते हैं,
प्रभु प्यारे कभो भी जोश में आया नहीं करते।

लग्न दिल की मग्न उनको है रखती हर घड़ी ऐसी,
कि दुनिया की किसी भी बात में आया नहीं करते।

जगत के शोरोगुल में भी उन्हें एकान्त हासिल है,
प्रभु चिंतन में खो करके जगत पाया नहीं करते।

शब्द की कैद में हरगिज़ नहीं एहसास दिल आता,
ज़ुबाँ पर दिल की बातों को कभी लाया नहीं करते।

गुरु वहाँ है न है चेला न बानी है न मंत्र है,
उपाधि को कभी खातिर में वह लाया नहीं करते।

वह हर शै और हर प्राणी में अपनी आत्मा देखें,
कभी भिन्नता का धोखा राज वह खाया नहीं करते।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीने का ढङ्ग

जिस बात को हम नहीं चाहते हैं और दैवगति से वह हो जाती है, उसके होने पर भी जो दुखित नहीं होते, किन्तु उसे दैवेच्छा समझकर सह लेते हैं, वे ही धैर्यवान् पुरुष कहाते हैं। दुःख और सुख में चित्त की वृत्ति को समान रखना धैर्य कहलाता है जिसने शरीर धारण किया है, उसे सुख-दुःख दोनों का ही अनुभव करना होगा। शरीरधारियों को केवल सुख-ही-सुख या दुःख-ही-दुःख कभी भी प्राप्त नहीं हो सकता। जब यही बात है, शरीर धारण करने पर सुख-दुःख दोनों ही का भोग करना है, तो फिर दुःख में अधिक उद्विग्न क्यों हों और सुख में फूलकर कुप्पा क्यों हो जायँ ? दुःख-सुख तो शरीर के साथ लगे ही रहते हैं। हम धैर्य धारण करके उनकी प्रगति को ही क्यों न देखते रहें ! जिन्होंने इस रहस्य को समझकर धैर्य का आश्रय ग्रहण किया है, संसार में वे ही सुखी समझे जाते हैं। ऐसे ही पुरुषों के गले में कीर्तिदेवी जयमाला डालती है, ऐसे ही पुरुषों की संसार पूजा करता है और ऐसे ही महापुरुष प्रातःस्मरणीय समझे जाते हैं।

धैर्य की परीक्षा सुख की अपेक्षा दुःख में ही अधिक होती है। दुःखों की भयंकरता को देखकर विचलित होना यह प्राणियों का स्वाभाविक धर्म है, किन्तु जो ऐसे समय में विचलित नहीं होता वही पुरुषसिंह धैर्यशाली कहलाता है। हम आखिर अधीर होते क्यों हैं ? इसका कारण हमारे दिल की कमजोरी के सिवा और कुछ भी नहीं है। इस बात को सब कोई जानते हैं कि आजतक संसार में ब्रह्मा से लेकर कृमि-कीट-पर्यन्त सम्पूर्णरूप से सुखी कोई भी नहीं हुआ। सभी को कुछ-न-कुछ दुःख अवश्य हुए हैं, फिर भी मनुष्य दुःखों के आगमन से व्याकुल होता है तो यह उसकी कमजोरी ही कही जा सकती है। महापुरुषों के सिर पर सींग नहीं होते, वे भी हमारी ही तरह दो हाथ और दो पैर वाले साढ़े तीन हाथ के मनुष्य के आकार के जीव होते हैं। किन्तु उनमें यही विशेषता होती है कि दुःखों के आने पर वे हमारी तरह अधीर नहीं हो जाते, उन्हें प्रारब्ध कर्मों का भोग समझकर वे प्रसन्नतापूर्वक सहन करते हैं। बस, इसी एक गुण से वे जगद्वन्द्य और सबके आदरणीय समझे जाते हैं। पाण्डव दुःखों से कातर होकर अपने भाइयों के दास बन गये होते, मोरध्वज पुत्र-शोक से दुःखी होकर मर गये होते, हरिश्चन्द्र राज्य-लोभ से अपने वचनों से फिर गये होते, श्रीरामचन्द्र वन के दुःखों की भयंकरता से घबड़ाकर अयोध्यापुरी में रह गये होते, राजा शिवि ने यदि शरीर के कटने के दुःख से कातर होकर कबूतर को बाज के लिये दे दिया होता तो उनका नाम आज कौन जानता ? ये सभी अन्य असंख्य नरपतियों की भाँति काल के गाल में चले गये, किन्तु इनका नाम अभी तक ज्यों-का-त्यों ही जीवित है। इसका एकमात्र कारण उनका धैर्य ही है।

कोई भी प्राणी यह नहीं चाहता कि हमें दुःख हो। ऐसा कौन पुरुष होगा जो अपनी प्रियतमा से पृथक् होने की इच्छा करता हो। जिसे हम प्राणों से भी अधिक प्यार करते हैं, जिसके प्राप्त होने पर हम स्वर्ग सुख को भी तुच्छ समझते हैं, उसका विषमय वियोग किसको नहीं अखरेगा, किन्तु अभागे चक्रवाक के भाग्य में तो यही दारुण वियोग बदा है। वह रात्रि में अपनी प्रिया के साथ रह ही नहीं सकता ! इसके लिये क्या उपाय है ? वह क्या रात्रि भर उसके वियोग में तड़पता ही रहे ? यदि तड़पता ही रहे तो इससे क्या लाभ ? क्या उसके तड़पने से चक्रवाकी उसके पास आ सकती है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि नहीं तो फिर धैर्य का आश्रय क्यों नहीं लेता ! जो अवश्यम्भावी है, जिसमें कभी हेर-फेर हो ही नहीं सकता, उसके लिए चिन्ता कैसी ? धैर्य धारण करो, चित्त को स्थिर बनाओ, यह भयंकर रजनी सदा थोड़े ही बनी रहेगी। कभी-न-कभी तो इसका अन्त होगा ही। इसके अन्त के साथ ही तुम्हारी विपत्ति का भी अन्त हो जायेगा। सूर्यदेव के आगमन से जहाँ यह शर्वरी भाँगी कि आनन्द की शुभ घड़ी आयी, तब तुम जी चाहे जितनी देर अपनी प्रिया के साथ आनन्द-विहार करना बस, फिर आनन्द-ही-आनन्द है। धैर्य का फल मीठा होता है। यदि तुम वियोग की पीड़ा में तड़प-तड़पकर प्राण दे दोगे, तो तुम्हारा अन्त दुःखमय होगा और भविष्य में सुख मिलने वाला है, उससे भी वंचित रह जाओगे। दीनता से विपत्ति के बादल और घिर आते हैं। अधीर पुरुष विपत्ति के दल-दल को पार नहीं कर सकते। वे उनमें फँसकर नष्ट हो जाते हैं। किन्तु जो धैर्यवान् पुरुष हैं, वे किनारे की ओर देखते हुए उस दल-दल की कुछ भी परवाह नहीं करते। वे अविचलित भाव से आगे की ही ओर बढ़ते चले जाते हैं। वे बात-की-बात में उस दलदल को पार करके किनारे पर आ खड़े होते हैं। विपत्तियों के सागर से पार उतरने के लिए धैर्यरूपी जहाज़ ही एकमात्र अमोघ अवलम्ब है। बिना धैर्य के जहाज पर सवार हुए इस सागर को कोई पार कर ही नहीं सका है।

अपने प्रियजन के वियोग से हम अधीर हो जाते हैं। क्योंकि वह हमें छोड़कर चल दिया। इस विषय में अधीर होने से क्या काम चले ? क्या वह हमारी अधीरता को देखकर लौट आवेगा। यदि नहीं, तो हमारा अधीर होना व्यर्थ है। फिर हमारे अधीर होने का कोई समुचित कारण भी तो नहीं। क्योंकि जिसने जन्म धारण किया है, उसे एक दिन मरना भी तो अवश्य है ही। जो जन्मा है, वह मरेगा भी। सम्पूर्ण सृष्टि के कारण पितामह ब्रह्मा हैं, चराचर सृष्टि उन्हीं से उत्पन्न हुई है। अपनी आयु समाप्त होने पर वे भी नहीं रहते, क्योंकि वे भी भगवान् बिष्णु के नाभिकमल से उत्पन्न हुए हैं। अतः महाप्रलयकाल में वे भी भगवान् विष्णु के शरीर में अन्तर्धान हो जाते हैं। जब यह अटल सिद्धान्त है कि जायमान वस्तु का नाश होगा ही, तो फिर तुम उस अपने प्रियजन के शरीर का शोक क्यों करते हो ? उसे तो मरना ही था, आज नहीं तो कल और कल नहीं तो परसों। सदा कोई जीवित रहा भी है, जो वह रहता ? जहाँ से आया था, वहाँ चला गया। छोड़ो उसका शोक और गाओ गुण गोविन्द के। व्यर्थ के शोक में रक्खा ही क्या है ? एक दिन तुम्हें भी जाना ही है। जो दिन शेष हैं, उन्हें धैर्य के साथ गुणागार के गुणों के चिन्तन में बिताओ।

शरीर में व्याधि होते ही हम विकल हो जाते हैं। विकल होने से आज तक कोई नीरोग बन सका है ? उलटे और भी अधिक व्यथित हुए हैं। यह शरीर ही व्याधियों का घर है। जाति, आयु और भोगों को साथ लेकर ही तो यह शरीर उत्पन्न हुआ है। पूर्वजन्म के जो भोग हैं, वे तो भोगने पड़ेंगे। चीं-चपड़ करने से थोड़े ही चलेगा। चाहे जो करो, भोग बिना अपनी अवधि पूर्ण किये पीछा नहीं छोड़ने के। दान, पुण्य, तप और औषधि उपचार करो, अवश्य, किन्तु उनसे आराम न होने पर अधीर मत हो जाओ। क्योंकि भोग की समाप्ति में ही दान, पुण्य और औषधि कारण बन जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिना कारण के कार्य नहीं होता, तुम्हें क्या पता है कि तुम्हारी व्याधि में क्या कारण बनेगा। इसलिए आप्त पुरुषों ने शास्त्र में जो उपाय बताये हैं, उन्हें ही करो। साथ ही धैर्य भी धारण किये रहो। धैर्य से ही तुम व्याधियों के चक्कर से सुखपूर्वक छूट सकोगे।

जीवन की आवश्यक वस्तुएँ जब नहीं प्राप्त होती हैं तो हम अधीर हो जाते हैं। हा ! घर में कल को खाने के लिए मुट्ठीभर अन्न नहीं। स्त्री की साड़ी बिलकुल चिथड़ा बन गयी है, बच्चा भयंकर बिमारी में पड़ा हुआ है, इसकी दवा-दारू का कुछ भी प्रबन्ध नहीं। क्या करूँ, कहाँ जाऊँ ? इन्हीं विचारों में विकल हुए हम रात-रात भर रोया करते हैं और हमारी आँखें सूज जाती हैं। ऐसा करने से न तो अन्न ही आ जाता है और न स्त्री की साड़ी ही नयी हो जाती है। बच्चे की भी दशा नहीं बदलती। केवल हम ही अपनी अच्छी-भली आँखों को सुजाकर उलटे बीमार बन जाते हैं। सोचना चाहिए, हमारे ही ऊपर ऐसी विपत्तियाँ आयी हैं, सो बात नहीं। विपत्तियों का शिकार किसे नहीं बनना पड़ा ? त्रैलोकेश इन्द्र ब्रह्महत्या के भय से वर्षों घोर अन्धकार में पड़े रहे। चक्रवर्ती महाराज हरिश्चन्द्र डोम के घर जाकर नौकरी करते रहे। उनकी स्त्री अपने मृत बच्चे को जलाने के लिए कफन तक नहीं प्राप्त कर सकी। सबसे ऊँचे लोकों में रहने वाले सप्तर्षि भूख के कारण मरे हुए राजा के लड़के के मांस को चुराकर खाने लगे। जगत के आदि कारण मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्रजी चौदह वर्षों तक घोर जंगलों की खाक छानते डोले। वे अपने पिता चक्रवर्ती महाराज दशरथ को पाव भर आटे के पिण्ड भी न दे सके। जंगल के इंगुदी-फलों के पिण्ड से ही उन्होंने चक्रवर्ती राजा की तृप्ति की। शरीर धारी कोई भी ऐसा नहीं है जिसने विपत्तियों के कड़वे फलों का स्वाद न चाखा हो। सभी उन अवश्य प्राप्त होने वाले फलों के स्वाद से परिचित हैं। फिर हम अधीर क्यों हों; भोग तो भोगने से ही समाप्त होगा। हमारे अधीर होने से हमारे आश्रित भी दुःखी होंगे, इसलिए हम धैर्य धारण करके क्यों नहीं उन्हें समझायें ? जो होना होगा सो होगा।

बस, ज्ञानी और अज्ञानियों में यही अन्तर है। लोक-दृष्टि में जरा, मृत्यु और व्याधियाँ ज्ञानी-अज्ञानी दोनों को ही होती हैं, किन्तु ज्ञानी उन्हें अवश्वम्भावी समझकर धैर्य के साथ सहन करता है और अज्ञानी विकल होकर विपत्तियों को और बढ़ा लेता है। थोड़ी या कम सभी शरीर धारियों को आपदाएँ झेलनी पड़ती हैं।

ज्ञानी काटे ज्ञान ते, अज्ञानी काटे रोय।
मौत, बुढ़ापा, आपदा, सब काहू को होय॥

जो धर्म का आश्रय नहीं लेते, वे दीन हो जाते हैं, परमुखापेक्षी बन जाते हैं, इससे वे और भी दुःखी होते हैं। संसार में परमुखापेक्षी बनना, दूसरे के सामने जाकर गिड़गिड़ाना, दूसरे से किसी प्रकार की आशा रखना इससे बढ़कर दूसरा कष्ट और कोई नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ताः

श्री सन्तोष कुमार "विद्यालंकार"

कविवर भर्तृहरि जिन्हें अपने जीवन के बहुत से कटु अनुभव प्राप्त हुए थे। योग और भोग दोनों क्षेत्रों में जिन्होंने दक्षता प्राप्त की थी। उन्होंने जीवन के निष्कर्ष को उपयुक्त शीर्षकस्थ शब्दों में व्यक्त किया है। यह रहस्यपूर्ण उक्ति संसारी, विलासमग्न प्राणी के जीवन पर मार्मिक व्यंग्य करती है। भोग्य वस्तु एवं भोक्ता दोनों का साध्य साधक जैसा सम्बन्ध स्पष्ट परिलक्षित होता है। प्रत्येक प्राणी सुख या आनन्द-प्राप्ति की आकांक्षा से अनेकानेक प्रयत्न करता है। अज्ञान से विमूढ़ हुआ प्राणी, संसार की वस्तुओं में सुख ढूँढता है और भोगों के घृत से तृष्णा की धधकती अग्नि को शान्त करने का निष्फल प्रयास करता है। अपनी तृष्णाओं की पूर्ति में, अपना घर बसाने के लिये दूसरे की झोपड़ी उजाड़ देने में उसे कोई संकोच नहीं, अपनी प्रतिष्ठा के लिये दूसरे को नीचा दिखाने में उसे हिचक नहीं, शीशमहल में रहते हुए दूसरे के घर में पत्थर फेंकने में उसे जरा भी आत्मग्लानि नहीं. आखिर ऐसा क्यों ? इसका कारण क्या अपने और पराये का भेदभाव नहीं है ? इसका कारण क्या समन्व दृष्टि का अभाव नहीं है ?

यह ठीक है कि स्वार्थ-सिद्धि के बिना परमार्थ नहीं किया जा सकता, किन्तु जो व्यक्ति अपनी स्वार्थ-सिद्धि में ही अनेकों का अपकार कर रहा है वह स्वार्थ-सिद्ध करके परमार्थ करेगा, यह कैसे कहा जा सकता है और करे भी तो किस काम का ? अतः स्वार्थ और परमार्थ दोनों का धर्म विहित समन्वय होना चाहिए। किसी कवि ने कहा है—

क्यों इतना आतंक ? ठहर जा, ओ गर्वीले !
जीने दे सबको, फिर तू भी, सुख से जी ले !

धर्मराज युधिष्ठिर ने मरणासन्न पड़े हुए भीष्मपितामह से पूछा — "पितामह ! आपके अनुसार धर्म किसे कहना चाहिए ?"

पितामह भीष्म ने बोल न सकने के कारण उँगली के इशारे से हाथ में लिखकर बताया—

"आत्मन प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।"

अर्थात्— जो व्यवहार अपनी आत्मप्रेरणा के विपरीत हो, वह व्यवहार दूसरो से नहीं वर्तना चाहिए। यही मनुष्योचित धर्म है।

वास्तव में आत्मतत्व स्वस्वरूप में निर्मल एवं निर्लिप्त है, अज्ञान से वशीभूत प्राणी अपने ही कर्मों से क्लेश अथवा दुख-सुख की सृष्टि कर लेता है और अपने ही कुकर्मों के ताने-बाने में फंसकर किंकर्तव्य विमूढ हो जाता है। व्यक्ति को बाधित करने वाली कौन सी शक्तियाँ हैं ? इस प्रश्न के उत्तर में वेद का यह कथन सर्वथा उचित है कि—

सं मा तपन्ति अभितः सपत्नीरिव पर्शवः।
निबाधते अमतिर्नग्नता, जसुर्विर्वेर्नवीयते मतिः॥
(ऋ० १०।३३।२)

अर्थ— भक्त कह रहा है कि मेरे प्रभु ! मेरी आज वही दशा है जो दो पत्नियों वाले पुरुष की होती है। अविवेकता और नग्नता ये दोनों मेरी धर्म पत्नियाँ हैं। ये दोनों धम पत्नियाँ कहलाते हुए मेरे साथ अधर्म का व्यवहार करती हैं और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इनके इस अनैतिक व्यवहार के कारण मेरी बुद्धि इसी तरह निरुद्देश्य एवं दिशाहीन होकर घूमती तथा उड़ती सी चली जा रही है जैसे पक्षी खुले आकाश में बन्धन रहित होकर उड़ते फिरते हैं। अर्थात् मेरी बुद्धि मेरे वश में नहीं है।

वेद चुने हुए शब्दों के माध्यम से व्यक्ति को सचेत कर देना चाहता है। इसके लिए मुख्य रूप से दो शब्द प्रयुक्त हैं। प्रथम शब्द है अमति अर्थात् अविवेक, दूसरा शब्द है नग्नता अर्थात् लज्जा या संकोच रहित कर्मों में दुस्साहस।

अविवेकी व्यक्ति ऐसे कर्म करता है जिससे न तो स्वार्थ की सिद्धि संभव होती है, न परमार्थ की। कठोर परिश्रम के पश्चात् भी विपरीत फल प्राप्त करता है। दूसरे के हितकर वचनों को अपनी हानि का कारण समझता है। अविवेकी व्यक्ति असत्य को अपने स्वार्थ में साधक मानकर सत्य का गला घोंट देता है। परिणाम को विचार किये बिना, निष्प्रयोजन उल्टे कर्म करता है। अविवेकी व्यक्ति स्वार्थ-सिद्धि के लिए वर्तमान देखता है, भविष्य नहीं देखता और न देखने की आवश्यकता अनुभव करता है। दुख मिलने पर भी वह अपनी कमजोरी को भाग्य अथवा भगवान् पर आरोपित कर देता है। यह कमजोरी उसके आने वाले दुःख को सूचित करती है। अधिकतर यह देखा जाता है कि व्यक्ति की आँखें तब खुलती हैं जब सर्वस्व लुट जाता है, जबकि समस्त शक्तियाँ व्यक्ति का साथ छोड़ देती हैं। किन्तु फिर भी —

यदि शमा बुझने के पहले महफिल में रंग आ जाय तो बेहतर है, वरना बरबादी का जश्न तो मनाया ही जा रहा है।

बीता हुआ समय, निकला हुआ तीर और कही गई बात कभी वापस नहीं लौटती।

किसी कार्य को बुरा जानते हुये भी संकोच रहित होकर, प्रयत्न के साथ करना यह नग्नता कहलाती है। नग्नता में आवरण नहीं होता, ठीक इसी प्रकार स्वार्थी, भोगी व्यक्ति को दुष्कर्म में भय अथवा लज्जा बिलकुल नहीं होती, वह व्यक्ति चिकने घड़े की तरह भय और लज्जा से निर्लिप्त रहता है, इनका इस पर कोई प्रभाव नहीं होता। लज्जाहीन व्यक्ति आत्मा की प्रेरणा को अंहकार की शक्ति से दबा देता है अर्थात् आत्महनन करता है, अंहकार दुष्कर्म के प्रति होने वाली स्वाभाविक आत्मग्लानि को फटकने नहीं देता, और व्यक्ति निर्भय एवं लज्जा रहित होकर लगातार दारुण दुःखों की भूमिका बनाता रहता है। यही दुष्कर्म भावी विप्लव के कारण होते हैं। अन्तिम शब्दों के रूप में यह कहना उचित है कि भोगों से तृष्णाओं की पूर्ति असम्भव है। यही बात कठोपनिषद् के शब्दों में नचिकेता ने यमाचार्य से कहा था —

"न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्यः"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काश, तुम मेरी माँ होती !

श्री खेम राज जी

बड़ी भयानक रात थी, चारों ओर गहरा सन्नाटा था। हवा के झोंकों से झोंपड़ी का दीपक काँपने लगता था। काँपती लौ के धुँधले प्रकाश में बूढ़ी काकी कह रही थी— 'रावसिंह, अब निश्चय कर लिया है तो पीछे कदम मत हटाना बेटा! रानी के आदेशों का पालन करना तेरा धर्म है! विदेशियों से टक्कर लेकर रानी ने अपने लिए दहकते अंगारों का पथ चुना है। तू सदा इस बात का ध्यान रखना कि तेरी आँखें रानी का रत्ती भर भी अनिष्ट न देखें। जब तक तेरे इस वीर सुगठित शरीर में एक भी साँस रहे, तू कर्तव्य-पथ से पीछे न हटना।'

'मैं वचन देता हूँ माँ! जबतक जीऊँगा देश के लिए ही जीऊँगा। देश का अहित देखने से पहले ही मैं मर जाना पसन्द करूँगा। माँ! मुझे आशीर्वाद दो कि मेरे कदम कभी भी डगमगाने न पायें।'

'अभी ठहरो रावसिंह! मेरे आशीर्वाद के साथ-साथ यह तलवार भी लेते जाओ। यह हमारे पुरखों की धरोहर है।' बूढ़ी काकी ने अनामिका को तलवार की तेज धार पर फेरा, गहरे लाल रंग के घने रक्त की बूँदें चमक उठीं— और रावसिंह का तिलक करते हुए काकी ने गम्भीर शब्दों में कहा— 'बेटा! पुरखों की पवित्र तलवार को छूकर एक बार पुनः सौगन्ध खाओ कि जीते जी देश का अहित न होने दोगे।'

'ऐसा ही होगा माँ! क्या तुम्हें मुझ पर विश्वास नहीं?'

बूढ़ी काकी के झुर्रियों वाले चेहरे पर लालिमा छा गयी तथा गम्भीरता और अधिक गहरी होने लगी। रावसिंह के कन्धे पर हाथ रखकर काकी ने कहा— 'बेटा! तुम्हें एक बार शायद ऐसा लगे कि मैंने रानी का साथ देने में भूल की है। परन्तु याद रखना बेटा! सत्य की कड़वाहट में ही सच्ची मिठास है— शायद मेरी बूढ़ी आँखें तुम्हें अब न देख सकें, परन्तु मेरी आत्मा अवश्य तुम्हें देखती रहेगी। देखना रावसिंह! मेरी आत्मा को कुछ और देखने को न मिले।'

'माँ! ईश्वर ने चाहा तो तुम इन्हीं आँखों से देखोगी कि तुम्हारा रावसिंह कायर नहीं है।' उसी भयानक रात में रावसिंह चला गया। तभी हवा का झोंका आया और दीपक की लौ थरथरा कर बुझ गयी। बूढ़ी काकी अकेले में ही जोर से हँस पड़ी, 'मैं जानती हूँ कि आजादी पर मिटने वाले परवानों को मरना ही पड़ता है—हवा के झोंके ने दीपक को बुझा दिया तो कोई नयी बात नहीं हुई।'

जनरल ह्यू रोज की अनुभवी बूढ़ी आँखों ने देखा कि महारानी झाँसी को सामने से हराना आसान नहीं है। भूखी सिंहनी की तरह रानी जिस ओर भी टूट पड़ती, विपक्षियों के कदम उखड़ जाते। रानी का अंगरक्षक रावसिंह साक्षात् महाकाल बनकर टूट पड़ता।

जनरल ह्यू रोज ने योजना बनायी। उसने बूढ़ी काकी को बन्दी बना लिया और रावसिंह के पास खबर भेजी कि अगर माँ को बचाना चाहते हो, तो रानी का साथ छोड़ दो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बूढ़ी काकी को जब जनरल ह्यू रोज की योजना का पता चला तो क्षण भर के लिए वह कांप उठी। उसने सोचा— रावसिंह कहीं कायरता न दिखाये। मेरे प्राणों की रक्षा के लिए रावसिंह रानी का साथ न छोड़ दे। अपने जीवन में काकी को कभी इतनी घबराहट नहीं हुई थी। आज कई वर्षों के बाद बूढ़ी काकी की आंखें आंसुओं से भर गयीं।

तभी जनरल काकी के पास आया और हँसते हुए बोला— 'काकी, रावसिंह ने लिखा है— वो तुम से मिलेगा, तुमारा शल्लाह लेगा, टब फैसला करेगा—वो काल इधर में आयेगा—अगर तुम उसको बचाना मांगटा है टो उसको बचा शकटा—नहीं टो अमारा आडमी उसको काल ही मार देगा।' और जनरल हँसता हुआ बाहर चला गया।

काकी के सारे शरीर में बिजली-सी कौंध गयी। न जाने क्या सोचकर प्रकाश की एक हल्की-सी किरण काकी की आंखों में झलक आयी।

उधर बाहर फिरंगी सिपाही पहरा दे रहे थे। उधर काकी ने तंग कोठरी में अपने बाजू पर कटार का वार करके अपने लहू से दीवार पर लिखा, 'रावसिंह मेरे दूध की लाज रखना' और वही कटार काकी के वक्षस्थल में जा घुसी, मानो जानना चाहती हो कि बूढ़ी काकी के दिल में कितनी गहराई है। काली रात भी यह दृश्य देखकर सिहर उठी। जब वह भी इस दृश्य को न देख सकी तो चली गयी।

प्रातः ही रावसिंह जब माँ से मिलने कोठरी में लाये गये तो उन्हें माँ की लाश ही देखने को मिली। अचानक उनकी नजर दीवार पर गयी। टूटे-फूटे अक्षरों में लिखा था— 'रावसिंह, मेरे दूध की लाज रखना।'

सारी बात उसकी समझ में आ गयी। सुबह का भूला शाम को घर आ चुका था। आंखों में आँसू थे और होंठों पर थिरकन। माँ तो आजाद हो गयी थी।

रावसिंह ने माँ के ठण्डे चरणों पर मस्तक रख दिया और नंगी तलवार लेकर तेजी के साथ बाहर निकल आया। फिरंगियों ने देखा, बिजली की-सी तेजी के साथ रावसिंह अपने घोड़े को दौड़ाये चले जा रहे हैं। कोई भी उन्हें रोक न सका।

जनरल ह्यू रोज एक बार फिर बूढ़ी काकी को देखने के लिये आये। वहाँ काकी की लाश मानो उनसे कह रही थी जनरल! तुम भी अनुभवी थे और मैं भी, किन्तु आज मैं जीत गयी।

जनरल का मस्तक काकी के आगे झुक गया। मन-ही-मन जनरल ने कहा—

'काकी, काश! तुम मेरी माँ होतीं!'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जगत की झूठी देखी प्रीति

श्री स्वामी सारशब्दानन्द जी

साधो रचना राम बनाई।
इक चाले इक अस्थिर कर माने,
यह आचरज लख्या न जाई।

संसारी जीव झूठी प्रीति पर इस प्रकार न्यौछावर है जैसे बच्चा खिलौने को सत्य आधार मानकर उससे दिल बहलाता है और उसमें मग्न रह कर माँ के प्यार को भुला देता है, किन्तु खेलते-खेलते जब वह खिलौना टूट जाता है तो रोने लगता है। ठीक संसारी जीव की भी यही अवस्था है। यह जानते हुए भी कि पुत्र, स्त्री, धन-माल, जागीर ये सब मन के खिलौने हैं और कुछ दिन पश्चात् ये टूट जायेंगे, फिर भी यह उनमें ही मस्त है। वह कहेगा कि ये मेरे हैं, खुशियाँ मनाता हुआ संसार में उछलता-कूदता है, पर यह नहीं जानता—

खुदा जिनको ऐश देता है वहाँ ग़म भी होते हैं।
जहाँ बजते हैं नक्कारे वहाँ मातम भी होते हैं॥

एक महात्मा गुरुजन को किसी सेवक ने अपनी शादी पर आशीर्वाद लेने के लिए अपने घर बुलाया तो महापुरुष गुरु आकर विराजे और देखा कि घर की लड़कियाँ-मातायें ढोलक लेकर खूब गाती-बजाती और नाचती हैं। तब महात्मा जी अपने आसन पर बैठे रोने लगे, तो घर वालों ने बुरा मनाया और पूछा—"गुरु जी! आज यह घड़ी तो हँसने की और खुशी मनाने की है और आप रो रहे हो, यह अपशकुन है।". तब गुरु जी थोड़ा मुस्करा कर बोले—"बेटा! इस हँसी-खुशी के पीछे बड़ा ग़म छुपा हुआ है जो आपको नजर नहीं आता और हमको दिखाई दे रहा है। इसलिए आपकी अज्ञानता, नादानी पर हमें रोना आया है।" सो इसको कहते हैं झूठी प्रीति। गुरु जी फरमाते हैं—

अपने सुख सिउ सभि लागै,
किआ दारा किया मीत।

किसी फकीर का वाक्य है—

ढिल्ले गुड़ ते मक्खियाँ, बैठीं खम्ब लपटाय।
उड़ने का संशय भया, लालच बुरी बलाय॥

ढाले गुड़ पर लोभ वश मक्खियाँ आकर बैठ गईं, गुड़ मीठा लगा और मस्त होकर खाती रहीं। जब उड़ने लगीं तो अपने पंख उसमें जकड़े देखे। अन्ततः उसी में फँस कर मरना पड़ा। प्राण निकल गये। क्षणिक सुख को महान् सुख मान कर धोखा खाया। इस थोड़े सुख में दारा अर्थात् स्त्री और मित्र आदि लगे हैं और सभी यह मेरा है, यह मेरा है, कहते है; इस पर भी एक दृष्टान्त है—

इस संसारी सम्पत्ति को सबने मेरा-मेरा ही पुकारा, किन्तु यह बनी किसी की भी नहीं।

एक बार एक सूफी फकीर हजरत बुल्लेशाह अपने नाम-रूप की मस्ती में किसी खरबूजे के खेत के पास से गुजरे और खेत में लगे पके खरबूजे देख कर एक खरबूजा तोड़ लिया। खेत वाले ने देख लिया और उनका अपमान किया तथा खरबूजा छीन कर बोला—"बताओ यह खेत क्या तेरे बाप का है?"

बुल्लेशाह बोले—"नहीं! मेरे मालिक खुदा का है और मैं उसका बन्दा हूँ। मेरा दिल इसे खाने को किया तो मैंने खरबूजा तोड़ लिया।"

खेत वाला जाट बोला—"अरे मूर्ख फकीर! यह खेत मेरा है, मैं इसका मालिक हूँ। पैसे निकालो तब खाओ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हज़रत बोले— "मेरे पास तो सिवाय अल्लाह-अल्लाह के और कुछ नहीं।" तब खेत वाले ने फ़कीर का मज़ाक उड़ाते हुए कहा— "जाओ फिर अल्लाह से पूछो!" उसने खरबूजा छीन लिया और धक्के देकर फ़कीर को वहाँ से चलता किया।

जब फ़कीर चला गया तो खेत वाले ने खेत में यह अचम्भा देखा कि जितने खरबूज़े थे, वे इन्सानी सिर बनकर हँसने लगे तो वह दौड़ कर फ़कीर के पीछे भागा और क्षमा मांगी— "फ़कीर साईं! चलो खेत को आकर देखो वहां क्या हो गया है?" तब बुल्लेशाह ने आकर उन हंसती खोपड़ियों को पूछा — "आप कौन हो और क्यों हँस रहे हो?" तो वे मानवीय सिर बोले— "हम इस जाट खेत वाले की नादानी पर हँसते हैं। एक दिन हम भी इस खेत के मालिक थे जिसकी सज़ा अब भोग रहे हैं। इसे खुदा की मालिकी न मानी और बजाय खुद को नौकर मानने के मालिक मानने लगे। अब इसकी मालिकी पर हँसी आती है कि यह भी हमारा साथी बनने वाला है, जो आज चलते फकीर का निरादर करके खरबूजा छीन लिया है।" सो गुरु जी ने ठीक ही लिखा है कि— "मेरो-मेरो" में मस्त चित्त लगा हुआ और यह जीव अन्धा हुआ है। आगे चलकर गुरु जी फरमाते हैं —

अन्ति कालि संगी नह कोऊ, इह अचरज है रीति।

यह "मैं-मेरी" यहाँ ही रह गई, साथ न चली। यह आश्चर्य रहता है, किन्तु मन मूर्ख का क्या कहना है। इसे नित्य धोखे दे-देकर हार गया हूँ, यह मानता नहीं है।

एक दिन श्री कबीर जी अपने किसी सेवक के घर रमता रूप में जा निकले। उसने गुरु जान कर खूब आदर सत्कार किया और अच्छा आसन देकर बिठाया तथा कुछ दिन ठहरने की विनती की। दूसरी ओर श्री कबीर जी ने देखा कि उस घर की माई चक्की में दाने पीस रही है और सभी दाने पिस-पिस कर आटा रूप में बाहर निकल रहे हैं। यह देख कर कबीर जी रो पड़े, तो सेवक ने पूछा— "गुरुदेव! आपके रोने का क्या कारण है?" तो कबीर जी बोले —

चलती चक्की देख कर, दिया 'कबीरा' रोय।
दो पाटन में आय कर, साबुत बचा न कोय॥

यह बात अभी समाप्त नहीं हुई थी कि माई ने दाने पीसने खत्म कर दिये और आटा सम्भालने के लिये चक्की खड़ी करके ऊपर का पाट उठाया, तो कबीर जी ने देखा कि कुछ दाने बीच वाली किल्ली के साथ साबुत लगे हुये हैं। यह देख कर कबीर जी हँस पड़े। तब फिर सेवक ने पूछा — "प्रभो! अब तो आप हँस रहे हो। इस हँसी का क्या कारण है?" कबीर जी बोले —

ठाड़ी चाकी देककर, दिया 'कबीरा' खिल।
सोई दाना बच रहा, जो गया किल्ली से मिल॥

भाई! उस विधाता की रचना में एक और रचना का भी ढंग देखा है, जो इस कालरूपी चक्की चलती में प्रभु-शरण रूपी किल्ली से मिला या लगा हुआ है, वह चलते काल चक्कर से बच जायेगा। सो अन्त में गुरु जी ने यह लिख दिया है —

'नानक' भउजलु पारि परै जउ गावै प्रभु के गीत।

यदि इस संसार सागर को पार करना है तो उस प्रभु की शरण होकर उसी के गीत गाते रहो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम बिन कौन हमारा !

श्री धर्मानन्द जी शास्त्री

हे प्रभो ! मैंने इस संसार को अच्छी तरह छानबीन लिया। तदनन्तर यह अनुभव हुआ कि तुम्हारे बिना मेरा इस संसार में कोई नहीं है। पुत्र को यदि अपना समझूँ तो वह गृहस्थी होने पर आँख फेर लेता है और यदि पत्नी को अपना समझूँ तो उसकी मनोकामना की पूर्ति न हुई तो वह भी प्रतिकूल चलने पर कटिबद्ध हो जाती है। एवमेव अन्य सगे-सम्बन्धियों की हालत है।

कहने का अभिप्राय यह है कि सभी स्वार्थी हैं। उनके स्वार्थों की पूर्ति होती रहे तो दायें-बायें फिरते रहते हैं। स्वार्थ-पूर्ति के अभाव में विपरीत वातावरण उपस्थित कर देते हैं।

अतः हे करुणानिधे ! आपको छोड़कर मुझे कोई ऐसा उदारात्मा दृष्टिगत नहीं होता जिसके दरवाजे पर जाकर अपना दुखड़ा सुनाऊँ।

हे स्वामिन् ! क्षमा करो। आज से पूर्व मैं जो आपको भूला हुआ था, उसका मुख्य कारण यह था कि अब तक मैं 'ममत्व' में फँस कर भटकता रहा। अब मालूम हुआ कि संसार में जो कोई भी अपने बने हैं, वे सब बनी-बनी के हैं। बिगड़ी दशा में केवल जगदीश ही है। इसलिये संसार के मायाजाल से छूट कर आपके चरण-कमलों का आसरा ले रहा हूँ।

हे दीनबन्धो ! मेरे पूर्वले अवगुणों पर ध्यान न देकर अपना बना लीजिये। मैं महापुरुषों तथा सन्त महात्माओं के मुखारविन्दों से यही सुनता रहता हूँ कि जिस जिसने आपका लड़ पकड़ा उसके तारने में आपने तनिक भी देर नहीं लगाई। मैं भी आपकी शरण आ रहा हूँ, कृपा कर मेरे तारने में देर न करना। इस नश्वर जगत् के ममत्व ने मुझे बहुत दुःख दिया, निर्दयता से सताया, शान्ति न देकर, अशान्त ही किया।

रे नश्वर जगत् ! मैं तेरा भी महान् कृतज्ञ हूँ, यदि तेरा ममत्व मुझे न सताता और न दुःख देता तो मैं चिरकाल तक अपने प्रीतम को भूला ही रहता। अब वे ही मेरे रक्षक और पोषक हैं, ऐसा मुझे दृढ़ विश्वास है। अतः —

मोहे लागी लगन हरि पावन की।
हरि पावन जगत भुलावन की॥
जग वस्तु कोई थिर न रहावे।
ज्यों नदियाँ हैं सावन की॥
हरि बिन काको लाज है हमरी।
चोली की और दामन की॥
"शाहन्शाह" अस युक्ति बताओ।
जग भूलन प्रभु ध्यावन की॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दर्शन एवं फिलसफी

श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी, ऋषिकेश

संसार सापेक्ष है, प्रत्यक्ष उसका प्रमाण है, तदितर निरपेक्ष है, वह निरवधिक-अनन्त है, देश-काल में सावधिक सत्ता है, उनसे जो अनधिकृत है वह निरपेक्ष, अपेक्षा हो जिसे वह सापेक्ष है और अपेक्षा निकल गयी जिसकी वह निरपेक्ष है, एवमेव उस स्थिति की लब्धि के लिये श्रवण, मनन, निदिध्यासन सार्थक साधन प्रतिपादित हैं।

इन सापेक्ष एवं निरपेक्ष सत्ताओं के ज्ञापक तथा विवेचक शास्त्रों का नाम प्राच्य प्राङ्गण में दर्शन अथवा प्रतीच्य प्रान्तर में फिलसफी है। इनके अपने अर्थ तथा मन्तव्य हैं संसार में अनन्त दर्शन हैं, एवमेव फिलसफी हैं, ये दोनों संज्ञा एक ही विचारधारा की हैं अथवा पृथक् निःसन्देह विचारों के विवादपरक विषय हैं। इनमें कौन अच्छा और कौन नहीं, किसको प्राथमिकता प्राप्त है तथा किस कारण, सब अनुयायी पर निर्भर है।

जिज्ञासु अनुयायी अपने दर्शन अथवा फिलसफी को यथासम्भव समझता है, महत्त्व देता है, प्राथमिकता प्रदान करता है, एतावता उस दिशा में आकृष्ट रहता है, अन्यथा गड्डलिका न्याय से बहुतायत में भीड़ लगाते हैं। "तत्रापि पलालार्थी पलालं धान्यार्थी च धान्यमाधत्ते।" इनमें धान्य-मूल्यवत्तर है अथवा पलाल (पराल) का न्याय्य निर्णय उपयोगिताश्रित है। एक ही पदार्थ देश-कालान्तर में आवश्यकतानुसार विविधता धारण करता है अथवा विविध प्रतीत होता है।

दर्शन को मेरे विचार से, फिलसफी कहना अथवा मानना असंगत है, दर्शन-दर्शन है, एवमेव फिलसफी-फिलसफी है, अबोध अथवा भ्रान्ति के कारण दर्शन और फिलसफी भाषाभेद से नामान्तर माने जाते हैं। भाषाभेद होने पर भी वे नामान्तर ही नहीं प्रत्युत अर्थान्तर भी हैं।

दर्शन का व्यावहारिक भाव है द्रष्टा अथवा दृश्य। जिससे देखा जाय, यद्वा जो देखा जाता है-दर्शन है; "दृश्यते येन्, यस्मात्, यस्मिन् अथवा दृश्यते यत् तद्दर्शनम्।" यह चेतनदर्शन है अथवा पदार्थ दर्शन किन्तु द्रष्टा उभयत्र चैतन्य ही है, पदार्थ बोधशून्य होता है जडत्वात्। आत्मा आत्म-दर्शन करता है, किन्तु यह उद्देश्य विधेय प्रक्रिया नहीं, क्योंकि आत्मा किसी का उद्देश्य तो है, किन्तु किसी का विधेय नहीं।

वास्तव में आत्मव्यतिरिक्त अन्य कोई है ही नहीं, तब कौन किसको देखे और कौन किसको सुने, आत्मा ही सर्वस्व है, एवमेव आत्मा अपने में रतिमान है। पदार्थ सापेक्ष एवं सावधिक होने से क्षणिक है, शीर्णशील है, परन्तु आत्मा स्थिर Static भी नहीं, एवमेव परिवतनपरक भी नहीं, तथापि अपने में आत्मा निर्बाधगति से विकासशील है और अपने में ही स्थिर रहता है।

सापेक्षावधि में द्वैत को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है, अनेक का आश्रय ही सापेक्ष और सावधिक है। जडचेतन की धारणा व्यापक है, यद्यपि अपनी परम्परानुसार उभयत्र अनुयायी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुलभ हैं। अत अनात्मतत्व के लिए भी आत्मपद का उपयोग होता है किन्तु पारमार्थिकता से नहीं, यथार्थ को परमार्थ कहते हैं। लोक में सन्तान को आत्मज कहते हैं, अर्थात् आत्मा कारण है, वास्तव में सन्तान आत्मज नहीं, शरीरज है, आत्मा कर्ता-धर्ता कुछ भी नहीं तो उसको सन्तान कैसे सम्भव ? आत्मा अद्वय तथा निष्प्रपञ्च है तथापि आत्मा आत्मदर्शन करता है। अद्वयावस्था में आत्मा का क्या स्वरूप है— वर्णनातीत है।

आत्मदर्शन पदार्थदर्शन तुल्य नहीं, पदार्थ अचेतन है, किन्तु आत्मा चेतन है, किसी के माध्यम से नहीं अपितु अपरोक्षानुभव से अपना दर्शन करता है—आत्मा। अपने माध्यम से आत्मदर्शन होता है, आत्मेतर पदार्थ देखे जाते हैं। आत्मेतर का दर्शन पदार्थ तो नहीं परन्तु दृष्टि-भेद से पदार्थ भिन्नता प्रतीत होती है। दृष्टिभेद अबोधोद्भूत है। भ्रम के कारण कुछ का कुछ दीखता है, भ्रम निवृत्त होते ही पदार्थ आत्मस्वरूप में प्रकट हो जाता है। दृष्टिभेद गोलक भेदक है, जो सापेक्ष है। भेदाभेद सापेक्षता के साथ ही श्रेणीपरक भी है, किन्तु वास्तविक नहीं।

सापेक्षता शब्द का अर्थ निर्भरता है, किसी भी स्थिति में किसी पर आश्रित रहना ही निर्भरता है, देश और काल परस्पर सापेक्ष है, इनके विषय में विभिन्न विश्वास अत धारणा हैं, किन्तु यह सत्य है कि जिस दशा में हम हैं वह सापेक्ष, सावधिक है, किसी देश में और किसी समय में हम हैं, दूर समीप होना देश की अवधि है; अब तब समय की अवधि है। भूत, वर्तमान, भविष्यत् समय के विभाजन हैं; जिनका नाम सापेक्षता है, क्योंकि वे सभी परम्पराश्रित हैं, एक दूसरे से पूर्णतया। स्वतन्त्र तथा निर्बद्ध नहीं, तब भी भूत, वर्तमान, भविष्यत् का व्यवहार होता है, मानो वे स्वतन्त्र हों; किन्तु वे हैं नहीं, परस्परबद्ध हैं। देश काल का अस्तित्व स्वतन्त्र नहीं हो सकता है, अन्यथा इन्हें कारण माना जायेगा जैसा कि कुछ मानते भी हैं, परन्तु ठीक नहीं।

फिलसफी प्रधानत: मीमांसापरक है, भौतिक अथवा अभौतिक तत्व की निर्बाध मीमांसा फिलसफी का लक्ष्य है। बौद्ध फिलसफी का विषय है। बुद्धि जहाँ तक हो सके तत्व का विवेचन करती है, घूम फिरकर उसी की मीमांसा करती है, यही फिलसफी का विषय है। बौद्धिक मीमांसा में फिलसफी पर्याप्त विकसित है। जिन पूर्वापर ऊहापोह की परिकल्पना भी कठिन है, वे फिलसफी में प्रचुरमात्रा में सुलभ हैं। जीवन से वास्तविक सम्बन्ध इसका नहीं, किन्तु दर्शन का सम्बन्ध ही जीवन से है।

किसी फिलसफर से प्रश्न की जिज्ञासा करना तो दूर रहा अपेक्षा भी नहीं होती है कि उसका अपना जीवन कैसा है, किन्तु दर्शनकार अथवा दर्शनवेत्ता के उपदेश श्रवण के पूर्व उसके जीवन का परिचय करना आवश्यक समझा जाता है, 'परोप-देशे पाण्डित्यं' निष्परिणामक सिद्ध होता है। जो आत्मसृष्ट से स्वयमेव अनभिज्ञ है, वह परप्रकाशक कैसे हो सकता है। आत्मानं विद्धि, यह परम्परा सार्वदेशिक है। उपनिषदों के अलावा अन्यत्र भी आत्मज्ञानपरक उपदेश सुलभ हैं। सुकरात ने भी दार्शनिकता का परिचय दिया, किन्तु प्लेटो तथा अरस्तु क्या थे, कहना कठिन है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिलसफर निरन्तर अपने विचारों को मीमांसा पूर्वक भिन्न-भिन्न प्रकार से गूँथता और गुन्दता जाता है। ब्रेड्ले ने हेगेल की समालोचना करते हुए लिखा है—दर्शन जीवन का अनुभव है, फिलसफी मस्तिष्क की सृष्टि है। दर्शन का मीमांसा-परक रूप ही फिलसफी है, एवमेव उनका व्यत्यय से एक दूसरा बन जाता है। केवल विषय की विवेचना फिलसफी है, उसका जीवन में उपयोग करना दर्शन का रस है।

अपने अस्पष्ट बोध की स्पष्टता हेतु निरन्तर येन केन प्रकारेण विवेचना करता रहता है, किन्तु जितना कोई सुलझाने का प्रयास करता है उतना ही वह उलझता जाता है और ऐसे शब्दों का उपयोग करता है जो सामान्य तथा नूतन प्रतीत होते हैं, किन्तु वे केवल छलमात्र हैं, उनका लक्ष्य दूसरों को व्यामोहित करना है। व्यस्त वाक्यों को समस्त वाक्यों में लिखना है। एवमेव ब्रट्रेण्ड रस्सल ने हेगेल के विषय में लिखा : उसका कोई विषय नहीं Monosyllable को Polysyllable। भारतीय वाङ्मय में इसका अभाव नहीं। अपने अज्ञान पर्दे खोलने के लिए दूसरों पर आरोप करते हैं। अतः ऐसे महानुभावों को यदि फिलसफर कहा जाता है अथवा कहा जाय तो हमारी कोई क्षति नहीं तथा आपत्ति भी नहीं।

भारतीय दर्शन आत्मदर्शन है, विशेषकर श्रौतदर्शन, वैज्ञानिक दर्शन नहीं, आत्मदर्शन को वैज्ञानिक कहना अथवा मानना नितान्त भ्रामक है, 'कर्मणि ज्ञानं विज्ञानम्', आत्मा किसी का कर्म नहीं, आत्मा स्वयमेव सर्वस्व है, आत्मा द्रष्टा है तथा अनुमन्ता है। विज्ञान का सम्बन्ध भौतिकता से है, निश्चित प्रयोगशाला में निश्चित उपकरणों से तत्व विशेष का विश्लेषण-संश्लेषण परीक्षण से है आत्मा की आत्मेर प्रयोगशाला नहीं, निश्चित देशकाल की परिधि नहीं, अतः भारतीय दर्शन को वैज्ञानिक कहना अबोध का परिचायक है। आत्मबोध का आधार श्रवण, मनन, निदिध्यासन है अन्यथा जीवन दंद्रम्यमाण रहता है। जिज्ञासु जीवन की जिज्ञासा ही नहीं सरलता के लिये निरन्तर अभ्यस्त रहता है।

दर्शन तथा फिलसफी का, यत्किञ्चित् भेद इस प्रबन्ध में व्यक्त किया गया, सम्भवतः पाठक लेखक का अभिप्राय भी समझ गये होंगे, किन्तु फिलसफी का प्रारम्भ कब, कहाँ और कैसे हुआ, शेष वक्तव्य है। फिलसफी का, जो सम्प्रति हमें सुलभ है, प्रारम्भ ग्रीस में हुआ और सर्वादि फिलसफर थे थेलस जिन्होंने सर्ग का कारण जल माना, तदारभ्य विभिन्न फिलसफर होते गये जिन्होंने अपने विचारों से सृष्टि के विभिन्न कारण कहे हैं, जिन तत्वों एवं विचारों से भारतीय भी कुछ सीमा तक सहमत हैं।

प्राच्य प्राङ्गण में दर्शन जीवन का अभिन्न अङ्ग है, चिन्तकों ने तत्त्वविद्या का विभिन्न प्रकार से विचारा, क्योंकि भारत में अनेक दर्शन हैं। दर्शन विचार सरणी ही नहीं जीवनचर्या भी है। दर्शन दो प्रकार के हैं, आस्तिक जो वेदप्रमाण को सर्वोपरि मानते हैं और दूसरा है नास्तिक, जिसे वैदिकप्रमाण मान्य नहीं। आस्तिक, नास्तिक के सम्बन्ध में भ्रामक-धारणा प्रचलित हैं, उनका समाधान अपरिहार्य है। शब्दप्रमाण तथा श्रुतिप्रमाण में भी भेद। बृहस्पतिवचन, बुद्धवचन, अर्हद्वचन शब्द हैं, किन्तु श्रौतप्रमाण वेदवाणी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामायण चरित्र चित्रण

"रामकालीन शासन व्यवस्था"

श्री स्वामी तीर्थानन्द जी

[गताङ्क से आगे]

राज्यव्यवस्थायें सम्बन्धित मनुष्य की प्रवृत्तियों का नियन्त्रण करना अत्यन्त आवश्यक है। मनुष्य का मूल स्वभाव है कि वह समुदाय बनाकर रहता है और मानुषिक प्रवृत्तियों के नियन्त्रण के लिए कुछ लोगों को नियुक्त किया जाता है— इसी का नाम है शासनप्रणाली।

रामकालीन लोग स्वधर्म, स्वकर्तव्य की उत्कट भावना द्वारा उत्पन्न नैतिक मूल्यों से अपना रक्षण करते थे। उस वक्त का समाज मानवता का आदर्श था। नैतिक मूल्य मनुष्य के रक्त में प्रवेश कर गये थे। इनको ध्यान में रखकर रामकालीन राज्यव्यवस्था चलती थी। जिन लोगों का नैतिक विकास न हुआ हो उनके हृदय में नैतिक मूल्यों के प्रति आदर उत्पन्न करने के लिए ही शासनसंस्था को निमित्त रूप में कार्य करना चाहिये। रामराज्य (Royal Democratic State) एक उत्कट लोकतन्त्र राज्य था। यदि उसकी कल्पना करना हो तो आज के इंगलेंड का लोकतन्त्र राज्य हमारे समक्ष है— अन्तर केवल राजा राम का है।

उत्कृष्ट चरित्रशाली व्यक्ति ही राज्याधिकारी बनने के योग्य हो सकता है। यह रामराज्य का पहला नियम था। इक्ष्वाकु कुल में राजा सगर का पुत्र असमंजय सर्व गुण सम्पन्न था। प्रत्येक दृष्टि से उसका जीवन परिपूर्ण था। परन्तु राज्य का अधिकारी होते हुए भी लोगों के विरोध करने पर पिता ने उसे राजा नहीं बनाया, साथ ही उसे वनगमन का आदेश दिया। यदि चरित्र गया तो सब कुछ गया। ऐसी उस काल के लोगों की मान्यता थी।

भरत को मामा के यहाँ से वापस लौटने पर जब पता चला कि राजा दशरथ ने राम को वन में भेज दिया और इसके पश्चात् उनकी मृत्यु हो गई। तब वह रोने नहीं बैठा। उसने कैकेयी से प्रश्न करना आरम्भ किया। राम को बन में भेजने का दशरथ को भी क्या अधिकार था ? किस कारण से राम को वन में भेजा ? क्या राम ने अकारण किसी को मारा है ? क्या राम ने चोरों की तरह किसी का धन लूटा है ? किसी परस्त्री की ओर राजपुत्र का मन आकृष्ट हुआ था ?" जो यह न होता तो 'कस्माल्य दंडकारण्ये भ्राता रामो निर्वासिनः।'

इस प्रकार मंत्रिमंडल प्रजा-नियमन करता था। उसके ऊपर राज्य सत्ता, उसके ऊपर अष्ट ऋषिमण्डल और उसके ऊसर शाश्वत नैतिक मूल्य। अर्थात् वास्तव में राज्य का संचालन नैतिक मूल्यों के हाथ में था।

रामराज्य में अराजकता की ओर प्रत्येक व्यक्ति यह अनुभव करता था कि वह स्वयं राजा है। इसका नाम 'रामायण' और इसीलिए रामराज्य अलौकिक है। यह थी रामकालीन शासन व्यवस्था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"रामकालीन अर्थव्यवस्था"

अर्थशास्त्र के सिद्धान्त :— "पहले माँग, बाद में पूर्ति", यह अर्थशास्त्र का नियम है। परन्तु हम आज बिल्कुल विपरीत वर्णन करते हैं। मनुष्य अर्थशास्त्र में बड़े-बड़े शब्दों का प्रयोग करता है। परन्तु मनुष्य के स्वभाव की मूर्खता के कारण "पहले पूर्ति, बाद में माँग", निर्माण करके अर्थशास्त्र के मूल सिद्धान्तों पर कुठाराघात कर डाला है। और इस सम्बन्ध में अर्थशास्त्र नियन्त्रण नहीं कर सकता है, क्योंकि अर्थशास्त्र की दृष्टि से यह उसका अपना विषय नहीं है। तर्कशास्त्र को छोड़कर यदि अर्थशास्त्र की रचना की जाये तो उसे शास्त्र कौन मानेगा ? अर्थशास्त्र कई स्थानों पर ऐसे भयंकर विधान उपस्थित कर देता है और सामान्य पुरुष को जटिल समस्या में डाल देता है, मन में शंका निर्माण हो जाती है कि उसे शास्त्र कहा जाय या नहीं। शास्त्र कहीं मनुष्य को उलझन में डालता है ?

उदाहरणार्थ — (Price must be the function of labour and labour must be the function of labour)

यह कैसा तर्कशास्त्र ? शङ्कराचार्य कहते हैं कि बुद्धिरूपी कसौटी पर घिस कर Reasoning द्वारा परीक्षा कर लो। भगवान् ने मनुष्य को अपनी बुद्धि गिरवी रखने के लिये प्रदान नहीं की है।

(His with Our Judgement as with our matches. None gres right but every onr thinks himself to be Correct.)

आदर्श अर्थव्यवस्था में यह चार बातें मुख्य होती हैं —

(१) प्रत्येक व्यक्ति को उद्योग मिलना चाहिए।
(२) उद्योग योग्यता के अनुसार होना चाहिए।
(३) उद्योग के लिए मुफ़्त शिक्षण मिलना चाहिए।
(४) जितनी आवश्यकता हो उतना ही उत्पादन होना चाहिए।

यह चारों बातें रामराज्य में प्रत्यक्ष दिखाई पड़ती थीं और इसलिए तो लोगों के जीवन में निश्चिन्तता थी।

आज के अर्थशास्त्रियों के समक्ष तीन प्रश्न राक्षस की भाँति खड़े हुए हैं —

(१) इच्छाओं की पूर्ति के लिए उत्पादन।
(२) उत्पादन के लिए उपयोगी श्रम की पूर्ति।
(३) उत्पादित वस्तुओं का वितरण एवं आदान-प्रदान।

उस काल में स्पर्धा नहीं थी। वृत्ति संकरता एक अपराध समझा जाता था। और उसके लिये मृत्यु दण्ड की सजा दी जाती थी। वृत्ति संकरता के कारण ही बेकारी बढ़ती है। उस समय के लोग अर्थशास्त्र का अभ्यास करते थे। संन्यासी वर्ग कमर कस बैठे थे कि समाज की सेवा की जाय। संक्षेप में अर्थशास्त्र को वस्तुतः शास्त्र बनाते के लिए जो-जो चाहिए वो सब रामकाल में था। व्यक्तिगत जीवन में आत्मविश्वास, उद्दयोग की निश्चितता, स्पर्धा का नियन्त्रण, वासना पर अंकुश और विनियोग पर पूर्ण विचार—इन सबके कारण रामकालीन अर्थशास्त्र एक दिव्य एवं सफल शास्त्र था।

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय—

संसार क्योंकि सापेक्ष है, इसीलिये इस सापेक्षिकता को दृष्टिगत करते हुए इसे उस सिक्के की तरह बतलाया जाता है जिसके दो पहलू होते हैं। अध्यात्म आत्मज्ञान के माध्यम से सापेक्ष में निरपेक्ष की ओर संकेत करता है तथा वही निरपेक्ष-तत्व को ही मानव जीवन के लक्ष्य के रूप इसलिये घोषित करता है क्योंकि उस वास्तविकता को जाने बिना, व्यक्ति इस सापेक्ष तत्व से अपने को अलग नहीं कर सकता और जब तक उस तत्व रहित स्थिति को, जिसे गीता "आत्मन्येवात्मनातुष्टः" के रूप में स्वीकार करती है, प्राप्त नहीं करता तब तक अभाव उसे घेरे रहता है और वही अभाव उसे दुःख, सन्ताप, विषाद आदि प्रतिकूल व अनुकूल वेदनायें देता रहता है।

परन्तु सामान्य व्यक्ति जहाँ जीता है अपने व्यवहार में वहाँ वह इस बात से बिल्कुल अनभिज्ञ सा है या इस सापेक्ष जगत् के स्वभाव को स्वीकार नहीं करता। उसका समस्त संघर्ष भौतिक सुखों में दुःख राहित्य को ढूँढता है, ऐसे जन्म को ढूँढता है भौतिक स्तर पर, ऊपरी सतह पर जो मृत्यु भय से मुक्त हो। यह वेदान्त के व्यवहारवादी, व्यावहारिक वेदान्त के प्रचारक सन्त इस बात को स्वीकार नहीं करते। यही कारण है कि स्वामी राम जीवन-सिद्धान्तों की स्वीकृति रसायन-शाला के निष्कर्षों की तरह, जो प्रयोगशाला में परीक्षित हों, कराना चाहते हैं और जब इस वैज्ञानिक विधि से देखते हैं तो हमारी तर्करहित सामान्य-धारणाएँ टूटने लगती हैं। हमें लगता है कि व्यवहार में हम त्रुटि पर हैं, कहीं न कहीं गलती कर रहे हैं हम। लेकिन यह जानते हुए भी, व्यवहार-सिद्ध होते हुए भी, कि मृत्यु अवश्यम्भावी है, जो पैदा हुआ है वह मरेगा अवश्य, हम इस व्याप्ति से अपने को फिर भी अलग मानते हैं। कितनी बड़ी आत्मवंचना की स्थिति है। हमेशा अपने तुच्छ व्यक्तित्व को बचाने का प्रयास, जो विकास के लिये, उन्नति के लिये घातक है हम करते हैं, और चाहते हैं अपने आदर्शों को पाना। पहला चरण आत्मविश्लेषण का, हमारा ठीक नहीं है, पर विश्वास है अन्तिम सोपान की फलभूता स्थिति की प्राप्ति हो जायेगी।

आत्मोद्धार, आत्मोन्नति के लिये अन्याश्रित होना क्योंकि हमारे मानस जगत् में गलत ढंग से प्रविष्ट कराया गया है, इसीलिये तो अपने तर्कों के आगे कृष्ण द्वारा गीता में प्रतिपादित स्वयं से स्वयं के उद्धार की बात हमारे अन्तर् को नहीं छूती जो कि आदर्श नहीं, पूर्णतः व्यावहारिक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"आश्रम समाचार"

गरीब दासीय आश्रम के संचालक डा० स्वामी श्यामसुन्दरदास जी महाराज, रामचरित के मधुर प्रवक्ता श्री माधवाचार्य जी, पुजारी रामचरणदास जी महाराज, स्वामी हंसप्रकाश जी महाराज आदि महापुरुषों की उपस्थिति में ब्रह्मलीन स्वामी हरिओ३म् जी महाराज की पुण्यस्मृति में आयोजित त्रिदिवसीय निर्वाण दिवस में, जो आपके ही तत्वाधान में राजपुर आश्रम पर सम्पन्न हुआ, ब्रह्मलीन शब्द के व्युत्पत्तिपरक व प्रचलित अर्थों पर अपने विचार प्रकट करते हुए महापुरुषों के विभिन्न गुणों पर महाराज श्री परमाध्यक्ष आचार्य स्वामी अमरमुनि जी महाराज ने प्रकाश डाला। आश्रम पर ही निवास करते हुए अमेरिका से विभिन्न धार्मिक संस्थाओं के अध्ययनार्थ आये हुए पाँच व्यक्तियों के प्रतिनिधिमण्डल के साथ आपने विभिन्न व्यावहारिक पक्षों पर अपने विचार प्रस्तुत किये तथा अद्वैत वेदान्त व स्वामी राम का भावयुक्त साधनामय दृष्टिकोण किस प्रकार वर्तमान नैतिक व विभिन्न समस्याओं का विश्लेषण तथा उत्तर देता है, इसको वैचारिक रूप में श्रद्धेय ने उनके समक्ष प्रस्तुत किया।

तदनन्तर दिनांक १२ दिसम्बर को नटियाड, बड़ौदा आदि स्थानों पर रामप्रेमियों के भाव-ज्ञान उभयक्षेत्रों पर रामवर्षा करते हुए उनके अन्तर् में अव्यक्त बीजों को प्राकट्य, व्यक्त होने हेतु आपने संस्कारित किया।

उपरोक्त स्थानों का परिभ्रमण करते हुए आप बम्बई हरिकुञ्ज में पहुँचे, जहाँ एक मास से भी अधिक समय तक निवास कर दैनिक सत्संग में आपके द्वारा वेदान्त के विभिन्न सिद्धान्तों का सरलभाषा में आध्यात्मिक चरित्रों के आधार पर आख्यान हुआ।

बम्बई से पूना, कलकत्ता, दिल्ली होते हुए आपका राजपुर आश्रम पर आगमन दिनांक ४ फरवरी की प्रातः हुआ। रविवारीय सत्संग में अपनी अनुभूतियों को रामप्रेमियों के समक्ष रखते हुए आचार्यप्रवर ने आध्यात्मिक पथ की ओर विपत्तियों के कारण रुक रहे पगों को आगे बढ़ने के लिये प्रेरित किया।

आश्रम का वातावरण इस समय शीत-प्रधान है। भगवान् भास्कर भी शीत की अनुभूति करते हुए अधिकतर रुई के समान दीखने वाले मेघमण्डल के पीछे छिपे शीतलहर से अपने को बचाये रखते हैं।

ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी गोविन्दप्रकाश जी महाराज की स्मारिका समाधि का कार्य भी राजपुर आश्रम पर प्रारम्भ हो गया है।

फरवरी के प्रथम सप्ताह से रूपनगर, दिल्ली में महाराज श्री के प्रवचनों का कार्यक्रम होगा।

— सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्याग

कामना से रहित कर्म ही सर्वोत्तम त्याग अथवा पूजन है।

* * *

जिस प्रकार मधु में फँस जाने पर मक्खी अपनी टाँगें धीरे-धीरे परन्तु दृढ़तापूर्वक मधु से साफ कर लेती है, उसी प्रकार व्यक्तियों, नाम-रूपों की आसक्ति का एक एक कण हमें अपने से दूर करना होगा।

* * *

एक एक करके हमें अपने सम्बन्धों को काटना होगा, बन्धनों को यहाँ तक तोड़ना पड़ेगा कि जब अन्तिम अनुग्रह के रूप में मृत्यु सामने आवे, तो हम सभी अनिच्छित पदार्थों को त्याग कर विजयी हो जायँ।

* * *

त्याग को ही हिन्दू ज्ञान कहते हैं; त्याग और ज्ञान एक ही वस्तु हैं, दो नहीं।

* * *

जो ज्ञान त्याग का पर्यायवाची है वह सत्य का ज्ञान है, वास्तविक आत्मा का ज्ञान है, तुम्हारे वास्तविक स्वरूप का ज्ञान है। यही ज्ञान त्याग है, इस ज्ञान को प्राप्त करो और आप त्यागी हो।

—स्वामी राम

बुक पोस्ट

ग्राहक संख्या 534

श्री/श्रीमती ... ...

स्थान ... ...

डाकखाना ... ...

जिला ... ...

मासिक पत्र—

"राम-सन्देश"

स्वामी रामतीर्थ मिशन

राजपुर, देहरादून (उ. प्र.)

Pin- 248009 भारत.

स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून (उ० प्र०) के लिए प्रकाशक स्वामी अमर मुनि द्वारा शहन्शाही सर्वहितकारी प्रेस, राजपुर (देहरादून) में, मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम-सन्देश

मई १९७९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकेतिका

विषय	लेखक	पृष्ठ
जीवनमुक्ति	स्वामीराम	१
ग्रहस्थाश्रम और आत्मानुभव	स्वामीराम	२
प्रवचन	स्वामी हरिॐजी महाराज	४
खुश रहो	पं० खुशदिल	७
रामचरितमानस में राम के चारित्र का आदर्श	दिवेश त्यागी	८
जीवन एक चित को चित्रित करना है गणित के प्रश्न को हल करना नहीं	प्रे० भारतबन्धु शर्मा	१३
सत्य प्रेरक कथा—सिकन्दर एवं साधु की निर्भयता, अपूर्व त्याग एवं आत्मविश्वास	ब्रजेश	१५
रामायण चरित्र चित्रण	स्वामी तीर्थानन्द 'अज्ञ'	१६
हिन्दू धर्म के पक्ष में	स्वामी विवेकानन्द	१९
चांदनी फैली गगन में	"बच्चन"	२४
शुभ सूचना		२५
आश्रम समाचार		२६

संस्थापक—
ब्रह्मलीन स्वामी हरिॐ जी महाराज
संवर्धक—
ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज
व्यवस्थापक—
स्वामी अमर मुनि जी महाराज

सम्पादक—
काका हरिॐ "निर्द्वन्द्व"

आजीवन सदस्यता शुल्क—
भारत में — १०० रु०
विदेश में — ५०० रु०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्र के हित के लिए प्रयत्न करना ही विश्व की शक्तियों अर्थात् देवताओं की आराधना है'-स्वामी राम

वेदान्त, अध्यात्म, संस्कृति, धर्म एवं भक्ति का सजग सन्देशवाहक
तथा स्वामी राम के आदर्शों का एकमात्र लोकप्रिय मासिक—

राम सन्देश

वेदोपनिषदां तत्त्वम् सत्यं नित्यं सनातनम् ॥
तत्सर्वं "रामसन्देशे" पत्रेऽस्मिन्नवलोक्यताम् ॥

| वर्ष २८ अंक ५ | राजपुर—देहरादून—मई १९७९ | वार्षिक भेंट १०) एक प्रति ८५ पैसे |

जीवन-मुक्ति

ऐ मौत !
बेशक उड़ा दे मेरे इस
एक जिस्म (तन) को। मेरे और
अजसाम (तन) ही मुझे कम नहीं। सिर्फ चाँद
की किरणें, चाँद की तारें पहनकर चैन से काट सकता
हूँ। पहाड़ो नदी-नालों के भेस (वेष) में गीता गाता फिरूँगा। बहरे-
मव्वाज (समुद्र की तरंगों) के लिबास (वस्त्रों) में मैं ही लहराता फिरूँगा।
मैं ही बादे—खश—खरांम (मन्दस्पन्द वायु) नसीमें-मस्तानागाम (मस्त चाल
पवन) हूं। मेरी यह सूरते-सैलानी गतिशील मूर्ति (हर वक्त रवानी) गति
में रहती है। इस रूप में पहाड़ों से उतरा, मुरझाते पोधों को ताजा
किया। गुलों (पुष्पो) को हँसाया, बुलबुल को रुलाया,
दरवाजों को खटखटाया, सोतों को जगाया,
किसी का आंसू पोंछा, किसी का
घूंघट उड़ाया। इसको
छेड़, उसको छेड़।
वह गया। न कुछ साथ रक्खा, न किसी के हाथ आया।"

—स्वामी राम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गतांक से आगे—

गृहस्थाश्रम और आत्मानुभव

(ता० १ फरवरी १९०३, रविवार, सन्ध्या—समय)

—स्वामीराम

वेदान्त की दृष्टि में स्वाभाविक मार्ग तो यही है कि जिसके साथ आपका सम्बन्ध हो, उसी के साथ एकता अनुभव करना आरम्भ करो। जो आपके प्रियतम हों, उन्हीं में आप अपने को लीन कर दो। अपने हित को उनके हित में लीन कर दो। सब शरीरों को मिलाकर एक कर दो। सबों को मिलकर एक धारा—प्रवाह बन जाने दो, और फिर अनुभव पर अनुभव प्राप्त करते जाओ। तदन्तर दूसरे परिवारों को लो और क्रमशः उन्नति करते हुए सब परिवारों को अपना शरीर बना लो। जब आप सब व्यक्तियों को अपना शरीर समझ लोगे, तब आप परमात्मा के साथ एकता अनुभव कर सकोगे, तब आप प्रत्येक को अपने साथ ले जा सकोगे।

ईसाइयों की धर्म—पुस्तक (बाइबिल) में शिष्य सेंट जोन [Saint Jolru] के सम्बन्ध में हम पढ़ते हैं कि हजरत ईसा उससे प्रेम करते थे। ईसा समस्त संसार से प्रेम करते थे। 'ईसा ने शिष्य से प्रेम किया।' इस कथन को थोड़ा बदल देने से यों हो जाता हैं कि शिष्य ने ईसा से प्रेम किया। इसके द्वारा ईसाई सिद्धान्त—ईसा द्वारा मुक्ति का मूलसूत्र मिल जाता है।

'आघात - प्रत्याघात बराबर और परस्पर विरोधी होते हैं।' (Action and reaction are equal and opposite) यदि ईसा अपने शिष्य से प्रेम करता था, तो शिष्य ने भी ईसा से अवश्य प्रेम किया होगा। "जोन" को यदि ईसा के प्रति भक्ति न होती तो "आघात और प्रत्याघात बराबर और परस्पर विरोधी' होनेवाले अनिवार्य नियम के अनुसार ईसा सदा उससे प्रेम नहीं कर सकता था। ईसा तत्त्वदर्शी था। वह जगत—पिता और सर्व से अभिन्न था। वह एक ऐसा मनुष्य था जिसने अपने मन, बुद्धि और अहंकार एवं व्यक्तित्व को परमात्मा में लीन कर दिया था।

जोन पीटर पाल अथवा अन्य कोई भी शिष्य ईसा के साथ अपना सम्बन्ध जोड़ कर ईसा की भक्ति करके (क्योंकि भक्ति और प्रेम द्वारा ही सम्बन्ध होता है) एवं उसके साथ एकता अनुभव करके स्वभावतः ही ईसा का ईशत्व भोगता है।

कल्पना करो कि हमारे पास एक पदार्थ हैं जिसमें बिजली भरी है। यदि इस विद्युतमय पदार्थ के साथ कोई दूसरा पदार्थ जोड़ दिया जाय तो इस विद्युतमय (electrified) पदार्थ की बिजली उस विद्युत हीन पदार्थ में सहज ही चली जायेगी।

इसी प्रकार उस समय के शिष्यों को ईसा की भक्ति के द्वारा ईसा की प्रकृति प्राप्त होना अनिवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। और इस प्रकार यदि ईसा अपना उद्धार करता है, तो उसकी भक्ति के द्वारा दूसरे का उद्धार अवश्य होता है।

वेदान्त के अनुसार तब तक कोई प्राणी ईश्वरानुभव नहीं कर सकता, जब तक उसका अपना आप पूर्णतया विश्व-प्रेम में परिणत न हो जाय और जब तक समस्त विश्व को ही वह अपना शरीर न समझ ले।

आपको याद होगा कि आत्मानुभव वा तत्व-साक्षात्कार की यह पहली सीढ़ी है। पहले समस्त जगत् हो जाना है, फिर दूसरी सीढ़ी उस जगत्रूप से ऊपर उठना है। एक दिन राम ने अपने व्याख्यान में दो प्रकार के अध्यासों का वर्णन किया था-एक स्वरूपाध्यास और दूसरा संसर्गाध्यास।

स्वरूपाध्यास के कारण नाना व्यक्तित्व एवं उनमें परस्पर भेद-भाव की कल्पना उत्पन्न हो आती है, और इसी से वह अन्धापन व अन्धकार उत्पन्न हो आता है जिसके कारण मनुष्य प्रत्येक में ईश्वर को नहीं देख पाता। यही उस मानसिक व्याधि का हेतु है, जो आपको विश्व के सब पदार्थों में एकत्व का अनुभव करने नहीं देती। संसर्गाध्यास बाह्य विषमता है, नाम-रूप का भ्रम है।

इस प्रकार साँसारिक मनुष्य को इन दोनों प्रकार के अध्यासों को दूर करना होगा। सबसे पहले तो समस्त वस्तुओं, व्यक्तियों में एकता का अनुभव करना आवश्यक है। जिस मनुष्य को इन दोनों प्रकार के अध्यासों को जीतना और दूर करना होता है, उसे पहले अपने को ही समस्त विश्व के प्रत्येक पदार्थ का आत्मा अनुभव करना होता है। वह अपनी आत्मा को ही जगत् के सारे मनुष्य वर्ग सारे वनस्पतिवर्ग, समस्त वृक्ष, सरिता, कीट-पतग आदि की आत्मा समझता और अनुभव करता है। अनुभव की यह एक अवस्था है। ऐसे मनुष्य को आरम्भिक अवस्था में अपने पुत्र-मित्र के साथ एकता अनुभव करने से सहायता मिलती है। जब वह सारे संसार के साथ अपनी एकता, अभेदता अनुभव करता है, तो यह अनुभव की पहली अवस्था है। दूसरी अवस्था वह है, जब कि सभी बाह्य नाम रूप और आकार अन्तर्द्धान हो जाते हैं, जहाँ यह यह माया समूल नष्ट हो जाती है, और तब सारे संसार का, जो शरीर रूप था, बाध किया जाता है, और वह आत्मा में विलीन हो जाता है।

आरम्भ में हमको समस्त विश्व अपना शरीर अनुभव करना होता है। तब जिस विश्व को अपना शरीर अनुभव किया होता है, उस विश्व का भी बाध किया जाता है, अर्थात् वह भी रद्द किया जाता है, और वह उस सत्य स्वरूप आत्मा में जो मेरा अपना आप है, विलीन हो जाता है।

आत्मानुभवी मनुष्य पहले समस्त जगत् बनता है, और तब जगत् का उद्धार करता है; इस प्रकार वह समस्त विश्व का उद्धारक (Saviour) बन जाता है। अतः तुम अपने उद्धारक आप हो, ऐसा वेदान्त का तात्पर्य्य है। क्रमशः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीता भवन, अमृतसर में दिया गया स्वामी हरि ओ३म् जी महाराज का प्रवचन

अपने मजे की खातिर गुल छोड़ ही दिये जब।
रूहे जमी के गुलशन मेरे ही बन गए सब॥

जितने जुबाँ के रस थे, कुल तर्क कर दिये जब।
जायके जहाँ के सारे मेरे ही बन गए सब॥

अपने लिये जो छोड़ी ख्वाहिश हवा खुशी की,
बादे सबाँ के झोंके मेरे ही बन गए सब।

निज की गर्ज से छोड़ा सुनने की आरजू को।
सब रंग राग बाजे मेरे ही बन गए सब॥

आहा! क्या मजा है! मेरा नहीं है कुछ भी।
दुनियां के जिस्म लेकिन मेरे ही बन गए सब॥

माताओं, देवियों व सज्जनो! हम सबको दृढ़ प्रतिज्ञा और निश्चय के आधार पर किसी स्तर पर स्थिर होना है और अपने इसी जीवन में उस परम लक्ष्य की प्राप्ति करनी है। स्वामी राम कहते हैं— "तुम सोचो, तुम समझो, तुम करो और अवश्य तुम फिर भी गिरोगे। प्रतिबाधाओं से घबराने की आवश्यकता नहीं। फिर उठो और फिर चलो। गिरा बच्चा उठ कर इधर उधर देखता है मुझे गिरे किसी ने देखा तो नहीं। हम अपनी भावनाओं से गिर जाते हैं। कोई हमारे इस पतन भाव को समझे ही न, इस तरह उठ कर आगे बढ़ें। यह नहीं कि सालों साल गिरे रहें, उठें ही न, जागे ही न।

स्वामी राम आनन्द का कुछ भावार्थ बताते हैं कि आनन्द क्या है— छोटा बच्चा शिशु है। उसका सारा आनन्द गोदी में भरा पड़ा है। उसे दुनियां की Property (जायदाद) से किसी प्रकार का आसक्ति नहीं। धीरे-२ उसका आनन्द गुड्डियों पटोलों में चला जाता है। फिर स्कूल में, फिर कालिज में। परन्तु विद्यानन्द उच्च डिग्री लेने पर भी अच्छे आनन्द का रूप धारण न कर सका। विद्या ग्रहण कर Service (नौकरी) की तालाश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करता है। आनन्द का केन्द्र अब धन बन जाता है। परन्तु आनन्द की छठी भूमिका में व स्त्री में लौट जाता है और फिर स्त्री सुख विषय चिन्तन में लग जाता है। उस विषय के सुख झकोले थोड़े दिन लेता है। फिर आनन्द का केन्द्र बच्चा बनाता हैं। यात्रा ही यात्रा करता चला जाता है। हैनरी डारबिन यूरोपियन फिलासफर लिखते हैं दुनियां के अंधे लोग सुख की तलाश सांसारिक पदार्थों के अपनाने में, धन Property (जायदाद) में, मान में करके आनन्दित होना चाहते हैं परन्तु आनन्द यहां नहीं है।

"दे दे हर बार दे हर श्वास दे।" Hapiness is in giving and serving others आनन्द दूसरों को देने, सेवा करने म है। यही वेदान्त का रहस्य हे। World (संसार) के Religions धर्मों को स्वामी राम ने win किया (जीता)।

प्रार्थना क्या हैं ? धर्म के लिये पर अर्थ होते चले जाना ही प्रार्थना का स्वरूप है। और कोई स्वरूप नहीं। यह पराकाष्ठा की प्रार्थना है। हमारी प्रार्थना पूर्ण क्यों नहीं होती ? श्रुति माता तो पुकार-२ कर कह रही है कि वह तेरे अन्दर है। Wireless (वायरलैस) ने सिद्ध किया। यह मेरी आवाज कोने-२ में जाती है तो क्या परमात्मा ही इतना बहरा है जो न सुने ? बल्कि भावना की गति और भी तीव्र है। शब्द सूक्ष्म है। हमारी प्रार्थना का तरीका ही गलत है। प्रार्थना का अर्थ है देना, समर्पण होना।

जो वस्तु जहां से उत्पन्न होती है वही समाप्त होती है। जो भावना जहां से उठती है, वही जाकर समाप्त होती हैं। जल की एक बूंद पृथ्वी से उठती है Mount ऐवरैस्ट पर भी जाकर उसे फिर पृथ्वी पर बरसना ही है। इसी प्रकार हमारी इन्द्रियों द्वारा जो भी बाहर जा रहा है, प्राणियों के साथ जैसा भी व्यवहार हम कर रहे हैं, लौट कर फिर हमारे पर ही वापिस आता है। इसी आधार पर ब्रह्म चिन्तन और प्रभु भक्ति को रखा गया है। चिन्तन करने वाला परब्रह्म स्वरूप होता चला जाता है।

"ध्यान-२ तद्रुपता" As a man thinks so does he become. जैन्स सैलन फिलासफर था Successful (सफल) हुआ। महापुरुष जो वस्तु प्रयोग में लाते हैं, सिद्ध करके दुनियां में announce (ढिंढोरा) कर देते हैं, सत्संग का महात्म्य क्यों लिखा है ? घड़ी दो घड़ी ध्यान उधर बनता चला जाता है। मनुष्य की, धन दारा तो चलती आ रही है परन्तु एक अज्ञान वृत्ति भी रख दी गई है। ताश खेलते हैं, हार जीत लगी रहती है। टीमें इंगलैंड खेलने जाती है। यदि विरोधी पार्टी न होती तो खेल का कोई मजा ही न था। एक मिनट में ball (बाल) गेंद परे चला जाता है। यद्यपि अज्ञान है नहीं परन्तु अज्ञान न होता तो ज्ञान कोई चीज न थी। जैसे ताश में न हार है न जीत झूठा बादशाह, झूठी मेम इत्यादि होते हैं—अज्ञान न होता तो ज्ञान कोई वस्तु न थी, रात को दिन आच्छेदन करता है, जवानी को जरा, जरा को मृत्यु, मृत्यु को भय इसी तरह ज्ञान-अज्ञान भी दो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चीजें हैं। लेकिन तुम्हारा चित्त दुःखी क्यों होता है? तुम तो धन के जुवारिये से भी कमजोर हो। एक जुवारिये के अन्दर cucouragement [साहस] होती है, इसी तरह भगत को बनना है। जितने दुःख अधिक आते हैं, शौक अधिकाधिक बढ़ता जाता है। ताश वाले को ताश खेलने दो, जुए वाले को जुआ लेकिन तुम को तो भगवान का दाव लगाना है। न जाने किस आत्म समर्पण का ऐसा दाव लग जाए कि ....।

स्वामी राम इन्द्रियों के विषयों में लिप्त हो परमात्मा को नहीं भूलते थे। वह जब गुलजार में से गुजरते तो नाक नहीं सिकोड़ लेते थे। योग-वाशिष्ट कैसे बना? सप्तलोकों में होते हुए भी वशिष्ट भगवान् मृतलोक वास करने क्यों आए? राजा रघु को वरदान देते हैं— तू दशरथ के रूप में मृतलोक में आ और राम रूप में आऊंगा वहां मुझे और भी एक दो काम करने हैं। रावण का भी उद्धार करना है और राक्षसों का हनन भी। वशिष्ट जी को कहा आप सूर्य कुल में पुरोहित बन कर आवें। वे कहने लगे— बड़ी मुश्किल से मैंने संसार से पल्ला छुड़ाया। परन्तु भगवान कहते हैं—"मम् माया दुरत्यया"। आप बचपन में मुझे बता देना मैं आत्मा हूं। हम तो जब सूर्य आता है, धूप को पकड़ते हैं। प्रकाश स्वरूप हम धरती को समझते हैं और है सूर्य। अन्धकारमयी पृथ्वी का भाग प्रकाशवान हो जाता है और प्रकाशित भाग अन्धकारमय हो जाता है। इसी तरह जैसे कि पहले बताया आनन्द Travel [सफर] करता है। जीव आनन्द को वस्तुओं में तालाश कर रहा है और राम के लिये सेवा का टाईम आता है तो संशय विपर्यय में पीछे हट जाता है।

लड़के लड़कियां और दामाद क्यों प्रिय हैं? एकाग्रता कर आत्म-आनन्द उन पर आच्छादित कर लेता है। जिस पर भी एकाग्रता पूर्वक ध्यान देता है, वही चीज प्रिय हो जाती है। तूने ही इनको प्रेम दृष्टि डाल कर प्रिय बना रखा है। तेरा आत्म रूपी सूर्य उन पर चमक रहा है। चप्पे जमीन पर कुलें नष्ट हो जाती हैं आनन्द का केन्द्र किसे बनाना है? धन्य है वह जिसने आत्म आनन्द की force [शक्ति] कृष्ण, सन्त व गुरु पर छोड़ रखी है। जिसने अपनी force reflection [शक्ति का झलक] दुनियां के पदार्थों पर छोड़ रखी है, उससे बढ़ कर कौन भाग्यहीन है!

प्र०—हम धर्म में किस प्रकार दृढ़ रह सकते हैं?

उ०—धर्म में दृढ़ रहने के लिए पराश्रय छोड़कर स्वाश्रय में सत्याश्रम लेना होता है। धर्म बाहर से नहीं स्वयं में ही है। धर्म जीवन है, शाश्वत है। सुखोपभोग में, किसी प्रकार के संचय में संयमित होना और संयमित शक्ति एवं संचित सम्पत्ति से सभी का हित साधना व्यावहारिक मानव-धर्म है। स्वयं में बुद्धि को स्थिर रखते हुए अखंड व्यापक सत्ता का अनुभव करना पारमार्थिक धर्म है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खुश रहो

पं० खुशदिल

कह रहे हैं चांद सूरज और तारे खुश रहो।
गंगा और यमुना के भी कहते हैं धारे खुश रहो।
है खुशी का ईक समन्दर जिसको कहते हैं खुदा,
तुम भी बन जाओ समन्दर के किनारे खुश रहो।
आज तक धरती पे आये जितने रूहानी बशर,
बस यही फरमा गये सारे के सारे खुश रहो।
जो भी इस दुनियां में आया है तो इक दिन जायेगा।
मस्त रह के देखो कुदरत के नजारे खुश रहो।
वेद की, कुरआन, बाईबिल की है तालीम ये,
जैसी हालत में खुदा रखता है प्यारे खुश रहो,
मुस्कुराओ और लगाओ कहकहे जी खोलकर।
खुद बखुद दुख खत्म हो जायेंगे सारे खुश रहो।

जब खुशी का और गम का है तअल्लुक[१] मन से ही,
क्यों न फिर मजबूत मन हीं के सहारे खुश रहो,
देखकर हाले वतन भरते हो ठंडी आहें क्यों।
सर्द आहों से करो पैदा शरारे खुश रहो।
रोने, धोने, चीखने चिल्लाने से क्या फायदा,
सीखो "खुशदिल" से मुसर्रत[२] के इशारे खुश रहो।

---

[१] सम्बन्ध [२] आनन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"रामचरित मानस में राम के चरित्र का आदर्श"

-दिवेश त्यागी

गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित रामचरित मानस"में हमें राम के चरित्र में उदात्त गुणों का सर्वोच्च उत्कर्ष मिलता है। गोस्वामी जी ने उनके चरित्र में अनन्त सौन्दर्य, अनन्तशील और अनन्त शक्ति की प्रतिष्ठा की है। इसके अतिरिक्त धीरता, गम्भीरता और कोमलता भी उनमें सीमातीत है।

"रामचरित मानस" में कई स्थलों पर राम का दैवी रूप प्रदर्शित किया गया है। पग-पग पर राम की अलौकिकता का संकेत गोस्वामी तुलसी दास ने किया है। श्री रामचन्द्र को विष्णु का अवतार ही नहीं परब्रह्म भी माना गया है और इसी परब्रह्म ने अयोध्या में दाशरथि, राम के रूप में जन्म लिया। "रामचरित मानस" में अनेक स्थलों पर रामत्व का वर्णन ब्रह्मतत्व के रूप में हुआ है।

सारद शेष महेश विधि, आगम निगम पुरान।
नेति-नेति कहि जासु गुन, करहिं निरन्तर गान॥
एक अनीह अरुप अनामा।
अज सच्चिदानन्द परधामा॥
व्यापक विश्व रूप भगवाना।
तेहि धरि देह चरित कृत नाना॥

राम के मानवेतर रूप में शील, सौन्दर्य और शक्ति का सुन्दर समन्वय हुआ है। राम के अनन्तशील, सौन्दर्य को देखकर सभी मोहित हो जाते हैं।

दशरथ:- राम रूप गुन सील सुभाऊ।
प्रभुदित होइ देखि सुन राऊ॥

जनक :- मूरत मधुर मनोहर देखी।
भए विदेह विदेह बिसेखी॥

निषाद राज:- प्रभुहि बिलोकत अति अनुरागे।

चित्रकूट के कोल-किरात राम को देखकर, 'चित्र लिखे जनु जहं तहं ठाढ़े' रह जाते हैं। मुनि वृन्द 'सिय सौमित्र और राम' की छवि को देखकर अपने समस्त साधन सफल देखने लगे। इस प्रकार खर-दूषण की सेना तक उनके स्वरूप को देखकर ठिठक गई थी।

प्रभु विलोकि सर सकहिं न डारी।
थकित भये रजनीचर भारी॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसी प्रकार जलचर-वृन्द राम के दर्शनार्थ सागर-सेतु के दोनों ओर एकत्रित हो गये थे :—

देखन कहं प्रभु करुना कन्दा।
प्रकट भये सब जलचर वृन्दा॥

"मानस में राम का यह मानवेतर रूप मानवेतर होते हुए भी एक साधारण मानव के समकक्ष जान पड़ता है।

"रामचरित मानस" में हम अनेक स्थलों पर यदि राम में देवत्व के गुण पाते हैं तो साथ-२ उनमें ऐसी अनेक दुर्बलताएं भी पाते हैं जो उन्हें साधारण मानव के रूप में हमारे सम्मुख उपस्थित करती हैं। वस्तुतः राम के चरित्र की यही दुर्बलताएँ उनके चरित्र की विशेषताएं हैं और ये विशेषताएँ भले ही राम को देवत्व की श्रेणी में रखने वालों को उनकी दुर्बलताएं दिखालाई पड़े किन्तु एक साधारण नर की श्रेणी में रखने पर उनकी ये विशेषताएं "रामचरित मानस" में हमारे समक्ष एक अति उत्तम आदर्श प्रस्तुत करती हैं। उनकी चारित्रिक विशेषताएं निम्नलिखित हैं :—

उत्साह :- "रामचरित मानस" में राम के चरित्र में आदि से लेकर अन्त तक उत्साह का चरमोत्कर्ष मिलता है। अपनी शक्ति की स्वानुभूति ही उस उत्साह का मूल है जिसमें बड़े-बड़े दुःसाध्य कर्म होते हैं। बाल्यावस्था में ही जिस प्रसन्नता के साथ राम लक्ष्मण के संग गृह त्यागते हैं और विश्वामित्र के संरक्षण में रहकर अस्त्र-शस्त्र की शिक्षा प्राप्त करने के बाद विघ्नकारी विकट राक्षसों पर पहले-पहल अपना बल आजमाते हैं, वह उस उल्लास पूर्ण गुण का सूचक है; जिसे 'उत्साह' कहते हैं।

प्रारम्भ में राम जिस उत्साह से सुबाहु, ताड़का आदि राक्षसों का वध करते हैं, उसी उत्साह से वे आगे चलकर खरदूषण, रावण आदि पापिष्ठों का भी वध करते हैं।

असाधारण सद्भावना :- राम में असाधारण सद्भावना है। वे किसी पर बुरे भाव का आरोप करना जानते नहीं हैं। अवध-वासियों को लेकर आते हुए भरत पर सन्देह पूर्वक लक्ष्मण क्रोधित हो उठते हैं किन्तु राम उन्हें समझाते हैं :—

सुनहु लषन भल भरत सरीखा।
बिधि प्रपंच महं सुना न दीखा॥

भरतहि होइ न राजमद, विधि हरि हर पद पाइ।
कबहुं कि काँजी सीकरनि छीर-सिन्धु-बिनसाइ॥

राम की सद्भावना के फलस्वरुप राम के शील का वह प्रदर्शन हुआ कि कैकेयी का अन्तः करण अपनी कुटिलता का पूर्ण अनुभव करके पानी पानी हो गया।

आज्ञाकारिता राम माता-पिता के आज्ञाकारी पुत्र हैं। विमाता के सिखाये में आकर उनके पिता उन्हें—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वनगमन की आज्ञा देते हैं। वे उसे बड़ी प्रसन्नता से अंगीकार कर लेते हैं। पिता की आज्ञा शिरोधार्य कर राम चौदह वर्ष तक वनों में भटकते फिरते हैं। किन्तु उनके मुख से पिता के लिए एक भी कठोर वचन नहीं निकलता। पिता की आज्ञा पालन कर उन्होंने जो आदर्श प्रस्तुत किया वह विश्व भर में अद्वितीय है।

अटूट धैर्य राम का धैर्य सदैव एक सा रहता है। वे अपने स्वभाव की गम्भीरता को नहीं छोड़ते। अयोध्या को शोक-सागर में निमग्न कर वे हंसते हैं, सबको समझाते हैं, परन्तु चित्रकूट पहुँचकर :—

सुमिरि मातु पितु परिजन भाई।
भरत सनेह सील सेवकाई॥

"रामचरित मानस" के नायक राम को अटूट धैर्यवान दिखाया गया है। यहाँ तक कि वे सुख एवं दुःख में निर्लिप्त और निर्विकार रहते हैं। सुख और दुःख में समान बने रहना राम के चरित्र की प्रमुख विशेषता है। उनकी यह प्रकृति या चारित्रिक विशेषता उन्हें-"रामचरित मानस" के समस्त पात्रों से ऊंचा उठा देती है।

राम के स्वभाव में कोमलता एवं मधुरता का समन्वय :-

"मानस" के आदर्श नायक राम जहाँ धीर और शीलवान हैं वहीं वे कोमल हृदय एवं मधुर स्वभाव रखने वाले हैं।

सुनु सुरेश रघुनाथ सुभाऊ।
निज अपराध रिसाहिं न काऊ॥

राम अनिच्छापूर्वक अपना मन मार कर भी दूसरों का मन नहीं तोड़ते हैं। सीता और लक्ष्मण जब बहुत समझाने-बुझाने पर भी साथ चलने का आग्रह करने लगते हैं तब विवश होकर वे उनको साथ चलने की अनुमति या (स्वीकृति) दे देते हैं।

जब सीता, राम, लक्ष्मण वन पहुंच जाते हैं तब एक दिन सीता के आग्रह पर वे हिरण का आखेट करने चल पड़ते हैं और इसी बीच सीता का हरण कर लिया जाता है, रामचन्द्र को सीता की खोज करने में अत्यधिक कष्ट उठाने पड़ते हैं अन्ततोगत्वा सीता की खोज का परिणाम लंका-आक्रमण के रूप में होता है और यह सब केवल इसलिए होता है कि राम ने सीता के आग्रह पर उसका मन रखने के लिए तब उस हिरण का पीछा किया जबकि वे जानते थे कि वह मायावी राक्षस मारीच है।

उपर्युक्त प्रसंग राम के स्वभाव में कोमलता एवं मधुरता, नम्रता आदि होने का परिचायक है।

लोकनीतिज्ञ एवं कूटनीतिज्ञ राम

राम के चरित्र का एक पक्ष हमें आज्ञाकारी, अटूट धैर्यवान, शीलवान, उत्साही बनने की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेरणा देता है तथा हमारे समाज में एक उज्जवल आदर्श चरित्र प्रस्तुत करता है। परन्तु "मानस" के नायक राम के चरित्र के दूसरे पक्ष पर गौर करने से हमारा परिचय लोकनीतिज्ञ एवं कूटनीतिज्ञ राम से होता है।

चित्रकूट की सभा में राम का व्यवहार लोकनीति, धर्म और समस्त उदात्त भावनाओं का साकार रूप प्रस्तुत करता है। राम एक स्त्रीव्रती थे, स्वप्न में भी पराई स्त्री की ओर आंख उठाकर नहीं देखते थे। यह राम के चरित्र का एक और उज्ज्वल पथ है एवं आधुनिक काल के लिए एक महत्वपूर्ण आदर्श भी ?

राम एक महान कूटनीतिज्ञ थे इसका पता हमें तब चलता है जब वे वानरों से मित्रता करते हैं। विभीषण को अपने पक्ष में लेकर उससे लँका के दुर्विजय, दुर्गम किले पर विजय पाने का उपाय जान लेते हैं तथा उसी के माध्यम से लंका विजय करते हैं तत्पश्चात् रावण का राज्य विभीषण को सौंपकर कुशल कूटनीतिज्ञ होने का परिचय देते हैं।

विभीषण को लंका का राज्य मिल जाने के कारण प्रजाजन राम का गुण-गान करने लगे किन्तु इस प्रसंग में गोस्वामी जी ने "रामचरित मानस" के नायक राम में एक आदर्श नृप होने के लक्षण दर्शाये हैं। कदाचित कवि राजाओं के सम्मुख एक आदर्श उपस्थित करता है कि अपने राज्य की सीमा इतनी मत बढ़ाओ कि तुम सुचारू रूप से उसकी व्यवस्था ही न कर सको।

राज्य किसी वीर शासक को सौंपकर उस पर शक्ति से नहीं प्रेम से शासन करो। लंका विजय तथा विभीषण-राज्यारोहण के प्रसंग में राम का व्यवहार उनकी व्यवहार कुशलता तथा बुद्धिमत्ता का परिचायक है।

साधारण मानव के रूप में राम

साधारण मानव अर्थात वह मनुष्य जिसमें गुणों के साथ अवगुण भी विद्यमान हों। ऐसा मानव जो पाप भी करता हो और पुण्य भी ? यूं पाप और पुण्य की परिभाषा देना कठिन हैं :-

(एक कसाई के लिए हिंसा पुण्य का कार्य हो सकती है किन्तु एक ब्राह्मण के लिए यह कार्य पाप ही होगा) वस्तुतः उपर्युक्त वाक्यों से तात्पर्य यह है कि साधारण मानव मानव होता है मानवेतर नहीं।

किन्तु "रामचरित मानस" में राम के चरित्र से प्राप्त आदर्शों को देखकर किसी भी व्यक्ति को यह कहने में संकोच न होगा कि वे मानव नहीं मानवेतर थे किन्तु उनका यह दैवी रूप मानव मात्र के अत्यधिक निकट का है। वस्तुतः "रामचरित मानस" का उद्देश्य परब्रह्म राम और दाशरथि राम में सम्बन्ध स्थापित करना है। इसी उद्देश्य के कारण तुलसीदास ने मानस के नायक राम के चारित्रिक आदर्शों को साधारण मानवों के अति समीप रखा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री राम के चरित्र में हमें जहाँ एक आदर्श रूप मिलता है वही गोस्वामी जी ने उनके चरित्र को साधारण मनुष्य का चरित्र बनाने की भी चेष्टा की है। "रामचरित मानस" के अध्ययन के बाद हम यह पाते हैं कि जो राम घोर संकट के समय वज्र के समान कठोर रहने वाले हैं, वही राम प्रेम की हल्की सी ठेस लगते ही द्रवीभूत हो जाते हैं :-

कुलिसहु चाहि कठोर अति, कोमल कुसमहु चाहि।

यह तो हुई उनके प्रेम पूर्ण एवं कोमल हृदय होने की बात। किन्तु "मानस" में राम को एक वियोगी, विरही के रूप में भी प्रस्तुत किया गया है। "सीता हरण" के उपरांत राम पर्वतों पर, जंगलों में भटकते फिरे वे विरहाकुल होकर एक-२ पशु-पक्षी, पेड़-पौधे, फूल-पत्ती, लताओं आदि से अर्थात् समस्त जड़-चेतन से पूछते हैं कि :— "सीता को देखा है"।

"रामचरित मानस" में यह प्रसंग राम की विरह वेदना को व्यक्त करता है, कदाचित कवि ने इस प्रसंग की रचना कर राम को देवत्व को कोटि से मनुष्यत्व की कोटि में ला खड़ा किया है।

"मानस" का नायक दैवी शक्तियों से युक्त है किन्तु कवि ने उसे उसी प्रकार कठिनाइयों में उलझाया है, जंगलों में भटकाया है, जिस प्रकार एक साधारण मनुष्य अपनी कठिनाइयों से छुटकारा पाने हेतु एक घुटन का शिकार होता है। राम के सामने ये कठिनाइयाँ केवल इसलिए प्रस्तुत की गई जिससे उनका चरित्र एक उत्कृष्ट, आदर्श चरित्र बन सके।

उपसंहार राम समस्त उदात्त गुणों से युक्त महामानव थे। अपार सौन्दर्य, शील, शक्ति, सरलता नम्रता, स्नेह, आदरभावना, उदारता, निःस्वार्थता संकोच की भावना, असाधारणता, दानशीलता आदि उनके चरित्र के विशेष गुण थे। अनन्त शक्ति के साथ धीरता, गम्भीरता, और कोमलता "राम" का प्रधान लक्षण है। यही उनका रामत्व है।

वस्तुतः "रामचरित मानस" में राम एक आदर्श नायक के रूप में उल्लिखित हुए हैं। "मानस" में राम के चरित्र का सर्वाङ्गीण चरित्र हमारे समक्ष सहज और उच्च आदर्श प्रस्तुत करता है।

राम हमारी सभ्यता, संस्कृति आदि के एक महान और आदर्श नायक हैं। वे ऐसे मनुष्य हैं जो देवत्व और मनुष्यत्व के बीच के सेतु स्वरूप हैं अर्थात राम न तो पूर्ण मानव हैं और न ही देव उनका चरित्र अनिर्वचनीय है।

उनके चरित्र की विशेषताओं एवं उनकी आदर्शशीलता को प्रदर्शित करने वाला अपने आप में अनूठा और अद्वितीय ग्रन्थ है तुलसी कृत "राम चरित मानस" जो हमारे समक्ष राम के चरित्र का आदर्श प्रस्तुत करता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्य प्रेरक कथा

सिकन्दर एवं साधु की निर्भयता, अपूर्वत्याग एवं आत्म-विश्वास

(बल्लभ दास बिन्नानी 'ब्रजेश' साहित्यरत्न, साहित्यालंकार)

यूनान के सम्राट सिकन्दर ने सुन रखा था कि भारत में बहुत बड़े ज्ञानी, तत्वचिन्तक एवं सन्त रहते हैं। उनसे मिलने की उसकी बड़ी अभिलाषा थी। जब उसने भारत पर चढ़ाई की तब उसकी यह चाह पूरी हुई।

एक दिन सिकन्दर किसी वन की ओर चहल कदमी करते-करते बहुत आगे निकल पड़ा। कुछ दूर जाकर उ ने एक स धु को ध्यान की अवस्था में देखा। साधु के पास न कोई दामी कपड़े थे न गहने और न किसी प्रकार की कोई दिख ने को दौलत, फिर भी तेज का प्रकाश उसके मुख से ऐसा फूट रहा था, जैसे वे कोई सम्राट हों।

सिकन्दर ने उन्हें प्रणाम किया और निकट बैठते हुए पूछा—बाबा, साधनहीन होकर भी आप में सम्राटों जैसा तेज कहाँ से आ गया ? साधु ने थोड़ा हंसकर उत्तर दिया—राजन्, संसार की नजर में तुम सुखी हो, परन्तु भगवान के सामने तुम दरिद्र हो, इसलिए तुम्हारे, मन में शान्ति नहीं है। भले आदमी, आज तक तुमने जिसकी चाह की वही तुमको प्राप्त हुआ और वही सब कुछ तुम्हारे पास है। पर तुम्हें पता नहीं, मेरा ईश्वर कितना दिव्य, तेजस्वी और कितना महान है, उस पर श्रद्धा रख कर ही मैंने तेज का एक अणुमात्र पाया है।

सिकन्दर साधु से बड़ा प्रभावित हुआ। उसने ऐसे ज्ञानी को अपना गुरू बनाने का निश्चय किया। इसी ख्याल से उसने पूछा—संत जी ! आप मेरे गुरू बन कर मेरे साथ यूनान चलिए मैं अपना सारा राज्य वैभव, धन और सम्पत्ति आपके चरणों में न्योछावर कर दूंगा।

साधु ने उत्तर दिया—सिकन्दर मैं एक मुक्त साधु हूं। मुझे धन संपत्ति, शान-शक्ति से क्या लेना देना ! जिसके पास जवाहर हो वह काँच के नकली टुकड़ों के लिए क्यों तुम्हारे साथ जाएगा ?

अब तुम सोचो, आज तक तुमने खोया ही खोया है। प्राप्त वस्तु को तुमने खोजा नहीं, कि तुम्हारे पास उसके होने का प्रश्न ही नहीं उठता। तुम्हारी दशा बड़ी दयनीय है। शान्ति कैसे मिल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकती है ? सिकन्दर को अपनी उपेक्षा पर बड़ा क्रोध आया। उसने इसे अपना अपमान समझा।

वह तुरन्त म्यान से तलवार खींचकर बोला-अभी मैं आपको कत्ल कर डालूंगा। साधु खिल-खिलाकर हँस पड़े और बोले—सिकन्दर! तुम डालो, नादान हो!! मैं तो यही चाहूंगा कि तुम मुझे अभी एक क्षण का भी विलम्ब न करते हुए कत्ल कर पर क्या तुम्हारे पास ऐसी तलवार है, जो मेरे खुदी (मैं) को काट डाले! आत्मा अजर-अमर है, हथियार आदि से उसका विनाश नहीं हो सकता। तुम्हारी तलवार मेरे पंच-भौतिक देह को ही नष्ट कर सकेगी, लेकिन मेरी आत्मा को नहीं। देह नाश-वान है और आत्मा अजर-अमर।

साधु की इस निर्भयता को देखकर सिकन्दर हतप्रभ हो गयी। तलवार उसके हाथ से छूटकर कर दूर जा गिरा। वह उसकी विद्वत्ता के आगे नतमस्तक हो गया, और अपने अपराध के लिए साधु से क्षमा माँगने लगा।

महान साधु ने उसे क्षमा कर दिया। भार-तीय महात्माओं की तेजस्विता की एक झलक लेकर सिकन्दर लौट पड़ा।

प्र०—सबसे अधिक सरल पुण्य कर्म क्या है।

उ०—बड़ों को नम्रतापूर्वक नमन करो, अभिवादन शील बनो, वृद्धों की सेवा करो; यह सरल पुण्य कर्म है। इससे आयु की, बल की, सुख और सुन्दर वर्ण की वृद्धि होती है।

जीवन एक चित को चित्रित करनां है गणित के प्रश्न हल करना नहीं

(पृष्ठ १४ का शेष)

सौन्दर्य के रंग भरता है। अतः प्रशंसा अथवा प्रभुत्व की ओर न आकर हमें 'चित्रकार' बनना है, लोकप्रियता की ओर तनिक मात्र ध्यान न दो। अपने जीवन के चित्र को सुन्दर से सुन्दर बनाओ और निर्भयता से कार्यरत रहो। वीरता एवं निर्भ-यता से सत्य-मार्ग को अपनाओ और इससे तुम्हारा जीवन, एक तारे के सदृश सबको सौन्दर्य की छटा प्रदान करेगा।

चित्रकार तथा वीर का संमिश्रण ही यथार्थ जीवन का रहस्य है। वीर होकर भी आत्म-नियं-त्रण में अभ्यस्त रहो। इससे तुम्हारे सुकृत तारों की भांति जाज्वल्यमान होंगे। इसलिए इस प्रकार जीवन व्यतीत करो कि तुम्हारे संसार से विदा होने के बाद भी तुम्हारे जीवन का मूल्यांकन करने वाले बरबस यह कह उठें— कितना सुन्दर चित्र है! कितना श्रेष्ठ चित्र हैं! अपने जीवन का निर्माण किसी प्रकार की भौतिक उन्नति या पुरस्कार के द्वारा न करके किसी महान आदर्श के दर्पण में अपने जीवन को प्रतिम्बित करने की महत्वाकांक्षा को अपना अविभाज्य अंग बनाओ।

—अनुवादक : भारत बन्धु शर्मा
दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न्यायमूर्ति हॉम्स का उदाहरण :—

जीवन एक चित को चित्रित करना है- गणित के प्रश्न को हल करना नहीं।

(साधु टी० एल० वासवानी के एक प्रवचन से)

न्यायमूर्ति हॉक्स एक महान अमरीकन कवि के सुपुत्र थे। बाल्यकाल से ही उन पर ही इमर्सन तथा पार्कर का गहरा प्रभाव पड़ा था। इन दोनों विद्वानों की उड़ान मन तथा बुद्धि से परे थी और इस कारण न्यायमूर्ति हॉम्स आदर्शवादी थे और उनकी आदर्शवादिता में यर्थाथता की पुट थी।

उन्हें एक वकील का प्रशिक्षण दिया गया था। उनकी धारणा थी कि विधि (कानून) एक विचारक का व्यवसाय है। कई वर्षों तक हॉम्स हारवर्ड विश्व विद्यालय के प्राध्यापक रहे। विधि से उन्हें सहज प्रेम था क्योंकि उनकी आकांक्षा स्पष्ट विचारों पर सुदृढ़ थी। इस प्रकार विधि के अध्ययन में उनका महान आदर्शों का चिन्तन निहित था।

महान विचारक इमर्सन ने कहा है कि अपनी (जीवन) यान को तारे के साथ जोत दो। इसलिए कानून का अध्ययन करने के साथ-२ हॉम्स ने अपने जीवन की यान को एक महान आदर्श के साथ जोत (जोड़) दिया था। उनकी शिक्षा का सारांश यह था—वीर बनो तथा आदर्शवादी रहो।

वीर होने के लिए उनका मत था कि हमें एकाकी गतिशील होने का अभ्यास करना होगा अर्थात् हमें अपने व्यक्तित्व के साहस, आत्म-विश्वास और कर्म में आस्था का समावेश करन होगा। दूसरे शब्दों में हमें स्वतन्त्र रूप से अपने आप विचार करने का पाठ पढ़ना होगा।

हॉम्स विश्व विद्यालय के प्राध्यापक पद से न्यायमूर्ति (जज) के पद पर जा पहुंचे और लगभग अर्द्ध शताब्दी तक इस उच्च पद पर आसीन रहे। अनेक वर्ष तक वे अमरीका सर्वोच्च न्यायालय के के न्यायाधीश रहे। उस पद पर रहते हुए और सामान्य नागरिक के रूप में उन्होंने विचारों की अभिव्यक्ति, प्रेस के माध्यम और विधान सभा के विचार-विनियम में स्वतन्त्रता की बकालत की। उनके जीवन के महान आदर्शों का एक अविभाज्य अंग स्वतन्त्रता थी।

न्यायमूर्ति हॉम्स कहते थे कि हमें स्वतन्त्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होना चाहिए तथा दूसरों के प्रभाव से मुक्त रहना चाहिए। कई वर्षों तक उन्होंने समाचार पत्र नहीं पढ़ें क्योंकि उनकी धारणा थी कि समाचार पत्र स्वतंत्र विचार-धारा में बाधक होते हैं। निज विचार-निर्णय में अछूते रह कर अपने विचारों तथा निर्णय को व्यक्त करने में पूर्ण रूप से स्वतंत्र रहो, वे अपने भाषणों में निर्णय की स्पष्टता पर बार-बार बल देते। उनका आग्रह था कि हमारी विचार धारा पर हमारे समय के महानतम व्यक्तियों के विचारों का अंश मात्र प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए।

न्यायमूर्ति हॉम्स ९१ वर्ष की आयु तक न्यायाधीश पद पर रहे। वे अपने अवकाश-काल को आगे बढ़ाते रहे, एक बार उनसे किसी ने पूछा कि आप कब पद भार का त्याग करेंगे? उनका उत्तर था कि मैं उस समय तक अपने पद पर बना रहूंगा जब तक मेरा कार्य उपहास का विषय नहीं बन जाता। एक दिन जब उनकी न्यायमूर्ति सज्जा (जज का गाऊन आदि) लाने वाला व्यक्ति पूर्ववत् वेशभूषा लेकर उपस्थित हुआ तो हॉम्स ने कहा कि कल मैं यहां नहीं आऊंगा, इस प्रकार उन्होंने चुप-चाप अवकाश प्राप्त कर लिया। उन्होंने किसी प्रकार की विदाई-पार्टी अथवा अन्य समारोह का आयोजन स्वीकार नहीं किया। उन्हें अनौपचारिक रूप से चुपचाप उस पद का त्याग करने में बहुत आनन्द की अनुभूति हुई। ९१ वर्ष की परिपक्व आयु में भी वे तरुणाई की अनुभूति करते थे क्योंकि उन्हें परमात्मा से तरुणाई वरदान के रूप में प्राप्त हुई थी। जब लोगों ने हॉम्स से उनके 'युवा' रहने का रहस्य पूछा तो उन्होंने इसका स्रोत हृदय की 'उदारता' तथा अपने से छोटों के प्रति 'विश्वास' बताया। उनका स्फूर्तिदायक प्रेरक व्यक्तित्व सभी उदार सुकृतों के लिए सहानुभूति से परिपूर्ण था यही उनकी शाश्वत तरुणाई का मूल मंत्र था।

न्यायमूर्ति हॉम्स की एक सुन्दर उक्ति विशेष रूप से मेरे मस्तिष्क पर अंकि हुई है और वह है—जीवन एक चित्र को चित्रित करना है, गणित के प्रश्न को हल करना नहीं, उनकी धारणा थी कि हमारे जीवन तथा कृतित्व का गहरा सम्बन्ध है और हमारा यथार्थ कार्य गणित के प्रश्न हल करने से कहीं बढ़ कर है। वास्तविक जीवन का रहस्य गणित के प्रश्न को हल करना नहीं है। वे रहते थे कि हमें अपने कार्य को अनुपम सौन्दर्य का रूप देना है अर्थात् अपने कृत्यों में हर चित्रकार की भूमिका अदा करनी है। दूसरा अभिप्राय अपने आदर्श के अटल विश्वास रख कर कार्यरत रहना है। इसके लिए हमें ख्याति अथवा आत्म-प्रशंसा से दूर रह कर मौन रूप से कार्य—व्यस्त रहना है।

यह बात अति शोचनीय है कि अनेक अपने जीवन को गणित के प्रश्न को हल करने के समान मानते हैं। हम हस्तगत अथवा बैंक में जमा धन को अधिक महत्व देते हैं। इसलिए हॉम्स का यह सन्देश है कि हमें चित्रकार बनना चाहिए क्योंकि एक महान चित्रकार अपने जीवन के चित्र में

(शेष पृष्ठ १६ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गतांक से आगे :—

रामायण चरित्र चित्रण

दशरथ-परिवार

श्री स्वामी तीर्थानन्द जी

लोगों की ऐसी मान्यता है कि 'जैसे लोग वैसे उनके देव और नेता'। यह मान्यता अर्धसत्य हैं। क्योंकि वास्तव में देखा जाय तो जैसे देव और नेता होते हैं वैसे ही लोग बन जाते हैं। यही (Historical tact) ऐतिहासिक सत्य हैं। किसी भी समाज का उत्थान अथवा पतन उसके ध्येय अथवा आदर्शों द्वारा ही होता हैं। और इन ध्येयों तथा आदर्शों का आधार उनके नेता के विचारों पर होता है।

दशरथ

अयोध्या के राजा के रूप में दशरथ का चरित्र कुछ फीका सा लगता है। इसका मूल कारण हैं श्रीराम का तेजस्वी चरित्र। हमारे सामने राम का तेजस्वी चरित्र आते ही उसकी चकाचौंध के कारण दशरथ का चरित्र फीका लगने लगता है। उनसे एक दोष था और वह 'हृदय की विशालता' तथा उन विशालता के पेट में रहने वाली सरलता, और उसके परिणाम स्वरूप भोलापन यह उनकी दुर्बलता थी। वे भावना के वशीभूत होकर क्षणिक प्रेमातिरेक में किसको क्या दे डालेंगे इसकी कल्पना नहीं की जा सकती।

'वारांगनेव नृपनीतिरनेकरूपा' वाली चाणक्य नीति उनमें नहीं थी। वे आगे पीछे का विचार नहीं करते थे। किस खड्डे में गिर पड़ेंगे तथा उसका परिणाम क्या होगा इसकी चिन्ता तो दूर रही, कल्पना तक न करते हुए वे दूसरों को वचन दे डालते थे।

उसी प्रकार अपूर्व सत्यनिष्ठा होने के कारण उन्होंने मृत्यु को आमन्त्रित किया है। विचार न करते हुए कैकेयी को दिये हुए वचन उनके सरलता के आभारी थे। सरलता, राष्ट्रीय अथवा सामाजिक दृष्टि से कदाचित पाप गिना जा सकता है, परन्तु इस सरलता एवं सत्यनिष्ठा के कारण ही उनके जीवन में तेजस्विता आई है। दिये हुए वचनों से फिर जाने का विचार उनके मन में कभी भी नहीं आया। यदि वे ऐसा चाहते तो कैकेयी का कान पकड़कर एक तरफ बिठाकर 'राम' को राजगद्दी पर बिठा सकते थे। विद्वान् और धुरंधर राज सत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारो आज क्या करते हैं ? "हमने ऐसा नहीं कहा, समाचार पत्रों ने गलत छाप दिया होगा"। ऐसा कहकर बगले झाड़कर दूर हो जाते हैं।

महाराजा दशरथ अत्यन्त तत्वनिष्ठ थे। यही वजह है कि राम को बनगमन की आज्ञा देने के बाद तुरन्त ही राम के चरण पकड़ कर कहते हैं, "मैं तुझे आज्ञा देता हूं कि मैं रघुवंश के अयोग्य हूं। मुझे बांधकर बन्दीगृह में डाल दे और तू राज्य कर"। यह सुनकर राम कहते हैं, "पिताजी, आप अपने धर्म का पालने करें और क्या मैं अपने धर्म का पालन न करुं ? आप तत्वनिष्ठ और मैं तत्व-भ्रष्ट बनूँ ?" राम के मन में दशरथ के प्रति अलौकिक प्रेम और आदर था। तभी तो जब कौशल्या राम के साथ वन में जाने का प्रस्ताव रखती हैं तो राम कहते हैं "कर्तव्यनिष्ठ, सत्यनिष्ठ और तत्व-निष्ठ राजा दशरथ की तू पत्नी है फिर भी एक अनाथ विधवा की भाँति मेरे साथ जंगल में जाने को कैसे तैयार हो गई ?" राम की पिता के प्रति यह निष्ठा दर्शाती है कि दशरथ भी एक अलौकिक पात्र थे। तत्वनिष्ठा के लिये जीवन बलिदान करने का पाठ राम को दशरथ से मिला था।

कौशल्या

रामायण में कौशल्या का बड़ा सुन्दर वर्णन है। लोगों की बातों में आकर कैकेयी कौशल्या का अपमान कर देती हैं, परन्तु कौशल्या उसे मन पर नहीं लेती और ऊपर से कहती है, "कुटुम्ब में मान अपमान का प्रश्न कैसा ? कुटुम्ब में कोई किसी का अपमान क्यूं करे ? कुटुम्ब एक घटक है बायां हाथ कभी दायें का अपमान करता है ? बहन को कभी ऐसा लगता है कि उसकी बहिन उसका अपमान करती है ? इस प्रकार की आदर्श कुटुम्ब व्यवस्था की वे जन्मदात्री थी। भरत जब मूर्च्छित पड़ जाता है तो उसका सर गोद में लेकर वे कहती हैं, "तुझे क्या तकलीफ है ? राम वन में हैं। अभी हमारे कुल का महत्व, राजवंश और राजगद्दी की निष्ठा तथा लोगों की दृष्टि तुम्हारे ऊपर है इसलिए तू जागृत हो। राम के जाने से तुम्हारी तरह मुझे भी दुःख हुआ है, परन्तु कुल की कीर्ति को तू उज्ज्वल रखेगा इस दृष्टि से मैं अब तेरी ओर निहारती हूं।" यह उदाहरण कौशल्या के अन्दर की कौटुम्बिक भावना की भव्यता का दर्शन कराता है। उसकी जगह और कोई सामान्य स्त्री होती तो कहती, "मरने दो भरत को; उसकी माँ ने मेरे राम को वन में भिजवाया उसका फल भुगतने दो"।

कौशल्या विदुषी थी। दशरथ के साथ धर्म शास्त्र एवं राजशास्त्र सम्बन्धी शास्त्रार्थ की चर्चा करती थी। उन्हीं के गुण राम में आये थे। यदि माँ मूर्ख हो तो पुत्र भी मूर्ख ही होगा। कुटुम्ब में बहुत सा अपमान सहकर भी ज्ञात चित्त से अपना कर्तव्यनिष्ठ और ध्येयनिष्ठ जीवन व्यतीत करना यह जीवन की विशिष्टता कौशल्या के जीवन में दिखाई देती है, और राम के समस्त जीवन पर इसकी गहरी छाप दिखाई पड़ती है। रामायण में कौशल्या का स्थान केवल राम की माता के रूप में नहीं है, बल्कि उनके आचरण के गुरू के रूप में भी है। यही कौशल्या के चरित्र की महानता है।

क्रमशः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दू धर्म के पक्ष में

स्वामी विवेकानन्द

.....वह भारत जो प्राचीन काल से सभी उदात्तता, नीति और आध्यात्मिकता का जन्म स्थान रहा है वह, वह देश जिसमें ऋषिगण विचरण करते रहे हैं, जिस भूमि में देवतुल्य मनुष्य अभी भी जीवित और जाग्रत हैं, क्या मर जायगा ? भाइयो ! मैं उस यूनानी ऋषि डायोजीनिस की लालटेन को उधार लेकर आपके पीछे-पीछे इस विशाल संसार के शहरों, ग्रामों, मैदानों और जंगलों को चलूँगा-मुझे अगर आप दिखा सकते हों तो ऐसे पुरुष दूसरे देशों में भी दिखा दीजिये। सत्य ही कहा है, "वृक्ष की पहचान उसके फलों से ही होती है।" भारतवर्ष में प्रत्येक आम्र वृक्ष के नीचे जाइये और जमीन पर गिरे हुए कच्चे, कीड़े लगे हुए फलों के बोरे के बोरे भरकर ले आइये और उनमें से प्रत्येक फल पर अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण सैकड़ों पुस्तकें लिख डालिये-परन्तु इतने पर भी आप एक भी आम्र फल का यथार्थ वर्णन नहीं कर पायेंगे। अच्छा, अब आप एक रसीला, मीठा, पूरा पका आम उस पेड़ पर से तोड़ लीजिये और अब तो आप सचमुच क्या है यह पूरा-पूरा जान गये।

उसी तरह ये मानव रूपधारी ईश्वर हिन्दू धर्म के यथार्थ स्वरूप का परिचय दे रहे हैं। वे उस जातिरूप वृक्ष की प्रकृति, शक्ति और सम्भावनाओं को स्पष्ट रूप में प्रकाशित करते हैं। वह जातिवृक्ष ऐसा है कि उसने कई शताब्दियों की सभ्यता देखी है। उस वृक्ष ने सहस्रों वर्षों तक झंझावात के आघातों को सहन किया फिर और भी सनातन यौवन की अक्षुण्ण शक्तियों से भरा हुआ खड़ा है।

क्या भारत मर जायगा ? तब तो संसार से सारी आध्यात्मिकता का समूल नाश हो जायगा, सारे सदाचारपूर्ण आदर्श जीवन का विनाश हो जायगा, धर्मों के प्रति सारी मधुर सहानुभूति उसके स्थान में कामरूपी देव और विलासितारूपी देवी राज्य करेगी। धन उनका पुरोहित होगा प्रतरणा, पाशविक बल और प्रतिद्वन्द्विता, ये ही उनकी पूजा पद्धति होगी और मानव-आत्मा उनकी बलिसामग्री हो जायगी। ऐसी दुर्घटना कभी हो नहीं सकती। क्रियाशक्ति की अपेक्षा सहनशक्ति कई गुनी बड़ी होती है। प्रेम का बल घृणा के बल की अपेक्षा अनन्त गुना अधिक है। जो समझते हैं कि हिन्दू धर्म का वर्तमान पुनरुत्थान देशभक्ति की प्रवृत्ति का विकास मात्र है, वे भ्रम में हैं।

आइये, सर्वप्रथम हम इस अद्भुत घटना को समझने का प्रयत्न करें।

क्या यह आश्चर्य की बात नहीं है कि जब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्तमान वैज्ञानिक खोज के प्रबल आक्रमण के सामने पाश्चिमात्य स्वमतान्ध धर्मों के पुराने किले टूट-टूटकर धूमि में मिल रहे हैं, जबकि आधुनिक विज्ञान के हथौड़ों की चोटें उन धार्मिक मतों को चीनी मिट्टी के बर्तनों की तरह चूर-चूर कर रही हैं, जिनका आधार केवल विश्वास या चर्चा-समिति की सभाओं का बहुमत है जब कि पश्चात्य धर्म-समूह अत्युग्र आधुनिक विचारों की बढ़ती हुई तरंग के साथ मेल मिलाने में अपनी बुद्धि का दिवाला निकाल चुका है, जब कि अन्य धर्मों के मूल ग्रन्थों के वाक्यों की, आधुनिक विचारों के नित्य बढ़ने वाले दबाव के कारण जहां तक बन पड़ा, अत्यन्त खींचातानी की गयी-उनमें से अधिकांश तो इस खींचातानी में टूट गये और रद्दीखाने में डाल दिये गये, जब कि पश्चिम के अधिकांश विचारशील व्यक्ति चर्च के साथ अपना सम्बन्ध तोड़कर अशान्तिसागर में इतस्ततः बह रहे हैं उस समय भी देव-रूपी ज्ञान के झरने से जीवनामृत पाने वाले वेदों से उत्पन्न केवल हिन्दू और बौद्ध धर्म ही पुनरुज्जीवित हो रहे हैं ?

पश्चिम के अशान्त हृदय नास्तिक और अज्ञेयवादी को गीता और धम्मपद में ही ऐसा स्थान मिलता है जहां उनका चित्त-शान्ति पाता है।

अब पाँसे पलट गये। जो हिन्दू निराशा के आँसू बहाता हुआ अपने पुराने निवासगृह को आततायियों द्वारा प्रज्वलित अग्नि से परिवेष्टित देख रहा था; आज जब कि आधुनिक विचार के शोधक प्रकाश ने धुएं के अन्धकार को हटा दिया है, तब वही हिन्दू देख रहा है कि उसी का घर तो अपनी पूरी दृढ़ता के साथ खड़ा हुआ है और शेष सब लोग या तो मर मिटे या अपने-अपने घर हिन्दू नमूने के अनुसार नये सिरे से बना रहे हैं। यह देख कर उस हिन्दू ने अपने आंसू पोंछ डाले और यह जान लिया कि 'ऊर्ध्वमूल अधःशाख अश्वत्थ" को जड़ तक काटने की कोशिश करने वाली वह कुल्हाड़ी चीरफाड़ करने वाले विकृतमक सर्जन की हितकारक छुरी ही साबित हुई है।

उसने यह देख लिया कि अपने धर्म की रक्षा के लिए न तो उसे शास्त्र-वाक्यों की तोड़-मरोड़ करना है और न किसी अन्य प्रकार की बौद्धिक बेईमानी ही। इतना नहीं, वह तो अपने शास्त्रों में जो कुछ निम्न श्रेणी का है उसे निम्न ही कहकर स्वीकार कर सकता है, क्योंकि शास्त्रकारों ने निम्नस्तर के अधिकारियों के लिए अरुन्धती-दर्शन न्याय के अनुसार वैसा ही जानबूझकर रखा है। धन्य हैं वे पुरातन ऋषि जिन्होंने ऐसे सर्वव्यापी, सदा विस्तारशील धर्म प्रणाली का आविष्कार किया है जिसमें भौतिक क्षेत्र में आज तक जो आविष्कार हो चुके हैं और जो कुछ भविष्य में होनेवाले हैं उन सब का सादर समावेश हो सकता है। अब तो हिन्दू अपने शास्त्रों का आदर पुनः नये भाव से करने लगा है और उसने यह नयी जानकारी प्राप्त की है कि जो वैज्ञानिक आविष्कार प्रत्येक मर्यादित छोटी छोटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धर्म प्रणाली के लिए घातक सिद्ध हुए, वे सब उसके पूर्वजों के ध्यानलब्ध तुरीय अवस्था में पाये हुए सत्यों के ही बुद्धि और इन्द्रियजन्य व्यावहारिक ज्ञानक्षेत्र में पुनराविष्कार मात्र हैं।

अतः उसे न तो किसी वस्तु का त्याग ही करना है और न किसी वस्तु को प्राप्त करने के लिए इधर-उधर भटकना ही है, वरन् उसके लिए इतना ही पर्याप्त है कि वह अपने पूर्वजों से उत्तराधिकार में पाये हुए अनन्त कोष में से केवल थोड़ा सा निकालकर अपने उपयोग में लाये और उससे अपनी आवश्यकता की पूर्ति करे। और उसने ऐसा करना आरम्भ कर दिया है और भविष्य में वह और अधिकाधिक करेगा। क्या यही इस पुनरुत्थान का सच्चा कारण नहीं है?

बंगाल के नवयुवको! तुम लोगों से मेरा विशेष अनुरोध है। भाइयो! हमें यह जानकर लज्जा होनी है कि कि जिन बहुतेरे वास्तविक दोषों के कारण विदेशी लोग हिन्दू जाति को बदनाम करते हैं, उन दोषों के कारण हम ही हैं। हम ही भारतवर्ष को अन्य जातियों के सिर पर बरसने वाली अनुचित गालियों के कारण हैं। पर ईश्वर को धन्यवाद है कि हम लोग इस बात को पूर्णतया जान गये हैं और उसी ईश्वर के आशीर्वाद से न केवल अपने को ही शुद्ध कर लेंगे, वरन् सारे भारत वर्ष को सनातन धर्म द्वारा उपदिष्ट आदर्शों के प्राप्त करने में सहायता देंगे।

सर्वप्रथम तो हमें उस चिह्न—ईर्ष्यारूपी कलंक—को, जिसे गुलामों के ललाट में प्रकृति सदैव लगा दिया करती है, धो डालना चाहिए। किसी से ईर्ष्या मत करो। भलाई के काम करने वाले प्रत्येक को अपने हाथ का सहारा दो। तीनों लोकों के जीवमात्र के लिए शुभ कामना करो। अपने धर्म के उसी एक केन्द्रवर्ती सत्य पर खड़े हो जाओ—जो हिन्दू, बौद्ध और जैनियों के लिए पैतृक सम्पत्ति है। वह सत्य है मनुष्य की आत्मा - अज, अविनाशी, सर्वव्यापी, जिसके वैभव के सामने सूर्य-चन्द्र, तारागण और नक्षत्रसमूहों के साथ सारा विश्व एक बिन्दुवत् है। प्रत्येक स्त्री-पुरुष, यहीं नहीं उच्चतम देवों से लेकर पदतलस्थ कीट पर्यन्त सभी वही आत्मा, विकसित या अविकसित है। अन्तर प्रकार में नहीं, केवल परिणाम में है।

आत्मा की इस अनन्त शक्ति का प्रयोग जड़ वस्तु पर होने से भौतिक उन्नति होती है, विचार पर होने से बुद्धि का विकास होता है और अपने ही पर होने से मनुष्य का ईश्वर बन जाता है।

पहले हमें इश्वर बन लेने दो। तत्पश्चात् दूसरों को ईश्वर बनाने में सहायता देंगे। "बनो और बनाओ" यही हमारा मूल-मन्त्र रहे।

ऐसा न कहो कि मनुष्य पापी है। उसे यह बताओ कि तू ब्रह्म है। यदि कोई शैतान हो, तो भी हमारा कर्तव्य यही है कि हम ब्रह्म का ही स्मरण करें, शैतान का नहीं।

यदि कोठरी में अन्धकार है, तो सदा अन्ध-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार का अनुभव करते रहने और अन्धकार—२ चिल्लाते रहने से तो वह दूर नहीं होगा, बल्कि प्रकाश को भीतर ले आइये तब वह दूर हो जायगा। यह तो हमें समझ लेना चाहिए कि जो कुछ भी अभावात्मक है, विनाशकारी है और केवल दोष देखने वाला है उसका अन्त अवश्यम्भावी है; और जो भावात्मक, सत्यात्मक और रचनात्मक है, वही अमर है और वही सदा रहेगा। हम यही कहें—'हम हैं', 'ईश्वर हैं', और 'हम ईश्वर हैं।' शिवोऽहम् शिवोऽहम् कहते हुए आगे बढ़ते चलिये। जड़ नहीं, वरन् चैतन्य हमारा लक्ष्य है। नाम और रूप वाले सभी नामरूपहीन सत्ता के अधीन हैं। इसी सनातन सत्य की शिक्षा श्रुति दे रही है। प्रकाश को ले आइये, अन्धकार आप ही आप नष्ट हो जायगा। वेदान्त केसरी गर्जना करे, सियार अपने अपने बिलों में छिप जायेंगे। भावों को सब ओर बिखेर दीजिये और फल अपने आप होता रहेगा। भिन्न–भिन्न रासायनिक द्रव्यों को एक साथ डाल दीजिये, उसकी सम्मिश्रण-क्रिया आप ही आप होती रहेगी। आत्मा की शक्ति का विकास कीजिये, और सारे भारतवर्ष के विस्तृत श्रेत्र में उसे डाल दीजिये और जिस स्थित की आवश्यकता है, वह आप ही आप प्राप्त हो जायगी।

अपने आभ्यन्तरिक ब्रह्मभाव को प्रकट कीजिये और उसके चारों ओर सब कुछ अनुकूल रूप में जुट जायेंगे। वेदों में बताये हुए इन्द्र और विरोचन के उदाहरण को स्मरण रखिये। दोनों को अपने ब्रह्मत्व का बोध कराया गया था, परन्तु असुर विरोचन अपनी देह को ही ब्रह्म मान बैठा। इन्द्र तो देवता थे, वे समझ गये कि वास्तव में आत्मा ही ब्रह्म है। आप तो इन्द्र की सन्तान हैं। आप देवताओं के वंशज हैं। जड़ पदार्थ आपका ईश्वर कदापि नहीं हो सकता; शरीर आपका ईश्वर कभी नहीं हो सकता।

भारतवर्ष का पुनरुत्थान होगा, पर वह जड़ की शक्ति से नहीं, वरन् आत्मा की शक्ति द्वारा। वह उत्थान विनाश की ध्वजा लेकर नहीं, वरन् शान्ति और प्रेम की ध्वजा से–सन्यासियों के वेश से–धन शक्ति से नहीं, बल्कि भिक्षापात्र की शक्ति से सम्पादित होगा। ऐसा मत कहो कि हम दुर्बल हैं, कमजोर हैं। आत्मा सर्वशक्तिमान है। श्रीराम कृष्ण के चरणों के दैवी-स्पर्श से जिनका अभ्युदय हुआ है, उन मुट्ठी भर नवयुवकों की ओर देखो। उन्होंने उनके उपदेशों का प्रचार आसाम से सिंध तक और हिमालय से कन्याकुमारी तक कर डाला। वे लोग हिमालय पर्वत को बीस हजार फुट की ऊंचाई पर से पैदल ही बरफ पर से लाँघकर तिब्बत के रहस्यमय प्रदेश में प्रविष्ट हो गये। उन्होंने अपनी रोटी भिक्षा द्वारा प्राप्त की और अपने अंग चिथड़ों से ढाँके। उन पर कितने ही अत्याचार किये गये, पुलिस ने उनका पीछा किया, वे जेल खाने में डाले गये पर अन्त में जब सरकार को उनकी निर्दोषता का निश्चय हो गया तब वे मुक्त कर दिये गये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनकी संख्या अभी बीस है। कल उनकी संख्या दो हजार बना दो। बंगदेश के युवको! तुम्हारे देश को इसकी आवश्यकया है। सारे संसार को इसकी आवश्यकता है। अपने अंतः स्थित ब्रह्म को जगाओ, जो तुम्हें क्षुधा-तृष्ण, शीत-उष्ण सहन करने में समर्थ बना देगा। विलासपूर्ण भवनों में बैठे बैठे जीवन की सभी सुखसामग्री से घिरे हुए रहना और धर्म की थोड़ी सी चर्चा कर लेना अन्य देशों में भले ही शोभा दे, पर भारतवर्ष को तो स्वभावतः सत्य की इससे कहीं अधिक पहचान है। वह तो प्रकृति से ही अधिक सत्यप्रेमी है। भारत-वासी कपटवेश को एकदम अपनी अन्तः शक्ति से ही ताड़ जाता है।

आप लोग त्याग करें, महान बनें। कोई भी बड़ा कार्य बिना त्याग के नहीं किया जा सकता। स्वयं 'पुरुष' ने भी सृष्टि की रचना करने के लिए स्वार्थ त्याग किया, अपने को बलि दिया। अपने आरामों का, अपने सुखों का, अपने नाम, यश और पदों का—इतना ही नहीं अपने जीवन तक का—त्याग करो और मनुष्य रूपी शृंखला से ऐसा पुल बनाओ, जिस पुल पर से करोड़ों लोग इस संसार-सागर को पार कर जायं। समस्त मंगलकारी शक्तियों को एकत्रित करो। किस ध्वजा के नीचे तुम अग्रसर हो रहे हो, इसकी परवाह मत करो। तुम्हारी ध्वजा का रंग हरा, नीला या लाल कुछ भी हो, उसकी परवाह मत करो, बल्कि सभी रंगों को एक में मिला दो और उससे उस अत्युज्ज्वल श्वेत रंग का निर्माण करो जो कि प्रेम का रंग है। हमें तो कर्म ही करना है, फल अपने आप होता रहेगा। यदि कोई सामाजिक बन्धन तुम्हारे ईश्वर-प्राप्ति के मार्ग में बाधक है तो आत्मशक्ति के सामने अपने आप ही वह टूट जायगा। भविष्य मुझे दीखता नहीं और मैं उसे देखने की परवाह भी नहीं करता। परन्तु मैं अपने सामने यह एक सजीव दृश्य तो अवश्य देख रहा हूं कि हमारी यह वृद्धा माता पुनः एक बार जाग्रत होकर अपने सिंहासन पर नवयौवनपूर्ण और पूर्व की अपेक्षा अधिक महामहिमान्वित होकर विराजी है। शान्ति और आशीर्वाद के वचनों के साथ सारे संसार में उसके नाम की घोषणा कर दो। ★

प्र०—कोई निर्धन और कोई बहुत धनी क्यों हैं ?

उ०—जो दूसरों की दी हुई वस्तुओं तथा सम्पत्ति को भोगता है परन्तु दूसरों को कुछ देता नहीं है, वही निर्धन होता है। जो अपने अधिकार की वस्तुओं का दूसरों को, सुपात्र को दान करता है वही धनी होता है जो दूसरों से लेकर प्रत्युपकार भाव से नम्रतापूर्वक शुभ पवित्र अनूठी वस्तु को दूसरे अधिकारी को देता रहता है, जो प्रसाद आलस्य को छोड़कर सेवा में तत्पर और विनम्र सहनशील होता है वह पर्याप्त धन प्राप्त करता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाँदनी फैली गगन में

हरिवंशराय बच्चन

चाँदनी फैली गगन में, चाह मन में।

दिबस में सबके लिए बस एक जग है,
रात में हर एक की दुनियाँ अलग है,
कल्पना करने लगी अब राह मन में।
चांदनी फैली गगन में चाह मन में।

भूमि का उर तप्त करता चंद्र शीतल,
व्योम की छाती जुड़ाती रश्मि कोमल,
किन्तु भरतीं भावनाएं दाह मन में,
चांदनी फैली गगन में, चाह मन में।

कुछ अँधेरा, कुछ उजाला, क्या समा है,
कुछ करो, इस चाँदनी में सब क्षमा है,
किन्तु बैठा में संजोए आह मन में।
चाँदनी फैली गगन में, चाह मन में।

चाँद निखरा, चंद्रिका निखरी हुई है,
भूमि से आकाश तक बिखरी हुई है,
काश मैं भी यों बिखर सकता भुवन में,
चाँदनी फैली गगन में, चाह मन में।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुभ सूचना

आपको सूचित करते हुए अत्यन्य हर्ष होता है कि ब्रह्मलीन स्वामी हरिॐ जी महाराज द्वारा संचालित व ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज द्वारा संवर्धित ४३ वाँ स्वामी रामतीर्थ आध्यात्मिक विराट् सम्मेलन इस वर्ष स्वामी अमर मुनि जी महाराज, परमाध्यक्ष स्वामी रामतीर्थ मिशन, के तत्वावधान में दिनांक २८—५—७९ से ३—६—७९ तक हरिओ३म् सत्संग भवन ५९ राजपुर रोड पर विभिन्न आध्यात्मिक विषयों पर प्रवचनों तथा महापुरुषों के आशीष पूर्ण उपदेशों से युक्त हो सम्पन्न होगा। कार्यक्रम सायं ६ बजे से प्रारम्भ होकर रात्रि १० बजे तक चलेगा।

इस शुभ व पावन अवसर पर आप भी सन्तशिरोमणि व व्यावहारिक वेदान्त के साकाररूप परमहंस स्वामी राम के श्री चरणों में अपनी भावमयी श्रद्धाञ्जलि समर्पित करने हेतु इष्ट मित्रों सहित सादर व सस्नेह आमन्त्रित है।

इस वर्ष लघु सम्मेलन २१-५-७९ से राजपुर रोड पर सम्पन्न होगा।

भवदीय

मन्त्री – काका हरिओ३म्

स्वागताध्यक्ष – रा०ब० शिवचरण दास सभ्रवाल

स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून (उ० प्र०) के लिए प्रकाशक स्वामी अमर मुनि द्वारा न्यू आईडियल प्रिन्टिंग हाऊस (कांग्रेस भवन के पास) ४-बी नेशविला रोड, (देहरादून) में, मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आश्रम समाचार

श्रद्धेय परमाध्यक्ष जी महाराज का दिल्ली से दि० ६ को शुभागमन देहरादून हुआ। श्री के० के० खेड़ा द्वारा अपने नये निवास-स्थान पर सम्पन्न हुए गृह-प्रवेश उत्सव में, जिसमें रामचरितमानस का अखण्ड-पाठ रखा गया था, सम्मिलित होकर राम और सीता के चरित्र को जनमानस के समक्ष उद्धाटित करते हुएपारिवारिक जीवन में रामायण के महत्व पर आपने प्रकाश डाला। उत्सव के अनन्तर आश्रम, राजपुर पर आप पधारें। इसी ही दिन सायं मसूरी एक्सप्रेस से आपने हरिद्वार, बैसाखी के उपलक्ष्य में सम्पन्न हो रहे विभिन्न धार्मिक आयोजनों में भाग लेने के लिये, प्रस्थान किया।

१३ की प्रातः दिल्ली के राम प्रेमी श्री ओम प्रकाश जी बाधवा के नवगृहप्रवेश में सम्मिलित होने के लिये आपने दिल्ली प्रस्थान किया। वहीं, दिल्ली में, १५ तक निवास के अनन्तर पुनः ४ दिन के लिये, जिसमें दिनांक २१ मई से १० जून तक सम्पन्न हो रहे लघु सम्मेलन, आध्यात्मिक विराट् सम्मेलन व साधना सप्ताह के लिये कार्यक्रमों की व्यवस्थिति के उद्देश्य से आप पधारे थे, आपका आगमन हुआ। १६ की सायं मुकेरियां में स्वामी सारशब्दानन्द की महाराज की अध्यक्षता में सम्पन्न हुए आध्यात्मिक सम्मेलन में व तदनन्तर म० मं० स्वामी लक्ष्मण देव यति जी महाराज द्वारा दिल्ली में आयोजित विराट् सम्मेलन में भाग लेने के बाद आप देहरादून २५ की प्रातः पधारे क्योंकि २६ को आश्रम में निवास करने वाली श्रद्धेया माँ पूर्णा द्वारा निर्मित युगलविहार (कृष्ण-मदिन्र) का वार्षिकोत्सव था। इस शुभ अवसर पर दिल्ली व विभिन्न नगरों से आये हुए अध्यात्मजिज्ञासु श्रद्धालुओं ने भाग लिया। इस आयोजन में यज्ञ-हवन, कृष्ण पूजन, कीर्तन व उपदेशों का विशेष आयोजन था।

२६ की सायं दिल्ली, २६ को साधुबेलाश्रम; बम्बई होते हुए आप परमश्रद्धेया श्री श्री माँ आनन्दमयी के जन्मोत्सव में, जिसका आयोजन इस वर्ष जयमहल पैलेस बंगलोर में किया गया, भाग लेने बंगलोर पहुंचे।

आशा है कि २२ को आपका आगमन देहरादून आश्रम पर होगा।

—सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम-सन्देश

10.2.79

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी

जौलाई
१९७९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकेतिका

विषय	लेखक	पृष्ठ
सबै दिन एकै से नहि जात	सूरदास	१
गृहस्थाश्रम और आत्मानुभव	स्वामीराम	२
सच्चा साधु		५
रामायण चरित्र चित्रण	स्वामी तीर्थानन्द 'अज्ञ'	६
गीत	शास्त्री बल्देव राज 'शान्त'	८
संयम और सिद्धि		९
शंकर जयन्ती	प्रो० भारत बन्धु शर्मा	१०
यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ	स्वामी अमर मुनि जी महाराज	११
शिवभक्त अंग्रेज फौजी कमान्डर		१३
हृदय परिवर्तन		१४
दक्षिण के कबीर तिरुवल्लुवर	बल्लभ दास बिन्नानी ब्रजेश	१८
गुरुपूर्णिमा महोत्सव		१९
प्रवचन	स्वामी हरिॐ जी महाराज	२०
आश्रम समाचार		२५ २६

संस्थापक—
ब्रह्मलीन स्वामी हरि ओ३म् जी महाराज
संवर्धक—
ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज
व्यवस्थापक—
स्वामी अमर मुनि जी महाराज

सम्पादक—
काका हरिओ३म् "निर्द्वन्द्व"

आजीवन सदस्यता शुल्क—
भारत में — १०० रु०
विदेश में — ५०० रु०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्र के हित के लिए प्रयत्न करना ही विश्व की शक्तियों अर्थात् देवताओं की आराधना है'-स्वामी राम
वेदान्त, अध्यात्म, संस्कृति, धर्म एवं भक्ति का सजग सन्देशवाहक
तथा स्वामी राम के आदर्शों का एकमात्र लोकप्रिय मासिक—

राम सन्देश

वेदोपनिषदां तत्त्वम् सत्यं नित्यं सनातनम् ।।
तत्सर्वं "रामसन्देशे" पत्रेऽस्मिन्नवलोक्यताम् ।।

वर्ष २८ अंक ७	राजपुर देहरादून जौलाई १९७९	वार्षिक भेंट १०) एक प्रति ८५ पैसे

सबै दिन एकै से नहिं जात।

सुमिरन-भजन कियौ हरि कौ, जब लौं तन कुसलात ।
कबहूं कमला चपल पाइ कै, टेढ़ें टेढ़ें जात ।।
कबहूं मग-मग धूरि बटोरत, भोजन कौं बिलखात ।
या देही कौ गरब करत, धन-जोबन के मतमात ।।
हौं बड़, हौं बहुत कहावत, सूधें कहत न बात ।
बाद—बिबाद सबैं दिन बीतें, खेलत ही अरु खात ।।
जोग न जुक्ति, ध्यान नहिं पूजा, बिरध भऐं पछितात ।।
तातें कहत संभारहि रे नर, काहे कौ इतरात ?
सूरदास भगवंत भजन बिनु, कहूं नाहिं सुख गात ।।

—सूरदास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गतांक से आगे—

गृहस्थाश्रम और आत्मानुभव

(ता॰ १ फरवरी १९०३, रविवार, सन्ध्या—समय)

—स्वामीराम

स्वार्थ-पूर्ण व्यक्तित्व के सभी बन्धनों का त्याग करो। प्रत्येक प्राणी और पदार्थ में ईश्वरत्व का अनुभव करो, सबमें विभु का दर्शन करो। प्रत्येक हिन्दू दम्पति (स्त्री-पुरुष) को धर्मशास्त्र यों ही जीवन-यापन की आज्ञा देता है। धर्म-शास्त्र के नियमानुसार, इसको राम अपने गृहस्थ-आश्रम में व्यवहार में लाता था। पत्नी नित्य प्रातःकाल सवेरे जागती थी। और जब राम ध्यान मे लीन होता, जब राम परमात्मा का अनुभव और साक्षात्कार करता, जब वह परमात्मा में निमग्न होता या जब वह शरीर और मन के परे होता, जब वह मधुर अमृतत्व-सुधा का पान करता होता तब उसकी पत्नी निकट आती, और जिस प्रकार रोमन कैथोलिक अपनी मूर्तियों की पूजा करते हैं उसी प्रकार देहविस्मरण कर उसकी पत्नी राम पर दृष्टि डालती। यह जैसे राम अपने शरीर को भूल जाता था, इस भौतिकता के परे जा पहुंचता था, और ईश्वर में लीन हो जाता था, वैसे ही पत्नी राम में ईश्वर और उसकी विभूति का दर्शन करती, उसके सिवा कुछ न देखती। इस प्रकार राम के शरीर से कुछ दूर बैठकर वह राम के ललाट पर अपनी दृष्टि जमाती। अधिक उन्नत न होने के कारण वह राम के शरीर का ध्यान करती, और धीरे-धीरे 'ॐ' का उच्चारण करती हुई अपने ध्यान में राम की प्रतिमा को ऐसे जोर से रखती कि अन्य सब विचार निर्मूल हो जाते और वह अपनी देह की सुध भी नितान्त भूल जाती। वह अपने आपको राम के शरीर में निमग्न, परिणत हुई अनुभव करती। अच्छा, राम के आत्मा के विषय में वह क्या देखती? उसे स्पष्ठ ऐसा प्रतीत और अनुभव होता कि उसका आत्मा राम का आत्मा है। वह यही अनुभव करती कि राम समास्थि और ब्रह्माकार वृत्ति में लीन नहीं वरन् मैं ही ब्रह्माकार वृत्ति मै निमग्न हूं। राम का ध्यान उसका ध्यान होता, और वह समस्त विश्व के साथ तादात्म्य अनुभव करती, उस समय उसे यह अनुभव होता कि मैं ही सारे संसार की सार और आत्मा हूं इस रीति से मानों वह राम की सहायिका और राम उसका सहायक होता था अब यदि आप पूछें कि स्त्री किस प्रकार सहायक हो सकती है? देखो, जब स्त्री अपने पति को ईश्वर समझती है जब ऐसे विचार और ऐसे विचारों का प्रवाह उसके पति को ईश्वर बनाने लगते हैं, तब क्या उसकी मानसिक शक्ति और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामर्थ्य जो इस ओर प्रवाहित है, उसके पति को साक्षात् ईश्वर नहीं बना देगी ? क्या इस रीति से पति को सहायता न मिलेगी कि वह अपने को शुद्ध आत्मा, परमात्मा अनुभव कर सके। अवश्य मिलेगी।

सभी ईसाई वैज्ञानिक विद्वान अपने अनुभव से जानते हैं कि हम जैसा चाहें वैसा ही अनुभव हम किसी भी मनुष्य को करा सकते हैं।

कल्पना करो कि यहाँ एक स्त्री (पत्नी) है, जो सदा ऐसे दिव्य विचार भेजती रहती है जो सदा ऐसा विचार करती है कि 'मेरा पति परमेश्वर है उसके ये विचार आत्म-साक्षात्कार करने में पति के सहायक बनते हैं इसी प्रकार जब पति परमात्मा के साथ अपनी एकता अनुभव कर लेता है, तो पत्नी को सहायता मिलती है। अहा ! कैसा आध्यात्मिक विवाह ! अहा ! उत्तम मिलाप है दोनों परस्पर सहायता करते और सहायता पाते हैं। ऐसे आध्यात्मिक मिलाप पर आधारित विवाह और प्रीति जगत् में अत्यन्त सुखमय होती है केवल मुख के वर्ण पर, मुखरेखा पर, आकार पर या शारीरिक लावण्य पर आसक्ति के कारण से होनेवाले वैवाहिक सम्बन्ध अन्त में बड़े हानिकारक और बड़े दुःखदायक होते हैं। ऐसे विवाह हार्दिक-वेदना, शोक चिन्ता और अन्ततः दुःख उत्पन्न करते हैं।

जिस विवाह में शारीरिक सुन्दरता एवं मुंह के रूप-रंग की कोई गिनती नहीं, अपितु जो अन्तरात्मा को ही देखता है, और जो केवल आध्यात्मिक मिलापजन्य है, वह विवाह निरापद् (आपद्-भय-मुक्त) और चिर-स्थायी होता है। केवल ऐसे ही विवाह सुख एवं आनन्द देने वाले हो सकते हैं।

एक बार एक स्त्री ने महात्मा के पास जाकर पूछा :—"महाराज ! कुछ मास हुए मेरा पति मर गया है। बतलाइये उसके उद्धार के लिए मैं क्या करूं ?" एक दूसरे सज्जन आकर बोले कि "मेरा इकलौता पुत्र मर गया है। उसका वियोग असह्य है; और इसीलिए मैं आत्मघात करने जा रहा हूं।" तीसरे ने कहा—'मेरी स्त्री सदा के लिए मुझसे बिछुड़ गयी है, अब मैं जीना व्यर्थ समझता हूं।" महात्मा ने इन सबको क्या उत्तर दिया ?

वह स्त्री बहुत ही निराश थी और अपने पति का उद्धार करने के लिए भी अतीव उत्सुक थी। अतः महात्मा ने कहा—"तुम अपने पति का उद्धार कर सकती हो, तुम्हें हताश होने की आवश्यकता नहीं। तुम मेरे उपदेशानुसार चल सकती हो। प्रति दिन जब तुम्हारे हृदय में निराशा उत्पन्न होने लगे अथवा जिस समय तुमको अपने पतिदेव का ध्यान उत्पन्न हो आवे, उसी समय तुम झटपट बैठ जाओ, अपनी आंखें बन्द कर लो, और अपने मन में पति के शरीर की कल्पना करो। तुम जानती हो कि मनुष्य की प्रिय वस्तु उसके ध्यान में तुरन्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपस्थित हो आती है। जब वह चित्र या उसका शरीर तुम्हारे मन के सामने आ जावे, तब तुम जरा भी चिन्तित और दुःखित न होना, जरा भी रोना-धोना नहीं। रो-रो कर आँसू बहाने से तुम्हारा पति पृथ्वी की ममता में पड़ जायगा, इस प्रकार तुम उसे संसार के मोह-बंधन में बांध दोगी, और तुम्हारा यह कृत्य नीच और बिल्कुल उल्टा हो जाएगा। तुम्हें उसकी अवनति का प्रयत्न नहीं करना चाहिए। तुम अपने पति के परलोक का चिन्तन कर सकती हो; तुम उन्हें मृतक नहीं, जीवित समझ सकती हो, क्योंकि नेत्र बन्द करने से तुम्हारे पति का चित्र तुम्हें स्पष्टता दीखता है, मानों वह जीवित है। जब वह चित्र उपस्थित हो जाय, बारबार यही भावना करो, यही अनुभव करो कि 'वह ईश्वर है।' उससे ऐसा कहो, समझाओ, उपदेश दो, बारंबार कहो, उसके प्रति यही विचार प्रवाहित करो कि 'तुम ईश्वर हो, प्रभु हो, जगदीश हो; तुम्हारे चित्र में, तुम्हारे शरीर में, तुम्हारी मूर्ति में परमात्मा ही मुझे भासित हो रहा है।"

"जिस प्रकार जब हम टेलीफोन-यन्त्र के पास जाते हैं, और उससे कान लगाते हैं, तब हम कुछ सुनते हैं, उस समय हमें जो कुछ आवाज सुनाई देती है, हम जानते हैं कि उस लोहे के यन्त्र की नहीं, वरन् उस दृश्य के पीछे या यन्त्र की दूसरी ओर पर खड़े अपने मित्र की होती है। इसी प्रकार जब तुम अपने सामने अपने स्वर्गीय पति के चित्र को देखो, तो यह निश्चय करो कि उस चित्र के पीछे अन्तर्गत परमात्मा खड़ा है। उसे सम्बोधन कर कहो, 'तुम प्रभु हो, परमेश्वर हो।' इसी रीति से तुम अपने स्वर्गीय पति का उद्धार कर सकती हो।"

जब हम अपने परलोकगत सम्बन्धियों का उद्धार कर सकते हैं, उनकी उन्नति और सहायता कर सकते हैं, तो उसी विधि से निःसन्देह हम अपने जीवित मित्र का भी उद्धार, उन्नति और सहायता कर सकती हैं।

जब पति-पत्नी अपने जीवन को इस प्रकार व्यतीत करते हैं, तब उनका मिलाप (संयोग) केवल आध्यात्मिक उन्नति का साधन और एक दूसरे के सुख का कारण हो जाता है। कदाचित् तुम कहो कि हर जगह पति मात्र अपनी स्त्री के सुख को बढ़ाना चाहता है; जिससे उसे सुख हो, वह सब कुछ उसके लिए प्रस्तुत करना चाहता है। परन्तु लोग अज्ञान के कारण समझते हैं कि हमने ठीक राह पकड़ी है। वे समझते हैं कि विषय-तृष्णा को पूरी करना और इस प्रकार लोगों को पूरी करना और इस प्रकार लोगों को सुखी बनाना ही उपयुक्त मार्ग है; पर ऐसी बात नहीं है। इन तरीकों से तुम अपने को और दूसरों को केवल नीचे गिराते हो। प्रकृति का नियम है कि जो मुझे सुखी करता है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह तुम्हें अवश्य सुखी बनायेगा। जो मेरे लिए अच्छा है, वह तुम्हारे लिए भी अच्छा है। यदि मैं आगे बढ़ता हूं, तो तुम भी आगे बढ़ोगे ही, मेरा उत्कर्ष तुम्हारा उत्कर्ष है। बिना सारे संसार को बीमार कर डाले मैं स्वयं बीमार नहीं पड़ सकता। अपने शरीर को स्वस्थ रखने से मैं समस्त विश्व को स्वस्थ रखता हूं। आघात और प्रत्याघात बराबर और परस्पर विरोधी होते हैं। Action and Reaction are equal and opposite.

क्रमशः

सच्चा साधु

एक बार एक शिष्य भगवान बुद्ध के पास गया। प्रणाम करके बोला, 'भन्ते, मैं देश में घूमना चाहता हूं। आपके आशीर्वाद का अभिलाषी हूं।"

बुद्ध ने कहा, 'देश में अच्छे और बुरे दोनों प्रकार के लोग हैं। बुरे लोग तुम्हारी निन्दा करेंगे, गालियाँ देंगें।

तुम्हें कैसा लगेगा ?

शिष्य ने उत्तर दिया, 'मैं समझूंगा कि वे बड़े भले हैं।

क्योंकि उन्होंने 'मुझ पर धूल नहीं फेंकी।'

बुद्ध ने कहा, 'यदि कुछ लोगों ने धूल भी दी और थप्पड़ भी मार दिया तो ?'

शिष्य ने कहा, 'मैं उन्हें भी भला ही मानूंगा क्योंकि उन्होंने थप्पड़ ही तो मारा, डंडा तो नहीं मारा।"

'यदि किसी ने डंडा मार दिया तो ?'

'तो भी मैं उसे बुरा नहीं मानूंगा क्योंकि उसने हथियारों से तो नहीं मारा'—शिष्य ने उत्तर दिया बुद्ध ने आगे कहा, 'देश में डाकू मिल सकते हैं जो हथियारों से तुम्हारी खबर लें।"

'तो क्या हुआ ?' शिष्य ने कहा, 'मैं उन्हें दयालु ही समझूंगा क्योंकि उन्होंने मुझे जीवित छोड़ दिया।'

बुद्ध ने कहा, 'वे तुम्हे मार भी तो सकते हैं।'

शिष्य के कहा, 'इसके लिए मैं उनका एहसान ही मानूंगा। यह संसार दुःख-स्वरूप है। बहुत दिन जीने से दुःख ही दुःख देखना पड़ता है। पर आत्म-हत्या करना महापाप है। यदि कोई दूसरा मार दे तो उसका उपकार ही होगा।'

शिष्य के उत्तर से भगवान बुद्ध बड़े प्रसन्न हुए, उन्होंने कहा, 'सच्चा साधु वही है जो किसी भी अवस्था में किसी को बुरा नहीं मानता, जो किसी की बुराई नहीं देखता। दूसरों को अच्छा ही समझता है वही परिव्राजक होने के योग्य है। तुम जाओ और देश में खूब घूमो।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामायण चरित्र चित्रण

लक्ष्मण

स्वामी तीर्थानन्द 'अज्ञ'

आज घर-घर में रामचरित मानस का प्रचार हो गया है। हर व्यक्ति के मुख से रामायण की सुन्दर चौपाईयाँ सुनी जा सकतीं हैं। किन्तु यह सब धर्म ग्रन्थों के कथनानुसार लोग कर रहे हैं। थोड़े गहराई मे जाकर उसपर विचार करने के लिये कोई उत्सुक नहीं है। आजतक अनेक विद्वानों ने रामायण के नायक श्रीराम पर तो बहुत कुछ लिखा हैं। किन्तु 'राम' की कीर्ति पताका को सतत फहराये रखने वाले 'लक्ष्मण' के बारे में किसी ने भी नहीं लिखा। अतएव आज हम इस पर प्रयास करने जा रहे हैं।

यदि राम कीर्ति की पताका है तो लक्ष्मण पताका-दंड है। ओर लकड़ी के बने हुए उस दंड की ही पूजा होती है। लक्ष्मण को व्यक्तिमत्व और विभुतिमत्व की अनुपम प्रतिमा ही समझना चाहिए।

राम का चरित्र ध्येय रूप है, लक्ष्मण का आचरण उसे प्राप्त करने की साधना की राह दिखाता है। साधक की कठोर साधना, अनुयायी का असि धारा व्रत अर्थात् तलवार की धारा पर चलते रहने वाला प्रगाढ़ प्रेम ही लक्ष्मण है। लक्ष्मण ने अपनी उग्र साधना का ऐसा महान् आदर्श दुनिया के सामने रखा की जिसकी तह तक पहुंचने के लिये हमें अनेक जन्मों तक परिश्रम करने पड़ेगे। सम्पूर्ण रामायण पढ़ने के बाद इतनी महान साधना होने पर भी हमारे ऊपर लक्ष्मण का प्रभाव नहीं पड़ता। लक्ष्मण परदे के पीछे रह जाते हैं। क्योंकि वह राम के छाया रूप थे। उनके जीवन में राम के साथ कहीं भी संघर्ष देखने को नहीं मिलगा। जिस प्रकार एक विशाल वृक्ष की छाया में दूसरा वृक्ष पनप नहीं सकता, उसी प्रकार लक्ष्मण का चरित्र राम के अति भव्य और दिव्य चरित्र में लुप्त हो गया है। लक्ष्मण राम के बिना जीवित ही नहीं रह सकते उन्हें राम का वियोग हुआ नहीं। और जब वियोग हुआ उस समय तुरन्त ही लक्ष्मण ने यह संसार त्याग दिया है। जब की राम के वियोग में वंश-रक्षा के लिये सीता जीवित रही। राम के वियोग में दुःख उठाते-उठाते भरत ने चौदह वर्ष बिता डाले। किन्तु, लक्ष्मण के लिये तो राम का वियोग ही उनके जीवन का पूर्णविराम बन जाता।

राम का भी लक्ष्मण के ऊपर असीम प्रेम, हृदय से भी बढ़कर प्रेम था। स्वयं भगवान राम लक्ष्मण के लिये कहते हैं-'यो मद्भवतः स मे प्रियः'। राज्याभिषेक के समय राम लक्ष्मण को कहते हैं कि 'लक्ष्मण ? मया सार्धंप्रशाधि त्वं वसुधराम'। 'लक्ष्मण तुझे ही राज्य करना है। इतनी उच्च भावना से भरा हुआ उन दोनों का जीवन महान है। अभिन्न है। लक्ष्मण को शक्ति लगने से जब वह मूर्छित पड़ते हैं तो राम कहते हैं—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'नहि मे जीवितेनार्थः सीतयां च जयेनवा।
कोहि मे जीविनेनार्थः त्वयि पंचत्वमाँगते ॥
देशे देशे कलत्राणि देशे देशे च बांधवः।
तंतु देशं न पश्यामि यत्र भ्राता सहोदरः ॥

यह दोनों श्लोक बतलाते हैं कि राम लक्ष्मण की ओर किस दृष्टि से देखते थे। राम शब्द का अर्थ लक्ष्मण के कारण ही था। लक्ष्मण निकाल दिया जाय तो राम विलाप करते हुए कहते हैं "सीता न मिले तो कोई बात नहीं, परन्तु यदि लक्ष्मण चला जाय तो मेरे प्राण ही निकल जायेंगे"। यत्र भ्राता 'सहोदरः'। राम का इतना उत्कष्ट प्रेम केवल लक्ष्मण के प्रति है। मां जानकी भी हनुलान से कहती है—"मत्तः प्रियतरो नित्यं भ्राता रामस्य लक्ष्मणः"। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि राम को लक्ष्मण सीता से भी अधिक प्रिय था।

लक्ष्मण का धर्म कर्तव्य सब कुछ राम ही थे। उनके लिये प्रेम और कर्तव्य का प्रश्न ही नहीं उठता। राम ही उनके सर्वस्व थे। राम के साथ वनवास जाते समय वे धर्म पत्नी उर्मिला को केवल 'मैं जाता हूं' इतना कहकर चल पड़े। पति कर्तव्य का विचार भी नहीं किया। जहां राम का सम्बन्ध आया वहां उन्हें दूसरी कोई बात सूझती नहीं थी। लक्ष्मण महा पराक्रमी थे। राक्षसों के संहार में उनका बड़ा भाग था राम ने रावण को मारा। किन्तु, उसमें कोई विशेषता नहीं थी। क्योंकि रावण का अनेक बार पराभव हो चुका था। परन्तु लक्ष्मण ने इन्द्रजीत को मारा है जो कि अजेय था। जिसने जीवन में कभी पराजय का मुख नहीं देखा था। सम्पूर्ण राक्षस सेना इन्द्रजीत के बल पर निर्भय रहती थी। ऐसे अजेय इन्द्रजीत का वध केवल महापराक्रमी एवम् बुद्धिशाली लक्ष्मण द्वारा हुआ था।

उनकी बुद्धि प्रगल्भ थी। दशरथ ने जिस समय राम को वनवास जाने की आज्ञा दी। उस समय दशरथ को बांधकर भी राम का राज्याभिषेक करना चाहिये ऐसी लक्ष्मण की हार्दिक इच्छा थी, उसी समय बुद्धिशाली लक्ष्मण ने राम के सामने अपनी दलीलों द्वारा यह बात सिद्ध कर दी कि दशरथ को क्यों बांधना चाहिये। परन्तु जैसे ही राम ने कहा कि 'यह बात योग्य नहीं' बस, समाप्त? फिर कोई दलील नहीं, आगे प्रश्न नहीं, विचार नहीं। 'Not to questivn why, but to do or die' करो या मरो। दो कर्तव्यवान, बुद्धिमान अथवा पराक्रमी व्यक्ति कभी एक दूसरे के अधीन नहीं रहेंगे। परन्तु रामायण में लक्ष्मण ने अपने को राम में समर्पित करके यह सिद्ध कर दिया कि राम और लक्ष्मण दो नहीं बल्कि एक हैं यही लक्ष्मण की विशिष्टता है।

जिसका चरित्र उज्ज्वल होगा उसी को रघुकुल में जन्म लेने का अधिकार है। लक्ष्मण चरित्र का अति देदीप्यमान था। चरित्र के सम्बन्ध में लक्ष्मण को चुनौती देने वाला व्यक्ति जगत में उत्पन्न नहीं हुआ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ गीत ॥

शास्त्री बलदेव राज "शान्त"

एक साँस शूल सी
एक साँस फूल सी
एक साँस आग सी
एक साँस बाग सी
इस तरह ही जिन्दगी एक दिन गुजर गई ॥१॥

एक अश्रु नेह का
एक अश्रु खेह का
एक ध्यान भुक्ति का
एक ध्यान मुक्ति का
इस तरह ही जिन्दगी एक दिन गुजर गई ॥२॥

एक साँस कैद है
एक साँस है खुली
एक साँस है मलिन
एक साँस है धुली
इस तरह ही जिन्दगी एक दिन गुजर गई ॥३॥

एक साँस दे रही
एक साँस ले रही
एक साँस उठ रही
एक साँस मिट रही
इस तरह ही जिन्दगी एक दिन गुजर गई ॥४॥

एक साँस धूर है
एक साँस नूर है
एक साँस रूप की
एक साँस धूप की
इस तरह ही जिन्दगी एक दिन गुजर गई ॥५॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संयम और सिद्धि

प्राचीन समय में मिस्र देश में जुन्नून नाम के एक पहुँचे हुए महात्मा थे। प्रसिद्ध मुसलमान सन्त युसुफ हुसेन अपनी युवावस्था में उनसे धर्म की दीक्षा लेने गए। वे चार वर्ष तक वहां रहे, परन्तु इस बीच में —महात्मा ने उनसे यह भी नहीं पूछा था कि तुम कौन हो और क्यों आये हो। चार वर्ष बाद उन्होंने एक दिन उनके आने का प्रयोजन पूछा, उसके बाद एक छोटा सा बक्स उनके हाथ में देकर वे बोले- यूसुफ मेरा एक मित्र यहां से दूर नील नदी के किनोर अमुक स्थान पर रहता है। इस बक्स को बड़ी सावधानी से ले जाकर उसे दे आओ, तब आकर दीक्षा लेना। यूसुफ हुसेन उस व्यक्ति का नाम – धाम जानकर बक्स के साथ चल पड़े। रास्ते में उन्होंने सोचा कि इसको खोलकर देखना चाहिए कि भीतर क्या है? बक्स में ताला नहीं लगा था, इसलिए उसे खोलकर फिर ज्यों का त्यों बन्द किया जा सकता था। कुछ देर तो वे आगा पीछा करते रहे, लेकिन बिना देखे मन नहीं मानता था। कौतुहलवश उन्होंने धीरे से बक्स का ढक्कन ऊपर उठाया। उसके खुलते ही भीतर से एक चूहा कूदकर बाहर निकल गया। उसके अतिरिक्त उसमें कुछ नहीं था।

यूसुफहुसेन समझ गए कि महात्मा ने उसमें केवल चूहा ही रखा था। उसके निकल जाने से सारी पूंजी ही नष्ट हो गई। वे अपनी भूल पर पछताने लगे। चूहा तो फिर मिला नहीं, इसलिए वे खाली बक्स को बन्द करके आगे बढ़े और चलते चलते निश्चित स्थान पर पहुंच गए। यहाँ जुन्नून के सन्त मित्र को खाली बक्स देकर वे चोर की तरप चुप-चाप एक ओर खड़े हो गये।

सन्स ने बक्स खोला। उसमें कुछ न पाकर वे बड़ी गम्भीरता के साथ बोले, अब महात्मा जुन्नून तुम्हें दीक्षा नहीं देगे। उन्हें तुम्हारे चित्त संयम पर सन्देह था। तुम्हारी परीक्षा लेने के लिए उन्होंने जान बूझकर इस बक्स में चूहा बन्द करके भेजा था। तुम एक चूहे को सम्भालकर यहाँ तक नहीं ला सके। इससे तुम्हारे चित्त की दुर्बलता प्रगट होती है। जब तुम एक चूहे की यत्न पूर्वक रक्षा नहीं कर सके तो अपने हृदय में परमात्मा को कैसे धारण करोगे। जाओ लौट जाओ, पहले स्वभाव और चरित्र से धैर्यवान और विश्वासपात्र बनो, तभी तुम जुन्नून जैसे ज्ञानी महात्मा के शिष्य बनने के अधिकारी हो सकते हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यूसुफ हुसेन खिन्न होकर लौट आए और जून्नून के सामने दीक्षा के लिए उपस्थित हुए। जून्नून ने कहा यूसुफ अभी तुम परम ज्ञान के अधिकारी नहीं हो मैंने तुम्हें एक चूहा सौंपा था तुमने उसे गंवा दिया। धर्म ज्ञान जैसी अमूल्य वस्तु को तुम कैसे सुरक्षित रखोगे ? उसके लिए तो बड़ा संयम चाहिए। तुम लौट जाओ और अपने चित्त को वश में करने का अभ्यास करो। संयम के बिना सिद्धि दुर्लभ है। यूसुफ हुसेन महात्मा जून्नून की बात मानकर लौट गए और आत्म-संयम का अभ्यास करने लगे। कई वर्ष की कठोर साधना के बाद वे पूर्ण आत्म विश्वास के साथ दुबारा महात्मा जून्नून के पास गए। इस बार उनका मनोरथ सिद्ध हो गया। महात्मा जून्नुन ने बड़े हर्ष के साथ उन्हें धर्म की दीक्षा दी, आगे चल कर यूसुफ हुसेन स्वयं एक सिद्ध महात्मा बन गए। उनका संयम ही उनकी सिद्धि, प्रसिद्धि का कारण था।

शंकर जयन्ती

देश के इतिहास ने उस दिन एक नया पन्ना पलटा जब श्रृंगेरी, पुरी, द्वारिका और ज्योतिर्मठ के चारों महान शंकराचार्य शंकर जयन्ती के पावन पर्व पर पावन श्रृंगेरी नगर में एकत्र हुए। यह ऐतिहासिक तीर्थस्थान कदली फल (केलों) का सुप्रसिद्ध केन्द्र हैं।

चारों जगद्गुरुओं का समागम सुप्रसिद्ध शारदाम्बा मन्दिर में हुआ जिसका आदि शंकर ने नवीं शताब्दी में निर्माण किया था। इसमें उन्होंने प्रवहमती तुंग नदी के पथरीले तट पर ईश्वरीय माँ के सूचक 'श्री चक्र' कीं स्थापना की थी। इसको स्थापित करने के अनन्तर आदि शंकर ने यहाँ १२ वर्ष तक निवास किया।

गत १२५ वर्षों में चारों महामान्य जगद्गुरूओं का यह प्रथम संम्मेलन था।

श्री शंकर मन्दिर की पाठशाला में उन्होंने एक घन्टा तक एकान्त में विचार विनयम किया।

श्रृंगेरी के परम्परागत ३५ वें शंकराचार्य ६२ वर्षीय श्री स्वामी अभिनव विद्यातीर्थ जी महाराज जो शारदा मठ के मूर्द्धन्य महानाचार्य है, ने वहां पधारने वाले तीनों शंकराचार्यो का शारदाम्बा मन्दिर में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वेदमंत्रों की ध्वनि, शंकरनाम और नादस्वर के मध्य स्वागत किया। तदनन्तर वे उन्हें शारदा मन्दिर के भव्य विशाल प्रांगण में ले गये जहाँ उस समय पूजा हो रही थी। वहाँ के इष्टदेव की अर्चना होने के बाद आचार्यों ने मन्दिर की प्रदक्षिणा की और श्रृंगेरी के जगद्गुरू की अगवानी में पाठशाला को लौट गये। श्रृंगेरी नगर कर्नाटक प्रान्त के चिकमगलूर जिले के अन्तर्गत तुँग नदी के तट पर स्थित है जहां आदि शंकर ने सर्वप्रथम अपना सर्वप्रमुख मठ बनाया था। इस मण्डित मठ की प्रत्येक वीथि (गली) ध्वजाओं एवं झंडियों से सुसज्जित थी।

सर्वश्री स्वामी अभिनव सच्चिदानन्द तीर्थ (द्वारिका) श्रध्देय निरंजन देव तीर्थ (पुरी) और अर्चनीय स्वरूपानन्द सरस्वती (ज्योमिर्मठ) उस मन्दिर में एक साथ पधारे और उनका श्रृंगेरी मठ में वहाँ के शिष्यों, पदाधिकारियों और चारों पीठों के महान शिष्यों ने अभिनन्दन किया। जगदगुरूओं के दर्शनार्थ बहुत व्यक्ति मन्दिर में उपस्थित थे और प्रांगण में तो बहुत अधिक भीड़ थी।

पाठशाला में सभी महानाचार्यों ने शंकर मन्दिर के लिए प्रस्थान किया जहाँ भव्य परम्परागत विधि से आदि शंकर की पूजा की गयी॥

—प्रो० भारत बन्धु शर्मा

यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथागुरौ।

'यस्य देवे परा भक्ति र्यथा देवे तथा गुरौ' जिसकी देव में, जिसकी भगवान में अनन्य भक्ति है, और भगवान के समान गुरु में भक्ति है ऐसा व्यक्ति ही, परमब्रह्म परमात्मा को प्राप्त होते है। भगवद्भक्ति अव्यक्त में प्यार तथा भक्ति है। गुरु भक्ति व्यक्त में भक्ति है जो व्यक्त में निष्ठा, प्यार भक्ति भाव नहीं रख सकता वह व्यक्ति अव्यक्त में क्या भाव रखेगा। व्यक्त में भक्ति भाव ही अन्त में अव्यक्त में प्रगट होता है। प्यार श्रद्धा, निष्ठा भाव से उत्पन्न होती हैं। अव्यक्त में विचार से, ज्ञान से, भाव शक्ति रूप है अतः व्यक्त में भक्ति मे भक्ति "बलवती श्रद्धा और निष्ठ होती है किन्तु विचार में भक्ति ज्ञान के अशक्त होने केबाद निर्बल होती अतः ज्ञानमय भक्ति को पुष्ट करने के लिए बल वती करने के लिए सजीव रूप देने के लिए भाव की आवश्यकता है। भावमय एकीभाव सशक्त एकीभाव है। जिसे इमोशनल एण्टीग्रेसन कहते है। गुरु के साथ इमोशनल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐण्टीग्रेसन होने से, उसके वाक्य, उनका पथ प्रदर्शन ससक्त होता है।

जब गुरु में अनन्त प्यार अनन्त निष्ठा होती है, तब पूर्ण विश्वास होता है। विश्वास का असन्निद्ध रूप ही श्रद्धा है, और श्रद्धा मन देव सीता के अपहरण के अनन्तर वन वन में भटकते हुए भगवान राम अन्त में मतङ्ग, ऋषि के आश्रम पर पहुँचते है। आश्रम के दर्शन मात्र से राम का शोक निवृत्त हो जाता है। मन आह्लादित, और तन पुलकित शरीर में नई स्फूर्ति का संचार कितना सुहावना है, इसके कणमें कणमें वेद ध्वनि सुनाई दे रही है सामने हवन कुण्ड में अग्नि प्रज्वास है। ऋषियों के दर्शन नहीं हो रहे है, किन्तु उनके द्वारा उच्चरित वेद मन्त्र सुनाई दे रहो है। आश्रम के पक्षी वेद के मन्त्रों का गान कर रहे है। लक्ष्मण मुझे यहां अपनत्व की अनुभूति हो रही है मुझे ऐसा प्रतरेत होता है कि आश्रम मेर हीं स्वरुप है, और वेद ध्वनि मेरा ही प्राण है। भगवान राम की आँखे बन्द हैं न जाने किस ध्यान में खोये हुए खड़े हैं। शबरी ने राम के चरणों में नमस्कार की ध्यान भङ्ग हुआ' देखा की एक वृहा तपस्विनी जिसके सिर पर जटाए थों, राम के चरण पकड़े हुए थी शवरी ने भगवान को अर्घादि देकर आसन पर बैठाया।

शवरी! क्या तुम्हारा क्रोध तुम्हारे नियन्त्रण में है? तुम्हारा मन तुम्हारे वश में है? तुमने क्या तपश्चर्या की। यह पूछते हुए अन्त में भगवान राम ने कहा,

क्वचित्ते पुजिताः गुरवः —

शबरी क्या तुमने गुरुजनों का पूजन ठीक से किया?

शबरी जो आनन्द सागर में डूबी हुई थी। उसका शरीर और वाणी स्तम्भित थी। गुरु देव शब्द सुनते ही उसमें गति उत्पन्न हुई। तत्काल बोल उठी, धैप पूजिताः गुश्वः मैंने आज अपने गुरुजनों को पुजन पूर्ण कर दिया, राम मैं आपका पूजन नही कर रहीं गुरुदेव की आज्ञा अनुसार अपने परम पूज्य गुरु देव मतङ्ग का पूचन कर रही हूं। आज मेरे गुरु देव मेरे संमुख है। देव रूप में और राम रूप से, राम मुझे तुममें गुरूदेव के दर्शन हो रहे है। अतः गुरु के रूप में आपका पूजन कर रहो हूं। मैं गुरु आज्ञा से इस निर्जन वन में निवास करती थी, निर्जन वन में निवास करते हुए भी मुझे कभी भी भय नहीं हुआ। १२ वर्ष से मैं गुरु आज्ञा को लेकर तुम्हारे आतिथ्य के लिए उत्कण्ठित बैठी थीं, मैं जानती थी, कि तुम्हें आना पड़ेगा। तुम आये मेरे गुरु के संकल्प के आधीन होकर। मुझे आपके दर्शन हुए गुरु देव के अनुग्रह से आपकी पूजा का अवसर मिला शबरी की गुरु भक्ति ने एक साकार रूप धारण किया, राम रूप धारण किया।

हम भी इस पवित्र गुरु पूर्णिमा के अवसर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर शबरी के समान गुरु भक्ति के व्रत का आवरण करें एक दिन आयगा जब हमारी गुरु भक्ति हमें साक्षात भगवान रूप से दर्शन देगी, शबरी के तुल्य तुम्हारा जीवन सफल होगा। जीवन की सफलता गुरु चरणों में प्यार से प्राप्य है। ये गुरु पूर्णिमा का उत्सव अत्यन्त प्राचीन पर्व है। भारतीय संस्कृति की पवित्र आत्मा इस पर्व में प्रगट होती है। इस दिन सभी शिष्य गुरु देव के सान्निध्य को पाकर भव सागर को अनायास पार

★★★

शिव भक्त अंग्रेज फौजी कमान्डर

सज्जैन से कुछ ही दूर एक नगर है। आगर से डेढ़ मील दूर बैजनाथ महादेव का सुन्दर मन्दिर है। बाणगंगा के तट पर बना हुआ यह मंदिर भक्तों को उल्लास देता है।

पहले यह मंदिर जीर्ण शीर्ण दशा में था। इस मंदिर के पुन निमाण के सम्बन्ध में एक इतिहास जुड़ा हुआ है।

अक्टूबर सन् १८७९ में भारत — अफगान युद्ध प्रारम्भ हुआ था उस समय ब्रिटिश साम्राज्य था।

अफगान फौज का सेनापति, काबुल और कंधार के चारों ओर के पहाड़ी इलाकों में अंग्रेजी सेना को परास्त कर आगे बढ़ रही थी।

उस समय आगर के समीप अंग्रेज सेना की छावनी थी। इस छावनी को गोरखा फौज के कमांडर लेफ्टीनेन्ट मार्टिन थे। ब्रिटिश प्रधान सेनापति ने उनको अफगान युद्ध क्षेत्र में जाकर शूरता दिखलाने का आदेश दिया।

लैफ्टीनेन्ट मार्टिन अपनी गोरखा बटालियन लेकर युद्ध स्थल पर गये और चरसिय नामक पहाड़ी स्थान पर पहुंचे।

पहले अंग्रेज सेना की ७२ वी कंपनी ने युद्ध लड़ा और पहाड़ी की एक चोटी पर अधिकार कर लिया।

युद्ध में भयानकता आई और सारी सेना को आगे बढने का आदेश मिला।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हृदय परिवर्तन

एक दिन गुरु नानक देव अकेले बैठे हुए थे। एक डाकू उनके पास आया और उनके चरणों में गिर कर कहने लगा, डाकू हूं। अपने जीवन से परेशान हूं। अपने को सुधारना चाहता हुं। मुझे कोई उपाय बताइए, मेरा मार्ग दर्शन कीजिए।

नानक देव पहले तो उस डाकू के हाव भाव देखते रहे फिर बोले, तुम आजसे डाका डालना और झूठ बोलना छोड़ दो सब ठीक हो जाएगा। डाकू उन्हे प्रणाम करके लौट गया।

लेकिन कुछ दिन के बाद फिर आया और कहने लगा, मैंने झूठ न बोलने और डाका न डालने की भरहक कोशिश की, मगर इन आदतों को छोड़ नहीं पाता। लेकिन मैंने सुधयना अवश्य चाहता हूं। आप मुझे कोई उपाय बताइए। और वह उनके चरणों में गिर पड़ा।

गुरु जी पुन : सोच में पड़ गए। फिर उनके ओठों पर मुस्कान आई। वे उससे बोले, अच्छा, जो तुम्हारे मन में आए करो, लेकिन दिन भर झूठ बोलने डाका डालने के बाद प्रतिदिन लोगों के सामने अपने इन सब कामों का बखान कर दो।

डाकू को यह उपाय बहुत आसाय मालूम हुआ। वह प्रणाम करके चला गया। इस बार बहुत दिन बीत गए डाकू लौट कर नहीं आया। फिर एक दिन ज गुरु जी ध्यान मग्न थे, अचानक वह उनके सामने जा खड़ा हुआ। गुरु जी ने जब उसे पास खड़े देखा तो पूछा बहुत दिनों के बाद लौटे हो।

डाकू बोला:– में आप के बताये उस उपाय को बहुत आसान समझता था, लेकिन वह तो बहुत कढ़िन निकला। लोगों के सामने अपनी बुराइयां प्रकट करने में तो लाज आती है, सो मैंने बुरा काम करना ही छोड़ दिया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शत्रु सेनिकों गोरखों पर आकमण कर दिया। लेफिटीनेन्ट मार्टिन के नेतृत्व में सेना ने शत्रुओं से मुठमेड़ ली और उन्हें खदेड़ा।

अफगान फौज ६० गज पीछे हट गयी। और वहां से लड़ने लगी, घयासान युद्ध हुआ। अब ९२ वी हाइलैंडस कंपनीने आगे बढ़ कर अफगान फौज को पीछे हटने को विवश किया और उस पहाड़ी स्थान पर अंगरेज सेना का अधिकार हो गया।

लेफ्टीनेन्ट मार्टिन सेना के साथ युद्ध में में गये थे। परन्तु उनकी धर्मपत्नी श्रीमती मार्टिन आगरा छावनी में ही रही।

भारत–अफगान युद्ध दीर्घकाल तक चला। एक बार ऐसा हुआ कि श्रीमती मार्टिन को अपने पति का बहुत दिनों तक कोई समाचार नहीं मिला तब वह बहुत चिन्तित हुई।

वह सोचने लगी कि अफगान सैनिक खुंखार लड़ाकू है,। इस युद्ध में मेरे पति का क्या हाल होगा यह कहना बहुत मुश्किल है। ऐसे अमंगल विचारों में डाले हुए उन्होंने रात बिताई।

प्रातःकाल होने पर वह घोड़े सवार होकर, मन बहलाने के लिए मार्ग पर निकल पडी जो बैजनाथ मंदिर को जाता था।

मंदिर वन के बीच में था परन्तु श्रीमती मार्टिन मंदिर तक पहुंच गयी। उन्होंने कुछ लोगों को मंदिर के अंदर जाते और पूजा करते हुए देखा।

वह अपने घोड़े से उतर पड़ी और घोड़े को एक वृक्ष की शाख से बाँध दिया। वह मंदिर के भीतर गयी और आँगन के एम चौतरे पर बैठ गयी।

एक अंग्रेज महिला को वहां बैठा हुआ देख कर पुजारी उसके पास आया। श्रीमती मार्टिन ने उससे पूछा! यह किसका मंदिर है और ये लोग यहाँ क्या कर रहे हैं?

पुजारी ने कहा – यह भगवान शिव का मंदिर है। लोग इन मनोकामना पूर्ण करने वाले शिवजी की पूजा कर रहे है।

श्रीमती मार्टिन ने फिर पूछा – पूजा किस प्रकार की जाती है।

पुजारी ने उन्हे भगवान की पूजा करने की विधि बताई।

श्रीमती मार्टिन ने पुजारी से भगवान् शिव की आराधना संबन्धी कई बातें पूछी, जिसका उसने उन्हें थोड़ा विवरण देकर समझा दिया।

इस बातचीत से श्रीमति मार्टिन को भगवान शिव पर आस्था जम गयी। और उन्होंने पुजारी से पूछा। जब भगवान शिव सबकी मनोकामना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूरीं करते है क्या मेरी मनोकामना भी पूरी है तो क्या मेरी मनोकामना भी पूरी करे गें ?

पुजारी ने कहा – अवश्य! भगवान सबके प्रति दयालु हैं। जो सच्चे हृदय से उनकी भक्ति करता है, उस पर प्रसन्न होकर वह उसकी मनो—कामना पूरीं कर देते है।

यह सुनकर श्रीमती मार्टिन ने पति के विषय में अपनी चिन्ता व्यक्त की और उनसे पूछा कि क्या उपाय करने से उनकी रक्षा हो सकती है ?

पुजारी ने कहा - सच्चे हृदय से भगवान शिव के मंत्र ऊं नमः शिवाय का जप करें और पूजा के लिए ब्राह्मणों द्वारा रुद्राभिषेक यानी शिवजी को जल से स्नान कराये भगवान आपकी मनोकामना अवश्य पूरी करेंगे।

श्रीमती मार्टिन को भगवान शिव पर श्रद्धा हो गयी। उन्होंने रूद्राभिषेक कराने की अपनी स्वीकृति दी और पूजन सामग्री जुटाने के लिए पुजारी को कुछ रुपये दिये। रूद्राभिषेक आरम्भ करने का एक दिन निश्चित हुआ।

नियत दिनको शुभ घड़ी में १८ ब्राह्मणों ने पाठ प्रारम्भ किया।

११ दिनों तक रुद्राभिषेक करने पर पाठ के सहित महारुद्र यज्ञ पूरा हुआ।

इन ११ दिनों तक श्रीमती मार्टिन प्रति—दिन प्रातःकाल स्नान करके छावनी से मंदिर आती और रूद्राभिषेक पाठ में सम्मिलित होती।

११ वें दिन महारुद्र के पूर्ण होने पर उन्होने ब्राह्मणों को भोजन कराकर तथा दक्षिणा देकर संतुष्ट किया।

उस दिन जब छावनी वापस आयी तो एक सार्जेन्ट ने उनके घर आकर उनके हाथ में एक लिफाफा देते हुए कहा – आपका पत्र युद्ध क्षेत्र से आया।

श्रीमती मार्टिन ने लिफाफा खोल कर देखा तो वह उनके पति का ही पत्र था। वह प्रसन्न-चित्त से पत्र पढ़ने लगी। जैसे – जैसे वह पत्र पढ़ती जाती वैसे-वैसे उनके मन की प्रसन्नता बढ़ती जाती थी।

पत्र लंबा था। उसका संक्षेप सार इसकार था।

मैं प्रसन्न हूं। इस भयंकर युद्ध मे हमारी जीत हुई हैं। परंतु अनेक आपत्तियों में फसने पर भी अंत जीत हुई।

एक बार ऐसा अवसर आया कि हम घिर गये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परन्तु आश्चर्य में डालनेवाली बात यह हुई कि ऐसी कठिन परिस्थिति में मुझे एक जटाधारी महा-योगी हाथ में त्रिशूल लिए हुए बार-बार दीखता रहा जो कठिनाईयों में मेरी रक्षा करता रहा। उस-ने मुझे मृत्यु के मुख में जाने से कई बार बचाया।

अब जीत पूरी तरह हो गयी है। मैं जल्दी-ही वहां आ पहुचूंगा।

अपने पति के पत्र को पढ़कर श्रीमती मार्टिन को भगवान शिव पर श्रद्धा और बढ़ गयी।

कुछ ही दिनों में लेफ्टीनेन्ट मार्टिन छावनी वापस आ गए।

अपने पति के सकुशल वापस आने पर श्रीमती मार्टिन बहुत खुश हुई। उन्होंने अपने पति से भगबान शिव की पूजा के सम्बन्ध में सारा हाल बताया।

लेफ्टिनेन्ट मार्टिन ने कहा कि युद्ध क्षेत्र में कठिन परिस्थितियों में जटाजूटधारी भगवान शिव ही रक्षा करते हुए उनको दिखाई देते थे।

अब उनको भी भगवान शिव पर श्रद्धा हो गयी।

पति-पत्नी प्रतिदिन वैजनाथ बाबा के दर्शन करने जाने लगे।

एक दिन उनका ध्यान मंदिर की जीर्ण शीर्ण दशा की ओर गया। उन्होंने नया मंदिर बन-वाने के सम्बन्ध में विचार विमर्श किया।

लेफ्टीनेन्ट मार्टिन ने कई हजार रुपये खर्च करके मंदिर के पक्के भवन का निर्माण कराया।

वैजनाथ मूर्ति की पुन: प्रतिष्ठा की गयी। ये मूर्ति अत्यन्त प्राचीन है, परन्तु वर्तमान मन्दिर लेफ्टीनेन्ट मार्टिन की देन कहा जायेगा।

मंदिर के शिखर पर सुशोभित दो सोने के कलश आज भी भक्तों को दूर से ही आकर्षित करते है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दक्षिण के कबीर तिरुवल्लुवर

—बल्लभ दास बिन्नानी व्रजेश

दक्षिण भारत के सुविख्यात संत तिरुवल्लुवर भी कबीर की तरह जुलाहे थे। अपने बुने कपड़े स्वयं आस पास के गाँव में बेचते थे। उनके सौम्य स्वभाव और भक्तिभाव की सर्वत्र प्रशंसा सुनकर एक स्वच्छन्द युवक ने उनकी परीक्षा लेने का निश्चय किया। जब संत उस युवक महल्ले मे वस्त्र बेचने पहुंचे तो उन्हें रोक कर एक साड़ी का भाव पूछा-इस एक टुकड़े का क्या लोगे ?

एक रुपया संत ने चेहरे पर वही सौम्यता रखते हुए सस्मित उत्तर दिया।

युवक ने उस टुकड़े को भी दो भागों में फाड़ दिया और उनमें से एक को संत के सामने रखते हुए पूछा-अब ?

सिर्फ आठ आने। संत की आकृति में लेशमात्र भी आक्रोश न था पर युवक को अभी चैन नहीं था। उसने उसे भी चीर डाला और कहा-अब ये टुकड़े तो मेरे किसी भी काम के नहीं।

सही हैं भई- संतने कुछ भी विरोध किए उसके कथन से सहमति प्रकट की-ये टुकड़े तुम्हारे काम के नहीं रहे-तुम उन्हे जैसे हैं वैसे ही रहने दो मैं इन सबको जोड़ कर फिर पूरी साड़ी बना लूंगा। कोई लेने वाला मिल जायेगा।

संत का उत्तर सुनकर युवक चुप गया। बोला-महाराज ये टुकड़े आपके भी काम नहीं आयेंगे। लीजिए मैं इनका मूल्य चुका दूं।

नहीं भई-संत ने अस्वीकार करते हुए-काह जो कपड़ा तुम्हारे काम का नहीं उसके पैसे मैं कैसे ले सकता हूं। और बेटा क्या यह समझते हो कि तुमने जो नुकसान किया है, तुम्हारे दो रुपये उसकी पूर्ति कर देगें ?

बेचारे किसान ने कितनी मेहनत से कपास उगाया, उसकी मेरी पत्नी ने कितने दिनों से परिश्रम से काटा, फिर उसे रंगा-बुना, तब यह साड़ी बनी। इतनी मेहनत के बाद बनी साड़ी पर किए गये श्रम की सार्थकता तो इसी मे है कि यह किसी के पहनने के ही काम आए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्व भूत हिते रता:

ॐ

गुरुपूर्णिमा महोत्सव

वंदे बोधमयं नित्य गुरूं शंकररूपिणम् ।
यमाश्रितो हि वक्रोऽपि चन्द्रः सर्वत्र वन्द्यते।।

आप सबको यह सूचित करते हुए अत्यन्त हर्ष होता है कि इस वर्ष गुरुपूर्णिमा महोत्सव परमश्रद्धेय आचार्य श्री स्वामी अमरमुनि जी महाराज की उपस्थिति में दिनांक ९ जुलाई १९७९ तदनुसार सोमवार को राजपुर आश्रम पर प्रातः ९ बजे से आयोजित किया जा रहा है। इस महोत्सव में समाधिपूजन, गुरुपूजन, गीतापाठ, यज्ञादि धार्मिक कृत्यों के साथ ही इसके महत्व पर पधारे हुए विद्वान प्रवक्ताओं द्वारा दिये गये प्रवचनों के श्रवण का भी लाभ होगा!

अतः इस अवसर पर आपको अपने इष्ट-मित्रों सहित रामदरबार सादर आमन्त्रित करता है।

निवेदक
काका हरिओ३म्
मंत्री- स्वामी रामतीर्थ मिशन
राजपुर, देहरादून
(उ०प्र०)
दूरभाष - 4297 देहरादून
84225 राजपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी हरि ओ३म जी महाराज द्वारा गीता भवन, अमृतसर में दिया गया प्रवचन

भजन

प्रीत न की स्वरूप से, क्या किया कुछ भी नहीं।
जान दिलवर को न दी, तो क्या किया कुछ भी नहीं॥
मुल्कगीरी में सिकन्दर से हजारों चल बसे।
आप पर कब्जा न कीन्हा, क्या किया कुछ भी नहीं॥
देवताओं ने सोमरस को गर पिया तो क्या पिया।
प्रेम रस गर न पिया तो क्या पिया कुछ भी नहीं॥
हिज्र में दिलवर के हम जो उम्र पाई खिज़र की।
राम आना न मिला तो क्या जिया कुछ भी नहीं॥

माताओं, देवियों व सज्जनो! हमारे हृदय में भी सत्य का प्रादुर्भाव हो, हम भी उस परमात्मा की अति उच्च विभूति के partner (हिस्सेदार) बनें। हम अध्यात्मवाद को संसारी चीजों से पृथक कर देते हैं, यह अधूरा भजन है जो कर्त्तव्य में मनमानी करे। वास्तविक भजन वह हैं जो कर्त्तव्य में प्रतिक्षण प्रयोग किया जाए और यह केवल हुआ करता है समर्पण से। हम विश्व की सारी वस्तुओं को ममता की मोहर लगा रखे हैं और भगवान को कहते है — हम तेरे हैं परन्तु यह संसार मेरा ही है।" नहीं! ओ भोले — मेरे समेत मेरी जितनी भी चीजें हैं वह भी तेरी ही हैं। आत्मज्ञान को समझने वालो! दुःख या सुख सारा ही अन्तःकरण का धर्म है। क्या कारण हैं किसी समय दुख की पिक्चर सामने आ जाती है और किसी समय सुख की हमारे अन्तःकरण का ऐसा पतन हो गया है कि जब बाहरी परिस्थितियां बदलती हैं, out of

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

control (नियन्त्रण से बाहिर) हो जाती हैं तो यह डोल जाता है। जब परमात्मा ही हमारे अन्दर हैं तो सब कुछ हमारे अन्दर है। वेदान्त का चिन्तन तो करते पर बाहिर से अभिन्नता नहीं करते। अभिन्नता का तात्पर्य क्या है? विश्व के अन्दर जो भी है मेरे लिये है। मैंने जितना भी साध लिया है उतनी ही प्रकृति मेरे लिये साध्य बन गई है। विश्व की मित्रता आपके अन्दर आ गई। ज्यों संकल्प विकल्प क्षीण होते हैं तो वेदान्त को सूखा कह देते है। ज्यों तेरी वृत्ति अंतःकरण के आगे झुकने लगेगी प्रकृति तेरे आगे झुकने लगेगी।

जैसे एक लायब्रेरी की सारी पुस्तकें पढ़ने के काबिल एक स्कूल में पढ़ने के पश्चात आदमी हो जाता है, इसी तरह तरह अभ्यास एक जगह करता है तो समस्त को जान लेता है। गुरु संत के आगे हम झुकते हैं एक विद्यालय में रहकर अभ्यास करते हैं। एक मूर्ति के आगे झुकने वाला समग्र विश्व के आगे निर्माण हो जाता है।

जो अभ्यास के साधन प्रयोग में नही लाते तीनों कालों में भी उनका कल्याण नहीं हो सकता।

नानक जी ने नाम जपा ओर जपाया परन्तु समयानुसार माला की बजाए तलवार भी पकड़ी। इस की जरूरत है। Honest (ईमानदार) बनने की आवश्यकता हैं। महात्माओं के परमाणु सात्विक होते हैं परन्तु कल्याण केवल चरणों पर झुकने से नहीं होता।

ली जो करवट तो होश आई कि
राम मुझ में मैं राम में हूं।

जीवन को बदल देना होगा। हम भी उसी राम के अनुयायी है लेकिन उनकी कुर्बानियां देखो! ऐसे त्यागियों को भगवान न मिलें तो हमें मिले? मोह ममता के जालों में जकड़े है अभिमान से चूर है। पग २ पर मान की चिन्ता लगी है। हमें वेदान्त को प्रयोग में लाना है। शक्ति चौबीस घटे Waste (व्यर्थ) हो रही है। पंखा चलने से बिजली (खर्च) होती है। इसी तरह इन्द्रियों की शक्तिशाली चाल से आत्मशक्ति खर्च हो रही है। देखो! एक घोड़े वाला आठ रुपये कमाता है तो तीन उसे खिला देता है क्योंकि कल भी उससे काम लेना है। उस आत्मिक शक्ति से तेरी इन्द्रियों का व्यवहार चल रहा है तो क्या उस परमात्मा के लिए भी तेरा कुछ बाकी खर्च है या नहीं। "समर्थन की न्यूनता वाचक भक्ति बल है" न्यूटनटन लिख है Best preyer is a best Service सबसे उत्तम प्रार्थना क्या है? उत्तम सेवा! हम उठ कर प्यासे को पानी का गिलास तो नहीं दे सकते, चार माला और जप सकते हैं। नहीं work is worship कार्य ही पूजा है। वेदान्त सेवा को वर्जित नहीं करता, ममत्व को दूर करता है किस Law (कानून) किस Methad (तरीके) के अनुसार? मनुष्य मकान की एक मंजिल पे चढ़ता है, तो कुछ दीखने लगता है। दूसरी मंजिल पे चढ़ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, तो और भी ज्यादा दीखने लगता है। चढ़ते-चढ़ते ऊपरली छत से देखे तो दूरबीन के साथ-साथ ही कुछ दीख जावे। जिस अन्त करण को Conceutraers of mind (मन की एकाग्रता) या purity of mind (मन की पवित्रता) कहते हैं, जब उसका उत्थान होने लगता हैं, uplift (इन्थन) होने लगती हैं तो अपने आप मनुष्य के जीवन की पिक्चर सुन्दर होती चली जाती है। आत्म चिन्तन से ही मनुष्य महान बन सकता है। इच्छा करने से यदि महान बन जाता तो इच्छा तो सभी करते हैं। परन्तु इसके पीछे एक Law (एक कानून) है जिससे पतन भी हो रहा है और उन्नति भी।

"मन के हारे हार, मन के जीते जीत।" जहाँ मूर्ख दुनियां का सुधार करता है, योगी मन का सुधार करता है। यही ईश्वरीय Methad (तरीका) है, Law (कानून) है, lesson (सबक) है, past (पार्ट) है। जो अन्तःकरण का पतन नहीं होने देता वह ही धन्य है।

ईश्वर की प्राप्ति तप बिना नहीं होती। जिस योग्य आप होते हैं, वह वस्तु आपके सामने आ खड़ी होती है। इच्छा किये बिना मृत्यु आ जाती है, गरीबी आ जाती है, दरिद्रता आ जाती है सब natarally, autowat-colly आती रहती हैं। प्रयत्न व पुरुषार्थ से अन्दर की शक्तियों को जागृत करना है।

"पूरा वैष्णव सोई जानिये, जो पीर पराई जाने रे" साथ के पडोसी के लिये दवाई के लिये दवाई नहीं ला सकते, पूजा दो घंटे और कर सकते हैं। केवल शब्द कभी कल्याण नहीं कर सकते। "कर्म प्रधान विश्व रच राखा' कर्म बिना उद्धार हो ही नहीं सकता।

सेंट जान ईसा के गुरु थे। वह स्विटजरलैंड के थे। ऋषि रमण के पास आए। पूछने पर बताया मैंने सुना है भारत के योगी परमात्मा का दर्शन कराने में समर्थ है। जैसे काश्मीर की धरती में फल फूल पैदा करने की ताकत है, हिसार की धरती में बैल पैदा करने की, यहूदी के अंदर भौतिकवादी प्राणियों को पैदा करने की रुप में एक दूसरे मनुष्य पर विश्वास न रखने वाले मनुष्यों को पैदा करने की ताकत है इसी प्रकार भारत की भूमि के अन्दर योगी उत्पन्न करने की शक्ति है!

ऋषि कहते हैं – "कीमत दे दो, कब तक रेट पूछते रहोगे? दुकानदार के सामने ही तुम्हारा घर हैं। हर चीज अपनी Value (कीमत) रखती है सौदा नकद है - इस हाथ दे, उस हाथ ले।" बोला - वह आपका Cashier(खजानची) बैठा है जो जेब में था सब उसे दे दिया है। ऋषि बोले 'वह उसकी कीमत नही है। अधिक दो' शरीर है। और तो कुछ नहीं" शरीर दे दो। ऋषि शिष्यों को बोले – मेरे शरीर को धूप में खड़ा कर दो। जब देखा तो वह दुःखी नहीं हुआ। फिर आर्डर दिया – मेरे शरीर को खाना खिला दो।" खाना खिला दिया जाता है। जैसे डाक्टर diagnose

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

diagnose (जांच) करता है बीमारी को ऐसे ही Spiri nal master (आत्मिक गुरु) पता कर लेता है कि अज्ञा न की मात्रा कुछ कम हुई या नहीं। तीन दिन बाद आर्डर आते है — "मायावती के पास एक जंगल है वहां इस शरीर को छः महीने रखा जाए। उस पर ऋषि की Sign Stamp (मोहर) होती है। खच्चर तैयार कर दिया जाता है। हर पन्द्रह दिनों के बाद राशन भेज दिया जाता है। कुटिया के किवाड़ नही थे सो जान आगे लकड़ियां रख देता हैं। राशनवाला ऋषि को हाल बताता है - डर कर बैठा है। दरवाजों के आगे लकडिया टिका रखी है। ऋषि के orders (आज्ञा) आते है जैसी कुटिया दी है उसी तरह रहो। लकडियां फैंक देता हैं और कोने में दबककर बैठ जाता है फिर next orders (आगे आज्ञा) आके हैं रोज १.३० सैर को जाना है और १.३० मील लौट कर आना हैं। पूछा-कल से शुरू करनी है ? नहीं ! कल का नाम तो काल है। पिछला समय तो चला गया, Present time वर्तमान पर ही अधिकार है ज्ञान जब शाम को सैर जाता है तो गुर्राता हुआ शेर देखता है। पच्चास गज के फासले पर खड़ा हो जाता है और स्वयं कहता है — ऐ जान अब तेरी उमर दो चार मिनट रह गई है — एक तरफ तो मौत का सवाल है दूसरी तरफ गुरु का हुक्म सोचने लगता है — मनुष्य को भय क्यों होता है परमात्मा निर्भय है पर इसलिये कि वह शरीर नहीं रखता। जीव देह-अध्यास में है सो भय खाता है। अमर आत्मा को तो भय नहीं और शरीर को वह तो मेरा है नहीं योगी का है। लेकिन वह देख नहीं रहा - सोचता है हम जब घर से जाते है तो पडोसी को ध्यान रखने को कह जाते गुरुदेव ने जरूर वायु आकाश धरती किसी के समर्पण मेरा कर दिया गया ईश्वर की सी०आई० डी भी काम करती है जिसकी वस्तु है वही रक्षा करे - फिर बड़ा दबक कर गुजरा जब सैर से तो आप शेर ही न था वहाँ।

तीसरे दिन सैर को जाता है तो क्या देखता है -चीता बैठा है। विचार करता है-चीता बड़ा बदमाश जानवर है। तो मर्द होता है, सामने से हमला करता है और चीता तो पीछे से कर देता है। पीछे क्या बनेगा? पर झट से दिल में विचार आता है— मां बच्चे का सड़क पर चलते केवल आगे से ही traffic (ट्रैफिक) का ध्यान नहीं रखती बल्कि पीछे से भी जिसकी यह वस्तु है पीछे से भी ध्यान रखेगा।

अगली बार जब राशन लेकर आदमी आता है तो जान उसे कहता है— रात को नींद नहीं आती। डर लगता है सो जाऊं यो शायद कोई खा न जाए। पर नहीं विचार करते करते क्या सोचता है-एक मां अपने सोए हुए बच्चे पर भी कपड़ा डालती है। सोए बच्चे की भी रक्षक होती है। कुछ देर बाद निश्चित हो जाया है उसे कि परमात्मा सोए का भी रक्षक है। एक दिन उठ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर क्या देखता है – एक रीछ खर्राटे भरे जा रहा है पास ही उसके सिर नहीं उठाता, कहीं रीछ उठ न जाये। देर बाद धीरे से उसके कान पै हाथ लगाता है तो कान पकड़ने लगा। हाथ छूता है तो हाथ चाटने लगता है — — प्यार कर रहा है। अर्थात कहता है — मेरी इतनी घनिष्ठता हो गई कि मैं इन जंगल के मित्रों के संग खेलने को तरसूं। छः महीने समाप्त हो जाते हैं। ऋषि पैदल आने का आर्डर भेजते हैं। जैसे मां पुत्र के वियोग में रोती है ऐसे वहां के जानवरों को छोड़ मैं रोता २ पहुंचा। ऋषि ने कहा – तू ने कीमत अदा कर दी है " परमशक्ति कब मिलती है? बोल अब क्या चाहता है? बोला– " जो चाहता था वह तो टैस्ट पीरियड में ही हासिल हो गया।" ★

प्र०–अहं और अहंकार में क्या भेद है?

उ०–'मैं हूं' यही 'अहं' है। 'मैं हूं' के मध्य में जो कुछ भी लग जाता है वही अहं का आकार अर्थात् अहंकार बन जाता हैं। देह इन्द्रियों मन बुद्धि के साथ मिलकर रखा प्रत्येक सम्बन्धी जनों के साथ मिलकर एवं दुःख सुख के साथ मिलकर अपने को काला, गोरा, मोटा, दुबला, बालक, युवा, वृद्ध, मानना अथवा अपने को पुत्र–पुत्री, पिता-माता, भाई-बहिन, बड़ा-छोटा ऊँचा-नीचा, ज्ञानी-अज्ञानी, दुखी-सुखी मानना—यही अहंकार है।
'मैं हूँ' 'मैं अमूक हूँ'—यही अलंकार कारपरिचय है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आश्रम समाचार

महापुरुषों का जीवन सतत् प्रवाह के रूप में प्रवाहित होता हुआ हर अध्यात्म पथ पर चलने वाले पथिक, जिज्ञासु को मार्ग प्रदर्शित करता है तथा उस पिपासा को भी शान्त करता है जिसके कारण व आकुल है, व्याकुल हैं। स्वामी राम ने वेदान्त के उस उच्चतम अद्वैत सिद्धान्त को भक्तिरस से ओत प्रोत करके व्यावहारिक रुप में उपस्थित किया। आज भी उनके वे आदर्श उपदेश बिलकुल उसी प्रकार नवीन, सत्य दिखायी देते हैं जैसे कि उस समय थे जब उन द्वारा तथा कथित सभ्य समाज प्रभावित था इन्हीं राम की स्मृति में प्रत्येक वर्ष देहरादून में मनाये जाने स्वामी रामतीर्थ आध्यात्मिक विराट् सम्मेलन का आयोजन ५९ राजपुर रोड पर इस वर्ष परमाध्यक्ष आचार्य स्वामी अमर मुनि जी महाराजा के तत्वाधान में दिनांक २८ मई से किया गया। इस उत्सव में अनेक धार्मिक स्थानों व संस्थाओं से पधारे हुए विद्वान सन्त प्रवक्ताओं ने स्वामी राम के व्यावहारिक वेदान्त पर अपने विचार प्रस्तुत कर उस महापुरुष के श्री चरणों में अपनी भावमयी श्रद्धाञ्जलि समर्पित की। विचारों के विभिन्न रूपों का उपसंहार इसी रूप में हुआ कि आज के व्यक्ति जीवन से लेकर सामाजिक जीवन, व्यष्टि जीवन से लेकर समष्टि जीवन के लिये यह आवश्यक है कि हम तरह २ की औपचारिकताओं से हटकर जीवन को सत्य के आधार पर स्वीकार करें तथा सच्चा जीवन व्यतीत करें। उनके आदर्श रूप में जहाँ हमे राम और कृष्ण का जीवन मिलता है वहीं उन महापुरुषों का व्यक्तित्व भी है जिन्होंने अपने स्वार्थों की आहुति समष्टि के उपकारार्थ कर दी यदि हम तब भी उससे लाभ न उठा पायें तो हमारे जैसा भाग्यहीन कौन होगा।

इस वर्ष यह आयोजन परमश्रद्धेय स्वामी कृष्णानन्द गोविन्दानन्द जी महाराज, म. मं स्वामी प्रकाशानन्द जी महाराजा, बालसन्त स्वामी दिव्यानन्द जी महाराज, स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज (प्रज्ञाचक्षु), स्वामी वेदान्तानन्द जी महाराज, माधवाचार्य जी महाराज, गोपालमुनि जी महाराज, परमश्रद्धेय स्वामी रामस्वरूप जी महाराजा, महन्त इन्द्रेश चरणदास जी महाराजा, स्वामी शंकरानन्द जी महाराजा, मुनिहर मिलापी जी महाराजा, म मं स्वामी दिव्यानन्द जी, म मं० स्वामी रघुवरदयाल जी, म०मं ब्रह्मगिरी जी महाराजा स्वामी स्वभावानन्द जी, आदि महापुरुषों की उपस्थिति व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सान्निध्य में सम्पन्न हुआ। तथा साधना-सप्ताह स्वामी सोमेश्वरनन्द जी महाराजा, पथिक जी, आदि के उपदेशों संयुक्त हुआ।

इस उत्सव में जिन रामप्रेमियों ने भाग लिया उनके नाम इस प्रकार है – श्रीमती योगेन्द्रा, श्रीमती कृष्णावन्ती, पूर्ण माता (अमृतसर), श्री खैराती लाल जी सपरिवार, श्री सालिग्राम जी अरोडा श्रीमती शकुन्तला मदान, श्री रमेश शास्त्री; श्री हंसराज जी सचदेवा, सपरिवार (अलीगढ़) श्री विनोद सचदेवा सपरिवार (वाराणसी), श्री श्रीराम खन्ना सपरिवार, माता श्रीमती मेलाराम खन्ना, श्रीमती शकुन्तला बहिन, बहिन बुद्धारानी सागर (इलाहाबाद) ईश्वरदास जी मलिक (फरीदाबाद) श्री कृष्णा-गोपाल खन्ना सपरिवार (कानपुर) श्री वैद्यराज रामचन्द्र जी (हावड़ी) श्रीमती सन्तोष डबराल सपरिवार (सहारनपुर) बहिन शीलारानी (अम्बाला) बहिन राज शर्मा, श्री हरीराम सचदेव सपरिवार स्वयं सेवकों के साथ (मुरादनगर) श्री हुण्डराज नागपाल (बम्बई) श्रीमती बहिन पद्मावती जी जौहर (मसूरी) श्रीमती बहिन निर्मल भण्डारी, श्री जगन्नाथ जी मसीन, श्री नरसिंह दास जी सपरिवार, श्री मनोहर लाल सपरिवार, श्री हुकम चन्द जी सपरिवार, श्री नन्द किशोर गोगिया श्रीमती माता ईश्वर कौर श्री हरिकृष्ण कपूर सपरिवार, श्री गोविन्द लाल जी बोगा श्रीमती कौशल्या बोगा बहिन शान्ती आनन्द, चुन्नी लाल जी शर्मा श्री तिलकराजा जी श्री गुरदयाल सुनेजा, बहिन बिमला श्रीमती माता हरिओ३म् (भूतपूर्व अध्यक्ष स्वामी रामतीर्थ मिशन दिल्ली की धर्मपत्नी श्री अबतार सिंह जी सपरिवार डाक्टर शान्ता श्री चौधरी सपरिवार श्री चड्ढा जी पार्टी के साथ दिल्ली श्रीमती उमानागपाल रामपुर ।

महा पुरुषों की शुभाशीर्वाद रामप्रेमियों के सहयोग से उत्सव सफलता पूर्वक सम्पन्न हुआ।

आश्रम में इस समय शिवस्वरुप में बाबा विश्वनाथ यति जी महाराज व परमाध्यक्ष जी महाराज निवास कर रहें हैं। महाराज श्री को उपदेशों का कार्य क्रम गत वर्ष की भाँति इस वर्ष भी गुरु-रामराय दरबार में चल रहा है। सम्भवतया आप अगस्त तक यहीं निवास करेंगे।

— सम्पादक

स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून (उ० प्र०) के लिए प्रकाशक स्वामी अमर मुनि द्वारा न्यू आईडियल प्रिन्टिंग हाऊस (कांग्रेस भवन के पास) ४-बी नेशविला रोड, (देहरादून) में, मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम-सन्देश

अगस्त
१९७९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकेतिका

विषय	लेखक	पृष्ठ
पद	सूरदास	१
ग्रहस्थाश्रम और आत्मानुभव	स्वामीराम	२
प्रवचन	स्वामी हरि ॐ जी महाराज	५
भजन		६
रामायण चरित्र चित्रण	स्वामी तीर्थानन्द 'अज्ञ'	९
सम्पादकीय	—	१०
आँख	आचार्य स्वामी अमर मुनि जी महाराज	१४
जीवन शक्ति का स्त्रोत-श्रद्धा	नारायण प्रसाद रानाडे	१६
प्रेम	श्री कोमल सिंह सोलंकी	२४
आश्रम समाचार		२५

संस्थापक—
ब्रह्मलीन स्वामी हरि ओ३म् जी महाराज
संवर्धक—
ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज
व्यवस्थापक—
स्वामी अमर मुनि जी महाराज

सम्पादक—
काका हरिओ३म् "निर्द्वन्द्व"

आजीवन सदस्यता शुल्क—
भारत में — १०० रु०
विदेश में — ५०० रु०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्र के हित के लिए प्रयत्न करना ही विश्व की शक्तियों अर्थात् देवताओं की आराधना है'-स्वामी राम
वेदान्त, अध्यात्म, संस्कृति, धर्म एवं भक्ति का सजग सन्देशवाहक
तथा स्वामी राम के आदर्शों का एकमात्र लोकप्रिय मासिक—

राम सन्देश

वेदोपनिषदां तत्त्वम् सत्यं नित्यं सनातनम् ॥
तत्सर्वं "रामसन्देशे" पत्रेऽस्मिन्नवलोक्यताम् ॥

| वर्ष २८ अंक ८ | राजपुर, देहरादून, अगस्त १९७९ | वार्षिक भेंट १०) एक प्रति ८५ पैसे |

केते दिन हरि सुमिरन बिनु खोये ।
पर निन्दा रस में रसना के रस में परत डुबोये ॥

तेल लगाई कियो रुचि मर्दन वस्त्रहिं मलि-मलि धोये ।
तिलक लगाई चले स्वामी बनि, विषयनि के मुख जोये ॥

काल बली ते सब जग कम्पत ब्रह्मादिक हूं रोये ।
'सूर' अधम की कहो कौन गति उदरि भरे पर सोये ॥

नवम सरल सब छल सन हीना । मम भरोस हिय हरष न दीना ॥
नवमहं जिनके एको होई । नारि पुरूष सचराचर कोई ॥
सौइ अतिशय प्रिय भामिनी मोरे । सकल प्रकार भक्ति दृढ़ तोरे ॥
योगि वृन्द दुर्लभ गति जोई । तो कह आज सुलभ भइ सोई ॥
मम दर्शन फल परम अनूपा । जीव पाइ निज सहज सरुपा ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गतांक से आगे—

गृहस्थाश्रम और आत्मानुभव

(ता० १ फरवरी १९०३, रविवार, सन्ध्या—समय)

—स्वामी राम

यदि मैं तुमको वास्तव में सुखी रखता हूँ तो मुझे भी सुखी अवश्य होना चाहिए किन्तु लोग समझते हैं कि किसी मनुष्य की रुचि के अनुसार कार्य करने से उसे सुख मिलता है पर ऐसा नही है। उलटे इससे निराशा और घृणा उत्पन्न होती है। ऐसे कामों से दोनों दुःख उठाते हैं, दोनों ही अपने को हतभाग्य, हताश और दुःखित बनाते हैं। उनके हृदय में चिन्ता और भय भर जाता है।

परस्पर सुखी बनाने के मार्ग की यह अनभिज्ञता और अज्ञान ही असल में इन चिन्ताओं और दुःखों की जड़ में विद्यमान है। यदि तुम एक दूसरे को सुखी करना चाहते हो, तो तुम्हें अपने क्षुद्र स्वार्थी भाव को विशाल बनाना होगा। तुम्हें अपने मित्र के सच्चे भावों का अनुभव करना होगा। अपनी पत्नी को प्रचण्ड बल अर्पित करना होगा; प्रचण्ड बल अवश्य उसमें प्रतिबिम्बित होना चाहिए। तुम्हें परस्पर एक दूसरे को ज्ञान देना होगा, इस प्रकार तुम अपने साथियों को सुखी बना सकोगे और अन्त में स्वयं भी सुखी बनोगे। यदि तुम सच्चे हितैषी हो, तो तुम उसे ऐसी वस्तु जरूर दो, जो सच्चे सुख की असल जड़ है। और ये वस्तुयें ज्ञान और आध्यात्मिक स्वतन्त्रता हैं। इन वस्तुओं को अपने साथी संगियों को दो। प्रत्येक पति का यह धर्म है कि वह अपनी पत्नी को शिक्षा दे। जो पति अपनी स्त्री का शिक्षक नहीं या जो पत्नी अपने पति के उन्नत और शिक्षित होने में कारण नहीं बनती, जिससे पति आत्म- स्वतन्त्रता एवं ज्ञान नहीं प्राप्त करता, वह पत्नी पत्नी होने के योग्य बिल्कुल नहीं, ऐसी स्त्री पापिनी है। इसी तरह वह पति भी पापी है, घोर पापी है जो अपनी स्त्री के लिए अपने घर को विश्वविद्यालय,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिक्षा का स्थान नहीं बनाता। एक दूसरे को सुखी बनाने का वास्तविक यही मार्ग है।

ईसा (क्राइस्ट) के अपौरुषेय गर्भाधान का राम यों समाधान करता है:—ईसा की माता 'मेरी' बड़ी शुद्ध, पवित्र और ईश्वर की भक्त थी। वह एक ऐसी स्त्री थी, जो कुछ हद तक साक्षात्कार कर चुकी थी, जो दिव्य दृष्टि-सम्पन्न थी, वह परमात्मा से अभिन्न थी। और जकरिया नाम का मनुष्य (तत्पश्चात् जोजेफ, उसको कलंक से बचाने के लिए जकरिया की जगह जा खड़ा हुआ), अथवा जकरिया का नाम लेना यदि तुम्हें नापसन्द हो, तो हम जोजेफ जोजेफ ही कहेंगे, भी अत्यन्त शुद्ध और पवित्र पुरुष था, वह भी सबमें आत्म-साक्षात्कार कर चुका था। उसने परमात्मा का अनुभव किया हुआ था। दोनों नवयुवक और पवकी आयु के थे। ऐसा हुआ कि जब 'मेरी' (अर्थात् 'मेरी' का शरीर) और उसका पति दोनों आत्म-निमग्न थे, जब दोनों पूर्ण समाहित चित्त थे, उसी समय 'मेरी' ने गर्भ धारण किया, उसी समय वह गर्भवती हो गयी। पश्चात् वह इस घटना को बिलकुल ही भूल गयी।

प्रायः ऐसा होता है कि लड़के रात्रि को जगाये जाते हैं, और उनको दूध या मिठाई आदि खाने को दी जाती है। पर दूसरे दिन उनसे यदि पूछा जाय कि गत रात को जो दूध या मिठाई तुम्हें दी गयी थी, वह तुमने खायी या नहीं? तो लड़का प्रायः यही कहेगा—"ओ! मैंने नहीं खायी, तुमने मुझे ऐसी चीज नहीं दी, तुमने सब कुछ बहन को दिया होगा।" यह सत्य है कि लड़के ने रात्रि में दूध या मिठाई खायी, बच्चा दूध-पान करते समय या मिठाई खाते समय ज्ञानातीत अवस्था (एक प्रकार की तुरीयावस्था) में था, उसका दिमाग किसी दूसरी जगह था। जैसे नींद में चलने वाले मनुष्य रात्रि में चलते फिरते हैं और अजीब अजीब काम भी कर लेते हैं, पर जब इसके विषय में प्रातःकाल उससे पूछा जाता है, तो उन्हें रात की बातों का ध्यान ही नहीं रहता। वैसे ही ईसा के अपौरुषेय जन्म के विषय में राम का यह कथन है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि जब 'जोजेफ' और 'मेरी' दोनों तुरीयावस्था में, आत्मसाक्षात्कार की दशा में निमग्न थे — नींद में चलनेवालों की अवस्था में नहीं —तब 'मेरी' 'जकरिया' या जोजेफ से गर्भवती हुई। वह ऐसी अवस्था थी कि जिसमें इस क्षुद्र देह का भान नहीं रहता, जब तुम दिव्य शरीर में रहते हो। उसी स्थिति में वे दोनों हम - बिस्तर हुए (संभोग किया), और 'मेरी' को गर्भधारण हुआ ; पर जब बाद में उससे गर्भ का कारण पूछा गया, तब वह कुछ भी न कह सकी, और ईसाई लोग कहने लग गये कि उसे पवित्र आत्मा (*Holy Ghost*) द्वारा गर्भाधान हुआ, जिसका तात्पर्य है कि ईश्वर ज्ञान - सम्पन्न होकर, 'पवित्र आत्मा, से व्याप्त होकर, एवं ब्रह्माकार वृत्ति में लीन हो जाने पर उसने गर्भ धारण किया। और इस प्रकार क्राइस्ट 'पवित्र - आत्मा' (*Holy Ghost*) का पुत्र अभिहित हुआ। प्रकृति के नियम जैसे आज हैं, वैसे उस समय भी थे, पर तो भी हम लोग कह सकते हैं कि ईसा 'पवित्र आत्मा' (*Holy Ghost*) का पुत्र है।

इसी से राम कहता है कि इसी आचरण के अनुकूल सारे संसार को चलना चाहिए, ताकि ईसा मसीह के समान अन्य अनेक लोग उत्पन्न हो सकें। यदि तुम मिल्टन, शेक्सपियर, क्राइस्ट ऐसे महापुरुषों को उत्पन्न करने की इच्छा रखते हो, यदि तुम चाहते हो कि तुम्हारी सन्तान सारे संसार अथवा अपने परिवार का हित करनेवाली हो, तो अपने अन्त : करण को शुद्ध करो, उसकी अधोगति न होने दो।

क्रमशः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रवचन

पहली क्लास का शिशु भी Student (विद्यार्थी) है और बी० ए०, एम०ए०, वाला भी। परन्तु कितना अन्तर हो गया। इसी तरह अध्यात्मिक शिक्षा की भी क्लास होती हैं। भिन्न श्रेणी के भिन्न जिज्ञासु हैं, भक्त हैं, ज्ञानी हैं। एक हैं जो पंचदशी का अध्ययन करते हैं। प्रश्न है भक्त बड़ा है या ज्ञानी? किसे बड़ा कहेंगे आप? उच्च कोटि की जिज्ञासा किसकी है? ज्ञानी तो भगवान बनेगा और भक्त भगवान को भी नचावेगा।

'राम ते अधिक राम का दासा।'

स्वामी राम कहते हैं छः शास्त्रों के भिन्न-भिन्न आश्रय हैं। किसका अनुयायी बनना चाहिये? अपनी बुद्धि के बल पर जो मत आप Settle करें, उसी का अनुयायी बनना चाहिये। दूसरा कब तक हमें सैर करावेगा? स्वयं-अनुभूति, निश्चय, अनुभव यही सबसे उत्तम ज्ञान है। निश्चयात्मक बुद्धि वाला ही वास्तव में उन्नति करता है। सत्संग में जाना बुरा नहीं। जितना परिवार बढ़ जाता है उतने ही चूल्हे बढ़ जाते हैं। परन्तु दोष इस बात का है कि हमारी निश्चयात्मक बुद्धि ही नहीं हुई। डांवाडोल भटकते रहते हैं हम। इसी को गुर या Method (तरीका) कहते हैं।

अब प्रश्न तो यह है कि विचार सागर पढ़ने वाला बड़ा है, ज्ञानी बड़ा है, योगी बड़ा है या भक्त? सुदामा भी तो भक्त ही थे, रविदास वगैरा भी तो भक्त ही थे, चैतन्य महाप्रभु भी तो भक्त ही थे, राधा भक्ता ही थी।

जा को योगी यति खोजत निगम निगम।
तां कृष्णा को हम प्रेम बांध कर धर २ नाच नचाव

ध्यान कहते हैं imagine करने को। वरन्तु सामने जो है उसका प्रत्यक्ष हो जाना ही दर्शन है। फोटो को देख ध्यान की कला में उतारना स्मृति में features (अंग प्रत्यंगों को) या अलंकार को सामने ले ध्यान करना है। फिलासफी का, आत्मवेत्ताओं का फैसला है। कि जिस का ध्यान हम करेंगे, वह प्रत्यक्ष हो हीं जाता है।

"ध्याने तद्रुपता"। वही बन जाता है। तो इन में से कौन बड़ा है? हम देखते हैं कोयले के व्यापारी शहनशाह बन जाते हैं और सोने के खाकशाह। प्रश्न यो यह है — ज्ञान बड़ा है या भक्ति? बड़ा निर्गुण का उपासक है या सगुण का — जो भी अपने आप को हार चुका है, वही बड़ा है।

स्वामी राम ध्यान की definition (परिभाषा) देते हैं ध्यान क्या चीज है? "इच्छाओं से, कामनाओं से ऊपर उठना ही ध्यान है। यह मिथ्या देह - अध्यास पड़ा है। अनेक विकारों — काम, क्रोध, लोभ इत्यादि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भजन

सौदागर हूं सौदा किया चाहता हूं
मैं देकर प्रभु कुछ लिया चाहता हूं
दौलत न मांगूं , हशमत न चाहुं ,
राहत न मांगूं , मुसर्रत न चाहूं ,
मैं चरणों मेंर रहना पिया चाहता हूं ।
दो आलम न्यौछावर किया चहता हूं ।।
यह तदबीर ले लो , यह आहें भी ले लो ,
अजल से जो बांधे यह जंजीर ले लो ,
खुदी को मिटा अब जिया चाहता हूं ।।
मैं चरणों में रहना पिया
यह आंसू हैं मेरे भेंट हैं तेरी ,
बल २ जावे यह जान है मेरी ,
मैं मर कर प्रभु फिर जिया चाहता हूं ,
मैं चरणों में रहना पिया चाहता हूं ,
मैं देकर तुम्हें कुछ लिया चाहता हूं ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से जिनकी वृत्ति ऊपर उठ गई है, वही उत्तम है। हमें चाहिये ऊंची श्रेणी में पहुंचें। अपने सिद्धान्त अपनी बुद्धि के बल पर स्थिर करें, आश्रयों की जरूरत नहीं। सुनना बुरा नहीं निश्चय का कच्चा रहना ही कमजोरी है। एक समय था मेरी भी भटकना की स्टेज थीं। अब व्यतीत हो गई। अब निश्चयात्मिक बुद्धि है चलें या न चलें। ज्ञान की बात सुनते हैं तो आप वही सोचने लग जाते हैं, संकीर्तन हो तो वहीं मस्त — —। बड़ा तो वह है जो इच्छाओं से कामनाओं से ऊपर उठ गया है। कामनाओं से above (ऊपर) हो जाना ही ध्यान है।

अनेक प्रकार की चेष्टाएं ही बन्धन बनी हैं। जब एकान्त में बैठे इच्छाओं से ऊपर उठे, ध्येय लक्ष्य में वृत्ति लगे तभी आप उस परम वस्तु को प्राप्त करेंगे। शेष रूप में वहीं बच जाता है। वही अविनाशी है। बिल्डिंग के गिर जाने पर भी मिट्टी अविनाशी है। ध्येय कब प्राप्त होगा — इस बात की चिन्ता करता है, देह अध्यास से कब उठूंगा उसकी चिन्ता नहीं करता। दूसरे शब्दों मे यूं कहिये बिगड़ा तो व्यवहार है, परमार्थ तो सदा ही शुद्ध है।

परमात्मा ने न आना न जाना। वह तो नित्यानन्द है, स्थिर बिन्दु है, कूटस्थ हैं। बुलाना क्या है? उसे कहां से आना हैं ? उसे शक्तिमान बना रहे हो? वह तो आगे ही शक्तिमान है परमात्मा की प्राप्ति का यत्न करना चाहिये। वृत्तियों को शुद्ध करना चाहिये, – अध्यास से ऊपर उठना चाहिये। वह ही बड़ा है जो मन के विकारों से ऊपर उठ गया है। यदि किसी को वेद, पुराण कंठस्थ हैं, व्यवहार शुद्ध नही तो वह परमात्मा से बहुत दूर है। बुल्लाशाह क्या पढ़े थे? कहा कहते हैं लोग —— बिना गीता पढ़े पार होना मुश्किल है पर असूल यह है किसी का भी भजन करते २ इस देह से ऊपर उठना। यह सिद्धियां तो सारी ही मार्ग में आ जाती हैं। साथ यह इम्तहान न होते तो सभी एम.ए: हो जाते। यह इम्तहान ही तो पास नहीं होने देते टेस्ट न होते तो आज सारे ही ध्यानी बन गए होते। परमात्मा की प्रकृति में टैस्ट ही टैस्ट हैं। हर वक्त इम्तहान हो रहे हैं।

देखो! एक रानी के गले में रानी हार है। बच्चा उसे हाथ डाल देता है। रानी ने बिचारा थोड़ा खीचा तो मोती बिखर जायेंगे। प्रलोभन देने लगती है। दासी को खिलौने लाने को कहती है। बच्चा खिलौने ले लेता है पर हार नहीं छोड़ता कोई मार्ग नहीं अन्त में दासी को मोटर कार लाने को कहती है। बच्चे को बोली– देख। मोटर दूसरा काका पकड़ लेगा। अब तो बच्चा मुठ्ठी खोलता है। बाकी खिलौनो व हार को भूल जाता है। रानी तत्काल हार उतार कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डब्बी में बन्द कर देती है : यह है दृष्टान्त इसे घटाओ।

यह मनुष्य उस परमात्मा रूपी रानी का पुत्र है। उस परम शक्ति का पुत्र है। अनेक योनियों में घूमता-घूमता नर-नारी देह में जब आता है तो नाम रूपी हार नजर आता है। नाम की सोझी आ जाती है। कोई भी मन्त्र जाप करने लगता है तो प्रकृति रूपी दासी को अ.डर आते हैं—बाल-बच्चों रूपी खिलौने से आकर्षित कर। परिवार का बढ़ना, घटना कोई बात नहीं, इन खिलौनों को देखते-देखते भगवान राम को भूल जाना ही बस जीवन में भय है प्रलोभन मिलते है, यह ही टैस्ट है। वह भी भाई के लाल हैं जो प्रलोभनों में नही फंसते और ध्येय का परित्याग नहीं करते। 'हट दुनियाँ मैरे सामने से'। जो भय को लांघता जाता है, वह तपस्वी है, ज्ञानी है वह अवश्यमेव ईश्वर को पा जाता है। इसी को निरासक्तियोग कहा है।

प्रश्न :—

टैस्ट क्यों होते हैं ?

जीव के अन्दर जो चेतन है उसी का नाम ज्ञान रखा है। प्रकृति जड़ है। चेतन परमात्मा सदा शुद्ध है। यह विचार-चन्द्रोदय में, पंचदशी में स्पष्ट है। ज्ञान और अज्ञान मन का धर्म है। मन बीच में रहता है। जब परमात्मा की ओर मुँह करता है तो प्रकृति की शक्तियां अपनी ओर खींचने लगती हैं।

या दिल से आज कह दे हम हुए तुम्हारे।

या खींच तेग जालिम टुकड़े उड़ा हमारे।

चुम्बक के साथ अति बारीक परदा भी लगा दो तो उसकी आकर्षक शक्ति नहीं रहती। इसी तरह छोटा सा संशय, थोड़ी सी अहंगता, परमात्मा तक नहीं पहुंचने देती। धीरे-धीरे अभ्यास करते-करते ऐसा हो जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गतांक से आगे

रामायण चरित्र चित्रण ★★★ लक्ष्मण

स्वामी तीर्थानन्द 'अज्ञ'

इनका एक मात्र सिद्धान्त था 'मातृवत् पर दारेषु'। लक्ष्मण अति चरित्र सम्पन्न व्यक्ति थे। सीता जी के आभूषण पहचानने के प्रसंग पर राम जब लक्ष्मण को आभूषण बता कर पूछते हैं कि "यह सीता के ही आभूषण है ना ?" तब लक्ष्मण जो उत्तर देते है वह उनके चरित्र की महानता का द्योतक है।'

"नाहं जानामि केयूरे नाहं जानामि कुंडले।
नूपूरे त्वेव जानामि नित्यं पादाभिवदनात्"।

पंचवटी में राम और लक्ष्मण के बीच में जो वार्ता हुई थी वह लक्ष्मण के चरित्र की अग्नि परिक्षा थी। राम कहते है:—

पुष्पं दृष्ट्वा फहिनं दृष्ट्वा दृष्ट्वा स्त्रोणांच यौवनम्।
त्रीणिरूपानि दृष्ट्वैव कस्य नो चलते मनः॥
लक्ष्मण;-पिता यस्य शुचि भूतो माता यस्य पतिव्रता।
उभाभ्यामेव सम्भूती तस्य नो चलते मनः॥
रामः-अग्निकुण्डसमा नारी घृतकुण्डसमा पुमान्।
पार्श्वे स्थिता सुन्दरीचेत् कस्य नो चलने मनः!
लक्ष्मणः-मनो धावति सर्वत्र मदोन्मत्त गजेन्द्रवत्।
ज्ञानांकुशसमा बुद्धिस्तस्य नो चलते मनः॥

लक्ष्मण का यह उत्तर सुनकर राम अतिप्रसन्न हो जाते हैं, और उनके मुखसे यह उद्‌गार प्रकट हो जाते हैं—

"हे लक्ष्मण! महाव्रत, सुमित्रायाश्च नन्दन। इक्ष्वाकोश्च कुलोत्पन्न, ब्रह्मचरित्रमो नमः॥"

इसी में लक्ष्मण की सर्वश्रेष्ठता सिद्ध होती है। लक्ष्मण के चरित्र का विचार करने के पश्चात् तक एवं प्रज्ञा काम न नही कर सकते। तर्क और बुद्धि जहां कुंठित हो जाती हैं, ऐसा अनुपम चरित्र अगर रामायण में मिलता हैं तो केवल लक्ष्मण का हैं। लक्ष्मण राम के कीर्तिध्वज का ध्वजदण्ड है, क्योंकि लक्ष्मण के ही कारण राम की कीर्तिध्वजा फहर रही हैं। लक्ष्मण का चरित्र अग्नि समान हैं। वह सामान्य व्यक्ति के लिए सुलभ नहीं। अग्नि अतिशय तेजस्वी हैं उसे हाथ में नहीं लिया जा सकता। लक्ष्मण के चरित्र के अनुरूप उनकी साधना भी अति उग्र थी। सब बातों के कारण लक्ष्मण को रामायण का प्राण मानना पड़ेगा।

जब इन्द्रजीत को मारने का प्रश्न आता है, तो राम चिन्ता में पड़ जाते है। क्योंकि उमा द्वारा दिये हुए धनुष पर वे स्वयं डोरी चढ़ा नहीं सकते। चिन्तामग्न बैठे हुए हैं। उस समय लक्ष्मण आ जाते हैं। और धनुष पर डोरी चढ़ाकर राम की शंका मिटा दी हैं। इसी लिये कहना पडता हैं, कि रामने रावण को मारा है, तो लक्ष्मण ने इन्द्रजीत को मार कर राम की विजयश्री में भी हाथ लगाया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

मानव स्वभाव और उसके व्यवहार की जटिलता तो सब द्वारा स्वीकार्य है। यही कठिनता तो उसे अन्य प्राणियों से अलग करती है। इसी के ही कारण वह अन्यो से श्रेष्ठों की गिनती में आता है। मानसिक क्रियाओं की जटिलता के कारण उसकी समस्याओं का क्षेत्र भी काफी विस्तृत है। कभी २ उसे लगता है कि वे समाप्त हो गई हैं, उनका समाधान व प्राप्त कर चुका है, परन्तु ऐसी दीखने वाली परिस्थिति में से न जाने कहाँ से एकदम अचानक और तेजी के साथ वे सामने आती है। व्यक्ति सम्भल भी नहीं पाता और अन्तुलित हो जाता है, अपना बैलेन्स balance खो बैठता है। फिर, किसी प्रकार सन्तुलित करता है खुद को और यात्रा को किसी प्रकार पुनः प्रारम्भ करता है आशा को संजोते हुए। यहाँ यह भी समझ लेना उपयुक्त होगा कि उसका अपने को सन्तुलित करके चल देना इस बात का द्योतक कदापिनहीं है कि उसने समस्या का समाधान प्राप्त कर लिया है, समस्या से अपने को छुड़ा चुका है वह।

अधिकतर उपरोक्त स्थिति में अपने को स्वयं द्वारा सान्त्वना देकर व्यक्ति संतुलित करता है। यह कल्पनात्मक सान्त्वना किसी सीमा तक तो स्वीकार करने योग्य है परन्तु सदैव नहीं।

समस्त समस्याओं के परिवर्तित स्वरूपों की उपस्थिति के पीछे जो प्रमुख कारण देखने को मिलता है वह है उपेक्षा, अपनी वास्तविकता की भूमि का परित्याग करना तथा उसे स्वीकार करना जो उसकी क्षमता की सीमा से दूर है। यह उपेक्षा अपने से सम्बन्धित होती है। ,,अपने से" का तात्पर्य अपने व्यक्तित्व से, अपनी वास्ताविकताओं से की गई उपेक्षा से है। इस उपेक्षा के स्वरूप में व्यक्ति अपने, स्वयं के बारे में ही अचेत है। स्वयँ ही इतना बिखरा हुआ है, विघटित है कि अपने साध्य, उद्देश्य को ही निर्धारित नही कर प रहा, यदि सा य निर्धारित हो भी गया तो भी वह उस उचित साधन, कार्य के चुनाव में, जो उसे उसके लक्ष्य तक पहुंचा दे, उसे वो प्राप्त करा दे जिसे वह पाना चाहता है असमर्थ पाता है ,अपने को।

साध्य के निधरिण के बाद साधन के चुनाव की समस्या उतनी सरल नहीं है जितनी समझी जाती है। कभी २ तो देखा गया है कि साधनों को बदलते २ ही सारा जीवन बीत जाता है परन्तु फिर भी उचित साधन का चुनाव नहीं हो पाता। अधिकतर, आत्म–स्वीकृति न होने के कारण व्यक्ति अपने कल्पित, तथाकथित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अहंकार की पुष्टि के लिये उस स्वरूप को बनाये रखने का प्रयास करता हुआ जो लोगों के सामने है या जो स्वयं के द्वारा माना गया है वास्तव में हैं नहीं, ऐसे साधन का चुनाव करता है जिसमें उसकी योग्यता नहीं, जो उसके स्तर से काफी ऊंचा होता है । ऊपर प्रयुक्त 'आत्म-स्वीकृति' का तात्पर्य उस स्वीकृति से है जिसमें व्यक्ति अपना विश्लेषण कर अपनी योग्यता, अपनी क्षमता का निर्धारण कर उस स्थिति में आ जाता है कि उसे अपनी वास्तविकता को स्वीकार करते हुए किसी भी प्रकार का "काम्पलेक्स । नहीं होता । कमियों को देखकर आत्महीनता की भावना इसलिए नही आती क्योंकि वह जानता है कि इन्हें हटाया जा सकता और अच्छाईयों को देखकर उसमें श्रेष्ठता की भावना नहीं होती कारण वह विज्ञ है कि यही उसका लक्ष्य नहीं है, उसे यहीं रुक नहीं जाना है । इस प्रकार पूर्व की स्थिति न तो उसे असन्तुष्ट करती है और न ही दूसरे पक्ष में सन्तुष्ट होकर वह अपनी गति को रोक लेता है, चलना बन्द कर देता है । आत्म स्वीकृति की, अपनी योग्यताओं की, अपने स्तर की उपेक्षा कर किए गए साधन के चुनाव के परिणाम कल्पना स्वयं की जा सकती है। सुख के स्थान पर प्राप्ति होती है उसे दुःख की सफलता की, जगह उसके सामने आती है असफलता । ऐसी स्थिति में मात्र साधनों को बार-बार परिवर्तित करने के, तथा छोड़े गये साधन की निन्दा करने के सिवाय आत्म-सन्तोष का और कोई मार्ग उसके पास नहीं रह जाता ।

साधन का चुनाव सही किया गया समस्या इतने में समाप्त नहीं हुई । यहाँ भी उपेक्षा के स्वरूप की सम्भावना बनी रहती है । यह स्वरूप और भी जटिलता को लिए होता है । इसमें मोह की स्थिति है जिसे हम देख सकते हैं । यह स्थिति वह है जब व्यक्ति साधन को ही साध्य समझ बैठता है । साध्य की प्राप्ति के लिए पथिक को लक्ष्य तक पहुंचने में कठिनाई न हो इस उद्देश्य से लगाये गये संकेत चिन्हों को ही वह साध्य समझकर बैठ जाता है । इसमें उसके द्वारा वास्तविक लक्ष्य की उपेक्षा की जाती है ।

साधन को साध्य समझने की गल्ती प्रत्येक क्षेत्र में हो सकती है । इसमें और भी मुश्किल पड़ती है तब जब एक तरफ तो देखने वाला, समझने वाला, चल रहे पथिक के साथ सहानुभूति रखने वाला व्यक्तित्व यात्री को सचेत करता है और कहता है कि उसे अभी बहुत दूर जाना है, उसे अभी से अपनी यात्रा की समाप्ति नहीं समझनी चाहिये क्योंकि अभी तो वह बहुत दूर है, जिसे उसे प्राप्त करना है; लेकिन, दूसरी ओर तथाकथित लक्ष्य प्राप्ति से सन्तुष्ट, मोह-युक्त राही उसकी कही हुई बात को बिना समझे, ऐसा निष्कर्ष निकालता है, जो मात्र परिणाम होता है उसकी अपनी तन्द्रापूर्ण अवस्था का, जो स्वयं में विकृत होती, ज्ञान का पूर्णतः अभाव होता है जिसमें । आध्यात्मिक जगत्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में कबीर जैसे सन्त द्वारा बाह्य साधनों का खण्डनात्मक दीखने वाला स्वरूप इस प्रकार का दृष्टांत है।

साध्य का निर्धारण भी हो गया, सही साधनों का चुनाव भी कर लिया गया, पथिक चल भी पड़ा, जा रहा है बहुत सम्हल कर हर प्रकार की कठिनाईयों का, परिस्थितियों का सामना करते यहाँ भी उसे सम्हलना पड़ेगा, प्रमुखतया तब जब साध्य उसे दिखाई दे जायेगा। बहुत काल से साध्य-प्राप्ति के लिये की गई प्रतीक्षा साध्य के दीखते ही टूटने लगेगी लेकिन यहां भी धैर्य की आवश्यकता है। चेतना की आवश्यकता है। यहां भी उपेक्षा से भावना के संवेगात्मक स्वरूप से बचना है।

एक व्यक्ति बहुत ऊंचे पेड़ से उतर रहा था, बहुत सम्हलकर क्योंकि वह जानता था कि जरा सी असावधानी, गल्ती उसके प्राण ले सकती है। उसके उतरने की प्रक्रिया को एक सज्जन दूर से देख रहे थे। धीरे २ जब वह धरती से थोड़ी ही दूर रह गया, साध्य के बिल्कुल पास आ गया, अब उससे वह स्थान अधिक दूर न था जहां उसे उतरना था, उसे एक आवाज सुनाई दी 'भई! जरा सम्हल कर उतरना'। छलांग मारकर नीचे उतर आया वह और जिधर से सावधान करने वाले वाक्य आये थे उधर की ओर मुड़ा। मुस्कराकर, जिसमें व्यंग था, अभिमान था, उसने पूछा उससे जिसने सावधान किया था उसे "जब मुझे सावधान करने की आवश्यकता थी तब तो आप चुप बैठे थे और जब मैं कठिनाई पार कर चुका, अपने साध्य के पास पहुंच गया तब आप सावधान कर रहे हैं क्यों? गम्भीर हुआ सचेत करने वाला, शून्य में दृष्टि डाली उसने मानों अव्यक्त में झांकने का प्रयास कर रहा हो, बोला—"सचेत करने की आवश्यकता वहां पड़ती है जहाँ अचेत हो, मैं देख रहा था कि तुम कठिनाई में अपनी मृत्यु के भय से पूर्ण सचेत थे अपनी प्रत्येक क्रिया के प्रति, तुम जानते थे कि तुम्हारी जरा सी असावधानी तुम्हारा जीवन ले सकती है, इसलिये मैं चुप था लेकिन जैसे ही तुमने उपेक्षा की वास्तविकता की, अचेत हुये, मैंने तुम्हें सचेत किया। शायद तुम जानते नहीं कि गिरने की सम्भावना ऊपर उतनी नहीं थी जितनी नीचे थी जहां तुमने समझा कि बस अब मैं नहीं गिर सकता प्राप्तव्य बस प्राप्त हो गया।' यह दृष्टांत क्या बताता है? यही कि जब तक साध्य प्राप्त नहीं हो जाता आंतरिक या बाह्य किसी भी प्रकार की उपेक्षा नहीं की जानी चाहिये।

क्या यह सही नहीं कि साध्य के पास होना है यह बताता है कि उसने प्राप्त नहीं किया है लक्ष्य, लेकिन प्राप्ति की कल्पना उससे उपेक्षित करवा देती है सत्य को, यहीं त्रुटि करता है और गिर जाता है, और फिर हो भी क्या सकता है या तो पुनः से उठकर चलने का प्रयास या फिर निराशा, असफलता, कुण्ठा, ग्लानि। पहली प्रक्रिया तो बहुत कम स्वीकार करते हैं अधिकतर तो यात्रास माप्त ही कर देते हैं वहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसी स्थान पर क्योंकि इतना टूट जाते हैं अन्तर से और बाहर से कि पुनः साहस नहीं संजो पाते उठकर चलने का।

इस प्रकार की छोटी-२ उपेक्षाएं, जो केवल तुच्छ अहं की तुष्टि करती है और जीवन की वास्तविकता से को बहुत दूर ले जाती है हमें, वह सब कुछ हमारे सामने लाकर खड़ा कर देती है जो हम कभी नहीं देखना चाहते, वहां ले जाती है हमें जहां जाने का विचार हम स्वप्न में भी नहीं करते, । क्या की जानी चाहिए हमारे द्वारा ये ? नहीं, तो क्यों न हम अपना मूल्यांकन करें, निरीक्षण करें, स्वयं से स्वयं के उद्धार के सिद्धांत को व्यावहारिक रूप दें तथा प्रयास करें कि कोई मानसिक प्रक्रिया हमारी चेतना से छुपकर न जा पाये। प्रारम्भ में कठिनाई तो होगी इसमें 'पर' इस पर चलना होगा हमें यदि हम साध्य प्राप्त करना चाहते हैं। ऋषि कहते है. तुम्हारा मार्ग कठिन है, दुर्गम है, ऐसा है जैसाकि दुधारी तलवार पर चलना।

प्र०— संयम नियम पूर्वक सात्विक भोजन करते हुए भी शरीर रोगी क्यों होता है ?

असंयम तथा नियम विरुद्ध भोजन से शरीर रोगी होता ही है, इसके अतिरिक्त मोहवश, लोभवश और अभिमान के कारण जो अधिक शोकित, उत्तेजित चिन्तित रहता है' इर्ष्या-द्वेष से अशान्त, सन्तापित रहता है बार बार क्रोध करता है, भयातुर रहता है. उसी का शरीर भी कुछ समय बीतने पर किसी न किसी रोग से ग्रसित हो जाता है। कुछ रोग ऐसे भी हैं जो पिछले जन्मों में होने वाले हिंसात्मक कर्मों के फल भोग के लिए आते हैं। व्याघात, कुष्ठ होना, अंग-भग होना आदि पूर्व कर्मों के फल भोग है।

प्र०— कर्मों के भोग से क्या बचा जा सकता है ?

कुछ कर्म-भोग तप से कट जाते हैं। कुछ कर्म भोग सुपात्र को विधिवत् दान से भी शान्त हो जाते हैं। कुछ कर्म-भोग ध्यान भजन से भी घट जाते हैं। कोई कर्म भोगने से ही कटते हैं। जो कुछ बार बार दुहराया जाता है उसी का अभ्यास दृढ़ हो जाता है। मैं देह हूं, मन मेरा है—यह भी अभ्यास दृढ़ हो गया है। इसी प्रकार जड़ देह मैं नहीं हूं, मन मेरा नहीं हैं, यह सब साधन हैं, जो मुझे प्रभु से मिले हैं — इस प्रकार दिन रात में अनेक बार दुहराते रहने से यही अभ्यास दृढ़ हो जायगा। जिसे भी मेरा मानते हो उसी को प्रभु का मानो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आँख ★★★

आचार्य स्वामी अमर मुनि जी महाराज

हरसु के दबेदेम, हमा सूये तो देदेम ।
हरजा के रसीदेम, सरेकूये तो दीदेम ॥

जिस दिशा को हम दौड़े वे तमाम दिशाएं तेरी ही देखी, तात्पर्य सर्वत्र तू ही तू, और जिस जगह पर पहुंचे वह तमाम तेरी ही गली का सिरा देखा, भाव हर जा तुझे ही पाया ।

"रूये हमे खूबाने जहाँ रावे तमासा दीदेम
बलेजा आइनाये रूये तो दीदेम ।

"दुनियाँ के तमाम खूबसूरत लोगों के चेहरों को तमाशे की खातिर हमने देखा, लेकिन तेरे चेहरे के आइने से उनको देखा, तात्पर्य इन तमाम खूबसूरतों में तेरा ही नूर पाया ।

शहन्शाह राम इन पदों के द्वारा जिधर देखते हैं वे दिशाये उन्हें राम ही की दिखाई देती हैं, और जहां जाते हैं वे रास्ते, वे स्थान राम ही के दिखाई देते हैं, जिस सौन्दर्य का दर्शन करते हैं उस सौन्दर्य में राम को ही देखते हैं, सबमें राम का ही सौन्दर्य समाया है, ये थी दृष्टि शहन्शाह राम की, जिसने उनके लिए सारे विश्व को राम रूप में बदल दिया ।

रामायण में रावण मारीच के पास जाता है और मारीच से सोने का मृग बनकर सीता के अपहरण में सहायता देने को कहता है, राम से बदला लेने के लिए प्रेरणा देता है । राम नाम सुनते ही मारीच का रंग पीला पड़ गया, मुंह सूख गया, शरीर काँपने लगा, भयभीत से मारीच ने कहा—वृक्षे-वृक्षे हि पश्यामि चीर-कृष्णाजिनाम्बरम् ! गृहीत धनुषं रामं पाश-हस्तमिवान्तकम् । अपि राम सहस्त्राणि भीतः पश्यामि रावण, रामभूतमिदं सर्वमारण्यं प्रतिभाति मे ॥

रावण! मुझे पेड़ पेड़ में धनुष लिए राम दिखाई देता है, मुझे प्रतीत हो रहा है कि राम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हाथ में पाश लिए हुए मेरे प्राणों को लेने आ रहा है। भय के कारण मुझे हजारों राम दिखाई दे रहे हैं। सारा वन मुझे राम रूप दिखाई दे रहा है। मारीच भय के कारण सर्वत्र राम को देखता है, वह राम के तीनों लोकों के मोहने वाले सौन्दर्य को नहीं देखता, राम के दर्शन से उसे आह्लाद नहीं होता, आनन्द नहीं आता, राम के दर्शन से उसके शरीर में रोमांच नहीं होता, आनन्द के अश्रु आंख में नहीं छलछलाते। जिस राम के रूप को देख सभी प्राणी आनन्द विभोर हो जाते हैं, अपनी सुध बुध खो बैठते हैं उसी राम को देखकर मारीच भयभीत होता है, राम उसे यमराज के रूप में दिखाई देता है। किसी भी रूप में देखे देखता राम को है। भाव की विपरीतता से वह राम से भयभीत होता है। शहन्शाह राम उसी राम को प्रेम भाव से देखते है। राम के दर्शन से आनन्द विभोर हो उठते हैं। प्रत्येक वस्तु को राम रूप में पाकर प्यार में विभोर होकर उसकी ओर दौड़ते है, प्रियतम के रूप में उसे गले लगाते हैं और आनन्द विभोर हुए राम के सौन्दर्य का दर्शन करते हैं। किसके सौन्दर्य का? राम के सौन्दर्य का। दर्शन मारीच भी करता है किन्तु वह सौन्दर्य का दर्शन नहीं करता मृत्यु का दर्शन करता है। उसके लिए जगत आनन्दप्रद नहीं मृत्यु प्रद है। जगत प्रेम रूप नहीं भय रूप है वह भागता है किन्तु उसे कहीं भी शान्ति नहीं मिलती, आंखे बन्द करता है तो अन्तर में राम के दर्शन का चीत्कार करता है ये। ये है दृष्टि का फल, जिसने जिस जिस भाव से देखा राम रूप जगत उसे उसी भाव से आच्छादित हो दिखाई दिया, वैसा ही दिखाई दिया। जगत का रूप अपना नहीं राम का है, राम सुन्दर है प्रिय हैं।

"जित देखा तित तू"।

जिसे यह दृष्टि प्राप्त हुई उसे प्रियतम रूप से विश्व दिखाई दिया। फिर क्या था कोई पराया नहीं सभी तो अपना प्रियतम, रहा क्या केवल प्रेम-भाव।

प्रेम ही तो उस अन्तरात्मा का सच्चा स्वरूप है और द्वेष मृत्यु। अतः ऐसा प्राणी मृत्यु को जीतकर सच्चे जीवन को प्राप्त होता है। इसी स्वरूप को शहन्शाह राम के पद इन शब्दों मे कहते हैं

जुबाँ को न ताकत न मन को रूसाई।
मिली मुझको अब अपनी ही बादशाही।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवनी शक्ति का स्त्रोत-श्रद्धा

नारायण प्रसाद रानाडे शान्ति ब्रज, हरिद्वार

जीवन को किसी निर्दिष्ट ढांचे में ढाल देने वाली सबसे प्रबल एवं उच्चस्तरीय शक्ति यदि कोई है तो वह है - श्रद्धा। यह जिस भी अन्तःकरण की दिव्य-भूमि में उत्पन्न होती है उसका समस्त जीवन गुणों की हरियाली से सजा देती है। उसका जीवन सार्थक कर देती है तथा परमानन्द का रसास्वादन करा देती है, इतने उच्चस्तर तक पहुंचा देने वाली यह श्रद्धा शक्ति कैसी है? क्या है? इसे जान लेना आवश्यक है। इसके सही एवं सच्चे स्वरूप को जाने बिना इस उच्च-स्तरीय लाभ को प्राप्त नहीं किया जा सकेगा।

श्रद्धा का अर्थ है - श्रेष्ठता के प्रति अटूट आस्था। यही आस्था जब सिद्धान्त एवं व्यवहार में उतरती है तो उसे निष्ठा कहते हैं और यही जब आत्मतत्व, जीवनदर्शन एवं ईश्वर भक्ति के क्षेत्र में प्रवेश कर लेती है तो वही श्रद्धा कहलाती है।

जिस भी व्यक्ति में आत्मकल्याण की चाहना हो जिसे भी ईश्वर प्राप्ति की श्रेष्ठ एवं परम भावना की तृष्णा हो उसके लिये आवश्यक है कि वह इसके लिये विभिन्न प्रयासों और प्रक्रियाओं के साथ इस शक्ति का उभार करें, अवलम्बन ले। इसके बिना उस महान लक्ष्य को प्राप्त करने में सफलता नहीं मिल सकती। इसके बिना भी यदि परम लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता होता तो आज प्रत्येक मन्दिर के पुजारी, संन्यासी, भजनोपदेशक, कीर्तनकार, रामायण-पारायण करने वाले आदि कष्ट और कलह में तरसे-बिलखते नहीं पाये जाते। इन सभी का उद्धार हो जाता। और कबीर, रैदास, मीरा, तुकाराम जैसे सन्त महात्मा उस आनन्द से वंचित रह सकते थे। परन्तु बात ऐसी नहीं है। इसके लिये तो श्रद्धा ही आधार तत्व है इसी की नीव पर सिद्धि का महत्व खड़ा किया जा सकता है। श्रेष्ठ एवं महान लक्ष्यों को प्राप्त करने का आधार श्रद्धा एवं विश्वास को बताते हुए रामचरितमानसकार ने इन्हें भवानी और शंकर की उपाधि प्रदान की है! व्यावहारिक जीवन में भी देखा जाये तो यह सत्य एवं तथ्य प्रतीत होता है। इनके अभाव में न सिद्धि प्राप्त हो सकती है न शान्ति और न ही परमात्मा। श्रद्धा जीवन-साधन का ऐसा संधान है जिसके बिना उच्चस्थिति की प्राप्ति असम्भव है। इतना ही नहीं सामाजिक सुव्यव-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्था में भी श्रद्धा का प्रभाव परिलक्षित है। एक ही रंग रूप बनावट एवं आकृति वाली महिलाओं में से एक पूज्यनीया माता कहलाती है और दूसरी जीवन सहचरी पत्नी, कोई बहिन और कोई वैश्या। यह उसी श्रद्धा तत्व का चमत्कार है जो इस तरह की दृष्टि और मान्यता उत्पन्न कर समाज व्यवस्था बनाये रखने की शक्ति प्रदान करता है।

श्रद्धा वह शक्ति है, यदि इसका अभिसिंचन पत्थर में कर दिया जाये तो उसमें देवता का उदय किया जा सकता है। हिन्दू संस्कृति में पूजा उपासना करने का दर्शन इसी श्रद्धा तत्व पर आधारित है। प्रतिमा प्रतिष्ठापित करके लोग उसमें अपनी श्रद्धा जमाते हैं और मिट्टी पत्थर में ही वास्तविक देवता के दर्शन कर धन्य हो जाते हैं। श्रद्धा से मिट्टी की मूर्ति ही एकलव्य का द्रोणाचार्य, रामकृष्ण की काली, मीरा का कृष्ण, रैदास की गंगा बनकर जीवन को अमर बना सकी है। अपने इष्ट के प्रति अटूट श्रद्धा स्थापित करने के सत्परिणाम स्वरूप उपासक, उसके साथ अनन्य एकता स्थापित कर लेते हैं और वाँछित लक्ष्य को प्राप्त कर परमानन्द से सराबोर हो जाते हैं। ईश्वर-कर्मफल, जीवन-उद्देश्य, कर्त्तव्यपालन, आत्मा की गरिमा जैसे सत्य-तथ्यों पर सघन श्रद्धा रखने वाले अपने विचारों एव व्यवहारों को मर्यादित रखने वाले सामान्य लोग ही अपने सहज जीवन से महामानवों, देवदूतों की पंक्ति में बैठते है और मानव जीवन पाने का लाभ प्राप्त करते है। जो व्यक्ति ऐसा नहीं कर पाता वह नर कीटकों की भाँति रोता बिलखता, कुढ़ता-लबिलाता हुआ इस सुर-दुर्लभ जीवन को काटता हुआ, काल के गाल में समा जाता है। मृत्यु के बाद ऐसे व्यक्तियों का कुछ भी अस्तित्व नहीं रह पाता।

लौकिक जीवन की सुख सुविधाओं में भले ही श्रद्धा का स्थान गौण रहे पर आध्यात्मिक क्षेत्र की उच्चस्तरीय साधनाओं में इसकी ही अपरिमेय शक्ति काम करती है। इसमें यही मुख्य है। श्रद्धाहीन क्रियाकला एवं कर्मकाण्ड तो सामान्य व्यायाम में अगं संचालन के समान ही लाभप्रद हो सकते है। यदि इन्ही में श्रद्धा और विश्वास का सम्पुट लगा हो तो इन्हीं के आधार पर, चमत्कारी परिणाम प्रस्तुत किये जा सकते हैं। श्रद्धा भावना न केवल उपासनात्मक क्षेत्र में वरन् जीवन के प्रति अपने दृष्टि कोण, इसके व्यवहार, उद्देश्य, को भी प्रभावित करती है। मानवीय जीवन की श्रेष्ठता तथा महानता में जिन लोगों की आस्था नहीं होती वे इस जीवन का श्रेष्ठ उपयोग नहीं कर सकते। वे जीवन को पशुवत् पेट भरने एवं प्रजनन की वासना तक ही सीमित रखते है। उनकी यह अवस्था मानवीय समाज के प्रति अविश्वास ही उत्पन्न करती है इसके कारण समाज-व्यवस्था विचलित हो जाती है अगणित समस्याएं तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विविध उलझने आ खड़ी होती हैं। आदर्शों और मर्यादाओं की उपेक्षा होने से हीं व्यक्तिगत जीवन में दुष्टता, उद्दण्डता, और सामाजिक जीवन में भ्रष्टता, अनैतिकता, अव्यवस्था पनपती है। आज प्रायः ऐसी ही परिस्थितियाँ समस्त विश्व में विद्यमान है। इस विकट परिस्थिति में समाज का हर व्यक्ति स्वयं को विपन्न तथा असुरक्षित पाता है। सारा समाज ही उसे शोषण करता, पीड़ा देता हुआ दृष्टिगत होता है। अनेकानेक साधनों की विपुल मात्रा और कुबेर के भण्डार के समान विशाल सुखोपभोग रहते हुए भी उसे तृप्त नहीं कर सकते। कामनाओं और वासनाओं की सुरसा अपना मुंह फैलाती हुई व्यक्ति को अपने से जीत कर जाने नही देती। व्यक्ति भी उस जाल जनाल में फसकर भौतिक वादी बन जाता है। ऐसी मान्यता वाले लोग आधि व्याधि में ग्रस्त होते है। उनके अन्तःकरण का अमृतस्त्रोत, शुष्क नीरस तथा विलीन हो जाता है। ऐसी स्थिति में भावविहीन, चिन्ताग्रस्त द्वेष और आवेशग्रस्त होकर व्यक्ति इस देव दुर्लभ मानव जीवन का आनन्द नहीं ले पाता। वह प्रेत-पिशाच की तरह बन जाता है। आस्था विहीन यह स्थिति कितनी भयंकरता उत्पन्न कर सकती है इसको स्पष्ट रूप से साकार देखना हो तो इसे आज भौतिकवादी दृष्टिकोण वाले पश्चिमी देशों में देखा जा सकता है। जहां पर धन कुबेरों की कमी नहीं। साधन सुविधाओं की पर्याप्त मात्रा होते हुए भी व्यक्ति त्रस्त एवं व्यस्त है। न तो उन्हें दाम्पत्यसुख ही मिल पाता और न ही समाजिक सहृदयता ही। सहज स्वाभाविक नींद नहीं आती। यह सब मानवीय गरिमा-गौरव के प्रति अनास्था एवं भौतिकवादी दृष्टि कोण का ही दुष्परिणाम है।

मनुष्य के स्थल शरीर की अपेक्षा उसका सूक्ष्म शरीर अधिक महत्वपूर्ण, सामर्थ्यवान तथा श्रेष्ठ है। उसका जीवन इसी सूक्ष्म के आधार पर टिका रहता है। वह भावनाओं के सहारे पैदा होता है भावनाओं में ही जीवित रहता है, और भावजगत में विलीन होता है। इस मानवीय भावनाओं के प्रति सम्मान को ही अध्यात्म में श्रद्धा कहा जाता है। यह व्यावहारिक सम्मान, भावनात्मक संवेदना जहां भी होती है वहीं सन्तोष की निर्झरणी सतत प्रवाहित होती रहती है। भगवान कृष्ण ने भी गीता में कहा है

सत्यानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत।
श्रद्धा मयोऽयं पुरूषों यो यच्छद्ध स एव सः गीता १७/३

अर्थात — हे अर्जुन! यह सृष्टि श्रद्धा से विनिर्मित है, जिसकी जैसी श्रद्धा होती है, वह पुरूष वैसा ही बन जाता है। अर्थात बुराईयों के प्रति श्रद्धा व्यक्ति को समस्याओं में कैद कर देती है तो आदर्शों के प्रति आस्था मनुष्य जीवन को सुख शान्ति और प्रसन्नता से भर देती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानव का एक महत्व पूर्ण-मोभाव–

प्रेम

प्रेम मानव का एक महत्वपूर्ण मनोभाव है। यदि यह कहा जाए तो अत्युक्ति न होगी कि बिना प्रेम के मानव–मन संवेदनात्मक अनुभूति से वंचित होकर बिना पूँछ–सींग का पशु मात्र रह जाता है। वास्तव में प्रेम है क्या ? प्रेम को एक ऐसी अनुभूति कहा जा सकता है जिसमें एक प्राणी को दूसरे प्राणी के प्रति एकनिष्ठ ललक हो और वह ललक एकात्मकता की सीमा तक पहुंच जाए। प्रेमी और प्रिय के बीच इस ललक के लिए किसी और वस्तु की अनिवार्यता अपेक्षित नहीं है, प्रेम के लिये इतना पर्याप्त है कि कोई मनुष्य हमें अच्छा लगे और इसका निर्णय करने लिये कोई कारण भी जरुरी नहीं है। जीवन के चरम एकान्त में मन की एकता या घनत्व प्रेम की अनुभूति का द्वार है, उसका आदर्श प्रिय का शरीर या व्यक्ति मात्र होता है। प्रेम की भूमि यथार्थ की नही आदर्श और स्वप्न की भूमि है। हम संसार को भुला कर सब ओर से आंखें बन्द कर प्रिय का चिन्तन करते हैं। प्रेमी और प्रिय का जगत वास्तविक जगत से भिन्न होता है। वह अपने प्रिय के लिए अलग ही संसार की रचना करना चाहता है। कभी–२ हम किसी व्यक्ति के कर्म और गुण देखकर उसके प्रति श्रद्धा करते हैं किन्तु बाद में गुणों की मध्यस्थता समाप्त होकर व्यक्ति मात्र के प्रति जब हमारा अन्तःकरण केन्द्रीयभूत हो जाता है तब प्रेम ही का भाव जन्मता है। वास्तविक स्थिति यह है कि प्रेमी प्रिय के साथ सतत् सान्निध्य का आकांक्षी हो जाता है। उठना, बैठना, सोना, चलना, फिरना यहाँ तक कि प्रिय की प्रत्येक गतिविधि प्रेमी के लिये सामान्य से विशेष दृष्टिगत होती है। वह दो होते हुए भी एक अनुभूति करता है और अपने प्रिय के हृदय पर सदैव अपने अधिकार का आकांक्षी रहता है।

कभी यह प्रश्न उठता है कि प्रेम का भाव क्या एक प्रकार का लोभ नहीं कहा जा सकता ? यद्यपि लोभ व्यक्ति के प्रति न होकर वस्तु के प्रति होने वाला एक भाव है। वास्तव में लोभ एक ऐसी वृत्ति है जिसका मूल सम्बन्ध हमारे सुख से है और सुख देने वाली वस्तु के सम्बन्ध में जब मन में अभाव की भावना होते ही प्राप्ति, निकटता और बचाव की इच्छा जग पड़े तब लोभ का जन्म होता है। कुछ व्यक्ति प्रेम को लोभ का सात्विक रूप मानते हैं। वास्तव में लोभ सामान्य अथवा जाति के प्रति होने वाले लगाव का भाव है जबकि प्रेम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा प्रीति एक विशेषोन्मुख लगाव। जब हम एक ही व्यक्ति अथवा वस्तु के प्रति सामान्य वस्तु अथवा व्यक्तियों के बीच में भी प्रवृत्तिरत बने रहते हैं तब वह उसके प्रति हमारा लोभ नहीं है। किन्तु जब कोई पुरुष प्रत्येक सुन्दर स्त्री को देखकर उसके रूप की प्रशंसा करते हुए प्रत्येक के प्रति विचित्र उत्कटता और रुचि प्रकट करे तब क्या उसे हम प्रेम कह सकते हैं ? वास्तव में यह भाव प्रेम नहीं कहा जा सकता। ऐसे व्यक्ति को समाज 'लम्पट' के विशेषण से सम्बोधित करता है। यह उसका सामाजिक पक्ष है किन्तु इस वृत्ति को क्या हम मानसिक रूप में भी पाते हैं ? मानसिक अथवा दैहिक रूप में साहचर्य की सतत् कामना के सम्बन्ध में वैज्ञानिकों ने विचार किया है किन्तु इस प्रश्न पर विचार किया जाना चाहिए कि क्या 'लिबिडो' प्रेम अथवा प्रेम का पर्याय हो सकता है। इस सम्बन्ध मे यथा स्थान विचार किया जायेगा। सामान्यतया सामाजिक जीवन में सात्विक और व्यक्तिनिष्ठ होकर लोभ प्रेम बन जाता है और सामान्य और तामसिक होकर वही भाव लोभ भी नहीं रह पाता। आचार की दृष्टि से भी इस प्रकार का आचरण समाज में व्यभिचार की कोटि में आता है।

प्रेम में प्रधान अनुभव है किसी का बहुत अच्छा लगना जिसमें सुख अथवा आनन्द की चरम अनुभूति का भाव अन्तर्निहित रहता है। अच्छा लगने का भाव अथवा सुख या आनन्द अनुभव का भाव तब तक प्रकट नहीं हो पाता जब तक कि इच्छा का उसके साथ सन्निवेश नहीं होता। यह इच्छा अनेक रूपी है, अनिवंचनीय भी है। जब हम किसी के प्रति इस सीमा तक लगाव अनुभव करते हैं कि उसको प्राप्त करने, दूर न करने तथा नष्ट न होने देने की स्थिति को अप्रकट नहीं कर पाते तब ही चाहने का यह रुप दूसरों को ज्ञात होता है और उसके अनुसार प्रेम की कोटियों का निर्धारण भी प्राय: किया जाता है। अपने मूल में अच्छे लगने की यह प्रक्रिया मानव मन का एक वैशिष्ट्य है, स्थितियों से उसमें जटिलता और व्यक्ति पर्यावरण और संस्कारों से उदात्तता का भाव निष्कर्ष रूप में प्राप्त होता है संतों ने अपने अनुभव से प्रेम को तलवार की धार कहा है जब कि सामान्य मनुष्य भी प्रेमानुभूति के फलस्वरूप ठीक ऐसी ही स्थिति को भोगता है।

प्राय: वैज्ञानिक अध्ययन में सामान्य मनुष्य की चर्चा की जाती है। पर मैं सोचता हूं, संत महात्मा उदात्त रूप में होने के बाद भी मनुष्य ही रहते हैं। इसी सन्दर्भ में उनका उल्लेख किया गया है। प्रेमी और प्रिय इन्द्रियासक्ति का भाव अनुभव करते हुए भी इन्द्रियतीत हो जाते हैं क्योंकि प्रेम शरीर धर्म होते हुए भी केवल शरीर नहीं है अथवा शरीर सम्पर्क नहीं है। प्रिय के प्रति इच्छा का कोई भी आधार भी तो नहीं होता। प्रेमी का प्रिय को प्राप्त करना अथवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सान्निध्य की इच्छा एक रूप है। तो दूर न करना दूसरा रूप और नष्ट न होने देने की इच्छा तीसरा रूप सानिध्य की इच्छा में भी एकमेव सम्पर्क अथवा बहुतों के साथ सम्पर्क की इच्चा के लिये स्थान है। प्रेम इस दृष्टि से अधिकार भावना का अप्रत्यक्ष पोषक है किन्तु अपने मूल में वह अधिकार का भाव नहीं ठहरता। वह तो ऐकांतिक समर्पण की अवस्था है। प्रिय प्रेमी में जिस समर्पित भावोत्कर्ष की अनुभूति करता है वह विवेचन की किसी सीमा में नहीं बाँधी जा सकती। प्रेम में अधिकार और कर्त्तव्य का हिसाब किताब नहीं हित - चिंतन और हित - साधन की उसमें गुँजाइश है। मन ही प्रेम का एकमात्र आधार है और मन जिस प्रकार इन्द्रियों से जुड़कर इन्द्रियातीत एकता तक सम्बद्ध है उसी प्रेम की व्यापक गति है। प्रेम के इस प्रवर्तन के लिए परिचय का आधार अपेक्षित है। यह बात दूसरी है कि हम वर्षों एक-दूसरे से परिचित होकर भी प्रेम नहीं कर सकते और कुछ देर का परिचय ही अटूट प्रेम में परिणत हो जाता है।

प्रेम में व्यक्ति द्वारा अथवा वस्तुओं के प्रति ललक का भाव होता है किन्त, व्यक्ति जब व्यक्ति से प्रेम करता है और व्यक्ति जब वस्तु से प्रेम करता है तब मन की स्थिति तब मन की स्थिति में अन्तर हो जाता है। आज भी सभ्यता की ओर बढ़ने वाली इस दुनिया में ऐसे बहुत से पुरूष हैं जो स्त्री को व्यक्ति न मानकर वस्तु मानते हैं। यह बात चौंकाने वाली लग। सकती है किन्त अनुभव के आधार पर तथा ऐसे पुरूषों के अध्ययन के आधार यह तथ्य ठीक ही ठहरता है। ऐसे व्यक्तियों में स्त्री के प्रति ललक का स्वरूप अन्य अनेक वृत्तियों से सम्बद्ध होकर प्रकट होता है। काम भावना, अधिकार और पीड़ा पहुंचाने की वृत्ति के कारण ऐसा पुरुष स्त्री की सत्ता को अपने से भिन्न कोटि की मानता है जबकि प्रेम एक ऐसी स्थिति है जिसमें एक ही कोटि की दो सत्ताओं का योग होता है। मन स्त्री में भी है और पुरुष में भी और यदि मन की सत्ताओं का कहीं कोई मेल और योग न हो तो फिर स्त्री का पुरुष के प्रति और पुरुष का स्त्री के प्रति प्रेम किस प्रकार का हो सकता है। भोग सम्बन्ध निर्वाह और प्रेम तीनों मानसिक स्तर पर जाकर प्रेम की कोटि तक नहीं पहुंच पाते हैं वहां पर केवल एक ही सत्ता दो सत्ताओं के योग रूप में शेष रहती है। यह हो सकता है कि स्त्री और पुरुष में से केवल स्त्री अथवा पुरुष ही मानसिक दृष्टि से उस सचेतनता का भोक्ता हो ऐसी स्थिति में हम उसे एकांगी प्रेम कहेंगे।

अब प्रश्न उठता है कि प्रेम की उपलब्धि क्या है? अन्तर्वृत्ति के रूप में यद्यपि प्रेमी प्रिय एक दूसरे को प्रभावित करने की होड़ में दत्तचित्त रहते हैं और यही अज्ञात वासना उन्हें अत्यधिक निकट लाने अथवा प्रेमासक्त होने के लिये पर्याप्त है तथापि प्रेम की तृप्ति में ऐसी कौन सी उपलब्धि है जिसके लिये मनुष्य ऐश्वर्य सुख-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भोग और सम्मान को तिलान्जलि देकर सब की होड़ में प्रेम को महत्वपूर्ण पाता है और अपने प्रिय के लिये जीवन तक उत्सर्ग करने में पीछे नहीं रह पाता। ब्रिटेन के एडवर्ड आठवें ने अपनी प्रिया को पाने के लिये ब्रिटेन का राजसिंहासन मुस्करा कर छोड दिया, यह बात किसी किस्से-कहानी की कल्पित बात नहीं है। ऐसे अनेक उदाहरण हम प्रत्यक्ष अपने बीच में पाते हैं। प्रेम की इस मानसिक वृत्ति में मूल बात है प्रिय अथवा प्रेमी की अपनी तुष्टि।

इस तुष्टि का माध्यम होता है प्रिय का सान्निध्य मात्र सान्निध्य की यह ललक इस बात की अपेक्षा नहीं रखती कि इस सम्बन्ध में प्रेमी अथवा प्रिय की स्वीकृति भी है अथवा प्रिय की ओर से कोई प्रयत्न भी है। किन्तु यह प्रेम की एकांगी स्थिति ही है। प्रेम का विकास दो हृदयों के आकर्षण और अन्ततोगत्वा मेल अथवा अभेद भाव की स्थिति में ही सम्भव इस है लिए य द्यपि प्रेम की उपलब्धि मनस्तुपिट है तथापि प्रिय अपने प्रेमी को अथवा प्रेमी अपने प्रिय को बिना इसकी सूचना दिये नहीं रह पाता है। यह मानों जीवन की एकता का प्रत्यक्ष अनुभव पय है और इसलिए परिस्थितियों तथा पयविरण के विपरीत होने पर भी द्वैत से अद्वैत की यह प्रक्रिया मूलतः मानसिक है। जैसे यह जगत् एक से अनेक हुआ वैसे ही अनेक से एक होने की यह क्रिया जीवन में गति प्रदान करती है। प्रेम का यह अनन्यरूप प्रायः समाज नामक संस्था में विश्वास रखने वालों की दृष्टि में लोक विरोधी माना जाता है किन्तु यह भी कम आश्चर्य जनक नहीं हैं कि बिना प्रेम के लोक अथवा समाज के सम्पूर्ण कार्य-कलाप नकली मुखौटों की भाँति जीवन को खोखला कर देते हैं। प्रेम के आधार पर लोक अथवा समाज की प्रतिष्ठा जीवन दायिनी है। वास्तव में प्रेम की अनुभूति में संकीर्णता अथवा एकांगी होना नहीं है। उसमें जीवन की समग्रता का उदात्तीकरण है किन्तु यह उस सीमा तक है जहाँ कि मानव-मन तुष्टि के रूप में जीवन को आकर्षक और सौन्दर्यमय पाता हो। या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो प्रेम पूर्ण विरक्ति है या फिर पूर्ण अनुरक्ति। विरक्ति के संवेग में वह चरम उत्सर्ग है और अनुरक्ति के संवेग में वह पूर्ण अन्तर्मुक्ति।

प्रेम के सम्बन्ध में एक तीसरी स्थिति भी प्रायः देखने में आती है। जब प्रेमी अपने प्रिय के सान्निध्य अथवा सम्पर्क की असफलता का अनुभव करने लगता है तब उसके संवेग प्रतिवर्त क्रिया के आधीन मानसिक अस्थिरता को जन्म देते हैं और ईर्ष्या, क्रोध और यहाँ तक कि विक्षिप्तता भी उसका स्थान ले लेती है। भौतिकवादी विचारक इस मनःस्थिति का कारण साहचर्य अथवा शारीरिक सम्पर्क का अभाव मानेंगे किन्तु जैसा कि मन के सम्बन्ध में विचार करते हुए प्रकट किया गया है, प्रेम न तो केवल शारीरिक है और न केवल आत्मिक। उसकी परिपूर्णता दोनों का एकीकरण है यही कारण है कि प्रेम की उपलब्धि में आनन्द भी है और दुःख भी।

—श्री कोमलसिंह सोलंकी द्वारा
लिखित "मन मेरा और आपका"
से साभार।'

यदि आपने 'पत्रिका' का शुल्क प्रेषित नहीं किया तो शीघ्र से शीघ्र अपनी ग्रा० सं० का उल्लेख करते हुए करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आश्रम समाचार

दिनाँक १० जून को, जिस दिन स्वामी रामतीर्थ आध्यात्मिक विराट् सम्मेलन का अन्तिम दिन था, स्वर्गीय श्री दौलतराम जी नैय्यर के सुपुत्र श्री जितेन्द्र जी नैय्यर की ओर से पूर्णाहुति में समष्टि भोज, भण्डारा हुआ, जिसमें देहरादून व अन्य विभिन्न नगरों से साधना-सप्ताह में पधारे हुए राम प्रेमियों तथा सन्त महापुरूषों ने सामूहिक भोज किया।

सन्तों की विचारगोष्ठी में भाग लेने महाराज श्री का प्रस्थान १६ ता० को इलाहाबाद की ओर हुआ। गोष्ठी में सम्मलित होने के बाद आप आश्रम पर पुनः २१ को वापिस आ गये।

गतवर्षों की भाँति दूनवासी रामप्रेमियों को वाल्मीकि रामायण का श्रवण कराने हेतु देहरादून की पवित्रस्थली गुरूरामराय दरबार में आपका ३१ को कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ, जिसमें आपके प्रवचनों के साथ ही श्री नरसिंह दास जी वैरागी, जो भजनोपदेशक के रूप में पंजाब, उ०प्र० में प्रख्यात है, तथा श्री ईश्वर जी के भावभक्तिमय भजनों तथा सन्तों व भक्तों के चरित्र के श्रवण का सौभाग्य भी रामप्रेमियों को प्राप्त हुआ।

गुरूपूर्णिमा के पावन दिवस पर, जो पर्व भारतीय संस्कृति में अपना विशिष्ट महत्व रखता है, परमाध्यक्ष स्वामी अमर मुनि जी महाराज, शिवस्वरूप बाबा विश्वनाथ यति जी महाराज, श्री सत्यप्रकाश जी, श्री नरसिंहदास जी वैरागी, ईश्वर जी आदि की उपस्थिति व सान्निध्य में रामदरबार सुशोभित हुआ। 'गुरू' व इस गुरूपूर्णिमा, व्यासपूर्णिमा के साँस्कृतिक, सामाजिक व आध्यात्मिक पक्षों पर वैचारिक व भावनात्मक रूप में प्रकाश डालते हुए महापुरुषों द्वारा दिये गये आशीषमय उपदेशों का पान कर जन-मानस तृप्त व सन्तुष्ट हुआ। गुरूपूजन, समाधि - पूजन, यज्ञ हवनादि विभिन्न धार्मिक कृत्यों से प्रारम्भ हुआ यह उत्सव आश्रम के कर्मठकर्ता कार्यकर्ता स्वर्गीय श्री कृष्णलाल जी भण्डारी की धर्मपत्नी श्रीमती बहिन निर्मल भण्डारी द्वारा पूर्णाहुति के रूप में किये गये भण्डारे के साथ सम्पन्न हुआ। इस उत्सव में दूनवासी रामप्रेमियों के साथ ही माता श्रीमती रामप्यारी कोचर (पटना), श्री सत्यपाल जी (अमृतसर) श्रीमती राज जौली (कुवैत), श्री मोहन जौली (कुवैत), डा० शान्ता शर्मा (दिल्ली), मल्होत्रा माता जी (चण्डीगढ़) आदि राम-प्रेमियों ने इस शुभपर्व पर गुरूचरणों में अपने श्रद्धासुमन समर्पित किये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१४ की सायं महाराजा श्री ने दिल्ली प्रस्थान किया क्योंकि १५ को दिल्ली शाखा द्वारा गुरूपूर्णिमा (गुरूपूजन) का कार्यक्रम आयोजित किया गया था।

आजकल महाराज श्री गुरुरामरायदरबार में वाल्मीकि रामायण पर सायं तथा गीता भवन में क्रमशः ५.३० से ६.३० सायं, प्रातः ८.१५ से ९.१५ तक प्रवचन कर रहे हैं। यह कार्यक्रम सम्भवतया १८ अगस्त तक चलेगा।

सम्पादक

सूचना

ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज की पुण्यस्मृति में इस वर्ष स्मृति–दिवस दिनांक १६/६/७६ को स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर, देहरादून में परमाध्यक्ष स्वामी अमर मुनि जी महाराज के तत्वाधान तथा महापुरुषों की उपस्थिति में आयोजित किया जा रहा है। जिसमें आप सब भी श्रद्धाञ्जलि समर्पण हेतु सस्नेह आमन्त्रित हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम

राम का 'मिशन' बुद्ध, मुहम्मद, ईसा तथा अन्य नबियों या अवतारों के समान करोड़ों अनुयायी बनाना नहीं है, वरन् प्रत्येक पुरुष, प्रत्येक स्त्री और प्रत्येक बालक में 'राम' उत्पन्न करना, राम का आह्वान करना, राम को प्रकट करना है। इस शरीर को रौंद डालो; इस व्यक्तित्व को खालो, मुझे पीस डालो हजम कर लो और पचालो - तभी और केवल तभी आप राम के प्रति सच्चा न्याय करेंगे ।

* * * *

चाहे आप अंगरेज हों, या अमेरिकन चाहे मुसलमान हों, या बौद्ध, हिन्दू हों अथवा कोई और, आप राम की आत्मा हैं। आप राम आत्मा की आत्मा हैं ।

* * * * *

मेरा सिद्धान्त प्रचार के लिए नहीं है, वह तो सेवा के लिए है, जीने के लिए है।

* * * *

यदि कोई मुझे अपना 'दर्शन' एक शब्द में प्रकट करने की आज्ञा दे तो मैं कहूँगा, 'आत्म - विश्वास' ---'आत्म–ज्ञान'।

* * * *

विशाल संसार मेरा घर है, और उपकार करना मेरा धर्म।

यदि पोस्टमैन को कोई कठिनाई हो तो कृपया सूचित करें

ग्राहक संख्या 534

श्री / श्रीमती Gurukul Pustkalya

स्थान Gurukul Kangri Vishvavidyalaya

डाकखाना Haridwar

जिला

मासिक पत्र—

"राम-सन्देश"

स्वामी रामतीर्थ मिशन

राजपुर, देहरादून (उ०प्र०)

Pin–248009 भारत

स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून (उ० प्र०) के लिए प्रकाशक स्वामी अमर मुनि द्वारा न्यू आईडियल प्रिन्टिंग हाऊस (कांग्रेस भवन के पास) ४-बी नेशविला रोड, (देहरादून) में, मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम-सन्देश

7.9.77

सितम्बर

१९७९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकेतिका

विषय	लेखक	पृष्ठ
आत्मानुभव	स्वामीराम	१
ग्रहस्थाश्रम और आत्मानुभव	स्वामीराम	२
प्रवचन	स्वामी हरि ॐ जी महाराज	५
रामायण चरित्र चित्रण	स्वामी तीर्थानन्द 'अज्ञ'	८
तन्दुरुस्ती का बीमा अर्थात् 'कह कहे'	प्रे० भारत बन्धु शर्मा	११
शोक समाचार		१३
स्वामी राम तीर्थ मिशन (दिल्ली)	प्रे० भारत बन्धु शर्मा	१७
पदाधिकारियों का चुनाव		
रामतीर्थ	(प्रयाग)	१९
प्रवचन	प्रे० सन्तोष सिंह वर्मा	२१
आश्रम समाचार	सम्पादक	२४
सूचना (स्मृति दिवस)		२५

संस्थापक—
ब्रह्मलीन स्वामी हरि ओ३म् जी महाराज
संवर्धक—
ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज
व्यवस्थापक—
स्वामी अमर मुनि जी महाराज

सम्पादक—
काका हरिओ३म् "निर्द्वन्द्व"

आजीवन सदस्यता शुल्क—
भारत में — १०० रु०
विदेश में — ५०० रु०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्र के हित के लिए यत्न करना ही विश्व की शक्तियों अर्थात् देवताओं की आराधना है'-स्वामी राम
वेदान्त, अध्यात्म, संस्कृति, धर्म एवं भक्ति का सजग सन्देशवाहक
तथा स्वामी राम के आदर्शों का एकमात्र लोकप्रिय मासिक—

राम सन्देश

वेदोपनिषदां तत्त्वम् सत्यं नित्यं सनातनम् ॥
तत्सर्वं "रामसन्देशे" पत्रेऽस्मिन्नवलोक्यताम् ॥

वर्ष २८ अंक ९	राजपुर, देहरादून, सितम्बर १९७९	वार्षिक भेंट १०) एक प्रति ८५ पैसे

आत्मानुभव

संसार में आपको जितना भी आकर्षक दिखाई देता है वह सत्नारायण के सिवा और कुछ नहीं है। जो प्रियतम प्यारा शरीर में आपको दिखलायी देता है, वही तारों, पेड़ों, पर्वतों, नदियों में दूसरा भेष धारण कर लेता है।

★ ★ ★

इस तथ्य का अनुभव कीजिए—बस, इस तथ्य के अनुभव से ही आप सांसारिक इच्छाओं और व्यसनों से ऊपर उठ सकते हैं। इस प्रकार आप सांसारिक इच्छाओं का आध्यात्मिक प्रयोग करके उनका निष्काम भाव से उपयोग कर सकते हैं।

—स्वामी राम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गतांक से आगे—

गृहस्थाश्रम और आत्मानुभव

(ता० १ फरवरी १९०३, रविवार, सन्ध्या—समय)

—स्वामी राम

राम तुम्हें अपने पुत्र–कलत्र के साथ इस प्रकार का जीवन बिताने के लिए कहता है कि जो तुमको क्षुद्र, स्वार्थी भावनाओं से परे रक्खे, जो जीवन तुम्हें बराबर ईश्वर में, भगवान् में, पवित्र आत्मा में लीन करे, सबके साथ तुम्हें एक करे। यदि पति पत्नी दोनों ऐसे उच्च विचार, ऐसी पुण्यमयी शक्ति और उच्च भावों से सम्पन्न होंगे, तो उनकी सन्तान, ऐसे पिता–माता की सन्तति भी क्राइस्ट होगी। यदि तुम चाहो, तो इस जमाने में भी ईसामसीह पैदा हो सकते हैं।

घर को प्रीति की हद नहीं, बल्कि प्रीति का केन्द्र बनाना चाहिए। लोग अपने घर को प्रीति की सीमा बना लेते हैं, ताकि उनका प्रेम और प्रणय उस मर्यादा के बाहर न जा सके। गृह और पुत्र-कलत्र को प्रीति का केन्द्र बनाना चाहिए, जिससे प्रेम की किरणें सब दिशाओं में छिटक सकें। तुम्हारा प्रेम वहाँ सीमाबद्ध न होना चाहिए। तुम्हें अपनी पत्नी को अपने प्रेम और प्रीति की सीमा नहीं बना देना चाहिए। तुम अपने स्वार्थी विचारों द्वारा अपने को और निज पत्नी को—दोनों को—नीचे गिराते हो, और इस प्रकार अपना व उसका अर्थात् दोनों का विनाश करते हो। पत्नी तुमको प्रीति करना सिखलाती है, और उस प्रीति को शुद्ध करने से, उस प्रीति को सारे विश्व की प्रीति बना देने से, उस बाह्य रूप रंग, चित्र और आकार की प्रीति को परम तत्त्व वा परमात्मा की प्रीति बना देने से, यदि तुम ऐसी प्रीति के साथ प्रत्येक पदार्थ के निकट हो, और उसी से तृण, पुष्प, नदी, पहाड़ और खाइयों पर दृष्टि डालते हो, तब समझ लो कि तुम सारे संसार के साथ भिन्न हो चुके।

पत्नी तुम्हें समस्त जगत् के साथ एक समान एकता स्थापना सिखाने के लिए हैं, जगत् से तुम्हारा समान सम्बन्ध तोड़ने के लिए वह नहीं है। अब राम आपको कुछ आध्यात्मिक नियम बतलाता है। यही आध्यात्मिक नियम इस संसार में सर्व प्रकार की प्रीतियों का शासन करते हैं। यदि राम उन्हें न भी बतलाये, तो भी आप उनका अनुभव कर रहे हो और सदा करते रहोगे, किन्तु कह देने से आप सावधान हो जाओगे। जैसे गाड़ीवान को यह विदित न होने से कि आगे रास्ते में क्या है जब गाड़ी किसी रुकावट (गति कुंठन Stumbling block) से टकराती है, तो सारी गाड़ी हिल जाती है, और बड़ा धक्का लगता है, पर यदि उसे सावधान कर दो, यदि उसे आने वाली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोक की सूचना दे दो, तो वह सावधानी से उस गाड़ी को बचा ले जाता है। वैसे ही आपके सांसारिक व्यवहारों में भी अनेक विघ्न बाधायें, अनेक आपदायें अनेक सफलतायें और मानसिक व्यवस्थायें आती हैं। पर इन मर्म-वेदनाओं, इन विपत्तियों, असफलताओं एवं निराशाओं की सम्भावना कब समझनी चाहिए? यह राम आपको बताता है। और जब आप यह जान लोगे, तो फिर आपको दुःख न होगा। उपाय बहुत सरल है, और जहाँ तक हो सकेगा, आप उन विपत्तियों से बचोगे। गणित-शास्त्र के नियम के समान यह नियम भी सत्य है। किसी भी भौतिक तथ्य के समान ही यह कानून सत्य है। जब कभी कोई स्त्री या पुरुष किसी व्यक्ति, मूर्ति वा किसी भौतिक पदार्थ से प्रीति करने लगता है, तब कुछ समय तक तो उसे उस जड़ पदार्थ का उपभोग करने को मिलता है, जैसे ही वह वस्तु उसके अन्तःकरण में घर कर जाती है, जैसे ही उसका जीवन तक उससे व्याप्त, रंजित हो जाता है, वैसे ही—ठीक उसी समय—वह वस्तु वहाँ से हटा दी जाती है।" यही नियम, विधान है। कोई इससे बच नहीं सकता। ऐसी कोई शक्ति कोई सत्ता नहीं, जो ऐसी घटना को रोक सके, या उसका निवारण कर सके। प्राचीनतम काल से लेकर आज तक इस नियम का कभी भी व्यतिक्रम नहीं हुआ।

जहाँ किसी वस्तु के साथ आपने चित्त जोड़ा, किसी नाम या व्यक्ति से ममता की, किसी महान पुरुष का आश्रय लिया, उस पर विश्वास किया, उस पर भरोसा कर अपना भार डाला, तो झट वह आधारस्तम्भ खींच लिया गया और आप धम्म से नीचे जा गिरे। आप किसी मेज के सहारे खड़े हो जाओ, यदि उस मेज को खींच लिया जाय, तो आप गिर पड़ते हो, आपको चोट लगती है। यह क्या शिक्षा देता है? यह हमें शिक्षा देता है कि इन स्थूल भौतिक पदार्थों के आश्रय हमें अपनी प्रीति नहीं बनाये रखनी चाहिए। इन जड़ पदार्थों को यद्यपि अपनी प्रीति का पात्र तो नहीं बनना चाहिए किन्तु तो भी जड़ पदार्थों के बिना हमारे हृदय में प्रेम का संचार भी नहीं हो सकता। इन जड़ पदार्थों के ही द्वारा हम प्रीति करना सीखते हैं। पर जब एक बार प्रीति का पाठ पढ़ चुकते हैं, तब प्रकृति हमको यही उपदेश देती है कि यह प्रीति जड़ वस्तुओं में बांधकर नहीं रक्खी जा सकती उस प्रीति का प्रसार होना चाहिए, जो उसे अन्तरात्मा को अर्पण नहीं करता, उस मनुष्य को धिक्कार है। यदि आप ऐसा नहीं करते, तो आप नरक गामी होंगे, और आपको दुःख मिलेगा। पति पत्नी दोनों को एक साथ ही उन्नति करनी चाहिए और जब कि पत्नी हमें प्रीति करना सिखलाती है जो प्रीति हम सीखते हैं, उस प्रीति को उस शरीर में ही स्थापित करके न रखना चाहिए किन्तु समस्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्व को, प्रत्येक प्राणी को, अर्पित करना चाहिए।

सांसारिक सुख रूपी क्षेत्र खेत में बोये हुए बीज में आध्यात्मिक उन्नति अंकुरित नहीं होती है। इस लिए जब आपकी प्रीति का बीज या पति या पत्नी के पार्थिव क्षेत्र (शरीर) में आरोपित होता है, तब वह भौगोलिक शरीर में आरोपित प्रीति का बीज मानों जमीन में डालकर, मिट्टी से ढक दिया जाता है; पर जब वह प्रीति रूपी बीज नष्ट होकर बाहर प्रस्फुटित होता है और खुली वायु में सुफल फलता है, तभी वह प्रीति श्रेयस्कर होती ; अतः पति और पत्नी में या अन्य किसी भौतिक पदार्थ में आरोपित प्रीति रूपी बीज को अवश्य गल जाना चाहिए, और फिर खुली वायु में उगकर फलना चाहिए। अतएव साँसारिक पदार्थ निमित्त जितनी कुछ प्रीति है, उसके सम्बन्ध में सदा प्रत्यक्ष असफलता ही दीख पड़ेगी। जब वह भौतिक पदार्थ में बोया हुआ प्रीति का बीज नष्ट होता है, प्रकृति का नियम है कि वही प्रेम रुपी बीज तुम्हें एक न एक दिन अवश्य आत्मानुभव करा देता है। यह सच है कि A man who never loved can never realize God" जिसने कभी प्रीति ही नहीं की, वह ईश्वर को पा नहीं सकता।

साधारणतः कहा जाता है कि धर्म को सांसारिक प्रीति से कुछ सरोकार नहीं है। पर राम कहता है कि सरोकार है। सांसारिक प्रीति का सदुपयोग आपको ईश्वरानुभव कराता है।" बाहिरी सुख तो आत्मानुभव के मार्ग में जो दुःख दर्द वा पीड़ा मिलती है, उस पीड़ा के भी बराबर नहीं। वस्तुतः वही शुद्ध प्रीति आपको ईश्वरानुराग सिखाती है, वह शुद्ध प्रेम ही ईश्वर का पर्यायवाचक शब्द (Synonym) है।

वैवाहिक सम्बन्ध को उच्च बनाना ही पति का उद्देश्य होना चाहिए, न कि द्रव्योपार्जन, धनसञ्चय और पारिवारिक सम्बन्ध का दुरुपयोग। जो पदार्थ वास्तव में सुख के साधन थे, वे ही दुःख देने के परिणाम बनाये जाते हैं। जो साधन मात्र है, उसे साध्य मत बनाओ। धन-दौलत तो केवल शीत-उष्ण से बचाने, क्षुधा-तृषा को निवारण करने और निर्विघ्न एकान्त-स्थल में हिफाजत से रहने का साधन मात्र होना चाहिए। अब विचारो कि क्षुधा-पिपासा न सता सके एवं सर्दी न लगे, इसके वास्ते भोजन और कपड़े लाने के लिए कितने द्रव्य की आवश्यकता है।

लोग कहते हैं, "हमें सर्दी पकड़ती है।" पर पर सर्दी असल में आपको नहीं पकड़ती, रोग आपके पास नहीं आता, आप ही रोग के पीछे पड़कर उसे जा पकड़ते हैं। यह कहना बिल्कुल ठीक है। सर्दी से बचने के लिए वस्त्र अवश्य पहनना चाहिए, पर यह स्मरण रहे कि वस्त्र केवल शरीर-रक्षा के लिए और अपने आपको सर्दी से बचने के लिए हों।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(गीता भवन, अमृतसर में दिया गया प्रवचन)

भजन

कौन देश से आया मुसाफिर, कौन देश को जाना ?
भूल गया क्या राह में आकर, क्यातुझे है पाना, कौन तेरा ठिकाना
यह जग तो है रैन बसेरा, अपना झूठ कहाना।
हल्का रखना भार कर्म का, फिर न पड़े उठना ॥
मुसाफिर
सीप किनारे चमकीले हैं, चुनकर न पछताना,
जो तू चाहे मोती पाना, गहरे पानी जाना।
मुसाफिर गहरे पानी जाना ॥
कौन देश से
बीज खाक मे मिल जाता है, खिलता फूल सुहाना,
दूर है मंजिल राह कठिन है, फिर भी चलते जाना
मुसाफिर

माताओ, देवियो व सज्जनो ! हम को अपने जीवन की समस्याओं को हल करना है। कोई ज्ञान का आश्रय लेकर कर रहा है और कोई भक्ति का अनेक प्रकारों से हम इस जीवन में सफल होना चाहते हैं। माली पौधे को लगाता है, पर उसका अन्तिम ध्येय क्या है ? शीघ्र पक कर मीठा मीठा फल आए। इसी तरह जितने ज्ञान भक्ति सत्संग होते हैं, जीवन को सफल बनाने के लिये किये जाते हैं। अकर्मण्यता एक बड़ा भारी अवगुण है। शास्त्रों ने प्रारब्ध का अर्थ यह नहीं कहा—कुछ न करो व्यर्थ की चेष्टाओं कामनाओं को न करो। सभी का फल प्रारब्ध रूप से निश्चित है। हर मनुष्य सम्पूर्ण विश्व को अपना करने का बीज रखता है तो क्यों कोई किसी का मोहताज बने क्यों किसी के धन की ओर ललचाती नजरों से देखे ? विश्वपति इसके हृदय में विद्यान हैं। आत्मज्ञान सिखाता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरेक के अन्दर विश्वपति हैं आत्म रूप से । दूसरों के अधिकारों से वृत्ति उठा (Research) खोज करनी है जीवन यात्रा को कैसे शोभायमान बना सकते हैं ।

स्वामी राम कहा करते थे—एक ईश्वर सृष्टि है एक जीव सृष्टि । सत्युग पश्चात् कोई सूर्य या चाँद दूसरे नहीं हो गए । दुःखदायी या सुखदायी जीव की रची सृष्टि है । मृत्तिका एक है । अपने २ आर्ट के अनुसार ट्रेनिंग के अनुसार भिन्न भिन्न खिलौने तैय्यार कर रहे हैं । इसी तरह अपनी ट्रेनिंग ज्ञान के अनुसार, अपनी अपनी बुद्धि के अनुसार जीव विचर रहा है । यह छोटा है या महान अपनी ही रचना से बना है । जहाँ वेदान्त के शब्दों में बताया जाता है ओ३म् तत्वमसि इसका तात्पर्य प्रयोग में लाइये । जो कुछ भी तू बना है, अपने संकल्पों के बल पर बना है । दूसरा तुझे बनाने वाला कोई नहीं । थोड़ा बहुत पढ़ना तो Theoratical (थ्योरैटिकल) है प्रैक्टकल तो यह है मैं अपने संकल्पों के बल पर ही सब कुछ बन सकता हूं ।

योग वशिष्ठ जर्मनी में ले जाया गया । जब खूब प्रशंसा की तो राम से कहने लगे कि यह मूर्खों सी बातें कहां सेसीखी ? वशिष्ठ जी बोले—जैसी योग्यता पाई, वैसा कह रहा हूं । मेरे उपदेश का तात्पर्य है कि हे राम जी ! तेरी योग्यता वशिष्ठ रूप धारण कर सामने बैठी है ।

मेरा प्रत्यक्ष दृढ़, पक्का अनुभव है कि यदि तीसरी क्लास के टिकट लेके प्रथम में जा बैठते हैं तो बुरी तरह से उतारे जाते हैं । आपके गृह के अन्दर सत्संग होने लगता है । कुछ दिनों के बाद सिल सिला खत्म हो जाता है । तपो राज्य, राजों नरक शेख अब्दुल्ला का उदाहरण लीजिये—जेल में रह कर अति शुद्ध हो गया था । पत्ते पत्ते के अन्दर प्यार करने लगा । उसने यही उद्देश्य बना और लिया पंडित नेहरु की शक्ति मिल गई—काश्मीर प० राज्य करने लगा ।

शेष पृष्ठ ७ पर

यद्यपि हमारी बुद्धि मृत्यु स्वीकार करती है, तो भी उसमें हमको असली विश्वास क्यों नहीं होता ? इसका समाधान वेदान्त इस प्रकार करता है मनुष्य के भीतर एक असली आत्मा है, जो अमर है, एक असली अविनाशी, अपरिवर्तनशील आत्मा है । कल आज और सदा सदा वह एक समान है ।

—स्वामी राम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जफर बादशाह फकीर हो गए—यह ताज रख लो। यह ताज जिस सिर पै चला जावे, जहां तक सूर्य सी किरणों की दौड़ है, वहाँ तक उसका राज्य रहेगा। मैंने इस ताज को बहुत देर तक रखा पर पीड़ा रखने से जो उत्पन्न होती है न पूछो। शेख अब्दुल्ला ताज पहनता है तो अभिमान की पीड़ा आ जाती है, पाप का प्याला लबरेज हो जाता है। फिर छः साल बाद उसी कैद में।

तुम निर्धन क्यों हो? तुम्हारा अन्दर से पतन हो चुका। जैसी ऐनक लगाते हो वैसा वातावरण बन जाता है। मन के संकल्प के अनुसार पिक्चर बना लेता है। ईश्वर की तरह पंच रस भी एक तत्व है। भावना के अनुसार जीव Player (खिलाड़ी) है Play (खेल) कर रहा है।

मनुष्य जो किसी तथ्य पर पहुंचना चाहते हैं आत्म-विस्मृति" यानि अपने को भूल जाए। एक सराको बादशाह था। उसके राज्य में अर्शभेदन हकीम बड़ा अच्छा था। उस पर उसे बड़ा विश्वास था। बादशाह ने एक दिन उसे बुलाकर कहा—ताज के अन्दर खोट है। तोड़ना भी नहीं, खोट को किसी युक्ति से निकाल, तू किसी दलील से बता कितना खोट है? दस, पन्द्रह दिन टाइम रख दिया जाता है। वृत्ति को तदाकार करता है। एक दिन टब्ब में बैठा नहा रहा था। चूंकि चौबीस घन्टे खोट निकालने का ध्यान रहता था। नहाते नहाते अलफ नंगा Palace (महल) की ओर भागा Found out, Found out (पा लिया, पा लिया) सारे कहने लगे इसकी अक्ल को क्या हो गया। राजा ने अर्शभेदन का शरीर पोंछा, कपड़े पहनाए जब तक साईन्स का जमाना रहेगा, उसका नाम रहेगा। उसने आत्म विस्मृति से अपना ध्येय पा लिया।

अर्शभेदन ने तो खोट ही निकालना था और आपको तो परमात्मा की प्राप्ति करनी है। पग पग पर मान अपमान, हानि—लाभ के झोंके लग रहे हैं। जो इन झोंकों से डोलता है, उसका न यह लोक न ही परलोक कभी सुधरता है। काम में लगन होनी चाहिये।

ॐ शान्ति! शान्ति! शान्ति!

जब आप इच्छाओं को छोड़ देते हैं, तभी केवल तभी सफल होती हैं। जब तक आप अपनी अभिलाषा रुपी धनुष-डोरी को खिंची रखेंगे, अर्थात् इच्छा, आकांक्षा और अभिलाषा करना ही जारी रखेंगे, तब तक तीर दूसरे पक्ष के वृक्षस्थल तक कैसे पहुंचेगा? ज्यों ही आप उसे छोड़ देते हैं, त्यों ही वह सम्बन्धित प्रतिपक्षी के हृदय को भेद देता है।

—स्वामी राम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गतांक से आगे

रामायण चरित्र चित्रण ★★★ भरत

स्वामी तीर्थानन्द 'अज्ञ'

रामायण में राम के बाद मुख्य चरित्र किसका ? यह सवाल जब उठता है, तो हमें कहना पड़ता है 'भरत' का। लक्ष्मण का स्वतंत्र अस्तित्व न होने के कारण अगर वह राम का प्रतिबिम्ब है, तो उसके बाद में भरत के चरित्र को हमें प्राधान्यता देनी पड़ेगी। कनिष्ठ भ्राता के लिए राजगद्दी का त्याग करके राम ने चित्त की समाधानता का परिचय दिया है। तो स्वयं को मिली हुई राजगद्दी ज्येष्ठ भ्राता के लिए त्याग कर के भरत ने राम को सम्मान दिया है। इतना आदर्श जीवन माधुर्य देख अगर विश्व के तत्वचिन्तक आश्चर्यचकित होते है तो कोई नई बात नहीं। "They could not Imagine that it was possible for any two brothers to love and respect each other so much. 'I do not want it' says one and pushes it off, the other Just touches it and says 'I don't want it either' and pushes if back."

दोनों राजगद्दी पर बैठने से इनकार करते हैं — यह एक आश्चर्य की बात हैं।

राजगद्दी की गेंद बनाई खेलन लगे खिलाड़ीं। इधर राम उटा भरत कुवंर दोनों ने ठोकर मारी॥

चरित्र निष्ठा, कुलाभिमान और कर्तव्य निष्ठा यह तीन गुण भरत के जीवन में थे। राम जब वन में गये तब भरत उनके चरित्र के प्रति सन्दिग्ध होकर कहते हैं, "पिता के आदेश से राम बन में गए इसका मुझे दुःख नहीं है किन्तु पिताजी ने जब वन में भेजा है। इसका मतलब इक्ष्वाकु वंश के राज्याधिकारी के चरित्र में अवश्य भ्रष्टता आई होगी। नहीं तो पिताजी की क्या मजाल कि राम को वन में भेजें।" इदं ने राज्य कामस्य लब्धं राज्यण कण्टकम् " राज्य कार भार की लालसा रखने वाले भरत ? तुझे निष्कण्टक राज्य मिल गया है। इस कौशल्या के आक्षेप पर भरत कहते है, "मेरी गर्दन उड़ा दो परन्तु मुझे 'राज्यकामस्थ' मत कहो।" वे शपथ लेते हैं कि 'इस प्रकार का विचार मैंने कभी किया हो तो मुझे वशिष्ठ–अरुंधती को मारने का पाप लगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाय। इसी से उनकी तत्त्वनिष्ठा जाहिर होती है। अपनी माँ को इस अनर्थ का कारण जानने के बाद भी वे कहते है। ऐसी माँ के पेट से जन्म लेने पर यह कलंक मुझे लगा है। लेकिन दूसरे ही क्षण वे कहते हैं – इस माँ के पेट से जन्म लेने पर ही मुझे राम जैसा भाई मिल गया। सज्जनो! चरित्र पर कितना सुसूक्ष्म कलंक चरित्रपर पड़ा हुआ छोटा सा धब्बा भी जिसके अति दुःख का कारण बनता है। उसकी चरित्र निष्ठा कितनी महान हो सकती हैं। इसके बारे में दो मन नहीं हो सकते उनको जीवन में बहुत कुछ सहन करना पड़ा। जिसका मन स्वच्छ होता हैं। उसे ही इस प्रकार का पश्चतपा होता हैं। भरत के शुद्ध हृदय पर घ व पर घाव पडते हैं। कौशल्या जैसी सभी उन पर आरोप करती हैं तो मानों वज्राघात होता हैं। कैकयी को देखते ही उसको मार डालने की इच्छा होती है। किन्तु फिर यह सोचते हैं कि शायद राम मुझसे मिलेगें नही। मुँह भी नहीं बताएंगे। मंत्रियों के कहने पर वे कहते हैं, कि राम इक्ष्वांकु कुल की शान बढ़ाने के लिये बन में गये हैं। इस राजगद्दी पर उनका ही अधिकार हैं। उनको दूर रखकर मैं गद्दी पर नहीं बैठ सकता। चाहे अराजकता बढ़ जाये जब भरत राम को वापस लाने के लिये जाते हैं तो भरद्वाज जैसे महामुनि भी शंका से पूछते है कि क्या बनमें भी राम, लक्ष्मण को शान्ति में नहीं रहने दोगे। जब भारद्वाज जैसे को शंका हो सकती हैं। तो साधारण मनुष्य को अगर शंका हो गई तो कोई आश्चर्य की बात नहीं। भरत को भली प्रकार में जानने वाले केवल दो ही महापुरुष थे। एक वसिष्ठ और दूसरे राम। भरत के बारे में दशरथ को भी शंका थी। यह भी स्वाभाविक बत है। क्यों की "उन्मादो मातृदोषेण पितृदोषेण मूर्खता।" जिसकी मां ऐसी हैं, उसके बच्चे में भी कोई दुर्गण तो होगे ही। आगे उन्होंने तो यहां तक कह डाला कि भरत यदि गद्दी फिर बैठे तो उसे मेरा श्राद्ध न करने देना। वास्तविक रूप में भारत की भूमिका ऐसी है कि दशरथ को कहना चाहिए था कि भरत राज्य नहीं लेगा। परन्तु यही तो उनका दुर्भाग्य है कि इतने सुशील स्वभाव के होते हुए भी वे अपने पिता को अपने बारे में विश्वास नहीं दिला सके। केवल वसिष्ठ और राम को भारत के ऊपर पूर्ण विश्वास हैं।

वसिष्ठ कैकयी से कहते हैं। कैकयी मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूं कि जिसके लिये तुम यह सब कर रही हो वह भरत राज्य स्वीकार नहीं करेगा। आगे चलकर राम तो यहां तक कहते हैं कि मैं जा रहा हूं तो क्या हुआ, भरत है न वह मेरे ही समान हैं, किसी पर अन्याय नहीं करेगा। राम कहते है रखो कि भरत निष्काम हैं। वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रजाधर्म से रहेगा और प्रजा का सुख देखेगा। बमल्कि, भरत को देखने पर लक्ष्मण जो शब्द प्रयोग करते हैं। उस समय राम कहते हैं, तू इन शब्दों का प्रयोग करने से पहिले थोड़ा तो विचार करता। यह शब्द तुम्ने भरत को नहीं किन्तु मुझे ही कहे हैं। भरत मुझे मारने नहीं किन्तु मनाने के लिये आया है। धन्य है भरत और धन्य है राम का विश्वास अपने कौटुंबिक प्रेम की उच्चता दर्शाते हुए राम विभीषण को कहते है-न सर्वे भ्रातरस्तात् भावन्ति भरतोपमाः। भरत जैसा भाई सभी को नहीं मिलता। भरत और राम के आपसी वाद संघर्ष के अन्त में आखिर राम ने स्वीकार किया कि पंद्रहवे वर्ष के प्रथम दिन अयोध्या आकर मैं तुमसे राज्य लूंगा। यह कितना महान संकल्प है जो भरत के प्रेम का आभारी है। वास्तव में देखा जाय तो भरत को सदैव के लिये राज्य और राम को सदैव के लिये वनवास ही निश्चित हुआ था। अर्थात वनवास से वापस आने पर राम को राज्य नही मिला था। परन्तु भरत प्रेम के आगे लाचार बनकर राम ने राज्य लेना स्वीकार किया हैं।और भरत ने भी "सर्वनाशो समुत्पन्ने अर्धं त्यजति पंडित, यह न्याय निर्णय मान्य किया हैं। उन्होंने कहा है कि जो कलंक मुझे मां के कारण लगा है। उसके लिये मैं चौदह वर्ष तपस्या करुँगा। पंच पकवान्न त्याग दूंगा। मृदु शय्या पर न सोऊंगा और सर्व विषय भोगों का त्याग करके सादा जीवन बिताऊंगा। राज्य के लिये भाई-भाई पिता पुत्र खून के प्यासे देखे जा सकते हैं। किन्तु ऐसा सर्वस्व त्याग का अनोखा झगड़ा संसार में अन्यत्र कहीं देखने को नहीं मिलता।

अन्त में चौदह वर्ष बाद जब दोनों मिलते हैं, तो राम कौन और भरत कौन यह पहचानना मुश्किल हो जाता है। इसका कारण दोनों तपस्वी, दोनों चरित्रनिष्ठ, दोनों कुलविभानी, दोनों संस्कृति के उपासक, दोनों कर्त्तव्यनिष्ठ इस प्रकार दो शरीर किन्तु एक प्राण वहाँ रह जाते हैं। ऐसे समय पर वाल्मीकि जैसे महा कवि की लेखनी कुछ कह नहीं सकती तो फिर क्षद्र पामर क्या लिख सकता है भरत ने भगवान से दूर रह कर भी निष्ठापूर्वक भगवत्कार्य किया हैं, अतिशय शुद्ध जीवन बिताया। और, अपना तथा अयोध्यावासियों का कलंक धो डाला। लक्ष्मण साधना की पराकाष्ठा पर थे। परन्तु वहां पहुंचना कदाचित हमारे लिये संभव न हो सके। इसके लिये हमें जो कुछ लेना है वह भरत के पास से लेना है। भारतमें भरत की उपासना न हो तो भारत काहे का।

१- दाशरथी भरत
२- दुष्यंत का परमवीर पुत्र भरत
३- श्रीमद्भागवात् की भक्ति का पात्र जडभरत

हमारे यहां पूजा नहीं होगी तो हमें भारतवासी कहने का कोई हक नहीं हैं। इसीमें भरत के चरित्र की महानता सिद्ध होती है। ★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तन्दुरुस्ती का बीमा अर्थात् कह कहे

प्रे० भारतबन्धु शर्मा

पंजाब के लुधियाना नगर में एक ९२ वर्षीय वयोवृद्ध रहते हैं जिन्होंने सरकारी नौकरी में तथा अवकाश प्राप्त करने के बाद से धार्मिक, सामाजिक और आत्मकल्याण से सम्बद्ध सहस्त्रों लेख पत्र पत्रिकाओं में छपाये होंगे। उनके प्रेरणादायक विचारों को अधिक व्यापकरूप से जनमानस तक पहुंचाने के उद्देश्य से किन्हीं सम्पन्न व्यक्तियों ने स्वयं व्यय वहन कर सैकड़ों पुस्तकें (बहुधा उर्दू में) उनसे लिखवा कर वितरित की। इनसे पाठकों को कितना लाभ हुआ होगा। इसका अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि अब तक लगभग १०५ बार पुस्तकें छप कर हजारों, वरन् लाखों, ज्ञान-पिपासुओं के हाथों में पहुंच चुकी हैं।

श्वेत-वस्त्रों में महान सन्त ये महानुभाव हैं ९२ वर्षीय श्री काशीराम जी चावला, जिनकी धर्म में रुचि तथा सक्रियता को देखकर दूसरों के मन में स्पर्धा का संचार होता है, इस महात्मा ने हाल में एक पुस्तक लिखी है जिसका शीर्षक ऊपर दिया गया है, विद्वान एवं अनुभवी लेखक द्वारा इसमें ३८० चुटकले दिये गये हैं जिनको पढ़कर उदास तथा हतोत्सहित व्यक्ति भी नवोत्साह एवं उल्लास की अमोघ औषधी से दीर्घ तथा प्रफुल्लित जीवन का बीमा कराने में सफल हो सकता है।

उर्दू में लिखी इस पुस्तक के कुछ अंश कदाचित पाठकों को निराशा के गड्ढे से निकाल कर सफलता के शिखर पर पहुंचाने में सहायक हो सकें, इस धारणा से इन्हें यहां उद्धृत किया जाता है।

क्या आप 'हा हा हा हा' की ध्वनि से कह-कहा लगा कर हंसा करते हैं ? यदि हां तो आप बड़े भाग्यशाली हैं यदि आपका ऐसा अनुभव नहीं है तो आप क्या हैं इसकी प्रतिध्वनि एक सुप्रसिद्ध पश्चिमी लेखक श्री चेम्सफोर्ड के शब्दों में मिलेगी उन्होंने लिखा है कि जिस दिन आप खिलखिला कर नहीं हंसे आपके जीवन का वह दिन नष्ट हो गया। इस दिन कसौटी पर अपने जीवन को परख कर आप स्वयं निष्कर्ष निकाल सकेंगे कि आप इसमें से किस कोटि में आते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक सज्जन मुझसे कहने कहने लगे कि आप प्रसन्न रहने तथा हँसने को बहुत अधिक महत्व देते हैं। किन्तु कुछ लोग तो हंसने वाले को मूर्ख (पागल) कहते हैं मैंने उत्तर दिया कि अकारण तथा अप्रासंगिक हंसना निःसन्देह मूर्खता का चिह्न है लेकिन जो हँसने को ही बुरा मानते हैं उनकी बुद्धि का तो दिवाला ही निकल गया हैं। कार्लयल जैसे सुविख्यात लेखक ने तो यहाँ तक लिखा है कि जो व्यक्ति हंसना नहीं जानता वह केवल धोखधड़ी तथा कपट में अभ्यस्त नहीं होता है वरन् उसका जीवन सारा जीवन ही धोखा और कपट का समुच्चय होता है।

पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज, (जिनका साधना केन्द्र देहरादून के समीप तपोवन में अभी भी सक्रिय है, अपने प्रवचनों में हंसने हंसाने पर विशेष बल दिया करते थे। जो कोई उनके पास जाता उसे वे खुश रहो का आशींवाद दिया करते थे। इनका तो यह कथन भी था कि यदि आपको सर्वसाधारण में बैठकर हंसने में संकोच होता है तो दिन में एक बार अपने कमरे में ही जाकर हंस लिया करें। आप प्रतिदिन हंसने का दैनिक कार्यक्रम बनायें।

भला हंसने को इतना आवश्यक क्यों माना जाता है। इसके कई कारण है, संसार के असंख्य जीवधारियों में 'मनुष्य' एक मात्र प्राणी है जिसको भगवान ने हंसने का वरदान दिया है। अतः उसका न हंसना निस्सन्देह प्रकृति के नियम का स्पष्ट उल्लघंन है। जर्मनी के डाक्टर सी०डब्ल्यू हयूफलैण्ड ने लिखा है कि हंसना एक अति स्वास्थ्य-प्रद व्यायाम है, इससे पाचनशक्ति बढ़ती है। इस कारण विशेषतः भोजन के समय प्रसन्न रहने के विषय पर हमारे वृद्ध जनों ने विशेष बल दिया है। सर विक्टरहयूगो का कथन है कि मैं ठहाका लगाकर हंसना इसलिये चाहता हूं कि इससे एक ओर तो हमारे जबड़ों की कसरत होती है दूसरे हृदय खिलखिला उठता है और इसके साथ अन्तरात्मा भी नाच उठती है। कार्लयल ने एक अन्य स्थान पर यहाँ तक भी लिखा है कि जो व्यक्ति दिन में कम से कम एक बार खुलकर हंसता तथा ठहाके लगाता है वह कभी कोई जघन्य कार्य नहीं कर सकता। एक और लेखक डेबिड लाल्यागे कहते हैं कि प्रसन्नता से ओत प्रोत एक ठहाका वह गोला है जो ठीक निशाने पर बैठता है तथा शोक विषाद को उड़ा देता है इसके विपरीत निराशा तथा शोक विषाद वह गोली है जो चलाने वाले को ही नष्ट-भ्रष्ट कर देती है। सुप्रसिद्ध लेखक जेरल्ड की धारणा है कि खुशी से भरा एक ठहाका वह प्रभाव दिखता है जिससे मानव की सब प्रकार की थकावटें दूर होकर सभी सभी हल्के हो जाते है इंगलिस्तान के विख्यात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शोक समाचार

श्रीमती विद्यावती जी, श्री गोविन्द लाल जी बाँगा की बहन, का सोमवार दिनांक २३ जुलाई १९७९ को कुछ दिन रुग्ण रहने के बाद देहावसान होगया, मिशन के प्रधान पदाधिकारियों और सदस्यों द्वारा दिवंगत पुण्यात्मा की सद्गति के लिए उसी दिन निगमबोध घाट पर और बाद में रविवासरीय सत्संग में प्रार्थना की गयी तथा उनके तपोमय जीवन, शुद्ध विचारों और आत्म-त्याग प्रभृति विभिन्न गुणों का मूल्याँकन करते हुए उनको श्रद्धाँजलि अर्पित की गयी। आदरणीय बहन विद्यावती जी धर्मनिष्ठ और सत्संग प्रेमी थी और उनकी इस मिशन में अगाध श्रद्धा थी।

सबने बाँगा परिवार तथा अन्य सगे-सम्बन्धियों के प्रति सहानुभूति व्यक्त करके उनके द्वारा प्रदर्शित धैर्य्य पर सन्तोष व्यक्त किया।

प्रेषक, भारतबन्धु शर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेखक लारेन्स स्टर्न की धारणा है कि जब एक व्यक्ति मुस्कुराता है बल्कि ठहाका लगाकर हंसता है तो वह अपने जीवन की अवधि में कुछ वृद्धि कर लेता है। मार्शल ने यहाँ तक कह किया कि यदि तुम अपनी बुद्धिमत्ता का प्रमाण देना चाहते हो तो हंसकर दिखाओ। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के राष्ट्रपति लिंकन कहते हैं कि मैं सदा अपने तकिये के नीचे चुटकलों की पुस्तकें रखा करता हूं क्योंकि जब मुझे कोई परेशानी अ घेरती है तो मैं इन चुटकुलों को पढ़ कर हंस लेता हूं और मेरी सब चिंताएं दूर हो जाती हैं तथा मस्तिष्क सदा ताजा रहता है।

इससे सिद्ध हुआ कि हँसने से (१) उदासी दूर होती है (२) स्वास्थ्य लाभ होता है, और (३) आयु बढ़ती है। इसलिए कौन सा मूर्ख होगा जो इस बिना मूल्य नुस्खे (उपचार) के द्वारा तीनों लाभ न प्राप्त करेगा।

हमारे शास्त्रों का यह विषय एक अविभाज्य अंग है। ऋग्वेद (१०-८५-४२) में आदेश है कि हे मानव! संसार में रहते हुए किसी से विरोध या द्वेष मत कर और पूर्णायु को उपलब्धि कर तथा अपने पुत्र तथा पौत्रों के साथ खेलते रह व आनन्द प्राप्त करते हुए अपने घर में रह। तैत्तरीय उपनिषद् (२-५) में लिखा है कि प्रेम उस का 'शरीर' है हर्ष उनका दांया भाग है, प्रसन्नता बाँया भाग है और आनन्द उसकी आत्मा है। श्री भगवद्गीता के द्वितीय अध्याय के ६४ वे श्लोक में लिखा है कि प्रसन्न चेतस् के दुःखों का नाश हो जाता है तथा प्रसन्न रहने वालों की बुद्धि भी ठिकाने (सिर) रहती है।

स्वामी रामतीर्थ जी महाराज ने भी हंसने को बहुत महत्व दिया है, वे स्वयं सदा प्रसन्न रहने का अनुरोध करते थे।

सभी स्वस्थ, दीर्घायु से परिपूर्ण जीवन व्यतीत करना चाहते हैं, इसके लिये जहां अच्छी भोजन तथा स्वच्छ वायु की अपेक्षा है वहाँ मानसिक स्वस्थता के लिये प्रसन्न रहना भी अनिवार्य है वस्तुतः शरीर तथा मन का सुदृढ़ गठबन्धन है, शोक सन्तप्त तथा चिन्ता से घिरा हुआ व्यक्ति अच्छा भोजन करके और स्वस्थ वातावरण में रह कर भी अपने स्वास्थ्य में सुधार नहीं ला सकता है और न ही उसे दीर्घायु का ही अनन्द प्राप्त हो सकता है।

जर्मनी के एक डाक्टर ने एक पुरानी रोग-ग्रस्त महिला के हँसने को एक मात्र उपचार से निरोग कर दिखाया। जब उसने देखा तो उसे प्रतिदिन आने का आदेश दिया। दूध की खाँड की एक पुड़िया उसे खिलाकर डाक्टर महोदय उसको चुटकुलों तथा अन्य हर्ष-वर्धक बातों से हँसाते रहे, उसका स्वास्थ सुधरने लगा। पूर्णरूप से स्वस्थ होने पर उस कृतज्ञ महिला ने नुस्खा लिखकर देने का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हठ किया जिससे वह भविष्य में लाभ प्राप्त कर सके, तब डाक्टर ने एक कागज पर ये शब्द लिखकर दे दिये—खूब हँसो और खुश रहो। महिला को विश्वास न आया और वह बोलीं श्रीमान आप तो हँसी (मजाक) कर रहे हैं। तब डाक्टर ने उसे सारा वृतान्त कह सुनाया और उसका ध्यान उपर्युक्त उपचार की ओर आकृष्ट किया। इस पर वह स्तब्ध रह गयी।

हँसने तथा प्रसन्न रहने से रक्त में गर्मी की मात्रा बढ़ती है और खून का दौरा अधिक नियमित रहता है, इससे रक्त की स्वच्छता अधिक बनी रहती है और फेफड़ों की कसरत होते रहने से नये स्वस्थ रक्त का संचार होता है।

इस युग में दुनिया के झंझट और घरेलू परेशानियाँ इतनी बढ़ गयी हैं कि मनुष्य की हृदय की कलिका मुरझायी रहती है। और मानसिक खिन्नता के निदान के लिए छवि-गृह [सिनेमा] थियेटर [नाटकशाला], दूरदर्शन [टेली वीजन] दर्शकों से भरे रहते है। इससे समय का अपव्यय होने के साथ धन हानि एवं अनिष्ट प्रभाव का भी शिकार होते हैं। अतः यदि हम मन की कलिका को खिलाना चाहते हैं, तो हमें शिक्षा-प्रद चुटकुलों से मन बहलाना चाहिये

सभी देशों, जातियों और भाषाओं में ऐसे चुटकुले मिलते हैं, जो अपना चमत्कारिक प्रभाव दिखाकर नेत्रों से प्रवाहित अश्रुधारा को सुखाकर म्लान मुख से हँसी के फव्वारे छुड़ा देते हैं। यहां पर राजस्थानी भाषा के एक विनोद पूर्ण चुटकुले का हिन्दी में भावार्थ दिया जाता है—

"एक व्यक्ति की आजीविका का स्रोत कब्रें खोदना था किन्तु इतने घोर परिश्रम के बाद वह मद्यपान खुल कर करता था। एक दिन शराब से धुत होकर वह कब्र खोदने लगा और जब वह दस हाथ गहरी कब्र खोद चुका तो नशा उतर गया तथा वह बिलख बिलख कर रोने लगा। एक राहगीर ने उससे रोने का कारण पूछा तो वह बोला—भाई मुझे बाहर निकालो, मुझे ठण्ड लग रही है दूसरा व्यक्ति बोला—ठीक है तुम्हें सर्दी लग रही होगी क्यों कि तुमको इस कब्र में दफन करने वाले तुम पर मिट्टी डालना भूल गये थे लो मैं मिट्टी डाल देता हूं।"

संस्कृत भाषा में भी चुटकुलों की भरमार है, यहां केवल दो चुटकुले उदाहरण रूप में देना पर्याप्त होगा—

कमले कमला शेते हरः शेते हिमालये
क्षीराब्धौ हरिः शेते मन्ये मत्कुण शंकया।

किसी ने प्रश्न किया कि कमला, लक्ष्मी के कमल में छिप कर सोने, भगवान शंकर के हिमालय पर शयन करने और भगवान विष्णु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के क्षीर सागर में विश्राम करने का कारण क्या है ? उत्तर मिला , केवल खटमलों से भय ।

सदा वक्र: सदा क्रूर: सदा पूजामपेक्षते ।
कन्या राशि स्थितिमस्तु जामाता दशमो गहे ।।

किसी व्यक्ति ने प्रश्न किया कि ग्रह तो नौ माने जाते हैं गिनती तो दस तक की होती है, तो फिर दश ग्रह क्यों नहीं होते हैं ? उत्तर मिला कि दशम ग्रह भी है और वह है जामाता (दामाद) क्योंकि जब वह कन्या के घर में आयेगा तो उसकी वक्र-दृष्टि श्वसुरालय वालों पर पड़ेगी, वह अकड़ कर रहेगा तथा किसी न किसी रूप में अधिक सेवा शुश्रूषा की अपेक्षा रखेगा।

आजकल समाज ने ऐसा रूप धारण कर लिया है कि प्राय: जब युवक इसके सम्पर्क में आकर किसी न किसी दोष के शिकार हो जाते हैं। कई बार तो चरित्र को बिगाड़ने वाली हँसी ठिठोली से वातावरण दूषित हो जाता है और उसके भयंकर परिणाम निकलते हैं जिससे अच्छी संगत प्राप्त हो और परस्पर वार्तालाप करते हुए जिससे गम्भीर एव स्वस्थ हंसी मजाक का मौका मिलता हो इसलिये क्लबों आदि में जाकर समय तथा शक्ति अपव्यय करने की बजाय एक अच्छी चुटकुलों की पुस्तक पढ़ने से समय का मनोरंजन द्वारा सदुपयोग किया जा सकता है।

यह बात पूरी तरह समझ लेनी चाहिये कि हँसते रहने का अभ्यास प्रकृति की बहुत बड़ी देन है इससे भीतर के अवयवों की कसरत होती है, और शरीर में विशेष प्रकार की गर्मी, चमक और ताजगी आती है। रक्त का दौरा नियमित रहता है छाती फैलती है और फैफड़ों में हवा भरते रहने से दूषित वायु बाहर निकलती रहती है। ये ठहाके तभी लाभ दे सकेंगें जब हँसी प्राकृतिक औचित्य की सीमा में रहकर दोष रहित हो। प्राचीन काल के शासकों के दरबार के समय पर भाँड अथवा नकाल उपस्थित होकर सबका मनोरंजन करते थे। प्रसन्न रहने वाला वैद्य, हकीम अथवा डाक्टर अपनी विनोद प्रियता से ही रोगी का आधा कष्ट दूर कर देते थे। कहते हैं कि एक दिन किसी व्यक्ति के पास दूसरा मित्र गया मैं तुम्हें एक शुभ सम्वाद देने आया हूं , मुझे स्वप्न मे एक देवदूत दिखायी दिया जिसने बताया कि तुम्हारा मित्र शीघ्र पूर्ण स्वास्थ्य लाभ करेगा, यह कह कर वह स्वयं हस पड़ा तथा बाद में उसने सहानुभूति पूर्ण शब्दों में खुशी की बातें की जिनको सुनकर वह रोगी खिलखिलाकर हँस पड़ा इससे उसके शरीर के भीतरी अवयवों में प्रस्तुत क्रियमाण शक्ति जागृत हो गयी और वह शनै: शनै: सुधरने लगा तथा अन्त में पूर्णरूप से स्वस्थ हो गया।

शेष पृष्ठ २० पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी रामतीर्थ मिशन (रजि०) दिल्ली वर्ष १९७९-८० के लिए पदाधिकारियों का चुनाव

प्रेषक :- भारतबन्धु शर्मा
प्रधान सचिव,

प्रधान :-	श्रीमती मेलादेवी मल्होत्रा
उप प्रधान :-	१–श्री अमोलक राज चोपड़ा
	२–,, गोविन्द लाल बाँगा
	३–,, आर० के० चावला
प्रधान सचिव :-	भारत बन्धु शर्मा
सचिव (प्रशासनिक) :-	श्री महेन्द्र लाल गिरोत्रा
संयुक्त सचिव :-	१ देवराज
	२ ,, नरसिंह लाल
	३ ,, रामप्रकाश ढींगड़ा
	४ ,, हरिराम (मुरादनगर)
कोषाध्यक्ष :-	श्रीं पोखर दास पाल
,, (सहायक)	श्री रामरत्न शर्मा
लेखा - परीक्षक (आन्तरिक) :-	देवेन्द्र कुमार पाल
कार्यकारिणी के सदस्य	,,
(निर्वाचित)	१ श्री हुकम चन्द गिरोत्रा
	२ ,, भक्त नत्थू राम जी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३ :, कुन्दन लाल विज
४ ,, जियालाल मल्होत्रा
५ ,, सन्तराम सैनी, एडवोकेट
६ ,, जगदीश राज कालड़ा
७ श्रीमती निर्मला भण्डारी
८ ,, राम लुभायी आनन्द
९ ,, सरला बाधवा

प्रधान द्वारा नामांकित सदस्य : - १ श्री घनश्याम दास
२ ,, रामजीदास कूलूचा
३ ,, श्रीचन्द गुप्त
४ श्रीमती सरस्वती देवी
५ ,, स्वर्णलता आनन्द
६ ,, निहाल चन्द कंसल

संरक्षक : - १ श्री गिरधर भण्डारी
२ ,, जगन्नाथ भसीन
३ कृष्ण लाल बग्गा
४ कुन्दनलाल खन्ना
५ चुन्नी लाल शर्मा
६ लालचन्द बगाई
७ ,, रोशन लाल
८ ,, हरबंस लाल जौली, कुवेत
९ ,, भूपेन्द्र मल्होत्रा (कुवेत)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी रामतीर्थ

तत्व के विचार में विलीन रहते थे सदा, त्रिगुण-अतीत महा
पंडित अमानी थे दैवी सम्पदाओं की 'प्रयाग' थे मधुर मूर्ति, करके दिखाते
थे न केवल कहानी थे आत्म तत्व कर तल गत आमलक सा था
प्रवचन में भी उनका न कोई सानी था योगी थे, महात्मा स्थित
प्रज्ञ थे महान भक्त, सचमुच स्वामी रामतीर्थ ऊंचे सानी थे

जीवन सरल, थे विचार किन्तु ऊंचे अति आत्मज्ञान में रहे
विलीन स्वामी रामतीर्थ प्रेम की 'प्रयाग' सछमुच थे सजीव मूर्ति,
दंभ द्वेष भावों से विहीन स्वामी रामतीर्थ पत्ते पत्ते में वे निज
सत्ता को निहारते थे, सत्य वस्तु से डिगे कभी न स्वामी रामतीर्थ
दृष्टि में को सृष्टि, करते थे दृष्टि आनन्द की मानव महान ब्रह्म-
लीन स्वामी रामतीर्थ (प्रयाग)

कहां है वह तलवार जो मुझे मार सके? कहां है वह शस्त्र जो मुझे घायल कर सके। कहां है वह विपत्ति जो मेरी प्रसन्नता को बिगाड़ सके? कहां है वह दुःख जो मेरे सुख में बाधा डाले? अमर, भूत, भविष्य और वर्तमान-तीनों कालों में एकरस, शुद्ध, पवित्र और पवित्रों का पवित्र, विश्व का स्वामी मैं ही सब कुछ हूं।

—स्वामी राम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वीटमार्टिंग ने लिखा है कि यदि मुझे उस बक्से का पता चल जाये कि जिसमें मुस्कान एवं हंसी बन्द पड़ी हो तो मैं उसे सतत प्रयत्न से खोज लूंगा भले ही उसकी चाबी कहीं हो अथवा उसकी जंजीर सुदृढ़ हो, तब मैं उसमें बन्द हंसी को चारों तरफ से बिखेर दूंगा। इसके विपरीत यदि मुझे वह बक्सा दिखायी दे जिसमें क्रोध, कठोरता और मथे की त्यौरियां भरी हुई हो तो मैं उसे गहरे समुद्र में डुबो दूँगा जिससे कि दुःख का भाव कभी भी न उभर सकें।

प्रसन्नता का भण्डार व्यक्ति के अपने भीतर है जिसे वह स्वयं बल से बाहर निकाल सकता है, जब हम उमंग भरे मन से इच्छा करेगें तो एक लाडले बच्चे की भांति प्रसन्नता हंसती हुई स्वतः हमारे पास चली आयेगी। वैसे उस घर में सब प्रकार के दैवी वरदान पदार्पण करते हैं जहां हंसी खुशी का वातावरण होता है इससे व्यक्ति विशेष के प्रयास से खुशी का पौदा हरा भरा होता है। किसी कवि ने कहा है—

गुलों से सीख ऐ गाफिल तू मुद्दाए जिन्दगी
तुझे महकना नहीं आलिम को भी महकाना है

स्वयं प्रसन्न रहने तथा दूसरों को खुश रखने वाला भाग्यशाली व्यक्ति भगवान से यह प्रार्थना करता है कि मुझे अन्तिम श्वास तक एक अबोध भोला बच्चा बनाये रखना। हजरत ईसा मसीह से उनके शिष्यों से पूछा कि हम कैसे बनें। किसके समान हो? समीप खड़ी हुई एक बच्ची की ओर संकेत करते हुए उन्होंने कहा कि तुम इस जैसे बनो।

इसलिये प्रसन्नचित्त रहना एक प्रकार से जीवन बीमा करा लेना है। यह ऐसी चिकनाई है जिससे जीवन के अवयवों को ग्रीज मिलती रहती है। हंसी तथा मुस्कान अनेक विपत्तियों को दूर रखती हैं, अतः सदा स्वयं प्रसन्न रहो तथा दूसरों को हंसाते रहो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी गोविन्दप्रकाश जी का भाषण दिनाक २१-१२-५८, दिन इतवार, सुबह दस बजे, श्री आनन्दी लाल जी बंसल के शुभ निवास स्थान पर :-

कह रहा है आसमाँ ये समां कुछ भी नहीं
सुत, दारा और लक्ष्मी पापी गृह भी होय।
संत समागम हरी कथा तुलसी दुर्लभ दोय।

प्यारो, ये सुत दारा, लक्ष्मी ऐसे ही प्राप्त नहीं हो जाते। ये बहुत पुण्य के बाद प्राप्त होते हैं। सुत यानि पुत्र को देने वाली दारा यानी स्त्री होती है, इसलिये पुत्र से अधिक पुण्य कर्मो के होने से पत्नी मिलती है। पुत्र जो कि अंशी, पिता का नाम चलाने वाला होता और बगैर पुण्य-कर्मो के नसीब नहीं होता और धन भी बहुत पुण्य कर्म से प्राप्त होता है। धन इन दोनों से अधिक पुण्य कर्म होने से मिलता है। मनुजी कहते हैं कि पहिले मनुष्य को विद्या, फिर नम्रता, फिर इसको अधिकारी समझ कर धन मिलता है।

बच्चों को खेलने के लिये सीपी मूंगे समुद्र के किनारे पर मिल सकते है। इससे अधिक गहरे पानी में मोती वगैरा मिलते है जो बहुत कीमती होते है। इस तरह अधिक से अधिक पुण्य होने से पुत्र, पत्नी और धन भी प्राप्त होते हैं।

वह घर श्मशान के बराबर है जिसमें ब्राह्मण या महात्माओं के पाँव नहीं धोये जाते, जहाँ हवन या वेद-मन्त्र नहीं उचारे जाते, जहाँ हवन सामिग्री का आग में डालना नही। मेरी आँखों का देवता सूरज, मेरे हृदय का देवता चन्द्रमा इन सब की आराधना करने से हम सेहत वाले हो सकते हैं। डाक्टर से दोस्ती इसलिये की जाती है कि मेरी सेहत का ख्याल भी रख सके और फीस भी कम लगे। हवन की बराबरी कौन करे। अगर कोई दान दे रहा हो तो कोई हाथ फैलाने से शरमाता है लेकिन अगर कहीं सत्संग का प्रसाद बंट रहा हो तो बड़े से बड़ा अफसर भी हाथ बढ़ा कर प्रसाद लेने को तैयार हो जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसकी कार्य के मुताबिक विद्या हो और आचरण हों ऐसे ब्राह्मण कहलाते है । जिस घर में सुन्दर बालक नहीं खेलता वह नरक है । वैसे दुनिया भी घर है, हमारी देह भी घर है । इसके भी ऊपर वही बाते लगती हैं। हमारे अन्दर अग्नि कुण्ड है जिसमें भोजन हजम होता है उसमें आहुति भोजन और प्राणों यानी श्वासों की दी जाती है ।

लक्ष्मी पापों का फल नहीं, पुण्य कर्मों का फल है। यदि इसके प्राप्त हो जाने के बाद ये बुरे रास्ते पर लग जायें जैसे लड़का बुरे कर्म करने वाला हो तो वह क्या होगा ? दुश्मन होगा। स्त्री दुराचारी या कड़वे वचन बोलने वाली होगी तो दुःख का कारण होगी, और, धन बुरे कामों में लगाया जाय तो वह भी पतन का कारण होगा।

तीन सजावत देश को सती, संत और सूर।
तीन दुखावत देश को कपटी, कायर, क्रूर।

भगवे कपड़े के अन्दर कुछ अवगुण दूर करने की शक्ति है जैसे-अग्नि में जलने की शक्ति है। हिन्दू संस्कृति में बाप की लाश को बेटा आग लगाता है। वह इसलिये कि उसे ध्यान रहे कि उसका शरीर भी एक दिन जलाया जायगा और उसके शरीर का भी अन्त होगा। किसी और संस्कृति में ऐसा नहीं। ये हिन्दू धर्म हमें मरना सिखाता है।

जो पाँव नहीं उठा सकते थे हाथ पसारे जाते हैं।

ब्रह्म अँगूठा और तरजनी उंगली मिलाने से, जीव आत्मा को मिलाने से जीव और ब्रह्म का मेल होता है। इसलिये ध्यान लगाते वक्त इन दोनों को मिलाया जाता है जिसे ध्यान मुद्रा कहते हैं।

गुरु जी कढ़ी बना रहे थे। पास में तबला बज रहा था। तबलची गल्ती से तबले पर जोर से हाथ मार रहा था। गुरु ने गुस्से में आकर कड़छी बजाकर दिखाना चाहा जिससे हाण्डी टूट गई। शागिर्द ने पूछा कि ऐसा क्यों किया, हाण्डी फूट गई। गुरु ने कहा —हाण्डी टूटती है तो टूटने दो, ताल तो नहीं टूटी।

पहले पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच प्राण, मन और बुद्धि इन सत्रह इन्द्रियों को एक जगह एकट्ठा करके आसन लगाकर 'ओ३म' का शब्द पुकारते हुए भावों के दरम्यान त्रिपुटी में ध्यान लगाकर फिर गुरमंत्र का ध्यान लगाओ।

आग लगी आकाश को झड़-झड़ गिरे अंगार
जो संत न होते जगत में तो जल मरता संसार

ये हृदय रूपी आकाश है इसमें लोभ, लोभ अहंकार अंगारे हैं। हम चिन्ता में दुःखी है। राग, द्वेष की आग से शरीर रूपी संसार जल रहा है। इसकी दवा है सँत महात्मा जी द्वारा दिये गये सुन्दर उपदेश जो हमारे हृदय मन्दिर में ज्ञान की बरसात करके ठंडा करते है। (शेष २४ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आश्रम समाचार

लगभग डेढ माह तक वाल्मीकि रामायण के माध्यम से गुरुरामराय दरबार में, जो दूनघाटी में महान सन्तों की परम्परा के साथ सम्बन्धित संस्था है, दूनवासी रामप्रेमियों को महाराज श्री के मधुर उपदेशामृतों का व रामचरित्रमानस के श्रवण का शुभ अवसर प्राप्त हुआ । प्रातः श्री गीताभवन पीपलमण्डी देहरादून में सुन्दर काण्ड के सुन्दर घटनाक्रम व हनुमानचरित्र के विभिन्न पक्षो के श्रवण का लाभ रामप्रेमी अनुरागियों को प्राप्त हुआ, कार्यक्रम में श्री सत्यप्रकाश जी भी महाराज श्री के साथ थे ।

कृष्णाजन्माष्टमी का महोत्सव, जो सम्पूर्ण भारत में बड़े उत्साह के साथ मनाया जाता है, देहरादून में विभिन्न संस्थाओं द्वारा आयोजित किया गया । विभिन्न स्थानों, यथा स्त्री सत्संग सभा डालन वाला, पंचायतीमंदिर, सनातन धर्म मंदिर पटेलनगर व गीताभवन विकासनगर पर श्रीकृष्ण हिदुत्व व सनातन धर्म जैसे विभिन्न विषयों पर प्रवचन करते हुए आपने विभिन्न भारतीय प्रत्ययों जैसे हिन्दू धर्म निरपेक्ष आदि शब्दों के ज्ञान स्वरुप व विश्लेषणात्मक ज्ञान की आवश्यकता पर जोर दिया तथा बताया कि कृष्ण का जीवन केवल सौन्दर्य व भावना परक रूपों में ही हमारे द्वारा स्वीकार्य नहीं होना चाहिए बल्कि उसके घटनापरक व्यावहारिक रूप को भी हम भारतीयों द्वारा स्वीकार किया जाना चाहिए अन्यथा इतिहास में हुए दुष्परिणामों की प्राप्ति पुनः हो सकती है । गीता के तात्विक मूल्य, जिनमें आत्मा की की नित्यता, व्यवहार व क्रियाओं में मानसिक सन्तुलन आन्तरिक साधनाओं की प्रमुखता, कर्तव्य रुढता तथा जीवन में नैसर्गिकता की स्वीकृति, हमारे द्वारा यदि उपेक्षित किये जायेगें तो भारत अपने मौलिक स्वरूप से हटता हुआ दीखने वाली परतन्त्रता से तो मुक्त होगा परन्तु वास्तविक स्थिति इसके बिलकुल विपरीत होगी ।

(शेष २४ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२१ की प्रातः आप हरिद्वार गये तथा २४ को भारतसाधुसमाज की गोष्ठी, में जो ऋषिकेश में आयोजित थी सम्मिलित होने के लिए आप ऋषिकेश गये। २४ की सांय ही आप ऋषिकेश से वापिस देहरादून आ गये। आश्रम पर व्यवस्था का निरीक्षण करने के अनतर २५ की सायं आपका प्रस्थान कश्मीर की ओर हुआ। वहां, कश्मीर में दिनांक ४सितम्बर तक निवास करने के बाद, सम्भवतया ५ को आप दिल्ली पहुंचेगें

—सम्पादक

(शेष २२ का)

स्वामी राम और दूसरे आचार्यों में सिर्फ ये ही फर्क है कि आचार्य पहले कर्म फिर भक्ति और फिर ज्ञान की प्राप्ति के लिये कहते हैं। लेकिन स्वामी राम कहते हैं कि नहीं, कलयुग में इतना वक्त नहीं इसलिये प्रारब्ध से जो कुछ मिलना है वह अवश्य मिलेगा। इसलिये इनकी परवाह न करते हुये ज्ञान की प्राप्ति करो जिससे ये सब बन्धन छूट जायेगा।

एक साधू ने १२ साल तक एक पत्थर पर बैठ कर भगवान से कहा कि देखो मैंने १२ साल कड़ी तपस्या की है। अब तो दर्शन दो। प्रभु ने कहा कि अच्छा भाई जिस पत्थर पर १२ साल बैठे रहे, उसको १२ साल सिर पर उठाओ फिर तपस्या का फल दूँगा।

सत्संग में आना कर्म है। ध्यान लगाकर सुनना भक्ति है और इन को सुनकर मनन करना ज्ञान मार्ग है। ये तीनों एक जन्म में प्राप्त करना स्वामी राम ने बताया। हरि ओम्।

प्रे० संतोषसिंह वर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

स्मृति - दिवस

समस्त रामप्रेमियों को सूचित किया जाता है कि परमअर्चनीय वन्दनीय आचार्यचरण तपोनिष्ठ कर्मयोगी ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्दप्रकाश जी महाराज की पुण्य स्मृति में, जिनकी छत्रछाया में स्वामी रामतीर्थ मिशन ने अपनी बहुमुखी उन्नति की, द्वितीय स्मृति - दिवस का आयोजन श्रद्धेय परमाध्यक्ष स्वामी अमरमुनि जी महाराज के तत्वाधान में दिनांक १६-६-७६ तदनुसार रविवार को स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर, देहरादून के प्रांगण में किया जा रहा है।

इसमें उपस्थित महापुरुष सन्त व राम प्रेमी अपनी वाग्मयी श्रद्धान्जलि ब्रह्मलीन महाराज के श्रीचरणों में समर्पित करेंगे।

अतः आप सब भी इस दिन उस महान आत्मा को अपनी भावमयी श्रद्धान्जलि समर्पित करने हेतु आमन्त्रित हैं।

कार्यक्रम :	
रामचरित मानस पाठ	१५-६-७६
का प्रारम्भ	प्रातः ६ बजे
गीता, आदि धार्मिक ग्रंथो	१६-६-७६
का पाठ, यज्ञ	प्रातः ७ बजे से
रामायण पूर्णाहुति	१६-६-७६
	प्रातः ६ बजे
प्रवचन, श्रद्धान्जलियां	१६-६-७६
	प्रातः १० बजे से
समष्टि-भोज	१ बजे अपरान्ह

भवदीय

काका हरि ओ३म्

मन्त्री-स्वामी रामतीर्थ मिशन
राजपुर, देहरादून (उ०प्र०)
दूरभाष ८४२२५ राजपुर
४२६७ देहरादून

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूरभाष—८४२२५ राजपुर, ४२९७ देहरादून, तार का पता — (वेदान्त) देहरादून, रजि. नं डी. एन. १५

राम

मौत के नाम राम का अन्तिम संदेश—ऐ मौत! बेशक उड़ा दे मेरे इस एक जिस्म को। मेरे और अजराम (शरीर) ही मुझे कम नहीं। सिर्फ चांद की किरणें, चांदी की तारें पहिन कर चैन से काट सकता हूँ। पहाड़ी नदी-नालों के वेष में गीत गाता फिरुंगा, वहरेमव्वाज (समुद्र की तरंगों) के लिवास में लहरता फिरुंगा। मैं ही वादे खुशराम (मन्द-मन्द पवन),. नसीमे—मस्तानागाम (प्रातः कालीन वायु) हूँ। मेरी यह सूरते-सैनाली (घूमते - फिरने में) रहती है। इस रूप में पहाड़ों से उतरा, मुरक्षाते पौधों को ताजा किया, गुलों (फूलों) को हंसाया, दरवाजों को खड़खड़ाया, सोतों को जगाया, किसी का आंसू पोंछा किसी घूंघट उठाया, इसको छेड़, तुझको छेड़, वह गया, वह गया, न कुछ साथ रखा नकिसी के हाथ आया!

बुक पोस्ट

ग्राहक संख्या _____

श्री / श्रीमती गुरुकुल पुस्तकालय

स्थान गुरुकुल कांगड़ी विश्व विद्यालय

डाकखाना हरिद्वार

जिला सहारनपुर

मासिक पत्र—

"राम-सन्देश"

स्वामी रामतीर्थ मिशन

राजपुर, देहरादून (उ०प्र०)

Pin—248009 भारत

स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून (उ० प्र०) के लिए प्रकाशक स्वामी अमर मुनि द्वारा न्यू आईडियल प्रिन्टिंग हाऊस (कांग्रेस भवन के पास) ४-बी नेशविला रोड, (देहरादून) में, मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम-सन्देश

भारत कैसा (पतित) हो गया है– इस विचार में समय नष्ट मत करो। अपनी शक्ति, अनन्त शक्ति को संचित करो और दृढ़ता से निश्चय करो कि भारत को आगे ऐसा (उज्ज्वल) बनायेंगे।

अक्टूबर
१९७९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकेतिका

विषय	लेखक	पृष्ठ
विदाई के समय	स्वामीराम	१
गृहस्थाश्रम और आत्मानुभव	स्वामीराम	२
(स्वामी हरि ओउम् जी महाराज द्वारा अमृतसर प्रवचन में दिया गया प्रवचन)		५
रामचरित्र चित्रण–रावण	स्वामी तीर्थानन्द 'अज्ञ'	६
स्वामी राम को भावभीनी श्रद्धाञ्जलि	स्वर्गीय जगदीश चन्द्र सम्राट्	१२
विश्व शान्ति का आधार धर्म	नारायण प्रसाद रानाडे	१५
विचारोदधि	प्रे० दिवेश त्यागी	१८
स्वामो रामतीर्थ जी का क्रमिक आत्मविकास	प्रे० भारत बन्धु शर्मा	१६
सूचनाएं—		२२–२३
आश्रम समाचार—		२४

संस्थापक—
ब्रह्मलीन स्वामी हरिओउम् जी महाराज
संवर्धक—
ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज
व्यवस्थापक—
स्वामी अमर मुनि जी महाराज

सम्पादक—
काका हरिओउम् "निर्द्वन्द्व"

आजीवन सदस्यता शुल्क—
भारत में — १०० रु०
विदेश में — ५०० रु०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'राष्ट्र के हित के लिए यत्न करना ही विश्व की शक्तियों अर्थात् देवताओं की आराधना है'-स्वामी राम

वेदान्त, अध्यात्म, संस्कृति, धर्म एवं भक्ति का सजग सन्देशवाहक
तथा स्वामी राम के आदर्शों का एकमात्र लोकप्रिय मासिक—

राम सन्देश

वेदोपनिषदां तत्त्वम् सत्यं नित्यं सनातनम् ।।
तत्सर्वं "रामसन्देशे" पत्रेऽस्मिन्नवलोक्यताम् ।।

वर्ष २८ अंक ९	राजपुर, देहरादून, सितम्बर १९७९	वार्षिक भेंट १०) एक प्रति ८५ पैसे

विदाई के समय

डाल रसाल पै बैठी सी कोयल "राम" हमें नित गाय सुनावत ।
शीरीं भरी पंडिताई से बातें है पूरब की जो विशेष बतावत ।।
देश हमारे प्रतीचो कृपा करि हैं उनको विस्तार बढ़ावत ।
मारग के तो पंछी हूं बने ये संदेश सुधा सुरेश को है लावत ।।
घनघोर पुकार यों गूंजति है सुन लेई जो चाहत याहि सुनो ।
"है ईश की वस्तु सभी जग की पुनि ईश सभी के सदा ही गुनो ।।"
समुझाय संदेश यों दूरि भजे द्रुत तारा है टूटत रात मनो ।
पै स्वर्ग की ज्योति को लेश सो छोड़ि चले हेतु स्वजाति के प्रेम दुनो ।।
प्रिय राम हमारो है अन्त प्रणाम कछु जिमि औरहु बूझि परे ।
मृदु हांसी तुम्हारी अनोखी बड़ी जो निर्जीवहु में नव शक्ति भरे ।।
यहि लोक में फेर चहे न मिलें पर दिव्य प्रभा न कभी बिसरे ।
तेरो भलो है सदा ही घनो, हरि राजे तुम में तू हरि में बिहरे ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गतांक से आगे—

गृहस्थाश्रम और आत्मानुभव

(ता० १ फरवरी १९०३, रविवार, सन्ध्या—समय)

— स्वामी राम

आधुनिक चमकीले और आलीशान मकानों के बदले हम छोटे-छोटे घरों में रह सकते हैं। अन्य लोगों अथवा जंगली जानवरों के हमलों से बचने के लिए हमें साफ-सुथरे छोटे-छोटे मकान ही काफी हैं। अति सुन्दर मकानों की कोई आवश्यकता नहीं है।

लोगों ने अपने घरों की शोभा और सौन्दर्य को स्वयमेव अपने जीवन का एक उच्च उद्देश्य बना लिया है। दूसरों को कपड़ा पहनाने की सुन्दरता, खाने-पीने की चीजों की जटिलता, यह स्वयं एक उद्देश्य और इष्ट मान लिया है, नहीं-नहीं उद्देश्य और इष्ट ही नहीं, बल्कि यही साधन-साध्य सब कुछ समझ लिया है।

संसार के इतिहास में हम देखते हैं कि कई लोग झोपड़ों में, छोटे-छोटे मकानों में रहते थे। उनके कपड़े बहुत ही मामूली थे, और भोजन भी उन्हें मामूली मिलता था। पर तो भी वे लोग जगत्-विख्यात शूरवीर थे।

आप प्लेटो के विषय में जानते हो, प्लेटो के फारसी नाम का अर्थ "पीपा वा पेटी में रहनेवाला" है। प्लेटो का घर 'पीपा' या 'पेटी' था। संसार से उपराम, अलग होकर वह इसी मकान में जाकर रहता था।

जरा सोचो तो, जो लोग ऐसी दरिद्रता में रहते थे, ऐसे सादे ढंग से रहते थे, उन्होंने संसार के लिए कितना उपकार किया है।

एवन (Avon) नदी तट पर स्ट्रैफोर्ड(Strafford) ग्राम में शेक्सपियर का घर कोई भव्य भवन नहीं था पहले वह बहुत निर्धन था, पर पीछे उसने धन इकट्ठा किया। जीवन की प्रथम अवस्था में वह नाटक के दर्शकों की देख-रेख तथा उनके घोड़ों की खबरदारी किया करता था।

'न्यूटन' भी निर्धन मनुष्य था। पुस्तकें खरीदने के लिए या किसी दरिद्र को कुछ देने के लिए जब उसके पास पैसे न होते, तो वह बहुत शोक प्रकट करता था। इसके सिवा किसी अन्य अवसर पर वह अपनी गरीबी से कभी शोकातुर नहीं होता था। जरा देखिये, जिन्हें सदा मोटा खाना और मोटा पहनना पड़ता था, उन्होंने ही संसार के लिए उपकार किया है। भारत वर्ष के हिन्दू लोग पहले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जंगली कन्द-मूल पर ही गुज़ारा करते थे, पर इन्हीं लोगों ने जगत को सर्व श्रेष्ठ तत्वज्ञान, वेदान्त, मोक्ष और भक्ति का दर्शन-शास्त्र प्रदान किया है।

अपने को श्रेष्ठ और सत्पुरुष बनाने का प्रयत्न करो। भव्य भवन और सुन्दर सदन बनाने में अपनी शक्ति मत खर्चो। अपने विचार नष्ट मत करो। बहुतेरे गृह बड़े ऊंचे और आलीशान हैं, पर उनमें रहने वाले मनुष्य बिल्कुल ही ठिगने और क्षुद्र हैं, भारत में अनेक विशाल कबरें हैं, पर जानते हो, उनके भीतर क्या है? केवल सड़ी-गली लाशें, रेंगने वाले कीड़े और सांप।

बड़े-बड़े मकान बनाने और उनमें चमकदार चीजों के सजाने में अपनी शक्ति का नाश कर अपने को, अपनी पत्नी और अपने मित्रों को बड़ा बनाने का यत्न मत करो। यदि आप इस विचार को ग्रहण कर लोगे, इसे जान और समझ लोगे कि जीवन का एक मात्र आदर्श और उद्देश्य शक्ति का दुरुपयोग और धन का संचय करना नहीं है, वरन् भीतरी शक्तियों का विकास करना, ईश्वरत्व और मोक्ष प्राप्ति के लिए आत्म-शिक्षण करना है। यदि आप इसका अनुभव करके इसी ओर अपनी सारी शक्तियों को लगाओगे, तो पारिवारिक बन्धन कभी आपके लिए विघ्न रूप न होंगे।

कुछ लोग कहते हैं, हम तो सादी रीति से रह सकते हैं, पर हमारे मेहमान भी तो हैं। यदि हम लोग कमण्डल आदि धारण करें तो वे क्या कहेंगे!

ऐ मेरे प्यारे! तुम अपने लिए जीते हो, या दूसरों के लिए? अपने लिए जिओ। तुम्हारे जीवन में दूसरों को दखल देने की आवश्यकता नहीं है। अपना भोजन करते समय तुम भोजन करते हो या वे? तुम अपना खाना अपने पचाते हो या वे तुम्हारे लिए पचाते हैं? देखते समय तुम्हारी अपनी आंखों के स्नायु तुम्हें सहायता देते हैं, या उनकी आँखों के? अपने गुरुत्वाकर्षण का केन्द्र (centre of gravity) तुम आप बनो। स्वाश्रयी हो। जरा अपने भीतर के आधार और अधिष्ठान को पा लो, और मेहमानों के मतों और विचारों की परवाह मत करो भोजनों और बिछावनों को अतिथि-सत्कार का मूल मंत्र न बनाओ। लोग समझते हैं कि मेहमानों को स्वादिष्ट भोजन और सुन्दर पलंग नहीं देंगे, तो हम पूरे अतिथि-सेवी न होंगे। इस प्रकार तो घर का स्वामी इन चीजों का एक पुछल्ला (appendage) मात्र रह जाता है। कृपा करके अपने को द्रव्य का उपकरण (appendage) मत बनाओ, द्रव्य को ही अपना साधन न बनाओ, अपनी शक्तियों का अनुभव करो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसा करो कि जब तुम्हारा मेहमान [अतिथि] तुम्हारे यहां से अपने घर को जाने लगे तो वह स्वच्छ चित्त, उदित और समुन्नत होकर जाय। यह योजना करो कि जैसा वह अपने घर से आया है, उससे अधिक बुद्धिमान बनकर जाये। अपने स्वजनों के प्रति यही अपना कर्तव्य समझो। अपने परिवार को सुखी करने का यही मार्ग है। इसी तरीके से गृहस्थ अपने कुटुम्ब को विघ्न-बाधा के स्थान पर उन्नति का सोपान बना सकता है। यदि तुम्हारा अतिथि पहले की अपेक्षा अधिक बुद्धिमान होकर लौटता है, तो उसके खाने पीने की अधिक परवाह मत करो। उसे इनसे कुछ श्रेष्ठतर चीज दो, उसे ज्ञान और बुद्धि दो। उसे आपकी प्रीति का आनन्द लूटने दो। याद रक्खो कि यदि मैं तुम्हें एक कौड़ी भी न दूं, कुछ भी शारीरिक सेवा न करूं, केवल प्यार से, सच्चे और साफ दिल से तुम्हारे प्रति प्रसन्नता-भरी मुस्कान से हंस दूं, तो तुम्हारा प्रफुल्लित होना, समुन्नत होना और उछलना अनिवर्य है। इतने से ही तुम्हारी बड़ी सेवा हो जाती है। किसी मनुष्य को धन देना कुछ भी नहीं है, यह वैसा है कि पहले पत्नी को धन देकर पीछे से त्याग देना। पत्नी को धन नहीं चाहिए, उसे प्रीति चाहिए। किसी मनुष्य को धन देकर तुम पातकी का-सा आचरण करते हो। तुम उसे धोखा देकर भुलाना चाहते हो उसे प्रेम और ज्ञान दो, उसे स्वच्छ चित्त और समुन्नत बनाओ। यह भारी अतिथि-सत्कार है, और यही तुम्हें करना चाहिए। ऐसी ही प्रीति तुम्हें अपनी स्त्री और बच्चों के साथ रखनी चाहिए।

—समाप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीताभवन, अमृतसर में ब्रह्मलीन स्वामी हरिॐ जी महाराज द्वारा दिया गया

प्रवचन

प्रभु प्राप्ति का केवल प्रेम और श्रद्धा ही साधन है, लेकिन एक तो प्रेम होता है और एक मोह। दोनों के स्वरुप को समझना चाहिये। मोह है—देखने में तो एक प्यार ही दीखता है, जो प्रेमपात्र के लिये ही किया जाय वह प्रेम है। मोह में इसको ही सकाम पूजन या कामना कहते हैं। प्रेमपात्र के लिये ही जो प्रेम करता है उसे प्रगट होना पड़ता है। मोह में मांगता है प्रेम देता है। मोह में माँग और प्रेम में बलिदान। धन, मान इत्यादि माँगना तो बनियापन है, इससे Higher (ऊंची) माँग है शान्ति मांगना—अपने से भिन्न होकर करना चाहता है। अपने को मिटा देना है दर्शन करने वाला ही न रहे यानि स्मरण ही न रहे मैं किसे चाहता हूं। जिनकी यहां तक पहुंच हुई तिनके प्रभु चाकर बन कर आते हैं। स्वामी राम जी ने Experiment (तजरबा) कर दर्शाया है जो दुनिया के लिये एक मिसाल बन गये:—

आरजू भी हजाबे हसना है।
आरजू है कि आरजू न रहे।

राम कहते हैं' मेरी इच्छा है कि इच्छा न रहे। जब अहंगता की समाप्ति हो जाती है तब ऐसा होता है। भजन तो सब करते हैं लेकिन कामनाओं के लिये कर रहे हैं। उसके Rats नहीं हैं यह तो नियम है रत्ती भर भी आगे पीछे नहीं। जो देहअध्यास को मिटा देता है, उसी को साक्षात्-कार हो जाता है बल्कि वह उसी का रूप हो जाता है। जैसे हम गो दान करते है तो फिर हमारा उस पर कोई अधिकार नहीं रहता। इसी प्रकार जब समर्पण वृत्ति से प्रभु प्रेम करता है तो वहाँ उसका कुछ भी नहीं रहता। उसके Body Guard (शरीर—रक्षक) स्वयं परमात्मा बन जाते हैं। वायु की तरह परमात्मा परिपूर्ण है खाली कमरे में जैसे वायु बिन बुलाये पहुंच जाती हैं उसी प्रकार जब मनुष्य का अन्तःकरण खाली हो जाता है विषय विकारों से तो परमात्मा वायु की तरह घूम जाते हैं। हम को सारी भावनाओं से उठ कर परमात्मा का भजन करना चाहिये। भोले भाव मिलहिं रघुराई" बहुत चतुर भी प्रभु प्राप्ति नहीं कर सकते। दर्शन तो ज्ञानी को ही होते हैं। पहुंचना यहां तक ही है चाहे पिछले जन्म में कुछ मेहनत कर आये हों आत्मविस्मृति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की अवस्था हो जैसे उदाहरण के तौर पर ध्रुव को प्रभु वर मांगने को कहने लगे ध्रुव तो भूल ही चुके हैं कि किस के लिये तपस्या कर रहे हैं।

आत्मा के तीन रूप हैं– पुत्र, मन और परमात्मा को भी आत्मस्वरूप कहा है। स्वामी राम एक बार Picnic (पिकनिक) पर जाते हैं (कालिज स्टाफ) College Staff वगैरा के साथ वहाँ स्वामी जी को जब खाना Offer किया (दिया) गया तो कहने लगे हम तो केवल दूध ही पीते हैं आजकल। सभी हंसने लगे मजाक से कहने लगे हमें पता होता तो एक गाय ही साथ ले आते। राम कहने लगे यह तो कोई बात नहीं हम तो हर प्रकार से प्रसन्न हैं यदि नहीं मिलता तो क्या डाक्टर भी तो फाका करने को कह ही देता है, भगवान ने डाईटिंग दी है कोई बीमारी आने वाली होगी, गिला थोड़े ही है कोई।

"शिकायत बन्दगी को खाती है।
गम उमर को खाता है।"

अपनी गल्तियों से आई तकलीफ में प्रभु को याद करते हैं जो ऐसे छोटे दिल वाले हैं, उनके निकट उनकी शक्तियाँ नहीं फटकतीं। उसका तपोबल नष्ट हो जाता है। मांगना इन्सान को खोखला बना देता है" प्रायश्चित्त गुनाहों को खा जाता है तो पाप की निवृत्ति हो जाती है।

स्वामी राम कहते हैं "मैंने कभी शिकायत नहीं की भगवान से "मैं कुछ दिनों से अन्न नहीं खाता, नियम है कुछ दिनों के लिये। सब ही उन्हें ताने के तौर पर कुछ का कुछ कहते हैं। इतनी देर में एक लड़की दूध का मटका उठाए आती है, जरा देखे ग्यारह बजे पूरे कैसे भगवान दूध ले आए। कहते हैं दूसरे प्रोफेसर-पैसे ले ले, दूध दे दे। वह कहती है हमारी गौ सूई थी। पन्द्रह दिन तक दूध हम नहीं पीते। मां ने कहा आज पहला दूध जा किसी संत को पिला आ। आगे ही राम के बिन कहे राम के आगे दूध रख दिया। राम ने कहा-मैंने भगवे कपड़े नहीं पहने। लड़की केवल ७,८ साल की है पर कहती है मुझ को तेरे चेहरे से मालूम होता है कि तू संत है। स्वामी राम ने बहुतेरा कहा पर वह दूध दे ही गई। उन्होंने पी लिया। कहने का अभिप्राय यह है कि भगवान भक्तों के लिए हर हाल में खड़ा है।

ज्ञानी का प्रेम सार्वभौम होता है– कोई तो उसके वस्त्र धो रहा है, कोई सुखा रहा है। ज्ञानी की, ब्रह्मवेत्ता की Service (सेवा) तो पत्ता करने में लग जाता है। कहने का अभिप्राय यह है कि क्यों न आदमी उसी का हो जाए। लेकिन यह है बड़ा मुश्किल। आपके घरों का बड़ा दूषित वायुमंडल है। जैसे कोई पहाड़ पै जाकर जरा सेहत पकड़ लेता है, पर फिर वैसा ही हो जाता है। कथा, कीर्तन सुन अच्छा हो जाता फिर वैसा का वैसा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम नित्य प्रति सुनते हैं, समझते हैं पर—सारे अज्ञान के ठेकेदार हैं। हमारा वायु-मंडल शुद्ध नहीं। जिनके घरों का वायुमंडल शुद्ध होता है, वह बड़ी जल्दी Progress (उन्नति) करते हैं।

अभिमान देह—अध्यास की पराकाष्ठा है। इसी रूप से कहा यदि संतों की Copy (नकल) की जाए, फिर भी उसे अपने नाम की लाज आ जाती है। एक लड़की ने प्रण किया विष्णु से ही शादी करुंगी। वहाँ एक मनुष्य ने पहले ही तैय्यार हो, गरुड़ जैसा सवार बन जल्दी से उसके गले में जयमाला डाल दी। लड़की ने सोचा कामना पूरी हो गई मेरी। अब लड़की के पिता पर चढ़ाई हो गई। सोचा मेरा दामाद विष्णु भगवान है। इस बार सहायता न करेगा तो कब करेगा। वह दिल ही दिल में डरता है—मैं तो विष्णु हूं ही नहीं। सोचता है अब तो खात्मा नजदीक है। भगवान से प्रार्थना करता है और कहता है आज तेरा नाम विश्व से उड़ जावेगा। प्रजा को निश्चय है कि मैं विष्णु हूं—ऐसी उसको शक्ति आती है कि जय जयकार बोल उठते हैं। पुराण कहते हैं अमल तो छोड़ दे, यदि तू झूठा नाम भी ले, फिर भी पार हो सकता है। हम तो इस लायक भी नहीं। Part (पार्ट) को Play करना (खेलना) भी नहीं जानते।

मनुष्य जिस जाति में उत्पन्न होता है, उसे अपनाना चाहिये। कोई मजहब वाले मजहब की बुराई नहीं करते। एक केवल हिन्दू धर्म ही सरे बाजार में हिन्दू धर्म को ही बुरा कह देते हैं। यह अज्ञान की अत्यन्त पराकाष्ठा है।

शेष पृष्ठ ८ पर

साहस

—प्रे० दिवेश त्यागी

मानव के सभी गुणों में साहस पहला गुण है, क्यों कि यह सभी गुणों की जिम्मेदारी लेता है।

(चर्चिल)

संकटकाल में साहस होना आधी सफलता प्राप्त कर लेना है।

(प्लाउट्स)

अपने दोषों को स्वीकार करना एक उत्कृष्टतम साहस है। सच्चे साहस में न तो अधीरता है और न जल्दबाजी।

(माताजी, अरविन्द आश्रम)

साहसी व्यक्ति विश्वासी भी होता है।

(सिसरो)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी विवेकानन्द लाहौर में भाषण दिया करते थे । करते करते जब तीन दिन हो गए लोग देखते रहे--स्वामी जी आगे पीछे ताकते रहते हैं। मानों किसी की खोज में हों । चौथे दिन स्टेज के पीछे देख कर कहते हैं—(स्वामी राम को खड़े देख) भाई तीन दिन से मैं तेरे को देख रहा था । भाषण बन्द हो गया। गोवर्धनदास ने प्रश्न किया स्वामी जी बताईये आप भाषण देते-देते चुप क्यों हो गये ? पीछे से अपने राम को कैसे बुलाया ? बोले—भाषण देने के लिये लाहौर में मुझे किसी ने बुलाया न था। भाई माल के ग्राहक देख लूं शायद कोई निकल ही आए। कीमती चीज के ग्राहक बहुत कम होते हैं। हम लोग फिलासफर होते हैं Sprifual Master (आत्मिक गुरु) होते हैं। जैसे माता रसोई के सारे भावों को जानती है धीमी आच पर फली बनती है, इसी तरह Spritual Master (गुरुदेव। तत्काल समझ जाते हैं भजन ? करने वाला दुःखी क्यों है ? यह गिर रहा हैं ? किस व्यक्ति के लिये आए हैं ? खास कोई ऐसा व्यक्ति छिपा है जिसे मेरे भाषणों से से लाभ होगा। जंज में लाडा तो एक ही होता है—वह यह है तीर्थराम। कहने का भाव यह है हम भी शायद इस श्रेणी में आ जाए। स्वामी जी कहा करते थे राम की शरण में मैं यह सोच कर गया कि यह शरीर नश्वर है ही, किसी दिन मलेरिया, हैजा इत्यादि रोगों का शिकार बन जाएगा । इसी विचार के ऊपर मैंने अपने को राम समप्ति कर दिया। कितना तीव्र विवेक है। कितना भाग्यशाली है वह जो परमात्मा के नाम के लिये समर्पण होने का प्रण करता है। अन्यथा जीव कटी पंतग की तरह मर जाते हैं। Divine Life(रुहानी जीवन) में आना चाहिये। निष्कामा भाव से परमात्मा लाईन पैं चलना चाहिये। इससे लोक परलोक महान हो जाता है अन्यथा यहां भी खतरा और वहाँ भी ।

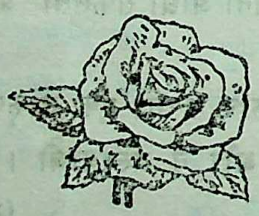

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गतांक से आगे

रामायण चरित्र चित्रण ★★★ रावण

स्वामी तीर्थानन्द 'अज्ञ'

अगर रामायण में रावण नहीं होगा तो रामायण कभी पूर्ण नहीं होगी। इसलिए राम और सीता का चरित्र जितना महत्वपूर्ण है उतना ही महत्व रावण रखता है।

राक्षस कुल में जन्म होने के कारण रावण के अन्दर इन्द्रिय-निग्रह न था। क्योंकि "शाल्यन्नं सुघृतं सुभृतं पयोदधियुतं भुंजन्ति ये मानवाः। तेषां इन्द्रिय निग्रहो यदि भवेत् विंध्यस्तरेत् सागरम्।।" विंध्य पर्वत भले ही तैरने लग जाय परन्तु असुरों को इन्द्रिय निग्रह कैसा। उनका तो सिद्धान्त है 'खाओ, पिओ और मजा करो।' ऋषिकुल और राक्षसकुल के सम्मिश्रण से पैदा होने के कारण रावण के अन्दर पिता की तपस्या शक्ति, तितिक्षा सहन शक्ति और माता की काम वासना, तथा अनुनय करके बचन में बांधने का सामर्थ्य शुरू से ही उसको पैतृक संपत्ति के रूप में मिला हुआ था। सर्व साधारण लोगों की मान्यता है कि राक्षस का अर्थ बड़े-बड़े दांत वाली, भँयकर आकृति का मनुष्य लेकिन ऐसा नहीं है। रावण की माता केशिनी अति सुन्दर थी। जीवन दर्शन, जीवन की कल्पना, स्वाध्याय का विचार तथा ध्येयविहीन प्रजा हो तो उसे राक्षसी संस्कृति वाली प्रजा कहा जाता है। वास्तविक वाल्मीकि रामायण में रावण के एक सिर दो हाथ हैं। किन्तु तपस्या तथा सिद्धि का बल होने के कारण वह दस सिर तथा बीस हाथ धारण कर सकता है। उसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है। उसकी भक्ति बड़ी उच्च कोटि की थी। भगवान को प्रसन्न करने के लिए उसने एक-एक करके अपने दसों सिर अर्पण करडाले थे। जिसके कारण उसे अमोघ-शक्ति, सामर्थ्य मिला था। और शक्ति मिलने के बाद वह पितृसंस्कारों की तरफ पीठ फिराकर मातृ संस्कारों की तरफ चल पड़ा। जिसके कारण सारी दुनियाँ ने उसे राक्षस कहा।

'अदाता वंश दोषेण कर्म दोषात् दरिद्रता।
उन्मादो मातृदोषेण पितृदोषेण मूर्खता।।"

प्रभु के दरबार में सभी को जवाब देना पड़ता है। मातृदोष के कारण रावण में उन्माद आया था। इसी उन्माद के कारण जिससे उसे इतनी अपार शक्ति मिली उसी को चैलेन्ज देने चला। तत्कालीन समय में रावण अतिशय प्रभावशाली व्यक्ति था। उसके पास शौर्य, विद्वत्ता, साहस, पराक्रम, अभिमान तथा संपत्ति सब कुछ था। किसी के सामने सिर न झुकाना पड़े यह उसकी आंतरिक इच्छा थी। सारा जगत उसके कर्तव्य और पौरुष के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बारे में जानता था। रण मैदान में आमने-सामने आने पर राम उसके सभी गुणों का वर्णन करते हुए कहते हैं कि, ऐसे ही व्यक्ति की रण स्थल में दरकार होती है। यदि रावण में अधार्मिकता, अनैतिकता न होती तो वास्तव में वह अवतारी पुरुष कहलाता। रावण तत्कालीन महापुरुष था। किन्तु सभी दुर्गुण होने के कारण जगत ने उसे अवतारी पुरुष कहना अस्वीकार किया था। कुटिलता उसके रोम-रोम में भरी हुई थी। जिसके कारण सात पीढ़ियों में भी जिस राज्य से उसका कोई संबंध न था। उस पर बलात् आक्रमण करके कब्जा कर लिया। पितृवंश के कारण उसे मन्दोदरी जैसा स्त्रीरत्न प्राप्त हुआ। किन्तु इसका उसने कभी एहसान नहीं माना। उसके पास क्या नहीं था ? कर्तृत्व था, जवानी थी, प्रभुत्व था, सब कुछ उसके पास था।

"मर्कटस्य सुरापानं ततो वृश्चिकदंशनम्।
तन्मध्ये भूतसंचारो यद्वा तद्वा भविष्यति॥"

ऐसे व्यक्ति के बारे में कुछ पूछना शेष नहीं रहता। उसे अनिवर्चनीय सत्ता प्राप्त हुई थी। उस सत्ता के बल पर उसने निन्दनीय कार्य करना शुरू किया। शिष्टाचार शब्द उसके कोष में नहीं था। आजकल ऐसे अनेक रावण मिलेंगे जो कहते हैं, "मुझे मेरे कल्याण का रास्ता मालूम है। गीता उपनिषद् मेरा क्या कल्याण कर सकते हैं ?" राज-नीति अथवा शिष्टाचार जीवन को स्पर्श न कर सकने के कारण रावण जैसा प्रकाण्ड पण्डित आज मानव जाति के लिए कलंक बन गया है। रावण अतिशय कामुक व्यक्ति था। सुन्दर स्त्री को देखते ही उसका मन बेकाबू बन जाता था। वह स्त्री-सौंदर्य का बड़े से बड़ा शिकारी था। वह 'परदारामर्षक' था। वह इतना निर्लज्ज, बेशर्म था कि 'सीता के पास जाकर वह कहता है',

"स्वधर्मो रक्षसां भीरू ? सर्वदैव न संशयः।
गमनं वा परस्त्रीणां हरणं संप्रमथ्य वा॥"

उसके जैसा निर्लज्ज जगत में ढूंढने भी नहीं मिल सकता। पशु के सारे गुण उसके अन्दर बस जाने के कारण उसके अन्दर के सभी सद्गुणों का नाश हो गया। जब दिग्विजय करने निकला तो एक स्थान ऐसा नहीं छोड़ा जहां से किसी युवा स्त्री, पुत्री, अथवा माता को भगा कर न लाया हो।

रावण के सर्वनाश का कारण अगर हम शूर्पणखा को समझेंगे तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी, क्योंकि रावण को उकसाने के लिए उसने सीता के अंग-प्रत्यंग का वर्णन रावण के सामने मसाला लगाकर कहना शुरू किया। उसी समय रावण की स्त्री-विषयक पिपासा जाग उठी और वह उसका हरण करने के विचार से चल पड़ा। अंतःकरण में पाप हो तो मनुष्य भयभीत हो जाता है। इसी भयवश सीता-हरण के प्रसंग में रावण ने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मारीच की सहायता ली है। स्वयं मंदोदरी रावण को कहती है, 'शोक संतप्त, बेइज्जती होने के कारण जिनका हृदय विदीर्ण हो चुका है, ऐसी स्त्रियों के दियेहुए शाप तुम्हारे बारे में सत्य सिद्ध होंगे। पतिव्रता स्त्री के आंसू पृथ्वी पर अकारण ही नहीं गिरते।

"पतिव्रतानां नाकस्मात् पतन्त्यश्रूणिभूतसे।"

और इस प्रकार एक धुरन्धर विद्वान, शास्त्रों का ज्ञाता, अतुल बलशाली, पराजयी योद्धा रावण का सर्वनाश हुआ, जो मानव जाति पर एक कलंक था।

धर्म और सदाचार

वर्तमान कर्मकाण्ड की समस्या कैसे हल होगी-यदि आपको वर्तमान उन्नतिशील, कलाकौशलपूर्ण और औद्योगिक शताब्दी में जीवित रहना है, यदि राजनैतिक यक्ष्मा में घुल--घुलकर नष्ट नहीं होना है, तो विद्युत के मातरिश्वा को बांधो, भाप के वरुण को दास बना लो और कृषि विज्ञान के कुबेर से घनिष्ठता करो।
इन देवताओं से तुम्हारा परिचय
कराने वाला पुरोहित वह
वैज्ञानिक अथवा कला-
विद् होगा जो तुम्हें
इन विद्याओं की
शिक्षा देता
है।

—स्वामी राम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी राम को भावभीनी श्रद्धाञ्जलि

स्वामी राम को अपना आराध्य मानने वाले विद्वान एवं कर्मनिस्ठ श्रद्धेय डा० श्री जगदीश चन्द्र भारद्वाज (जिन्हें सम्राट जी के नाम से सम्बोधित किया जाता था ।) अकस्मात् संसार से चल बसे । गत रविवार (१६ अगस्त) को उन्होंने अखिल भारतीय संस्कृत सम्मेलन की विराट् सभा में सर्व-प्रथम अपने विचार व्यक्त किए और अपने भाषण के अनन्तर पांच मिनट में मंच पर ही (हृदय गति रुक जाने से) इस नश्वर शरीर का त्याग कर दिया । डा० सम्राट जी स्थानीय आत्माराम सनातन धर्म कालेज में हिन्दी के विभागाध्यक्ष थे । विभिन्न संस्थाओं में (विशेषतः ब्रह्मलीन श्री स्वामी निर्मल जी के अमृतसर में होने वाले सम्मेलन तथा दिल्ली के स्वामी रामतीर्थ मिशन के वेदान्त सम्मेलन में) उनका पधारना सबके लिए प्रेरणादायक होता था । वे स्वयं इनमें भाग लेकर तथा अपने उदात्त गवेषणापूर्ण विचारों का सबको 'प्रसाद' रूप में वितरण करके अपना सौभाग्य मानते थे ।

इस प्रसंग में हमारी एक फाइल में उनका एक पत्र अभी-अभी मिला है जिससे उन्होंने इस मिशन द्वारा प्रेषित निमन्त्रण का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तर देते हुए स्वामी राम के प्रति जिन विचारों को व्यक्त किया है वे कदाचित् 'राम-सन्देश' के पाठकों के लिए प्रेरणा का स्रोत रहेंगे। अपने दि० १६ सितम्बर १९७१ के उत्तर में उन्होंने लिखा है कि—

राम तत्व के मूर्तरूप, वेदान्त-वेद्य और वेदान्त-मूर्ति स्वामी राम के लिए कुछ शब्द कहना और उनके द्वारा प्रचारित वेदान्त के किसी अंग के लिए चर्चा का सुअवसर प्राप्त करना, मेरी दृष्टि में अपने सुकृत की फलोन्मुखता है। मेरा यह निश्चय है कि विश्वात्मा राम जिसको चाहते हैं अपने मिशन की विस्तृति के साधन होने का सुअवसर प्रदान करते हैं। आप उन्हीं के मिशन के विस्तार के साधन हैं। वेदान्त सम्मेलन का आयोजन सर्वात्मा राम के संकल्प का स्फुरण है, दुनिया के बादशाह जिसकी शतरंज के मोहरे हैं उसके विनोद व्यापार अथवा लीला में भाग लेने के अनेक उपक्रमों में से कहीं भी उपयोगी हो सकना भी उसकी कृपा का फल है।

मिशन के वेदान्त सम्मेलन के सुचारु एवं समारोह पूर्वक सम्पन्न हो सकने के लिए अनेक व्यक्तियों के अनेक प्रकार के योगदान रहते हैं किन्तु लेखनी और वाणी द्वारा सम्मान देकर समुत्साहित कर महात्माओं, विद्वज्जनों को प्रेरित करना एक महत्वपूर्ण कार्य है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपका प्रत्येक शब्द जिस सद्भाव की अभिव्यक्ति करता है वह रामप्रेमियों के हृदय की सहज अभिव्यक्ति है। आपका इस अवसर पर मुझे स्मरण करना और रामचर्चा एवं वेदान्त-चर्चा का अवसर देना भी उसी सद्भाव का प्रकाशन है।

भागवत में 'यज्ञपत्नी' उद्धरण नामक अध्याय में भगवान श्री कृष्ण के लिए कहा गया है-

देशः काल पृथक् द्रव्यं मंत्र तंत्रर्त्विजोऽग्नयः
देवता यजमानश्च क्रतुर्धर्मश्च यन्मयः ॥

अर्थात् देश, काल, अनेक प्रकार की सामग्रियां, भिन्न भिन्न कार्यों में विनियुक्त मंत्र, अनुष्ठान के ढंग, ऋत्विज अर्थात यज्ञ कराने वाले, अग्नि देव, यजमान, यज्ञ और यज्ञ के अद्भुत धर्म-इन सभी रूप में भगवान् ही प्रकट हो रहा है। ऐसे ही वेदान्त सम्मेलन, उसके साधन-वक्ता, श्रोता, वेदान्त-प्रसाद, पुण्योपार्जन सभी रूपों में राम सम्राट् ही प्रकट हो रहा है।

आपका अपना आप
जगदीश सम्राट्

प्रेषक :— भारत बन्धु शर्मा, दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्व शान्ति का आधार-धर्म

विश्व में जितने में पदार्थ हैं सभी किसी न किसी गुण विशेष से सम्पन्न है। जिस वस्तु का जो गुण है उसे धारण किये रहना ही उस पदार्थ का धर्म है, जैसे—सूर्य का गुण है प्रकाश एवं ताप देना, अग्नि का गुण है—जलाना, जल का गुण है-धुलाई करना, वायु का गुण है प्राण प्रदान करना, धरती का गुण है—धारण करना, अन्न का गुण है—पालन करना, इस प्रकार विश्व के अन्य सभी पदार्थ भी किसी न किसी गुण से सम्पन्न हैं। ये सब गुण पदार्थ विशेष से अभिन्न एवं अविच्छिन्न हैं। किसी भी पदार्थ को उसके गुण से अलग नहीं किया जा सकता और न किसी गुण को अमुक पदार्थ से अलग किया जा सकता है। कोई भी गुण किसी पदार्थ को छोड़ दे तो उसका अस्तित्व समाप्त हो जायेगा। इसी तरह कोई पदार्थ अपने गुण को त्याग दे तो वह वस्तु अपने नाम को सार्थक नहीं कर सकती।

सूर्य ताप एवं प्रकाश नहीं देगा तो कोई उसे सूर्य नहीं कहेगा, अग्नि जलायेगी नहीं तो अग्नि का नाम सार्थक नहीं होगा जल धुलाई नही करेगा तो जल नहीं कह सकेगें, वायु प्राण प्रदान नहीं करेगी तो वह वायु नहीं कही जा सकती, धरती धारण करने का गुण त्याग दे तो वह इस नाम के योग्य नहीं रह जायेगी, अन्न पालन करना त्याग दे तो वह सार्थक नहीं, इसी तरह विश्व के समस्त पदार्थों एवं वस्तुओं के बारे में भी यह सत्य तथ्य है। अपने गुणों को धारण किये रहना ही सबका प्रमुख धर्म है। सच बात तो यह है कि-

"धर्म एव हतो हन्ति, धर्मो रक्षति रक्षतः॥" अर्थात्—"धर्म का हनन करने से स्वयं का ही नाश हो जाता है, धर्म की रक्षा करने से ही रक्षा हो सकती है।

इन पदार्थों एवं वस्तुओं के समान ही मनुष्य का भी विशेष गुण है। इसके कारण ही मनुष्य को मनुष्य की संज्ञा मिली है। इसका गुण है-मनुष्यत्व यह मनुष्यत्व ही मनुष्य का प्रमुख गुण है। मनुष्य के स्वभाव में गिनाये जाने वाले अन्य गुण इसी में सन्निहित—समाहित हैं। इस गुण को सदा धारण किये रहना ही मनुष्य का वास्तविक धर्म है। यह बात स्पष्ट रूप से कह देनी प्रासंगिक नहीं होगी कि आज धर्म की जो मान्यता है वह धर्म की लाश मात्र है। धर्म-प्राण तो गुण को धारण करना है। खेद है कि आज धर्म का प्राण नष्ट हो गया है। प्राण के बिना धर्म एक विडम्बना के रूप में रह गया है, वह थोथा एवं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निरर्थक लकीर रह गया है।

मनुष्य अपने मनुष्यत्व के धर्म को त्याग रहा है। इसी कारण व्यक्ति, परिवार, समाज देश और विश्व का सारा ढाँचा लड़खड़ा रहा है। धर्म के ही समाप्त होने से ही सर्वत्र ही अमर्यादा, उद्दण्डता, अनाचार, अत्याचार, स्वार्थ, संकीर्णता,–पीड़ा-उत्पीड़न का वातावरण बना है। मनुष्यत्व के अन्तर्गत आने वाले गुण परोपकार, सेवा सहायता, दया, क्षमा, श्रम, साधना, संयम, नैतिकता, आदि सदाचार कहीं नजर नहीं आते। ये कहीं कहीं नजर आते भी हैं तो मरूस्थल में हरित भूमि के समान सुखद वातावरण बनाये हुए भी हैं। इन गुणों के अभाव के कारण ही व्यक्तिगत जीवन में दुख दारिद्र्य, पतन–पीड़ा, सामाजिक जीवन में द्वेष-दुर्भाव, स्वार्थ संकीर्णता तथा आर्थिक जीवन में अभाव असन्तोष की परिस्थितियां निर्मित हुई हैं। आज की फैली हुई अशान्ति तथा समस्त समस्याओं का मूल केवल यही धर्मत्याग है।

यह भारत–भूमि देव–भूमि कही गई है। सदा से ही यहां पर देव वृत्ति के लोगों का वास रहा है। इन देव प्रवृत्ति के लोगों ने समस्त विश्व को अपने अजस्त्र अनुदान बांट कर समस्त विश्व को ही सभ्यता, संस्कृति और ज्ञान–विज्ञान से समर्थ बनाया है। आज इस भूमि के दुर्भाग्य ही कहे जाना चाहिए कि अब यहाँ पर दानव-वृत्ति के लोगों का आधिपत्य हो गया है। इने गिने कुछ सज्जन और सन्त अपने धर्म पालन में निरत हैं तो वे बाजार में झिंगुर की आवाज के समान महत्व-हीन है।

आज की इन परिस्थितियों को बदल कर भारत के प्राचीन गौरव को प्राप्त करना असम्भव नहीं। इसमें सुधार, परिष्कार लाने का प्रयास किया जाये तो इसे देवभूमि बनाया जा सकता हैं। लोग अपनी वृत्ति को, अपनी अन्य स्थिति को बदलकर अपने व्यापारिक, राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक धार्मिक जीवन में पवित्रता, ईमानदारी, निस्वार्थता शुद्धि, समता, एकता से काम लेने लगें तो इस पारस्परिक व्यवहार में वास्तविक धर्म का समावेश किया जा सकता है और आज भी स्वर्ग जैसी सुख शान्ति का अनुभव होने लगे

अपने अन्दर ईर्ष्या, द्वेष, भेदभाव, लोभ, लालच, माया, मोह, अहं, दर्प, तृष्णा–वासना की आग जला कर व्यक्ति बाह्य जीवन में सुख और शान्ति चाहता है, यह कैसी विडम्बना है। लक्ष्य को प्राप्त करने मनुष्य मन्दिर, मस्जिद गिरिजाघर जाता है। तीर्थ यात्रा, पर्यटन के लिए जाता है। साधना, उपासना, भोग–विलास आदि साधन अपनाता है फिर भी शान्ति की उपलब्धि नहीं होती। शान्ति प्राप्त करने के लिए कोई सत्य एवं तथ्य खोजा जाये तो वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनुष्यत्व के गुण को कर्त्तव्य भावना के साथ पालन करने में ही सिद्धहो सकता है। यही है आत्मिक शान्ति और विश्वशान्ति का सुदृढ़ सच्चा मार्ग आवश्यकता है तो इसे व्यवहार में आने की। आज विश्व का प्रत्येक व्यक्ति इस मनुष्यत्व को पालन करने लगे तो एक एक करके सारा विश्व ही बदल सकता है।

मनुष्य के पवित्रता लाने तथा पृथ्वी को स्वर्ग बनाने के लिए मनुष्यत्व के गुणों का सहारा लेना ही पड़ेगा। प्रत्येक व्यक्ति को इसमें अपना योगदान देना पड़ेगा, देना भी चाहिए। आज धर्म के नाम पर फैके सम्प्रदायों और विभिन्न संस्थाओं के थोथे आडम्बरों में न फंस कर प्रत्येक व्यक्ति इसे ही अपना कर्तव्य और धर्म माने, इसे अपनाये तो विश्व मानव का केवल एक ही धर्म शेष रह जाता है वह धर्म है मनुष्यत्व। इस धर्म के सामने जन्म, जात तथा व्यक्ति के नाम पर सम्प्रदाय अस्तित्वहीन तथा निरर्थक है। यदि इतना ही किया जा सके तो मनुष्य–मनुष्य के बीच की यह धार्मिक खाई समाप्त हो जाएगी। वे परस्पर मिलकर स्नेह आत्मीयता का सम्बन्ध स्थापित कर सकेंगे तथा सारा विश्व ही एक विशाल परिवार बन जाएगा। यदि यह उपलब्धि विश्व मानव को हो सकी तो यह मानवी सभ्यता और संस्कृति का सौभाग्य ही कहा जाना चाहिए। इससे आज की प्रायः सभी समस्यायें सुलझ जायेंगी।

वास्तव में धर्म और मानव के बीच भेदपरक खाई नहीं है। इसे ऐसा बनना भी नहीं चाहिए। जिस भी व्यक्ति ने धर्म के नाम पर मनुष्य–मनुष्य में भेद–भाव की खाई पैदा की है वह मानव जाति के विकास का सबसे बड़ा बाधक तथा इसका सबसे बड़ा दुश्मन कहा जाना चाहिए। धर्म मनुष्य मनुष्य के बीच मेल का साधन है और इस ऐसा बनना भी चाहिए। आज धर्म को मानव–मानव के बीच की खाई बनाने वाले ओछे तथा क्षुद्र लोगों ने समस्त विश्व मे अशान्ति फैला दी है। यह मानवीय अस्तित्व के लिए घातक सिद्ध हो सकती है। समय आ गया है, वह पुकार रहा है कि समाज के हर विवेकवान को, सबुद्ध व्यक्ति को, तथा मानव समाज का हित चाहने वाले को चाहिए कि वह मनुष्यत्व के वास्तविक धर्म को धारण करे। इसी में मनुष्य की बुद्धिमत्ता है और यही विश्व शान्ति का आधार है।

--नारायण प्रसाद रानाडे
शान्तिकुन्ज [हरिद्वार]

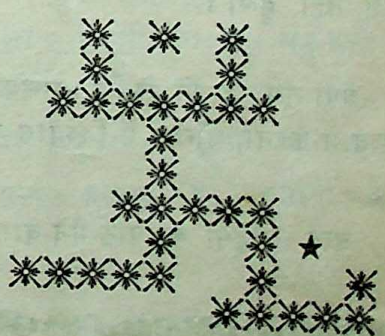

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचारोदधि —प्रे० दिवेशत्यागी

वृक्ष अपने सिर पर गर्मी सहन करता है, परन्तु अपनी छाया से दूसरों की गर्मी से रक्षा करता है।

(कालीदास)

मनुष्य जीवन की सफलता इसी में है कि यह उपकारी के उपकार को कभी न भूले, उसके उपकार से भी बढ़कर उसका उपकार कर दे।

(वेदव्यास)

चींटी से अच्छा कोई उपदेश नहीं देता, क्योंकि वह मौन रहती है।

(फ्रैंकलीन)

प्रेम अन्धा है और प्रेमी उन सुन्दर मूर्खताओं को, जिन्हें वे करते हैं, नहीं देख सकते।

(शेक्सपीयर)

आदर्श विश्व के पथ-प्रदर्शक होते हैं।

(जे० जी हालैंड)

जिस भाँति भौंरा फूलों की रक्षा करता हुआ मधु को ग्रहण करता है, उसी प्रकार मनुष्य को हिंसा न करते हुए अर्थों को ग्रहण करना चाहिए।

(विदुर)

बालकों की कर्तव्यशीलता ही सब गुणों की नींव है।

(सिसरो)

प्रत्येक बालक यह संदेश लेकर आता है, कि ईश्वर अभी मनुष्य से निराश नहीं हुआ।

(रविन्द्रनाथ ठाकुर)

क्या तुम जानते हो कि बालक होना क्या है? इससे तात्पर्य है प्रेम में विश्वास करना, सौन्दर्य में विश्वास करना तथा विश्वास में विश्वास करना।

(फ्रांसिस टामसन)

सत्य अहिंसा का पाठ मैंने बालक से सीखा है।

(महात्मा गांधी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ॐ

स्वामी रामतीर्थ जी का क्रमिक आत्म-विकास

इस शताब्दी के महान सन्त स्वामी रामतीर्थ जी महाराज का जन्म सन् १८७३ ईस्वी २२ अक्टूबर को पाकिस्तान में गुजराँवाला जिले के मुरालीवाला ग्राम में हुआ। वेदान्त के व्यापक क्षितिज में वे एक ध्रुव तारे की भाँति प्रकट हुए तथा ३३ वर्ष तक संसार को अद्वैतवाद का पावन सन्देश देकर वे ब्रह्माण्ड के अन्य दीप्तिमान लोगों को पावन करने के लिए आत्म विलीन हो गये। हम सब दीपावली को अपने अपने घरों को परिष्कृत एवं अलंकृत करके मां लक्ष्मी के स्वागत में प्रवृत्त होते हैं। किन्तु इस दैव पुरुष ने इस पर्वपर पर हमारे हृदयों में परम ज्ञान की चिंगारी को प्रज्जलित एवं स्थायी करने के लिए पृथ्वी पर अवतरित होने का संकल्प किया। इसके महानव्यक्तित्व ने भारतवासियों को ही नहीं वरन् विश्व को बहुत प्रभावित किया। जापान, अमेरिका, जर्मनी, इंग्लेंड, ईरान, मिश्र आदि देश भी इनके प्राणदायक विचारों से प्रतिध्वनित हुए। इनकी धारणा थी कि विज्ञान के माध्यम से प्राप्त प्रमाण वास्तव में अर्जित अनुभवों पर आधारित यथार्थता सत्य की नैसर्गिक कामना का ही आवश्यक अंग हैं। इस प्रसंग में यह जानना रुचिकर होगा कि स्वामी राम के हृदय में प्रस्तुत श्रेष्ठ संकल्प किस प्रकार प्रबुद्ध हुए।

शिक्षा को अंग्रजी में एजूकेशन (Educaiton) कहा जाता है। जिसका अर्थ है E. बहार ducet निकालना अर्थात भीतर के प्रसुप्त संस्कारों को जगाना। इसके लिए बहार से विचार प्रदान करना नितान्त आवश्यक है क्यों कि परिस्थिति के अनुकूल होने पर ही मानव के आन्तरिक बीज रूप संकल्प विकसित होते है। उदाहरणार्थ हम देखते हैं कि अजीर्ण से पीड़ित रोगी कुछ भी ग्रहण करना नहीं चाहता क्यों कि उसका पेट अधिक भोजन करने से पहले ही फूला होता है किन्तु चिकित्सक उसे खाने के लिए गोलियां अथवा पीने के लिए लाल औषधि देता है। वह बात प्रत्यक्षतः अटपटी सी लगती है क्यों कि जो व्यक्ति खा चुका है उसे और कुछ देना उसके साथ अन्याय के समान है। वैद्य या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डॉक्टर उसे इस उद्देश्य से औषधि सेवन करने को कहता है कि उसके द्वारा रोगी के उदर में अवरुद्ध अशं मल द्वार से बाहर निकल जायेगा। हम यह भी देखते है कि पानो का हैंड पम्प जब पानी नहीं निकालता तो उसमें बाहर से पानी डाला जाता है और नीचे के भाग में भरा हुआ जल ऊपर आ जाता है, ठीक ऐसे ही बाहर से दिया गया उपदेश मानव के भीतर प्राप्त अनुकूल संस्कारों को प्रस्फुटित करने में सहायक होना है। अतः स्वामी राम के व्यक्तित्व को उभारने तथा विकसित करने के लिए कुछ बाह्य परिस्थितियाँ उत्तारदायी थीं।

एक दिन अपने मकतब (स्कूल) से लौटते हुए बालक तीर्थराम ने एक पेड़ की छाया मे बैठे एक लम्बे कद वाले महात्मा को अपने शिष्यों से अध्यात्म का उपदेश करते देखा। कौतूहलवश वह रुक गया और साधु महात्मा को दण्डवत् किया। उन्होंने आशीर्वाद देते हुए इस बालक को अपने पास बुलाया और उसके कान में कुछ शब्द कहे। उसके बाद से ही रीर्थराम के हृदय में नवोत्साह तथा विश्वास का समुद्र हिलोरें लेने लगा। धर्म के गुह्य अंशों के आभासमात्र में उस होनहार विद्यार्थी का व्यक्तित्व सुविकसित होने लगा। मन के अध्यात्म साधना की ओर प्रवृत्त होने के कारण जीवन में त्वरित गति से परिवर्तन होने लगे। मार्ग में होने वाली कठिनाइयों को 'राम' ने आत्म विश्वास से दूर किया। कहते हैं कि उसने कभी झूठ नहीं बोला तथा न किसी की भावनाओं को चोट पहुंचायी।

राम की कृष्णभक्ति अद्वितीय थी। एक बार जब उन्हें एक सभा में भक्ति-मार्ग पर अपने विचार व्यक्त करने को कहा गया तो प्रोफेसर तीर्थराम ने प्रार्थना के रूप में संस्कृत के कुछ श्लोक पढ़े, दोनों नेत्रों से अश्रुधारा प्रवाहित हो गई वे बोले:- हे कृष्ण! तुम श्याम (काले) हो और मेरा हृदय भी कलुषित (काला) है, समान पदार्थ एक दूसरे की ओर आकर्षित होते हैं, आओ मेरे हृदय में छिप जाओ इन शब्दों से सभी स्तब्ध रह गये और तब से सहस्त्रों व्यक्ति शान्ति के लिए उनके पास जाने लगे।

श्रृंगेरी के जगदगुरु श्रीशंकराचार्य जी ने लाहोर में युवा तीर्थराम के मन में अद्वैत फिलास्फी का संचार किया और वह इस सदुपदेश को यत्नपूर्वक हृदयंगम करने लगे। स्वामी राम के महान व्यक्तित्व में वैज्ञानिक तथा महात्मा के दर्शन करने वाले एक सुप्रसिद्ध लेखक श्री हरिप्रसाद के ये शब्द सर्वथा उपयुक्त हैं- "स्वामी रामतीर्थ पावन भागीरथी के समान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिमालय के हिम खण्डों से तीव्रगति से उतरे तथा उनकी वाणी से अति विस्मयदायक सत्य के स्वरूप मुखरित हुए निभाको एक दिन समझने के बाद संसार वाले इस यशर्थता को स्वीकार करेंगे कि स्वामी जी के सरल तथा मस्ती से भरे किन्तु सार्थक शब्द अध्यात्म की वास्तविकता की ऊँचाइयों को व्यक्त करते हैं। ऐसा लगता है कि भगवान शंकर स्वयं इस रूप में अवतरित हुए थे।

इस प्रकार मन की सभी परिसीमाओं को लांघ लेने पर भी राम ने अपने लिए कोई इच्छा घोषित नहीं की और न किसी पर अपना अधिकार (प्रभुत्व) स्थापित किया, इस पर भी वे संसार के सम्राट् (शाहिन्शाह) थे उनका समूचा समय 'ध्यान' तथा परमात्मा की महानता के गीत गाने में व्यतीत होता। अपने चारों ओर हिमाच्छदित पर्वत–शिखरों तथा नीचे बहती गंगा की धारा को देखकर आत्म विभोर हुए स्वामी जी तीन घण्टे से अधिक नहीं सो पाते।

स्वामी राम के एक शिष्य ने उनसे भारत की राजनीतिक स्वतंत्रता के विषय में विचार जानने चाहे। उनका एकमात्र उत्तर था : स्वतंत्रता प्राप्त करना इतना ठीक नही है किन्तु सामाजिक एवं राजनीतिक दृष्टि से पूरी तैयारी किये बिना इसे सुदृढ़ रखना बहुत मुश्किल है।

अपनी विदेश यात्रा से लौटने पर स्वामी जी अधिक ध्यान में मग्न रहने लगे। उन्होंने सोरिक बातें अमेरिका में प्राप्त अपनी सफलताओं और यहाँ तक कि अपने प्रिय गणित (रियाजी) के विषय में एक भी शब्द नहीं कहा। उनके वार्त्तालाप का एक मात्र विषय परमात्मा था। वे सबसे प्रेम से मिलते। उनकी काया शनैः शनैः क्षीण (दुर्बल) होने लगी और वे प्रायः घण्टों तक संसार की ओर पीठ करके एकान्तसेवन करते। यह बात स्पष्ट थी कि आत्म ज्ञान का यह पूर्णेन्दु रजिस पर सभी गौरव का अनुभव कर सकते है। अब धीरे धीरे मेघाच्छन्न होता जा रहा था। ऐसे थे हमारे महान अध्यात्म द्रष्टा स्वामी राम जिन्होंने अपनी ३३ वर्षीय पार्थिव यात्रा से अनेक प्राणियों को चमत्कृत किया और अपने लाखों प्रेमियों के हृदयों पर निज उत्कृष्ट व्यक्तित्व की अमिट छाप अंकित की।

हम सम्मान तथा अगाध प्रेम से इस महान अग्रदूत के आचरणों में श्रद्धा एवं सम्मान के प्रसून समर्पित करते हैं। हमारी प्रबल कामना है कि हम अपने आपको उनका दुर्लभ शुभाशीर्वाद प्राप्त करने के अनुरूप बनायें।

(स्वामी राम के १०७ वें अवतरण पर प्रस्तुत)

भारत बन्धु शर्मा, दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूचना

स्वामी रामतीर्थ मिशन, अलीगढ़ द्वारा परमश्रद्धेय स्वामी अमर मुनि जी महाराज की अध्यक्षता में आध्यात्मिक विराट् सम्मेलन, जिसकी स्थापना ब्रह्मलीन स्वामी हरिओउम् जी महाराज द्वारा की गई थी तथा जिसे संवर्धन प्राप्त हुआ ब्र० स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज द्वारा, इस वर्ष १०-११-७६ से १४-११-७६ तक रजतजयन्ती के रूप में आयोजित किया जा रहाहै। सम्पूर्ण कार्यक्रम की सूचनाअगले अंक में दी जायेगी। सं.

★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★★

बालक राष्ट्र की मुस्कुराहट है।

(राजगोपालाचारी)

अकृतज्ञ मानव से एक कृतज्ञ कुत्ता बेहतर है।

(शेखसादी)

अपने ऊपर विश्वास रखो, यह विश्वास ही अटूट तार है जिसके सहारे हृदय स्पन्दित होता है।

(एमर्सन)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूचना

समस्त रामप्रेमियों को सूचित करते हुए अत्यन्त हर्ष होता है कि ब्रह्मलीन स्वामी हरिओउम् जी महाराज द्वारा संस्थापित तथा ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज द्वारा संवर्धित छब्बीसवां वेदान्त सम्मेलन तथा रामदिवस इस वर्ष स्थानीय अजमल खाँ पार्क, करोलबाग में दिनाँक १८ अक्टूबर से २८ अक्टूबर १९७९ तक परमाध्यक्ष स्वामी अमरमुनि जी महाराज की अध्यक्षता में आयोजित किया जा रहा है। जिसमें भारत के प्रख्यात विद्वान सन्त वक्ता महापुरुष उपस्थित होकर व्यावहारिक वेदान्त के विग्रहरूप शहन्शाह राम को अपनी भावाञ्जलि समर्पित करते हुए व्यावहारिक वेदान्त के विभिन्न विषयों पर विश्लेषण पूर्वक व्याख्यान करेंगे।

इस आयोजन में समस्त रामप्रेमी सादर व सस्नेह आमंत्रित हैं।

भवदीय

भारतबन्धु शर्मा

प्रधान सचिव

स्वामी रामतीर्थ मिशन,

—देहली

—कार्यक्रम—

१८' १९ अक्टूबर १९७९, भजन तथा प्रवचन,
(सायं ६ ३० से ८ ३० बजे तक,
२० अक्टूबर दिपावली (राम दिवस,
प्रातः ८ बजे से अपराह्न १ बजे तक

२१ से २५ अक्टूबर भजन तथा प्रवचन—सांय ६ बजे से ८ बजे तक
२६ से २८ अक्टूबर बृहद सम्मेलन प्रातः ८ ३० से १२-३० बजे तक सांय ५ से ९ बजे तक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

112392

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आश्रम समाचार

ब्रह्मलीन स्वामी हरिओ३ म् जी महाराज के परमशिष्य व कर्मठ कार्यकर्ता स्वर्गीय श्री कृष्णलाल जी भण्डारी की वार्षिक पुण्य तिथि पर [बरसी पर] दिल्ली में दिनांक ६ सितम्बर की प्रातः महाराज जी कश्मीर से पधारे। श्री भारत बन्धु जी, गोविन्द लाल जी बांगा, शुक्ला जी, गोपाल शास्त्री आदि ने उपस्थित होकर दिवंगत आत्मा की शान्त्यर्थ राम चरणों में प्रार्थना करते हुए कहा कि सच्ची श्रद्धाञ्जलि उनके संकल्पों को क्रियात्मक रूप प्रदान करने में हीं है। महाराज जी ने भी इस अवसर पर उनके जीवन के अनेक क्षणों की याद दिलाते हुए बताया कि जीवन के उद्देश्यों को प्राप्त कर आत्मस्थित हुए व्यक्ति द्वारा पाञ्चभौतिक शरीर का परित्याग किए जाने पर शोक नहीं करना चाहिए।

लखनऊ, पुनः दिल्ली होते हुए स्वामी जी कोटला में स्थित रामलॉज में अपने प्रवचनों से वहाँ की जनता को स्वामी राम के व्यावहारिक वेदान्त से परिचित कराने पहुंचे, परन्तु कार्यक्रम की व्यस्तता के कारण, क्योंकि ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज की वार्षिक पुण्य तिथि १६ सितम्बर को राजपुर आश्रम पर आपकी ही अध्यक्षता में आयोजित की गई थी, इसलिए उसकी व्यवस्था हेतु, आप देहरादून आश्रम पर १४ की सायं पधारे।

१५ सितम्बर को ब्रह्मलीन स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज की पुण्य स्मृति में दूनवासी राम प्रेमियों द्वारा रामायण का अखण्ड पाठ रखा गया, १६ की प्रातः विभिन्न धार्मिक ग्रन्थों के पारायण के साथ ही रामायण पाठ की पूर्णाहुति वैदिक विधि से की गई हवन आदि क्रियाओं से युक्त हो सम्पन्न हुई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरिद्वार से पधारे हुए डा० स्वामी श्याम सुन्दर दास जी महाराज, आचार्य माधवाचार्य जी, रामचरण दास जी (पुजारी जी), श्री सत्य प्रकाश जी, स्वामी स्वभावानन्द जी, शिवस्वरूप बाबा विश्वनाथयति जी महाराज स्वामी प्रकाश मुनि जी, स्वामी गोपाल मुनि जी आदि महापुरुषों ने स्वामी जो महाराज की विभिन्न घटनाओं और संस्मरणों को उपस्थित करते हुए उनके श्री चरणों में अपनी भावमयी पुष्पाञ्जलि, श्रद्धाञ्जलि समर्पित की। उपस्थित सभी ने उनकी व्यवहारकुशलता, भारतीय संस्कृति और संस्कृत के प्रति निष्ठा, विनम्रता, स्नेह व मधुर स्वभाव आदि विभिन्न गुणों की प्रशंसा करते हुए अन्त में 'असित गिरि समं स्यात्—श्लोकार्थ की सत्यता को स्वीकार करते हुए कहा कि उनके लिए जो भी कहा जाये वह कम है, क्यों कि व्यवहार में, जगत में जिस पूर्णता की बात की जाती है वह थी उनके जीवन में।

इसी पुष्यतिथि का आयोजन राजपुर रोड स्थित हरिओम् सत्संग भवन पर १६ ता० को रामप्रेमियों द्वारा किया गया। अतीत सारा का सारा वर्तमान सा लगने लगा। प्रकृति के सिद्धान्तों में घटित होने वाली प्रक्रिया ने फिर एक बार 'जातस्य हि ध्रुवो मृत्युः-के सिद्धान्त को समझाते हुए बताया कि प्राप्त कर लो उसे जिसे गोविन्द के रूप में स्वामी जी ने प्राप्त किया था, और जिससे सबका मार्ग प्रकाशित करते हुए वे आत्म स्थित हो गये।

सं.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूरभाष–८४२२५ राजपुर, ४२९७ देहरादून, तार का पता — (वेदान्त) देहरादून, रजि. नं डी. एन. १५

राम

मौत के नाम राम का अन्तिम संदेश—

ऐ मौत! बेशक उड़ा दे मेरे इस एक जिस्म को। मेरे और अजराम (शरीर) ही मुझे कम नहीं। सिर्फ चांद की किरणें, चांदी की तारें पहिन कर चैन से काट सकता हूँ। पहाड़ी नदी-नालों के वेष में गीत गाता फिरुंगा, बहरेमव्वाज (समुद्र की त रंगों) के लिबास में लहरता फिरुंगा। मैं ही बादे खुशराम (मन्द-मन्द पवन), नसीमे—मस्तानागाम (प्रातः कालीन वायु) हूँ। मेरी यह सूरते-सैनाली (घूमते - फिरने में) रहती है। इस रूप में पहाड़ों से उतरा, मुरझाते पौधों को ताजा किया, गुलों (फूलों) को हंसाया, दरवाजों को खड़खड़ाया, सोतों को जगाया, किसी का आंसू पोंछा किसी का घूंघट उठाया, इसको छेड़, तुझको छेड़, वह गया, वह गया, न कुछ साथ रखा न किसी के हाथ आया!

मासिक पत्र—
"राम-सन्देश"
स्वामी रामतीर्थ मिशन
राजपुर, देहरादून (उ०प्र०)
Pin—248009 भारत

ग्राहक संख्या _____

श्री / श्रीमती _____

स्थान _____

डाकखाना _____

जिला _____

स्वामी रामतीर्थ मिशन, राजपुर देहरादून (उ० प्र०) के लिए प्रकाशक स्वामी अमर मुनि द्वारा न्यू आईडियल प्रिन्टिंग हाऊस (कांग्रेस भवन के पास) ४-बी नेशविला रोड, (देहरादून) में, मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Pin—248009 भारत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Compiled
1999-2000

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri